B/8

गोकुलदास संस्कृत ग्रन्थमाला
६५
****

गायत्रीरहस्यम्

लेखक
(स्व०) पं० वेणीराम शर्मा गौड वेदाचार्य

पुस्तकालय
16053
22/9/99
नई दिल्ली

Ph. 2911617
Chakhambha Orientalia
9 U.B., Bungalow Road,
Post Box No. 2206
Delhi-110007.

॥ श्रीः ॥

गोकुलदास संस्कृत ग्रन्थमाला

६५

गायत्रीरहस्यम्

भाग १-२ (सम्पूर्ण)

लेखक

याज्ञिक सम्राट्

(स्व०) पं० वेणीराम शर्मा गौड वेदाचार्य,

सम्पादक तथा

भूमिका-लेखक

डॉ० उमेश मिश्र गौड

वेद, पुराणेतिहासाचार्य

वेदाध्यापक-शास्त्रार्थ महाविद्यालय, वाराणसी

चौखम्भा ओरियन्टालिया

प्राच्यविद्या तथा दुर्लभ ग्रन्थों के प्रकाशक एवं वितरक

वाराणसी दिल्ली

प्रकाशक

चौखम्भा ओरियन्टालिया

पो० बाक्स नं० १०३२

वाराणसी–२२१००१ (उ०.प्र०) भारत

टेलीफोन : ६३३५४ टेलीग्राम : गोकुलोत्सव

शाखा—बंगलो रोड, ६ यू० बी० जवाहर नगर

(करोड़ीमल कालेज के पास)

दिल्ली—११०००७ फोन : २६११६१७

© चौखम्भा ओरियन्टालिया

प्रथम संस्करण : १९८४

मूल्य : रु० ५०-००

CHAUKHAMBHA O...
DELHI
757

मुद्रक

श्रीगोकुल मुद्रणालय

गोपाल मन्दिर लेन

वाराणसी–२२१ ००१

GOKULDAS SANSKRIT SERIES
No. 65

GĀYATRĪRAHASYAM

16053
22/9/99

Part I–II (Complete)

Author
Yājñika Samrāṭ
(Late) Paṇḍit VEṆĪRĀMA ŚARMĀ GAUḌA
VEDACHĀRYA

Edited and Introducer
Dr. UMEŚA MIŚRA GAUḌA
Veda, Purāṇetihāsāchārya
Vedādhyāpaka-Śāstrārtha Mahāvidyālaya
Varaṇasi

CHAUKHAMBHA ORIENTALIA
A House of Oriental and Antiquarian Books
VARANASI DELHI

पं० वेणीराम शर्मा गौड

समर्पण

जिनकी कृपा से यह देव-दुर्लभ मानव-शरीर मुझे प्राप्त हुआ
और जिनके आशीर्वाद से वेद विद्या प्राप्त कर
सांसारिक क्षेत्र में सफलता-पूर्वक जीवनयापन
हो रहा है, उन देव तुल्य परम पूज्य प्रातः-
स्मरणीय, श्रद्धेय स्वर्गीय पिता जी

याज्ञिक सम्राट्

(पण्डित श्री वेणीराम शर्मा गौड वेदाचार्य)

के

परम पवित्र चरणारविन्दों

में

'गायत्री रहस्य'

सादर

- समर्पित

समर्पक

डॉ० उमेश मिश्र गौड
वेद, पुराणेतिहासाचार्य
डी० ७/१४, सकरकन्दगली
वाराणसी–१

भूमिका

गायत्र्येव परो विष्णुर्गायत्र्येव परः शिवः ।
गायत्र्येव परो ब्रह्मा गायत्र्येव त्रयी ततः ॥
(स्कन्दपुराण का. खं. ६।५८)

'गायत्री ही परमात्मा विष्णु हैं, गायत्री ही परमात्मा शिव हैं और गायत्री ही परमात्मा ब्रह्मा हैं। अतः गायत्री से वेदों की उत्पत्ति हुयी है।'

भगवद्‌गीता में भी भगवान् कृष्ण ने स्पष्ट कहा ही है—'गायत्री छन्दसामहम्' अर्थात् वेदों में मैं गायत्री हूँ।

वेदों में तथा पुराणों में अनेक उपासनाओं का वर्णन मिलता है परन्तु उन सभी उपासनाओं में गायत्री की उपासना का विशेष महत्त्व कहा गया है। गायत्री की उपासना "वैदिक उपासना" कही जाती है यह गायत्री मन्त्र "वैदिक मन्त्र" है इसीलिये इसको 'ब्रह्म-गायत्री' भी कहा जाता है। ब्रह्मस्वरूप वेदों की माता होने के कारण भी इसको 'ब्रह्म गायत्री' कहते हैं। नित्य, नैमित्तिक और काम्य कर्म की सिद्धि के लिये गायत्री-मन्त्र से बढ़कर और कोई मन्त्र नहीं है। समस्त त्रैवर्णिकों के लिये गायत्री ही परमगति है। त्रैवर्णिकों के अन्य कर्मों के करने में असमर्थ होने पर भी वे गायत्री से ही परमगति को प्राप्त कर लेते हैं।

'गायत्री मन्त्र' महामन्त्र है यह सर्वसिद्धियों को देने वाला है। गायत्री की उपासना से मनुष्य में आत्मशक्ति की वृद्धि होती है।

गायत्री माता समस्त धर्मावलम्बी मानवों का कल्याण करने वाली, सर्वविध दुःखतरङ्गों को हरनेवाली, समस्त प्रकार के वरदानों को देने वाली, भक्तजनों की पीड़ा का विनाश करने वाली हैं, अतः गायत्री ब्रह्म का स्वरूप है। गायत्री माता से बढ़कर और कोई महत्त्पूर्ण चीज संसार में नहीं है।

'गायत्री तु परं तत्त्वं गायत्री परमागतिः।'

गायत्री ही परम तत्त्व है और गायत्री ही परमगति है। कलियुग में सरलता से सर्वसाधारणजन को फल की प्राप्ति शीघ्र हो इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुये मेरे परमपूज्य पिता जी याज्ञिक सम्राट्, स्वर्गीय पं० श्री वेणीराम गौड़ वेदाचार्य जी ने "गायत्री रहस्य" नामक पुस्तक को लिखा। यह पुस्तक गायत्री के उपासकों के लिये विशेष कल्याणकारी है। इस पुस्तक के तीन भाग हैं—प्रथम भाग में गायत्री विषयक अनेक महत्त्वपूर्ण निबन्ध और गायत्री-शब्दार्थ, गायत्री मन्त्र और उसका अर्थ, गायत्री-मन्त्र का स्वरूप, गायत्री मन्त्र की उत्पत्ति, गायत्री के विभिन्न नाम, गायत्री के ध्यान, गायत्री-मन्त्र से द्विजत्व की प्राप्ति, गायत्री के अधिकारी आदि गायत्री विषयक अनेक ज्ञातव्य विषय है।

द्वितीय भाग में हिन्दी भाषा सहित 'गायत्री पञ्चाङ्ग' और गायत्री-विषयक अनेक स्तोत्र तथा कवच हैं। तृतीय भाग में गायत्री-पूजन पद्धति और गायत्री पुरश्चरण पद्धति आदि अनेक महत्त्वपूर्ण विषय हैं। अतः सर्वप्रथम 'गायत्री-रहस्य' नामक पुस्तक का प्रथम भाग आपके सम्मुख प्रस्तुत है। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि यह "गायत्री-रहस्य" गायत्री उपासकों के लिए विशेष लाभप्रद होगी।

"गायत्री रहस्य" के प्रथम संस्करण के प्रथम भाग के प्रकाशन में तत्परता के लिए मैं चौखम्भा ओरियन्टालिया के सञ्चालक महोदय को धन्यवाद देता हूँ कि इन्होंने गायत्री-माता के उपासकों के कल्याणार्थ "गायत्री-रहस्य" का प्रकाशन किया है।

चैत्र नवरात्र
संवत् २०४१

डॉ० उमेश मिश्र गौड
वेद, पुराणेतिहासाचार्य
डी० ७/१४ सकरकन्दगली, वाराणसी।

अनुक्रमणिका

गायत्री-शब्दार्थ ३
गायत्री-मन्त्र और उसका अर्थ ५
गायत्रीमन्त्रका स्वरूप ”
गायत्री-मन्त्रकी उत्पत्ति ९
गायत्रीके विभिन्न नाम ११
गायत्रीके ध्यान १२
दूसरे ध्यान १३
त्रिकाल गायत्री-ध्यान १५
गायत्री-मन्त्रसे द्विजत्वकी प्राप्ति १६
गायत्रीके अधिकारी १८
गायत्रीके अनधिकारी १९
गायत्रीसे रहित ब्राह्मण निन्दनीय है २२
गायत्रीकी उपासना और उसका महत्त्व २३
गायत्री-उपासनाके अनेक भेद ३७
वेदोंमें गायत्रीका महत्त्व ३८
गायत्री वेदजननी ४२
गायत्री और वेद ४३
गायत्री और सूर्य ४६
गायत्री और ब्राह्मण ४८
सन्ध्या और गायत्री ५५
गायत्रीविषयक विविध प्रश्नोंके उत्तर ६१
गायत्री-जपका महत्त्व ६५
गायत्री-जपकी आवश्यकता ७८
सप्रणव और सव्याहृति गायत्री-जपका महत्त्व ८१
गायत्री-जपद्वारा विविध पापोंका प्रायश्चित्त ८३
गायत्रीके कोटि, लक्ष, सहस्र आदि जप करनेसे विविध पापोंसे मुक्ति ८८
गायत्री-मन्त्रद्वारा हवनका विविध फल ९५
गायत्रीके विविध प्रयोग १०६
गायत्री-मन्त्र-जप-सिद्ध एक ऋषि-कुमारकी कथा ११४
ब्रह्माजीके यज्ञका वर्णन ११५
गायत्रीके उच्चारण और जपका महत्त्व ११७
गायत्रीके स्वयं पाठ करनेका और दूसरोंसे श्रवण करनेका महत्त्व ११८
'गायत्री' शब्दकी बार-बार आवृत्ति करनेका महत्त्व ”
गायत्री-मन्त्रके गुणोंके कीर्तन सुननेका फल ”
गायत्री-मन्त्रके श्रवणका महत्त्व ११९
गायत्रीके स्मरणका महत्त्व ”
गायत्रीके ध्यानका महत्त्व ”
चारों वेदोंमें गायत्री-मन्त्र ”
वर्णत्रयकी भिन्न-भिन्न गायत्री १२०
वर्णत्रयकी गायत्रीके मन्त्र १२१
वेदाधिकार-रहितोंका गायत्री-मन्त्र १२२
ब्रह्म-गायत्री ”
शताक्षरा गायत्री १२३
गायत्री-मन्त्रके उच्चारणकी विधि ”
गायत्रीके ऋषि, छन्द, देवता आदिका ज्ञान आवश्यक है १२४
गायत्रीके ऋषि, छन्द, देवता आदिके जाननेसे लाभ १२५
गायत्रीके ऋषि, छन्द, देवता आदिके न जाननेसे हानि ”
गायत्रीके ऋषि, छन्द और देवताका विवरण १२६
गायत्रीके २४ वर्णोंके २४ ऋषि १२७
गायत्रीके २४ वर्णोंके २४ छन्द ”

गायत्रीके २४ वर्णोंके २४ देवता १२८
गायत्रीके २४ वर्णोंकी २४ शक्तियाँ १३१
गायत्रीके २४ वर्णोंके २४ रूप ,,
गायत्रीके २४ वर्णोंके २४ तत्त्व १३२
जपके पूर्वकी गायत्रीको २४ मुद्राएँ १३३
गायत्रीकी २४ मुद्राएँ करनेकी विधि ,,
जपके बादकी गायत्रीकी ८ मुद्राएँ १३६
गायत्रीकी आठ मुद्राएँ करनेकी विधि १३७
गायत्रीके चतुर्थ चरणकी महामुद्राएँ १३८
मुद्राओंके प्रदर्शनकी और इनके ज्ञानकी आवश्यकता १३९
मुद्राओंको न जाननेसे हानि ,,
गायत्रीके २४ वर्णोंका विवरण १४०
गायत्रीके चौबीस वर्णोंके द्वारा शरीरका न्यास ,,
न्यासकी आवश्यकता १४२
गायत्री-शापविमोचन का विधि ,,
गायत्री-शापोद्धारकी आवश्यकता १४४
गायत्री और ओङ्कार ,,
गायत्री और ओङ्कारके जपका महत्त्व १४५
गायत्री, सावित्री और सरस्वतीका निर्वचन ,,
जप-शब्दार्थ १४६
जपके लक्षण १४७
जपयज्ञका महत्त्व ,,
मन्त्र-जपका महत्त्व १४९
जप भी स्वाध्याय है १५०
जप-सम्पत्तिके प्रधान कारण ,,
जपके शत्रु १५१
भगवन्नाम-जपकी विधि ,,
गायत्री-जपकी विधि १५२
गायत्री-मन्त्रके त्रैकालिक जपका विधान १५६
त्रिकाल सन्ध्यामें गायत्री-जप करनेकी विधि ,,
जपमें त्रिपदा और गायत्री-पूजनमें चतुष्पदा गायत्री १५७
कामना-भेदसे गायत्री-जपके लिये दिशाएँ १५८
गायत्री-जप वस्त्रसे ढककर करना चाहिये ,,
गायत्री-जपके बाद शताक्षरा गायत्री और ब्रह्मगायत्रीका जप भी आवश्यक है १६०
जपके बाद आसनके नीचेकी मृत्तिकाको मस्तक लगाना चाहिये १६१
विधिहीन जप निष्फल होता है ,,
जपके समय गायत्री-मन्त्रार्थके स्मरणसे पापोंकी निवृत्ति १६२
जपके समय गायत्रीके ऋषि, छन्द, देवताका ध्यान और ज्ञान आवश्यक है ,,
जपके अन्तमें परब्रह्मका स्मरण करना आवश्यक है १६३
जपके समय मौन भंग होनेपर विशेष विधान ,,
जपादि कर्ममें त्रुटि होनेपर कर्तव्य १६४
गायत्री-जपमें प्रणवका विचार ,,
जपके भेद और उनके उच्चारणकी विधि १६५
मानसिक जपमें कोई नियम नहीं है १६८
सप्तव्याहृतिसे सम्पुटित लक्ष गायत्री-मन्त्रके जपसे सर्वविध फलोंकी प्राप्ति १६९
मन्त्रसिद्धिके बिना जप, होम आदि निष्फल हैं ,,
गायत्री-मन्त्र को सिद्ध करना आवश्यक है ,,
चारों आश्रमोंके लिये गायत्री-जपका विधान ,,
प्रतिदिन गायत्री-जपकी संख्याका विधान १७१

काम्यकर्ममें जपसंख्याका विधान १७३
युगके अनुसार जपसंख्या ,,
आपत्तिकालमें गायत्री-जपका विधान १७४
कुछ तिथिओंमें तथा श्राद्ध, प्रदोष आदिमें गायत्री-जपका विशेष विधान ,,
सन्ध्योपासनमें गायत्री-जपकी संख्याका विधान १७५
सन्ध्योपासनमें गायत्री-जपका समय ,,
सन्ध्योपासनमें गायत्री-जपसे पापोंकी निवृत्ति १७७
जपकी संख्याका परिज्ञान आवश्यक है ,,
गणनारहित जप निष्फल है १७८
जप-गणनार्थ विहित वस्तु ,,
जप-गणनार्थ निषिद्ध वस्तु ,,
जपादिमें माला जपनेकी विधि १७९
करमाला १८०
जपके समय हाथसे माला गिर जानेपर कर्तव्य १८२
जपादिमें प्रशस्त माला ,,
जापादिमें निष्फल माला १८४
कामना-भेदसे मालाका विचार १८५
करमाला आदिसे जप करनेका विविध फल ,,
विविध प्रकारकी मालाओंका विविध फल १८६
अक्षमालाके अभावमें करमाला १८९
अक्षमाला ,,
करमाला १९०
गोमुखी (गोमुखम्) ,,
जपमालाकी मणियोंकी संख्याका विधान १९१
कामनाभेदसे जपमालाकी मणि-संख्याका विधान ,,
विविध प्रकारकी मालाके धारणका विविध फल १९२
विष्णु आदि देवताओंकी विभिन्न मालाएँ ,,
पुरश्चरणमें जपमालाका विधान १९३
रुद्राक्षकी मालामें सभी प्रकारके मन्त्रोंका जप हो सकता है ,,
जपमें अँगुलिका नियम ,,
कामनाभेदसे जपमें अँगुलिका नियम १९४
मालामें सूत्रका विधान ,,
देवताभेदसे मालामें सूत्रका निर्णय १९५
जपमें प्रतिष्ठित माला ग्राह्य है १९६
मालाके संस्कारकी आवश्यकता ,,
मालाके संस्कारकी विधि ,,
मालाकी प्रार्थना १९७
जपादिके लिये श्रेष्ठ आसन १९८
जपादिके लिये त्याज्य आसन ,,
विभिन्न आसनोंके विभिन्न फल १९९
कामनाभेदसे आसनका विधान २००
आसनका परिमाण २०१
पुरश्चरणका लक्षण ,,
पुरश्चरणके दस प्रकार २०२
पुरश्चरणकी आवश्यकता ,,
गायत्री पुरश्चरणका महत्त्व २०४
सभी प्रकारके मन्त्रोंके पुरश्चरणमें सर्वप्रथम गायत्री-जप आवश्यक है ,,
ज्ञाताज्ञात पापके क्षयके लिये सर्वप्रथम गायत्रीका जप आवश्यक है ,,
गायत्रीपुरश्चरणकर्ताके लिये देहशुद्धिके प्रकार २०५
गायत्रीपुरश्चरणकर्ताके लिये आत्म-शुद्धिकी आवश्यकता ,,
पुरश्चरणकर्ताके लिये अन्नका शुद्धिप्रकार २०६
गायत्रीपुरश्चरणकर्ताके लिये भोजनार्थ ग्रासका प्रमाण और उसकी संख्या २०७

गायत्रीपुरश्चरणकर्ताके लिये आहारका नियम २०८
गायत्रीपुरश्चरणकर्ताके लिये वर्ज्य आहार २०९
पुरश्चरणकर्ताके लिये निकृष्ट अन्न ,,
गायत्रीपुरश्चरणकर्ताको शूद्रके अन्नभक्षण आदिसे नरककी प्राप्ति ,,
गायत्रीपुरश्चरणकर्ताके लिये नित्य अनुष्ठेय धर्म २१०
गायत्रीपुरश्चरणकर्ताके नियम २१२
पुरश्चरणकर्ताके भक्ष्याभक्ष्यका विचार २२०
पुरश्चरण प्रारम्भके लिये शुभ मुहूर्त २२१
गायत्रीपुरश्चरणके लिये शुभ मास २२२
गायत्रीपुरश्चरणादिके लिये प्रशस्त तिथि ,,
गायत्रीपुरश्चरणके लिये त्याज्य मास, तिथि, वार आदि ,,
गायत्रीपुरश्चरणके प्रारम्भमें त्याज्य तिथि, वार, मास आदि २२३
गायत्रीपुरश्चरणके लिये श्रेष्ठ स्थान २२४
स्थान-विशेषमें गायत्री-जपका महत्त्व २२५
पुरश्चरणके लिये गायत्री-मन्त्र-जप संख्या २२९
पर्वत आदिमें पुरश्चरणार्थ कूर्मका विचार अनावश्यक है २३०
ग्राम एवं गृह आदिमें पुरश्चरणार्थ कूर्मका विचार आवश्यक है ,,
कलियुग आदि युगोंमें पुरश्चरणके लिये गायत्री-मन्त्रकी जप-संख्या २३१
जापकके लिये हवन, तर्पण आदिका विशेष विधान २३२
जापकके लिये दशांश हवनकी आवश्यकता ,,
दशांश हवन न करने पर विधान २३३
दशांश हवनकी अशक्तिमें त्रैवर्णिक तथा स्त्रीका कर्तव्य ,,
गायत्रीपुरश्चरणार्थ हवनीय द्रव्य २३४
गायत्री-यज्ञमें हवनार्थ गायत्री-मन्त्रका निर्णय ,,
पुरश्चरणके मध्यमें सूतक होनेपर विचार ,,
गायत्रीके ऋषि, छन्द, देवता आदिको जानने और न जाननेसे हानि-लाभ २३५

गायत्री-रहस्य

प्रथम भाग

गायत्री-रहस्य

गायत्रीं वेदजननीं सर्वपापप्रणाशिनीम्।
द्विजत्वदायिनीं देवीं प्रणिपत्य मुहुर्मुहुः॥ १॥
वेणीरामेण गौडेन श्रीविद्याधरसूनुना।
सर्वलाभाय गायत्री-रहस्यं लिख्यते मया॥ २॥

गायत्री-शब्दार्थ

'गै शब्दे' इस धातुसे 'शतृ' प्रत्यय करने पर 'गायत्' शब्द बनता है। पश्चात् 'त्रैङ् पालने' धातुसे सम्बद्ध होने पर स्त्री-प्रत्ययान्त 'गायत्री' शब्द निष्पन्न होता है।

वेदोंमें गायत्री शब्दका अर्थ इस प्रकार किया गया है—

'सा हैषा गयाँस्तत्रे। प्राणा वै गयास्तत्प्राणाँस्तत्रे तद् गयाँस्तत्रे तस्माद् गायत्री नाम।' (शतपथब्राह्मण १४।८।१५।७)

'गायत्रीने गयों (प्राणों) की रक्षा की थी। प्राण 'गय' कहे जाते हैं। गायत्रीने उन प्राणों ([1]गयों) की रक्षा की थी, इसलिये इसका नाम गायत्री पड़ा।'

बृहदारण्यकोपनिषद् (५।१४।४) में भी ठीक इसी प्रकार गायत्री शब्द का निर्वचन किया गया है।

'गायत्री गायतेः स्तुतिकर्मणः।' (निरुक्त ७।१२।५)

'द्विज जिससे परब्रह्म परमात्माकी स्तुति करता है, वह गायत्री कहलाती है।'

---

१. गायत्री प्राण है। अतः गायत्रीमें सारा संसार प्रतिष्ठित है। जिस गायत्रीमें समस्त देवता, समस्त वेद, समस्त कर्म और समस्त कर्म-फल एकत्र होते हैं वह गायत्री प्राणरूपा होकर जगत्की आत्मा है। उस गायत्रीने गयोंकी रक्षा की थी। प्राण गय कहे जाते हैं।

'गायत्री गायतेः स्तुतिकर्मणः।' (दैवतब्राह्मण ५।३)

स्तवन—क्रियारूप कर्मवाले 'गै' धातुसे 'गायत्री' शब्द निष्पन्न हुआ है।

पुराणादि स्मृतिशास्त्रोंमें 'गायत्री' शब्दकी एक अन्य निरुक्ति मिलती है। इसके अनुसार गायत्रीको 'गायत्री' इसलिये कहा जाता है कि यह अपने गान करनेवालेका त्राण (रक्षण) करती है।

प्रतिग्रहादन्नदोषाच्च पातकादुपपातकात्।
गायत्री प्रोच्यते तस्माद् गायन्तं त्रायते यतः॥

(बृहद् याज्ञवल्क्यस्मृति ५।४२)

'यतः यह गान करनेवाले द्विजका प्रतिग्रह-दोष तथा अन्नदोषसे एवं पातक तथा उपपातकसे त्राण करती है (बचाती है), इसलिये 'गायत्री' कही जाती है।

'गायन्तं त्रायते यस्माद् गायत्रीति स्मृता बुधैः।'

(भारद्वाजस्मृति ६।१४६)

'यह गायन (जप) करनेवालेका त्राण (रक्षण) करती है, अतः विद्वानोंने इसे गायत्री कहा है।'

निम्नाङ्कित वचनोंद्वारा भी इसी अभिप्राय की पुष्टि होती है।

'गायन्तं त्रायते यस्माद् गायत्रीति ततः स्मृता।'

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।३५)

'गातारं त्रायते यस्माद् गायत्री तेन गीयते।'

(स्कन्दपुराण, काशीखण्ड ९।३)

'गायन्तं त्रायते पापाद् गायत्रीत्युच्यते हि सा।'

(शिवपुराण, विद्येश्वरसंहिता १५।१६)

'अपने गायन करनेवालेकी पापसे रक्षा करनेके कारण ही गायत्री कहलाती है।'

'गायन्तं त्रायते यस्माद् गायत्रीत्यभिधीयते।'

(देवीभागवत ११।३।११)

'गायन (जप) करनेवालेका रक्षण करनेके कारण गायत्री कही जाती है।'

गायत्री-मन्त्र और उसका अर्थ

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ (शुक्लयजुर्वेद ३६।३)

मन्त्रार्थ—ॐ भूः—भूलोक, **भुवः**—अन्तरिक्ष लोक, **स्वः**—स्वर्गलोक अर्थात् समस्त लोकोंमें व्याप्त, **तत्**—वेदादि समस्त शास्त्रप्रसिद्ध, **देवस्य**—दिव्य प्रकाशस्वरूप, **सवितुः**—समस्त ब्रह्माण्डके उत्पादक सूर्यको, **वरेण्यम्**—वरणीय सर्वश्रेष्ठ, **भर्गः**—समस्त दुःखों और पापोंके निवारणमें समर्थ तेजके स्वरूपका, **धीमहि**—हम ध्यान करते हैं, **यः**—जो दिव्य तेज, **नः**—हम सांसारिक मनुष्यों की, **धियः**—बुद्धि-वृत्तियोंको, **प्रचोदयात्**—शुभ कर्ममें अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्षमें प्रवृत्त करें।

स्पष्टार्थ—'भूलोक, अन्तरिक्षलोक, स्वर्गलोक अर्थात् समस्त लोकोंमें व्याप्त वेदादि समस्त शास्त्रप्रसिद्ध दिव्य प्रकाशस्वरूप समस्त ब्रह्माण्डके उत्पादक सूर्यको वरणीय सर्वश्रेष्ठ समस्त दुःखों और पापोंके निवारणमें समर्थ तेजके स्वरूपका हम ध्यान करते हैं, जो वह दिव्य तेज हम सांसारिक मनुष्योंकी बुद्धि-वृत्तियोंको शुभ कर्ममें अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्षमें प्रवृत्त करें।'

गायत्रीमन्त्रका स्वरूप

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ (शुक्लयजुर्वेद ३६।३)

'भूलोक, अन्तरिक्षलोक, स्वर्गलोक अर्थात् समस्त लोकोंमें व्याप्त वेदादि समस्त शास्त्रप्रसिद्ध दिव्य प्रकाशस्वरूप समस्त ब्रह्माण्डके उत्पादक सूर्यको वरणीय सर्वश्रेष्ठ समस्त दुःखों और पापोंके निवारणमें समर्थ तेजके स्वरूपका हम ध्यान करते हैं, जो दिव्य तेज हम सांसारिक मनुष्योंकी बुद्धि-वृत्तियोंको शुभ कर्ममें अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्षमें प्रवृत्त करें।'

शास्त्रोंमें द्विजातिमात्रको विशेषतः ब्राह्मणोंको प्रतिदिन त्रिकाल-सन्ध्या करनेके लिये कहा गया है। सन्ध्यामें सूर्योपस्थान, प्राणायाम और गायत्रीमन्त्रका जप प्रधान है। सूर्योपस्थानसे अज्ञानकी निवृत्ति होती है, प्राणायामसे आयुकी वृद्धि होती है और गायत्रीमन्त्रकेजपसे काम-क्रोधादिजनित पापोंका क्षय होता है और मन निर्मल हो जाता है।

गायत्री परब्रह्मकी सात्त्विक शक्ति है, जिस शक्तिको ब्रह्माने तपस्याके द्वारा प्राप्त किया था और इसके पूर्वकी सृष्टिके अनुसार सृष्टि करनेमें वे समर्थ हुए थे। इसी बातको निम्नलिखित मन्त्र प्रकट करता है—

ॐ ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः। समुद्रादर्णवादधिसंवत्सरो अजायत। अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथा पूर्वमकल्पयत्। दिवञ्च पृथिवीञ्चान्तरिक्षमथो स्वः॥

(ऋग्वेद ८।८।४८)

'[महाप्रलयके बाद इस महाकल्पके प्रारम्भमें] सब ओरसे प्रकाशमान तपरूप परमात्मासे ऋत (सत्सङ्कल्प) और सत्यकी उत्पत्ति हुई। उसी परमात्मासे रात्रि और दिन (ब्रह्माकी रात्रि और दिन) प्रकट हुए और उसीसे जलमय समुद्रका आविर्भाव हुआ। जलमय समुद्रकी उत्पत्तिके पश्चात् दिनों और रात्रियोंको धारण करनेवाला कालस्वरूप संवत्सर प्रकट हुआ जो कि पलक मारनेवाले जङ्गम प्राणियों और स्थावरोंसे युक्त समस्त संसारको अपने अधीन रखनेवाला है। इसके बाद सबको धारण करनेवाले परमेश्वरने सूर्य, चन्द्रमा, दिव् (स्वर्गलोक), पृथिवी, अन्तरिक्ष तथा महर्लोक आदि लोकोंकी भी पूर्व कल्पके अनुसार सृष्टि की।'

गायत्री-मन्त्रमें तीन विभाग किये गये हैं, जैसा कि इसके विनियोग में लिखा हुआ है। पहला ओङ्कार (प्रणव), दूसरा 'भूर्भुवः स्वः' ये तीन व्याहृतियाँ और तीसरा गायत्री-मन्त्र। यथा—

[1]ॐकारस्य ब्रह्म ऋषिर्गायत्रीछन्दोऽग्निर्देवता शुक्लो वर्णः जपे विनियोगः। त्रिव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांस्यग्निवायुसूर्या देवता जपे विनियोगः। तत्सवितुरिति विश्वामित्र ऋषिर्गायत्रीछन्दः सविता देवता जपे विनियोगः।

---

१. गायत्री जपका विनियोग एक ही वार एक साथ किया जा सकता है। यथा—

ॐकारस्य ब्रह्म ऋषिर्दैवी गायत्रीछन्दः परमात्मा देवता, तिसृणां महाव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांस्यग्निवायुसूर्या देवताः, तत्सवितुरिति विश्वामित्र ऋषिर्गायत्रीछन्दः सविता देवता जपे विनियोगः।

श्वेतवर्णा समुद्दिष्टा कौशेयवसना तथा
श्वेतैर्विलेपनैः पुष्पैरलङ्कारैश्च भूषिता।
आदित्यमण्डलस्था च ब्रह्मलोकगताऽथवा
अक्षसूत्रधरा देवी पद्मासनगता शुभा॥

'गायत्री देवी श्वेत रेशमी वस्त्रोंसे विभूषित, सफेद चन्दन, पुष्प और आभूषणोंसे शोभित, सूर्यमण्डलमें स्थित अथवा ब्रह्मलोकमें विराजमान, अपने हाथमें जपमालाको धारण किये हुए पद्मासनमें स्थित हैं। इस प्रकारकी देवीका मैं ध्यान करता हूँ।'

उपर्युक्त गायत्रीके ध्यानसे स्पष्ट है कि गायत्री सत्त्वगुणमयी है। सत्त्वगुण निर्मल और प्रकाशक होता है। इस विषयकी पुष्टि भगवद्-गीता (१४।६) में भी की गयी है।

गायत्री दो प्रकारकी होती है—लौकिक और वैदिक। लौकिक गायत्रीमें चार चरण होते हैं और वैदिक गायत्री में तीन चरण होते हैं। जिस प्रकार लौकिक गायत्री-छन्दके छः अक्षरवाले चार चरणोंमें २४ अक्षर होते हैं, उसी प्रकार [1]वैदिक गायत्री-छन्दके आठ अक्षरवाले तीन चरणोंमें २४ अक्षर होते हैं। लौकिक और वैदिक गायत्रीमें इतना ही भेद है।

वैदिक गायत्रीमें तीन चरण होते हैं, अतएव गायत्रीका नाम 'त्रिपदा' है।

बृहदारण्यकोपनिषद् (५।१४।७) के अनुसार गायत्री 'त्रिपाद्' है। गायत्री-मन्त्रमें लौकिक छन्दकी तरह चार चरण न होते हुए भी वह 'त्रिपाद्' कहलाती है। अतएव गायत्रीका नाम 'त्रिपदा' है।

गायत्री-मन्त्र चतुर्विंशत्यक्षरात्मक और पादत्रयसे विभूषित है। इसके प्रत्येक पादमें आठ-आठ अक्षर होते हैं।

महर्षि कात्यायनकृत अनुक्रमणिका और ताण्ड्यमहाब्राह्मणके अनुसार वैदिक गायत्री-छन्दमें आठ-आठ अक्षरके तीन चरण होते हैं। इस नियमसे अनेक वैदिक-मन्त्र 'गायत्री' कहला सकते हैं, किन्तु यहाँ 'गायत्री' शब्द योगरूढ़ है, अतः **'तत्सवितुर्वरेण्यम्'** (शु० य० ३।३५) इत्यादि मन्त्र ही ग्राह्य होता है।

---

१. 'अग्निमीडे पुरोहितम्०' (ऋग्वेद १।१।१) यह मन्त्र वैदिक गायत्रीछन्दका उदाहरण है।

गायत्री छन्दके लक्षणाक्रान्त होनेसे ही 'गायत्री-मन्त्र' कहलाता है, ऐसी बात नहीं है। किन्तु जो मन्त्र अपने गायकों और पाठकोंकी रक्षा करता है वह 'गायत्री-मन्त्र' कहलाता है—

'गायन्तं त्रायते यस्माद् गायत्रीयं ततः स्मृता।' (व्यासः)

'जो गायन अथवा जप करनेवालेकी रक्षा करे, उसे गायत्री कहते हैं।'

'गायन्तं त्रायते यस्माद् गायत्रीत्युच्यते बुधैः।'

(मार्कण्डेयस्मृति)

'यह गायन अर्थात् गायत्री-जप करनेवालेका रक्षण करती है, अतः विद्वानोंने इसे गायत्री कहा है।'

'गायन्तं त्रायते यस्माद् गायत्री तेन सोच्यते।' (नागदेवः)

'अपने गायककी पापसे रक्षा करती है, अतः गायत्री कही जाती है।'

'गायन्तं त्रायते पापाद् गायत्रीत्युच्यते हि सा।

(शिवपुराण, विद्येश्वरसंहिता १५।१६)

'अपने गायककी (गान करनेवालेकी) पापसे रक्षा करती है, अतः गायत्री कहलाती है।'

गायन्तं त्रायते यस्माद् गायत्रीत्यभिधीयते।
प्रणवेन च संयुक्तां व्याहृतित्रयसंयुताम्॥

(देवीभागवत ११।३।११)

'प्रणव (ओङ्कार) और तीनों व्याहृतियों (भूः, भुवः, स्वः) से संयुक्त गायत्री अपने गायन (जप) करनेवालेकी रक्षा करती है, इसीसे गायत्री कही जाती है।'

गायत्री-छन्दमें २४ अक्षर हैं, किन्तु 'तत्सवितुर्वरेण्यम्' (शु० य० ३६।३) इत्यादि गायत्री-मन्त्रमें २३ ही अक्षर हैं। गायत्री-छन्दके नियमानुसार गायत्री-मन्त्रमें एक अक्षर कम है। अतः यह गायत्री-छन्दसे लक्षणाक्रान्त नहीं है। उपनिषद्में 'वरेण्यम्' के स्थानमें 'वरेणियम्' शब्द आता है। अतः गायत्री-मन्त्रके प्रारम्भमें 'ॐ' शब्द लगा देनेसे फिर छन्दमें कोई दोष नहीं रहता है। छन्दका हिसाब न होने पर भी छान्दोग्योपनिषद्की व्याख्यानुसार यह मन्त्र गायत्री-पद-वाच्य हो है।

चौबीस अक्षरोंवाला गायत्री-मन्त्र ब्रह्मपरक है। ब्रह्मपरक होनेसे इसको 'ब्रह्म-गायत्री' कहते हैं। यह गायत्री-छन्दमें होनेके कारण गायत्री और सविता (सूर्य) से सम्बन्धित होनेके कारण 'सावित्री' भी कही जाती है।

गायत्री-मन्त्र वैदिक मन्त्र है। वैदिक मन्त्रोंमें यह अत्यन्त श्रेष्ठ और शक्तिसम्पन्न है। गायत्री-मन्त्रका प्रत्येक पद और प्रत्येक वर्ण महत्त्वपूर्ण है। गायत्री-मन्त्रके प्रारम्भमें 'भूर्भुवः स्वः' ये जो तीन व्याहृतियाँ हैं, इनका महत्त्व वेदोंमें वर्णित है।

गायत्री-मन्त्रमें 'भूर्भुवः स्वः' ये जो व्याहृतियाँ हैं, इनमें तीन देवता (ब्रह्मा, विष्णु और महेश), तीन अग्नि (दक्षिणाग्नि, गार्हपत्याग्नि और आहवनीयाग्नि), तीन लोक (स्वर्ग, मर्त्य और पाताल) अथवा—पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्यौ—'पृथिव्यन्तरिक्षं द्यौः' (शतपथब्राह्मण ११।५।८।१), तीन प्रकृति (सात्त्विकी, राजसी और तामसी) और तीन काल (भूत, भविष्य और वर्त्तमान) की विशेष भावना विद्यमान है, जो कि गायत्री-मन्त्रके उपासककी सर्वदा सर्व प्रकारसे रक्षा करती है।

गायत्री-मन्त्रकी उत्पत्ति

गायत्री वेदोंकी माता है। गायत्रीसे ही चारों वेद प्रकट हुए हैं। वेदोंमें जो कुछ है उसका सार गायत्रीमें है। अतः गायत्रीको वेदोंका सार कहा जाता है।

यथा च मधुपुष्पेभ्यो घृतं दुग्धाद्रसात्पयः।
एवं हि सर्ववेदानां गायत्रीसार उच्यते॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।१६)

'जिस प्रकार पुष्पोंका सार मधु, दुग्धका सार घृत और रसका सार दुग्ध है, उसी प्रकार वेदोंका सार गायत्री कहा जाता है।'

भगवान् आद्य शङ्कराचार्यने भी गायत्रीको वेदोंका सार कहा है—

'गायत्रीं प्रणवादिसप्तव्याहृत्युपेतां शिरःसमेतां सर्ववेदसारम्।'

'प्रणवादि (ॐ भूर्भुवः स्वः स्वरोम्) सात व्याहृतियोंसे युक्त सिरसे सहित गायत्रीको समस्त वेदोंका सार कहा है।'

समस्त वेदोंकी सारभूत गायत्रीकी उत्पत्ति प्रजापति (ब्रह्मा) के मुखसे हुई है—

'गायतो मुखादुदपतदिति ह ब्राह्मणम् ।' (दैवतब्राह्मण ५।३)

'ब्रह्माजी जब गान कर रहे थे, तब उनके मुखसे गायत्री-मन्त्रकी उत्पत्ति हुई ।'

'गायतो मुखादुदपतदिति गायत्री ।' (निरुक्त ७।१२।५)

'गान करते हुए ब्रह्माके मुखसे सर्वप्रथम गायत्री-मन्त्रका प्राकट्य हुआ ।'

सर्वेषामेव वेदानां गुह्योपनिषदां तथा ।
सारभूता तु गायत्री निर्गता ब्रह्मणो मुखात् ॥

(छान्दोग्यपरिशिष्ट)

'समस्त वेदों एवं समस्त गूढ़ उपनिषदोंका सारभूत गायत्री है, जो कि ब्रह्माके मुखसे उत्पन्न हुई है ।'

गायत्री-मन्त्रकी उत्पत्ति इस प्रकार कही गयी है—

सर्वप्रथम ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद—इन तीनों वेदोंसे एक-एक अक्षर लिये गये हैं—अ, उ, म्—ॐ। इसको 'प्रणव' कहते हैं। इसके बाद एक-एक शब्द लिये गये है—भूः, भुवः, स्वः (भूर्भुवः स्वः)। इसको 'महाव्याहृति' कहते हैं। पश्चात् एक-एक पाद इस प्रकार चुने गये हैं—तत्सवितुर्वरेण्यम् , भर्गो देवस्य धीमहि, धियो यो नः प्रचोदयात् । उक्त तीनों पादोंको क्रमशः मिलाने पर गायत्री-मन्त्र परिपूर्ण हो जाता है ।

भगवान् मनुने भी यही कहा है—

अकारं चाप्युकारं च मकारं च प्रजापतिः ।
वेदत्रयान्निरदुहद् भूर्भुवः स्वरितीति च ॥

(मनुस्मृति २।७६)

'ब्रह्माने ऋक् , यजुः और साम—इन तीनों वेदोंसे अकार, उकार और मकार इन तीन अक्षररूप ॐकारको तथा 'भूर्भुवः स्वः' इन तीन व्याहृतियोंको क्रमसे दुहा है, निकाला है ।'

त्रिभ्य एव तु वेदेभ्यः पादं पादमदूदुहत् ।
तदित्यृचोऽस्याः सावित्र्याः परमेष्ठी प्रजापतिः ॥

(मनुस्मृति २।७७)

'परमेष्ठी ब्रह्माने ऋक् , यजुः और साम—इन तीन वेदोंसे ही 'तत्' इस सावित्री (गायत्री) ऋचाका एक-एक पाद निकाला ।'

मनुसंहिता (२।७६, ७७) में भी यही लिखा है—

अकारश्चाप्युकारश्च मकारश्च प्रजापतिः ।
वेदत्रयान्निरदुहद् भूर्भुवः स्वरितीति च ॥
त्रिभ्य एव तु वेदेभ्यः पादं पादमदूदुहत् ।
तदित्यृचोऽस्याः सावित्र्याः परमेष्ठी प्रजापतिः ॥

'अकार 'विष्णु', उकार 'ब्रह्मा' और मकार 'महेश्वर' हैं, जो वर्ण-त्रय कहे गये हैं। भूः (भूर्लोक–पृथ्वी), भुवः (पितृलोक) और स्वः (स्वर्गलोक), ये तीन व्याहृतियाँ हैं एवं गायत्रीमें एक-एक पाद ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद हैं। ब्रह्माने इन तीनों वेदोंसे सार ग्रहण कर महत्त्वपूर्ण गायत्री-मन्त्रको प्रकट किया।'

ओङ्कारपूर्विकातिस्रो महाव्याहृतयोऽव्ययाः ।
त्रिपदा चैव सावित्री विज्ञेयं ब्रह्मणो मुखम् ॥ (मनुस्मृति २।८१)

'जिनके पहले ओङ्कार है, ऐसी अविनाशिनी 'भूः, भुवः, स्वः' इन तीन महाव्याहृति और तीन पदवाली सावित्रीको ब्रह्माका मुख जानना चाहिये।'

'ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म' (भगवद्गीता ८।१३) के अनुसार 'ॐ' एकाक्षरब्रह्म है। एकाक्षरब्रह्मस्वरूप 'ॐ' में अ, उ और म्—ये तीन वर्ण हैं। ॐ के प्रत्येक वर्णकी व्याख्या गायत्रीका एक-एक पाद है, जो कि [1]'त्रिपदागायत्री' कही जाती है। त्रिपदागायत्रीके एक-एक पादसे ही एक-एक वेदका प्रादुर्भाव हुआ, जो कि वेदत्रयी-रूपसे परिणत हुए। अतएव 'ॐ'को वेदोंका बीज और गायत्रीको वेदोंकी माता कहा गया है।

गायत्रीके विभिन्न नाम

गायत्री, सावित्री, ब्रह्मगायत्री, गुरुमन्त्र, वेदमाता, देवमाता आदि गायत्रीके नाम हैं।

गायत्री-मन्त्रका 'गायत्री-छन्द' है, इसलिये इसको 'गायत्री-मन्त्र' कहते हैं। सविता (सूर्य) से सम्बन्ध होनेके कारण इसको 'सावित्री' कहते हैं। वेद (ब्रह्म) से सम्बन्ध रखने तथा ब्राह्मणोंकी उपास्या होनेके कारण इसको 'ब्रह्मगायत्री' कहते हैं। उपनयनके समय द्विज

१. परमेष्ठी प्रजापतिने ऋक्, यजुः और साम—इन तीन वेदोंसे गायत्रीका एक-एक पाद निकाला। इसलिये वह 'त्रिपदागायत्री' कही जाती है।

बालकको गुरुके द्वारा गायत्री-मन्त्रका उपदेश होनेके कारण इसको 'गुरुमन्त्र' कहते हैं। वेदोंकी जननी होनेके कारण इसको 'वेदमाता' और देवोंकी जननी होनेके कारण 'देवमाता' कहते हैं।

गायत्रीके ध्यान

गायत्री [1]त्रिशक्तिस्वरूपिणी है। अतएव तीन कालकी सन्ध्योपासनामें गायत्रीका तीन रूपोंमें ध्यान किया जाता है। अर्थात् ब्रह्मरूपमें गायत्रीका, विष्णुरूपमें सावित्रीका और रुद्ररूपमें सरस्वतीका ध्यान किया जाता है।

भगवान् वेदव्यासजीने कहा है—एक ही गायत्री कालभेदसे तीन रूपोंमें व्यवहृत होती है—

[2]गायत्री नाम पूर्वाह्णे सावित्री मध्यमे दिने।
सरस्वती च सायाह्ने सैव सन्ध्या त्रिषु स्मृता॥

'वही पूर्वाह्णमें गायत्री, मध्याह्नमें सावित्री, सायङ्कालमें सरस्वती तथा तीनों कालोंमें सन्ध्या नामसे व्यवहृत कही गयी है।'

गायत्रीका गान (जप) करनेवाले पुरुषोंके प्राणोंका रक्षण करनेके कारण गायत्री, सूर्यको प्रकाशित करने और जगत्को उत्पन्न करनेके कारण सावित्री और वाणीरूप होनेके कारण सरस्वती कही जाती है।

गायत्री, सावित्री और सरस्वती—ये तीनों नाम गायत्रीके ही वाचक हैं।

तीनों कालोंके तीन ध्यान बतलाये गये हैं—

(१) ॐ प्रातर्गायत्री रविमण्डलमध्यस्था रक्तवर्णा द्विभुजा अक्षसूत्रकमण्डलुधरा हंसासनसमारूढा ब्रह्माणी ब्रह्मदैवत्या कुमारी ऋग्वेदोदाहृता ध्येया।

(२) ॐ मध्याह्ने सावित्री रविमण्डलमध्यस्था कृष्णवर्णा चतुर्भुजा त्रिनेत्रा शङ्खचक्रगदापद्महस्ता गरुडारूढा युवती वैष्णवी विष्णुदैवत्या यजुर्वेदोदाहृता ध्येया।

---

१. गायत्री ब्रह्मरूपा स्याद् सावित्री विष्णुरूपिणी।
सरस्वती रुद्ररूपा उपास्या मूर्तिभेदतः॥

२. गायत्री प्रातः सावित्री मध्यन्दिने सरस्वती सायमिति।
(त्रिपुरतापिन्युपनिषद्)

(३) ॐ सायाह्ने सरस्वती रविमण्डलमध्यस्था शुक्लवर्णा चतुर्भुजा त्रिशूलडमरूपाशपात्रकरा वृषभासनरूढा वृद्धा रुद्राणी रुद्रदैवत्या सामवेदोदाहृता ध्येया ।

[1]'प्रातःकालमें गायत्री रविमण्डल-मध्य-स्थिता हैं। रक्तवर्णा हैं, दो भुजाएँ हैं, रुद्राक्ष, सूत्र-कमण्डलु धारण किये हुए हैं, हंस पर सवार हैं। ये ब्रह्माणी कुमारी-अवस्थासे युक्त हैं और ऋग्वेदके द्वारा प्रतिपादित हैं।'

'मध्याह्नकालमें सावित्री रविमण्डल-मध्यस्थिता हैं; कृष्णवर्णा हैं, चार भुजाधारिणी हैं, त्रिनेत्रा हैं, हाथोंमें शङ्ख-चक्र-गदा-पद्म लिये हैं। गरुड़ पर आरूढ़ हैं। ये युवती एवं वैष्णवी हैं और यजुर्वेदसे उदाहृत हैं।'

'सायङ्कालमें गायत्रीका नाम सरस्वती है, ये रविमण्डल-मध्य-स्थिता हैं, शुक्लवर्णा हैं, चतुर्भुजा हैं। हाथोंमें त्रिशूल, डमरू, पाश एवं पात्र लिये हैं। वृषभ पर आरूढ़ हैं, ये रुद्राणी वृद्धा हैं और सामवेदके द्वारा वर्णित हैं।'

दूसरे ध्यान

रक्तश्वेतहिरण्यनीलधवलैर्युक्तां त्रिनेत्रोज्ज्वलां
रक्तां रक्तनवस्रजं मणिगणैर्युक्तां कुमारीमिमाम्।
गायत्रीं कमलासनां करतलव्यानद्धकुण्डाम्बुजां
पद्माक्षीं च वरस्रजं च दधतीं हंसाधिरूढां भजे॥

(देवीभागवत १२।६।६)

'जो रक्त, श्वेत, पीत, नील और धवल वर्णोंके श्रीमुखोंसे सम्पन्न हैं, तीन नेत्रोंसे जिनका विग्रह देदीप्यमान हो रहा है, जिन्होंने अपने रक्तवर्ण शरीरको नूतन लाल कमलोंकी मालासे सजा रखा है, जो अनेक मणियोंसे अलंकृत हैं, कमलके आसन पर विराजमान हैं, जिनके

---

१. कहीं प्रातः कुमारी हंसारूढ़ा, मध्याह्नमें युवती वृषभारूढ़ा और सायङ्कालमें वृद्धा गरुड़वाहनाके ध्यानका वर्णन भी है।

दो हाथोंमें कमल और कुण्डिका एवं दो हाथोंमें वर तथा अक्षमाला सुशोभित हैं, उन हंसकी सवारी करनेवाली, कुमारी-अवस्थासे सम्पन्न, भगवती गायत्रीकी मैं उपासना करता हूँ ।'

मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणै-
र्युक्तामिन्दुनिबद्धरत्नमुकुटां तत्त्वार्थवर्णात्मिकाम् ।
गायत्रीं वरदाभयाङ्कुशकशाः शुभ्रं कपालं गुणं
शङ्खं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥

(देवीभागवत १२।३।१०)

'वे मोती, मूँगा, सुवर्ण, नीलमणि तथा उज्ज्वल प्रभासे युक्त (पाँच) मुखोंसे सुशोभित हैं । तीन नेत्रोंसे उनके मुखोंकी अनुपम शोभा होती है । उनके रत्नमय मुकुटमें चन्द्रमा जड़े हुए हैं । वे वरदायिनी गायत्री अपने दस हाथोंमें अभय और वर-मुद्राएँ, अङ्कुश, पाश शुभ्र, कपाल, रस्सी, शङ्ख, चक्र और दो कमल धारण करती हैं ।'

त्रिकाल गायत्री-ध्यान

प्रातःकाल–हंससमारूढा कुमारी ब्रह्माणी

मध्याह्न–गरुडारूढा युवती वैष्णवी

सायाह्न–वृषभासनसमारूढा वृद्धा रुद्राणी

गायत्री-मन्त्रसे द्विजत्वकी प्राप्ति

गायत्री-मन्त्र 'वैदिक-मन्त्र' है। उसकी उपासनाका अधिकार केवल द्विजको है। द्विजत्वकी प्राप्ति उपनयन-संस्कारसे होती है। स्मृतिमें कहा गया है—

'जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद् द्विज उच्यते।'

'जन्मसे जन्मी शूद्र होता है, फिर वह संस्कारसे द्विज होता है।'

'जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विज उच्यते।'

(अत्रिस्मृति १३८)

'ब्राह्मणके बालकको जन्मसे ही ब्राह्मण समझना चाहिये। संस्कारोंसे उसकी द्विज संज्ञा होती है।'

'जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्काराद् द्विज उच्यते।' (पैठीनसिः)

'ब्राह्मणके बालकको जन्मसे ही ब्राह्मण समझना चाहिये, फिर उसकी संस्कारसे द्विज संज्ञा होती है।'

यथा स्पर्शमणिस्पर्शात् ताम्रोऽपि काञ्चनं भवेत्।
गायत्रीसहितश्चात्मा द्विजात्मा तेन ईरितः॥

(गायत्रीतन्त्र)

'जिस प्रकार पारसमणिके स्पर्शसे ताम्र भी सुवर्ण बन जाता है, उसी प्रकार गायत्री-मन्त्रसे दीक्षित जीवात्मा द्विजत्वको प्राप्त करता है।'

'द्विज' शब्दकी व्युत्पत्ति **'द्वाभ्यां जन्मसंस्काराभ्यां जायते द्विजः'** यों की गयी है। द्विजका दूसरा जन्म उपनयन-संस्कारमें होता है। अतः उपनयन-संस्काररूप जन्म ही द्विजत्वका सम्पादक है। इसलिये यज्ञोपवीत-संस्कारमें ही द्विज गुरुके द्वारा 'गायत्री-मन्त्र'की दीक्षा प्राप्तकर 'द्विजत्व'को प्राप्त करता है। अतः गायत्री-मन्त्र द्विजत्वका सम्पादक है। इसलिये द्विजत्वकी प्राप्तिके लिये त्रैवर्णिकोंको उपनयन-संस्कारद्वारा गायत्री-मन्त्रकी दीक्षा लेनी चाहिये।

वेदादि शास्त्रोंमें लिखा है कि द्विजातिका जन्म दो प्रकारसे होता है। एक तो माताके गर्भसे उत्पन्न होनेपर और दूसरा उपनयन-संस्कारमें गुरुके द्वारा 'गायत्री-मन्त्र' ग्रहण करने पर होता है।

व्यासस्मृति (१।२२) में लिखा है—

द्वे जन्मनी द्विजातीनां मातुः स्यात् प्रथमं तयोः।
द्वितीयं छन्दसां मातुर्ग्रहणाद् विधिवद् गुरोः॥

'द्विजातियोंके दो जन्म प्रसिद्ध हैं, उन दोनों जन्मोंमें प्रथम जन्म मातासे होता है और दूसरा जन्म उपनयन-संस्कारमें विधिवद् गुरुसे गायत्री-मन्त्रके ग्रहणसे होता है।'

मनुस्मृति (२।१६९) में भी कहा है—

'मातु रग्रेऽधिजननं द्वितीयं मौञ्जिबन्धने।'

'द्विजका प्रथम जन्म मातासे होता है और द्वितीय जन्म यज्ञोपवीत-संस्कारसे होता है।'

उपनयनके पूर्व ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य—ये तीनों 'एकज' कहलाते हैं। इन्हें उपनयनके समय आचार्य तीन दिन अपने गर्भ (गुरुकुल) में रखते हैं। पश्चात् तीन दिनके बाद फिर उनका दूसरी बार जन्म होता है। अतः जो ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य उपनयनके पूर्व 'एकज' थे, वे अब आचार्य (गुरु) के द्वारा उपनयनमें गायत्री-मन्त्रकी दीक्षा प्राप्त कर 'द्विज' हो गये। अतः स्पष्ट है कि उपनयन-संस्कारके पूर्व जो ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य— ये तीनों 'एकज' कहे जाते हैं, वे उपनयन-संस्कारमें आचार्यके द्वारा गायत्री-मन्त्रकी दीक्षा प्राप्त करनेके बाद द्विज अर्थात् द्विजत्वको प्राप्त करते हैं। अतएव ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य—इनका एक जन्म माताके गर्भसे होता है और दूसरा जन्म आचार्यके गर्भ (गुरुकुल) से होता है।

आचार्य ब्रह्मचारी शिष्यको अपने पास गुरुकुलमें रखकर सर्वप्रथम उसको गर्भस्थ ब्रह्मचारी (बालक) का रूप देता है और उस गर्भस्थ ब्रह्मचारी द्विजके महत्त्वका वर्णन अथर्ववेद (११।५।३) में इस प्रकार किया है—

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः।
तं रात्रीस्तिस्र उदरे बिभर्ति, तं जातं द्रष्टुमभिसंयन्ति देवाः॥

'आचार्य उपनयन करता हुआ ब्रह्मचारी शिष्यको गर्भके रूपमें अपने समीप रखकर (अपनी जिम्मेदारीमें रखकर) उसको अन्दर गर्भस्थ बनाता है, उसको तीन रात्रि अपने उदरमें लिये हुए धारण करता है। पश्चात् उस ब्रह्मचारीका जन्म देखनेके लिये समस्त देवगण आते हैं।'

आचार्यके द्वारा सम्पादित ब्रह्मचारीका दूसरा जन्म विशेष महत्त्वपूर्ण कहा गया है—

आचार्यस्त्वस्य यां जातिं विधिवद् वेदपारगः।
उत्पादयति सावित्र्या सा सत्या साजरामरा ॥

(मनुस्मृति २।१४८)

'वेदका ज्ञाता आचार्य उपयनके समय विधिपूर्वक गायत्री-मन्त्रके उपदेशसे जिस द्वितीय जन्मको प्रदान करता है, वही जाति सत्य, अजर और अमर है।'

द्विजका उपनयनमें जो नया जन्म होता है, इसमें उसकी गायत्री माता होती है और आचार्य पिता होता है।

तत्र यद् ब्रह्मजन्मास्य मौञ्जीबन्धनचिह्नितम्।
तत्रास्य माता सावित्री पिता त्वाचार्य उच्यते ॥

(मनुस्मृति २।१७०)

'इन जन्मोंमें यज्ञोपवीतके चिह्नवाला जो ब्रह्मजन्म है उसमें इस (ब्राह्मण) की गायत्री माता और आचार्य पिता कहलाता है।'

गायत्रीके अधिकारी

शास्त्रोंमें लिखा है कि जिनका यज्ञोपवीत-संस्कार हो चुका है, उनको ही गायत्रीकी उपासना (जप) करनी चाहिये। किन्तु दुःख का विषय है कि आज बहुत-से लोग उपनयन-संस्कारविहीन मनुष्य शास्त्रोंकी अवहेलनाकर गायत्रीका जप करते हैं। उपनयन-संस्कार-विहीन मनुष्योंको कतिपय सन्त, महात्मा, विद्वान्, उपदेशक और कथावाचक लोभवश गायत्रीजप करनेका उपदेश करते हैं। इसका दुष्परिणाम यह हो रहा है कि आज अधिक संख्यामें स्त्रियाँ और शूद्र गायत्रीका जप और हवन करते हैं। बहुत-सी स्त्रियोंको तो प्रणवका जप करते हुए और शालग्राम तथा नर्मदेश्वरका पूजन करते हुए भी देखा गया है। वस्तुतः विचार किया जाय, तो सिद्ध होता है कि शास्त्रविरुद्ध कार्य करनेसे मनुष्यका पतन ही होता है। अतः शास्त्र-विरुद्ध कार्य किसीको भी नहीं करना चाहिये।

गायत्रीकी उपासनाका अधिकार यज्ञोपवीत-संस्कार होनेके बाद ही होता है। अतः यज्ञोपवीत-संस्कार होनेके अनन्तर प्रत्येक द्विजको, विशेषतः ब्राह्मणको गायत्रीकी उपासना अवश्य करनी चाहिये।

गायत्रीके अनधिकारी

ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य—ये तीन वर्ण 'द्विज' कहलाते हैं। शास्त्रोंमें इन्हीं तीन वर्णका उपनयन-संस्कार करनेका विधान है, शूद्रका नहीं। अतः ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यका ही उपनयन-संस्कार होता है, शूद्रका नहीं होता। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य—इनका उपनयन-संस्कार इसलिये होता है कि ये 'द्विज' अर्थात् 'द्विजन्मा' कहलाते हैं। शूद्रका उपनयन-संस्कार नहीं होता, इसलिये वह 'द्विज' नहीं कहलाता।

ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य—इन तीनोंको द्विजत्व प्राप्त है, अतः इन्हें गायत्री-मन्त्रका जप और वेदाध्ययनका अधिकार है। शूद्रको द्विजत्व प्राप्त नहीं है, अतः वह द्विजत्वके अभावके कारण गायत्री-मन्त्रका जप और वेदाध्ययन करनेका अधिकारी नहीं है। इसलिये स्पष्ट है कि जो द्विज हैं, उन्हींको गायत्री-मन्त्रके उच्चारण, गायत्रीका जप और वेदाध्ययनका अधिकार है, द्विजेतरको नहीं।

ब्रह्माने गायत्री आदि तीन छन्दोंसे केवल त्रैवर्णिकोंकी सृष्टि की, किन्तु शूद्रोंकी सृष्टि नहीं की, यह वसिष्ठस्मृतिके चतुर्थाध्याय में स्पष्ट लिखा है—

'गायत्र्या छन्दसा ब्राह्मणमसृजत्, त्रिष्टुभा राजन्यम्, जगत्या वैश्यम्, न केनचिच्छन्दसा शूद्रम्।'

'ब्रह्माने गायत्री छन्दसे ब्राह्मणकी, त्रिष्टुप् छन्दसे क्षत्रियकी और जगती छन्दसे वैश्यकी सृष्टि की, किन्तु शूद्रकी सृष्टि किसी छन्दसे नहीं की।'

अतः स्पष्ट है कि त्रैवर्णिकोंका ही द्वितीय जन्म उपनयन-संस्कारमें गायत्री-मन्त्र ग्रहणके अनन्तर होता है, शूद्रोंका नहीं। अतः शूद्र उपनयन-संस्कारजन्य द्वितीय जन्मके अभावके कारण गायत्री-मन्त्रके अधिकारी नहीं हैं।

पारस्करगृह्यसूत्र (२।७–९) में ब्राह्मणके लिये ब्रह्म-गायत्री, क्षत्रियोंके लिये त्रिष्टुप् गायत्री और वैश्यके लिये जगती गायत्रीका उल्लेख किया है। अतः स्पष्ट है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य—इन तीन वर्णोंको गायत्रीका अधिकार है, शूद्रको नहीं। शूद्रको गायत्रीका यदि अधिकार होता, तो उसके लिये भी पारस्करगृह्यसूत्रमें किसी गायत्रीका नामोल्लेख अवश्य होता।

शूद्रकी तरह स्त्रियोंको भी यज्ञोपवीतका अधिकार नहीं है। स्त्रियोंके लिये कहा गया है कि—

'पुरा कल्पे तु नारीणां मौञ्जीबन्धनमिष्यते।
अध्यापनं च वेदानां सावित्रीवाचनं तथा॥

'पूर्व युगमें स्त्रियोंका यज्ञोपवीत-संस्कार करना, वेदोंका पढ़ाना और गायत्रीका उच्चारण करना कहा गया था।'

उपर्युक्त श्लोक पूर्व युगके लिये ही था, इस युगके लिये नहीं। अतएव इस युगमें स्त्रियोंके लिये यज्ञोपवीत-संस्कार, वेदोंका अध्यापन और गायत्रीका उपदेश—ये सभी त्याज्य हैं।

'पुरा कल्पे तु नारीणाम्'के अनुसार पूर्व युगमें भी केवल स्त्रियोंको ही यज्ञोपवीत-संस्कार और वेदाध्ययन आदिका अधिकार प्राप्त था, किन्तु शूद्रोंको तो उस युगमें भी यज्ञोपवीत-संस्कार एवं वेदाध्ययन आदिका अधिकार नहीं था। यदि शूद्रोंको भी यज्ञोपवीत-संस्कार आदिका अधिकार होता तो उनके लिये भी शास्त्रकार इस प्रकार श्लोक लिख देते—

पुरा कल्पे तु शूद्राणां मौञ्जीबन्धनमिष्यते।
अध्यापनं च वेदानां सावित्रीवाचनं तथा॥

अतः स्पष्ट है कि स्त्रीको वर्तमान युगमें और शूद्रको किसी भी युगमें यज्ञोपवीत-संस्कार, वेदाध्ययन और गायत्री-मन्त्रके उच्चारणका अधिकार नहीं है।

अथर्ववेदके नृसिंहपूर्वतापनीयोपनिषद् (१।३) में भी स्त्री और शूद्रके लिये गायत्री-मन्त्र और प्रणव आदिका स्पष्ट निषेध लिखा है—
'सावित्रीं प्रणवं यजुर्लक्ष्मीं स्त्रीशूद्राय नेच्छन्ति। सावित्रीं लक्ष्मीं[2]

---

१. पुरा कल्पे कुमारीणां मौञ्जीबन्धनमिष्यते।
अध्यापनं च वेदानां सावित्रीवाचनं तथा॥
पिता पितृव्यो भ्राता वा नैनामध्यापयेद् परः॥ (यमस्मृति)

'पूर्व कालमें कुमारियोंका उपनयन, वेदारम्भ और गायत्री-उपदेश होता था, परन्तु उनके गुरु या अध्यापक केवल पिता, चाचा अथवा बड़े भाई ही होते थे। दूसरे किसीको यह अधिकार नहीं था कि उन्हें पढ़ावे।'

२. लक्ष्मीम्—श्रीबीजम्।

यजुः प्रणवं यदि जानीयात् स्त्रीशूद्रः, स मृतोऽधो गच्छति। तस्मात् सर्वदा नाचष्टे, यद्याचष्टे स आचार्यस्तेनैव मृतोऽधो गच्छति।'

'स्त्री और शूद्रको गायत्री, प्रणव, यजुर्वेद-मन्त्र (वेदमन्त्र) और लक्ष्मी-मन्त्रका अधिकार नहीं है। यदि स्त्री और शूद्र श्रीबीजसे अभिमन्त्रित गायत्री, वेदमन्त्र अथवा प्रणवका उच्चारण करते हैं, तो वे मृत्युके पश्चात् नरकगामी होते हैं। अतः स्त्री और शूद्रको सावित्री (गायत्री) तथा प्रणवादिका उच्चारण करना सर्वथा निषिद्ध है। यदि कोई आचार्य अथवा गुरु स्त्री और शूद्रको सावित्री आदिका अध्ययन कराता है, तो वह भी मृत्युके बाद अधोलोक (नरकलोक) में जाता है।'

भगवान् आद्य शङ्कराचार्य ने उपर्युक्त नृसिंहपूर्वतापनीयोपनिषद्-की व्याख्या इस प्रकार की है—

'सावित्रीं प्रणवं यजुर्लक्ष्मीं स्त्रीशूद्राय स्त्री च शूद्रश्च स्त्रीशूद्रं तस्मै स्त्रीशूद्राय नेच्छन्तीति निषेधं कुर्वन् प्रधानोपासनायां स्त्री-शूद्रस्याप्यधिकारं दर्शयति··························सावित्रीं लक्ष्मीं यजुः प्रणवं यदि जानीयात् स्त्रीशूद्रः स मृतः अधः नरकं गच्छतीति प्रत्य-वायदर्शनेन निषेधमेव दृढयति। तस्मात् सर्वदा नाचष्टे इति कदा-चिदपि नाचष्टे इत्याचार्यस्य निषेधं दर्शयति। यद्याचष्टे स यथार्थस्ते-नैव कथनेन मृतोऽधो गच्छतीति प्रत्यवायदर्शनेन निषेधमेव इति।'

भगवान् आद्य शङ्कराचार्यजीके मतसे भी स्पष्ट है कि—किसी भी वर्णकी स्त्री और शूद्रको वेदमन्त्र, प्रणव एवं गायन्त्री-मन्त्रका अधिकार नहीं है। यदि कोई स्त्री और शूद्र गायत्री-मन्त्र आदिका उच्चारण करते हैं, तो उन्हें प्रत्यवायका भाजन बनना पड़ता है और मृत्युके बाद वे अधोलोकमें जाते हैं। यदि कोई आचार्य अथवा गुरु स्त्री और शूद्रको गायत्री-मन्त्रादिका उच्चारण कराता है, तो वह भी अधोलोक-में जाता है।

शास्त्रोंमें लिखा है कि जिनका यज्ञोपवीत-संस्कार हो चुका है, उन्हें ही गायत्रीका जप करना चाहिये। किन्तु दुःखका विषय है कि—आज बहुतसे उपनयन-संस्कारविहीन मनुष्य शास्त्रोंकी अवहेलनाकर गायत्रीका जप करते हैं। उपनयनसंस्कारविहीन मनुष्योंको कतिपय सन्त, महात्मा, विद्वान्, उपदेशक और कथावाचक लोभवश गायत्री-जप और हवन करनेका उपदेश करते हैं। इसका दुष्परिणाम यह हो

रहा है कि आज अधिक संख्यामें स्त्रियों और शूद्रोंको गायत्रीका जप और हवन करते हुए और शालग्राम तथा नर्मदेश्वरका पूजन करते हुए भी देखा गया है। वस्तुतः विचार किया जाय, तो सिद्ध होता है कि शास्त्रविरुद्ध कार्य करनेसे मनुष्यका पतन ही होता है। अतः शास्त्रविरुद्ध कार्य किसीको भी नहीं करना चाहिये।

प्रत्येक जातिका धर्म भिन्न-भिन्न है। जैसे—द्विजके लिये गायत्री-मन्त्रका जप एवं वेदाध्ययन कर्तव्य है, अतः उन्हें गायत्रीजप तथा वेदाध्ययनसे पुण्यकी प्राप्ति होती है। किन्तु यही गायत्री-जप एवं वेदाध्ययन स्त्री और शूद्रके लिये अकर्तव्य है, अतः उन्हें गायत्रींजप और वेदाध्ययनसे पुण्य-प्राप्तिके वजाय पापकी प्राप्ति होती है। अतः स्पष्ट है कि शास्त्रोंमें जिस जातिके लिये जो धर्म कहा गया है, उसको तदनुसार अपने धर्मका पालन करना चाहिये। शास्त्रानुसार स्वधर्मके पालनमें ही प्रत्येक जातिका शुभ और कल्याण है। जो मनुष्य शास्त्र-विरुद्ध कार्य करते हैं, उनकी विशेष हानि होती है।

गायत्रीसे रहित ब्राह्मण निन्दनीय है

जो ब्राह्मण उपनयन-संस्कार होनेके बाद गायत्रीकी उपासना (जप) करता है, वह परम पवित्र ब्राह्मण कहा जाता है और जो गायत्रीकी उपासना नहीं करता, वह परम अपवित्र ब्राह्मण कहा जाता है। गायत्रीकी उपासना न करनेवाले ब्राह्मणको तो शूद्रसे भी अधिक अपवित्र कहा गया है।

'गायत्रीरहितो विप्रः शूद्रादप्यशुचिर्भवेत्।'

(पाराशरस्मृति ८।३२)

'गायत्रीसे रहित ब्राह्मण शूद्रसे भी अधिक अपवित्र होता है।'

गायत्रीसे रहित ब्राह्मणके बारेमें तो यहाँ तक लिखा है—

गायत्रीरहितो विप्रो न स्पृशेत् तुलसीदलम्।
हरेर्नाम न गृह्णीयात् गायत्रीरहितो द्विजः॥
महाचण्डालसदृशस्तस्य किं विष्णुपूजने॥

(गायत्रीतन्त्र, तृतीयपटल)

'गायत्रीसे रहित जो ब्राह्मण है, वह तुलसीदलका स्पर्श न करे। गायत्रीसे रहित द्विज भगवान् विष्णुका नामोच्चारण न करे। क्योंकि

वह द्विज गायत्रीसे रहित होनेके कारण महाचाण्डालके सदृश कहा गया है। अतः उसके किये हुए विष्णुपूजनसे क्या लाभ ?'

ब्राह्मणके लिये गायत्रीकी उपासना परमावश्यक कही गयी है। जो ब्राह्मण गायत्रीकी उपासना करता है, वही ब्राह्मणत्व को प्राप्त करता है और जो गायत्रीकी उपासना नहीं करता, वह ब्राह्मणत्वसे च्युत हो जाता है। अतः ब्राह्मणत्वकी प्राप्तिके लिये गायत्रीकी उपासना ही श्रेष्ठ साधन है।

ब्राह्मणत्वकी प्राप्ति गायत्रीकी उपासनासे ही हो सकती है, न कि वेदादि शास्त्रोंके पढ़नेसे। लिखा भी है—

न ब्राह्मणो वेदपाठान्न शास्त्रपठनादपि।
देव्यास्त्रिकालमभ्यासाद् ब्राह्मणः स्याद्धि नान्यथा ॥

(स्कन्दपुराण, काशीखण्ड, पूर्वार्ध, ४१।७७)

'वेदोंके पढ़नेसे अथवा शास्त्रोंके अध्ययनसे कोई ब्राह्मण नहीं हो सकता। त्रिकाल सन्ध्यामें गायत्री देवीके बार-बार उच्चारणसे ही ब्राह्मण हो सकता है, अन्यथा नहीं।'

महर्षि पराशरने कहा है कि जो ब्राह्मण गायत्री-उपासनाविहीन है, वह समस्त शास्त्रोंका अध्ययन करने पर भी ब्राह्मणत्व प्राप्त नहीं कर सकता—

किं वेदैः पठितैः सर्वैः सेतिहासपुराणकैः।
साङ्गैः सावित्रीहीनो यो न विप्रत्वमवाप्नुयात् ॥

(बृहत् पाराशरस्मृति ५।१४)

'समस्त अङ्गों और इतिहास-पुराणके साथ सभी वेदोंके अध्ययनसे उस पुरुषका क्या लाभ ? जिसने सावित्रीहीन होनेसे विप्रत्व (द्विजत्व) प्राप्त नहीं किया।'

अतः स्पष्ट है कि द्विजत्वकी प्राप्ति केवल गायत्रीकी उपासनासे ही हो सकती है। इसलिये द्विजत्वकी प्राप्तिके लिये गायत्रीकी उपासना आवश्यक है।

गायत्रीकी उपासना और उसका महत्त्व

'उप' उपसर्गपूर्वक 'आस् उपवेशने' धातुसे 'युच्' प्रत्यय करने पर टाप्प्रत्ययान्त 'उपासना' शब्द बनता है।

उपासनामें 'उप' और 'आसना' ये दो शब्द हैं। 'उप' का अर्थ समीप और 'आसना' का अर्थ स्थिति है। अर्थात् अपने उपास्य (इष्टदेव) के प्रति अनुराग होनेपर उनका श्रद्धाभक्तिसे जो चिन्तन, अर्चन, पूजन किया जाय, उसे 'उपासना' कहते हैं।

प्रत्येक जाति और सम्प्रदायमें किसी न किसी रूपमें 'उपासना' प्रचलित है। उपासनाके बिना कोई भी जाति और सम्प्रदाय आत्मोन्नति नहीं कर सकता। अतः प्रत्येक जाति और प्रत्येक सम्प्रदायमें उपासनाकी विशेष आवश्यकता है।

विचार करनेसे सिद्ध होता है कि उपासना ही मनुष्यकी आत्माका मुख्य आहार है। उसके बिना उसकी आत्मसन्तुष्टि नहीं हो सकती। अतः मनुष्यकी आत्मसन्तुष्टिके लिये उपासनारूपी आहारकी विशेष आवश्यकता है। उपासनारूपी आहारके लिये मनुष्यको किसी देव-विशेषकी उपासना अवश्य करनी चाहिये। देव-विशेषकी उपासना करनेके लिये मनुष्य स्वतन्त्र है। वह अपनी रुचिके अनुसार किसी देवताकी उपासना कर सकता है।

वेदोंमें अनेक उपासनाओंका वर्णन मिलता है, किन्तु उन सभी उपासनाओंमें गायत्रीकी उपासनाका विशेष महत्त्व कहा गया है। गायत्रीकी उपासना 'वैदिक उपासना' कही जाती है। गायत्रीकी उपासनामें 'गायत्री-मन्त्र' का जप किया जाता है। गायत्री-मन्त्रमें परब्रह्म परमेश्वरकी स्तुति है। अतः गायत्री-मन्त्रके जप करनेसे परब्रह्म परमेश्वरकी स्तुति होती है। गायत्री-मन्त्रके जपके द्वारा परब्रह्मकी स्तुति करना ही 'गायत्री-उपासना' है।

गायत्रीकी उपासना परब्रह्म परमात्माकी उपासना है। देवीभागवत (६।१।४२) में कहा है—

परब्रह्मरूपा च निर्वाणपददायिनी।
ब्रह्मतेजोमयी शक्तिस्तदधिष्ठातृदेवता॥

'गायत्री परब्रह्मस्वरूपा हैं, निर्वाणपरमपद देनेवाली है। ब्रह्मतेजोमयी शक्ति है और परब्रह्म ही उसका अधिष्ठातृ देवता है।'

रुद्रगायत्रीमें लिखा है—

'गायत्री सा महेशानी परब्रह्मात्मिका मता।'

'वह गायत्री महेशानी (शिवकी शक्ति) और परब्रह्मस्वरूपा कही गयी है।'

संग्रहमें कहा है—

'गायत्री परदेवतेति गदिता ब्रह्मैव चिद्रूपिणी।'

'गायत्री परदेवता कही गयी है और वह चित्स्वरूपा गायत्री साक्षात् ब्रह्म ही है।'

'गायत्री ब्रह्मैक्यम्' (शतपथब्राह्मण) के अनुसार गायत्री और ब्रह्ममें अभेद है। अतः गायत्रीके उपासकको उसी भावसे गायत्रीकी उपासना करनी चाहिये।

वेदोंमें द्विजके लिये गायत्रीकी उपासनाको नित्य कर्तव्य बतलाते हुए कहा है कि 'वह केवल गायत्रीकी उपासनासे ही 'मोक्ष' प्राप्त कर सकता है, उसे अन्य कोई उपासना करनेकी आवश्यकता नहीं है।'

देवीभागवत (१२।८।८९-९०) में लिखा है—

गायत्र्युपासना नित्या सर्ववेदैः समीरिता।
यया विना त्वधःपातो ब्राह्मणस्यास्ति सर्वथा॥
तावता कृतकृत्यत्वं नान्यापेक्षा द्विजस्य हि।
गायत्रीमात्रनिष्णातो द्विजो मोक्षमवाप्नुयात्॥

'समस्त वेदोंमें गायत्री-उपासना नित्य कही गयी है। अतः गायत्रीकी उपासनाके बिना ब्राह्मणका सर्वथा अधःपतन होता है। द्विज गायत्रीकी उपासनासे ही कृतार्थ हो जाता है, उसे अन्य किसी उपासनाकी अपेक्षा नहीं होती। अतः जो द्विज केवल गायत्री-उपासनामें निष्णात है, वह मोक्षको प्राप्त होता है।'

जो द्विज गायत्रीकी उपासनाका परित्यागकर अन्य किसीकी उपासना करता है, उसे किसी भी कार्यमें सफलता नहीं मिलती, यह स्पष्ट है—

गायत्रीं यः परित्यज्य चान्यमन्त्रमुपासते।
न साफल्यमवाप्नोति कल्पकोटिशतैरपि॥

(बृहत्सन्ध्याभाष्य)

'जो द्विज परम श्रेष्ठ मन्त्ररूप गायत्रीका परित्यागकर अन्य मन्त्रोंकी उपासना करता है, उसे मनुष्य-जीवनका फल मोक्ष सैकड़ों-कल्पोंमें भी प्राप्त नहीं होता।'

द्विजके लिये गायत्री ही श्रेष्ठ गति है, अतः वह अन्य कर्मोंमें अशक्त हो, तो भी गायत्रीकी उपासनाद्वारा श्रेष्ठ गतिको प्राप्त

कर सकता है। उसके बिना किये गये अन्य कर्म निष्फल हैं। इसलिये द्विजोंको प्रतिदिन गायत्रीकी उपासना करनी चाहिये। कहा भी है—

त्रैवर्णिकानां सर्वेषां गायत्री परमा गतिः।
कर्मान्तरेष्वसक्तोऽपि तयैव लभते गतिम्॥
तां विनाऽन्यानि कर्माणि निष्फलानि कृतान्यपि।
अतः प्रतिदिनं सर्वैः समुपास्या जपादिभिः॥

'समस्त त्रैवर्णिकोंके लिये गायत्री ही परम गति है। अन्य कर्मोंमें असमर्थ होनेपर भी गायत्रीसे ही परम गतिको प्राप्त करता है। गायत्री-उपासनाको छोड़कर अन्य कर्मोंके करनेपर भी वे निष्फल ही होते हैं। अतः समस्त त्रैवर्णिकोंको प्रतिदिन जपादिके द्वारा गायत्रीकी उपासना करनी चाहिये।'

गायत्रीके उपासकको गायत्रीका यथार्थ ज्ञान होना चाहिये। जो उपासक गायत्रीके यथार्थ स्वरूपको नहीं जानता, उसका समस्त शास्त्रोंका अध्ययन और ज्ञान व्यर्थ ही है—

वेदाः साङ्गास्तु चत्वारोऽधीताः सर्वेऽथ वाङ्मयाः।
सावित्रीं यो न जानाति वृथा तस्य परिश्रमः॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।७६)

'अङ्गोंके सहित चारों वेद और सभी वाङ्मय अध्ययन कर लेनेपर भी जो सावित्री (गायत्री) को नहीं जानता, उसका शास्त्रोंमें किया हुआ परिश्रम व्यर्थ ही है।'

गायत्रीं यो न जानाति जातो विप्रकुले यदि।
ब्राह्मणत्वं कुतस्तस्य स शूद्रेण समः स्मृतः॥

(भारद्वाजस्मृति १२।५०, ५१)

'ब्राह्मणवंशमें उत्पन्न होकर जो गायत्रीको नहीं जानता, उसमें ब्राह्मणत्व कहाँ रह सकता है ? वह तो शूद्रके सदृश कहा गया है।'

गायत्रीं यो न जानाति ज्ञात्वोपास्ते न यो द्विजः।
नामधारकमात्रोऽसौ न विप्रः शूद्र एव सः॥
किं वेदैः पठितैः सर्वैः सेतिहासपुराणकैः।
साङ्गैः सावित्रिहीनेन न विप्रत्वमवाप्यते॥

(बृहत्पाराशरस्मृति २।१३-१४)

'जो द्विज गायत्रीको नहीं जानता और जानकर उसकी उपासना नहीं करता, वह कथनमात्रके लिये ब्राह्मण है, वस्तुतः वह शूद्र है। समस्त अङ्गों और इतिहास-पुराणके साथ सभी वेदोंके अध्ययनसे उस पुरुषका क्या लाभ ? जिसने सावित्रीहीन होनेसे विप्रत्व (द्विजत्व) प्राप्त नहीं किया।'

गायत्रीमात्रसारोऽपि वरं विप्रः सुसंयतः।
नायन्त्रितश्चतुर्वेदी सर्वाशी सर्वविक्रयी॥

(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड १७।२८८)

'केवल गायत्रीमन्त्रको जाननेवाला ही संयमी ब्राह्मण श्रेष्ठ है, किन्तु चारों वेदोंको जाननेवाला भी जो असंयमी, सर्वभक्षी और सर्वविक्रयी है, वह श्रेष्ठ नहीं है।'

गायत्रीमात्रसारोऽपि वरं विप्रः सुयन्त्रितः।
नायन्त्रितस्त्रिवेदोऽपि सर्वाशी सर्वविक्रयी॥

(मनुस्मृति २।११८)

'केवल गायत्रीको जाननेवाला ही संयमी (जितेन्द्रिय) ब्राह्मण श्रेष्ठ है, किन्तु तीनों वेदोंका ज्ञाता होने पर भी जो असंयमी, सर्वभक्षी, समस्त वस्तुओंको बेचनेवाला है, वह श्रेष्ठ नहीं है।'

गायत्रीमात्रसन्तुष्टो वरं विप्रः सुयन्त्रितः।
नायन्त्रितश्चतुर्वेदः सर्वाशीं सर्वविक्रयी॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।७७)

'केवल गायत्री-मन्त्रसे ही सन्तुष्ट रहनेवाला सदाचारी संयमी ब्राह्मण तो मान्य है, किन्तु चारों वेदोंको जाननेवाला भी जो असंयमी, सर्वभक्षी और सर्वविक्रयी है, वह श्रेष्ठ नहीं है।'

जो मनुष्य गायत्रीको यथार्थ रूपसे जानता है, उसका कभी विनाश नहीं होता—

य एतां वेद गायत्रीं पुण्यां सर्वगुणान्विताम्।
तत्त्वेन भरतश्रेष्ठ स लोके न प्रणश्यति॥

(महाभारत, भीष्मपर्व ४।१६)

'हे भरतकुल श्रेष्ठ ! जो पुरुष समस्त गुणोंसे सम्पन्न परम पवित्र इस गायत्रीको यथार्थरूपसे जानता है, उसका इस लोकमें कभी विनाश नहीं होता।'

'गायत्रीब्रह्मतत्त्वज्ञाः सम्पूज्यन्ते जनैर्द्विजाः ।'

(पाराशरस्मृति ८।३२)

'गायत्रीरूपसे वेदके तत्त्वको जाननेवाले ब्राह्मण मनुष्योंसे पूजित होते हैं ।'

'यो वेत्ति चैनां स तु वित्तमः स्यात् ॥'

(बृहत्पाराशरस्मृति २।१२)

'जो इस गायत्रीको जानता है, वह अत्यन्त श्रेष्ठ ज्ञानी है ।'

गायत्रीमेव यो ज्ञात्वा सम्यगर्चयते पुनः ।
इहामुत्र च पूज्योऽसौ ब्रह्मलोकमवाप्नुयात् ॥

(बृहत्पाराशरस्मृति २।१५)

'जो गायत्रीको जानकर अच्छी तरहसे गायत्रीका पूजन करता है, वह इहलोक और परलोक दोनोंमें पूजनीय हो जाता है और वह ब्रह्मलोकको प्राप्त करता है ।'

नित्य, नैमित्तिक और काम्य-कर्मकी सिद्धिके लिये गायत्री-मन्त्रसे बढ़कर और कोई मन्त्र नहीं है । वैदिक मन्त्रोंमें गायत्री-मन्त्रकी सबसे अधिक महिमा और प्रतिष्ठा है । गायत्री-मन्त्रको 'महामन्त्र' कहा गया है । यह महामन्त्र सर्वसिद्धिप्रद है । इस महामन्त्रके प्रभावसे मनुष्य जो चाहे वह वस्तु प्राप्त कर सकता है ।

हमारे पूर्वज पूज्य गौतम, वसिष्ठ, कणाद, अङ्गिरा आदि ऋषि-महर्षियोंने गायत्री-मन्त्रकी उपासनाद्वारा ही अपनेमें अद्भुत और अलौकिक शक्ति प्राप्त की थी । वे गायत्री-मन्त्रके प्रभावसे जिसको जो वरदान अथवा आशीर्वाद दे देते थे, वह प्रत्यक्षरूपमें घटित होता था ।

गायत्रीके प्रभावसे ही महर्षि वसिष्ठने विश्वामित्रके समस्त शस्त्रास्त्रोंको नष्टकर विजय प्राप्त की थी । गायत्रीके प्रभावसे ही राजर्षि विश्वामित्रने 'ब्रह्मर्षि' पद प्राप्तकर नूतन सृष्टि रचनेकी अपूर्व शक्ति प्राप्त कर ली थी । गायत्रीके प्रभावसे ही दुर्वासा आदि ऋषियोंने अद्भुत पराक्रम प्राप्त किया था । गायत्रीके प्रभावसे ही रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, निम्बार्काचार्य आदि आचार्योंने अलौकिक आत्मबल प्राप्तकर अनेकानेक चमत्कारपूर्ण ईश्वरीय शक्तिका प्रदर्शन-कर अपना नाम अमर किया था ।

गायत्रीकी उपासनासे मनुष्यमें आत्मशक्तिकी प्राप्ति होती है। आत्मशक्तिकी प्राप्तिसे मनुष्यकी बुद्धि आत्मनिष्ठ हो जाती है। आत्मनिष्ठ बुद्धिके होनेसे मनुष्यको आत्मसाक्षात्कार हो जाता है। आत्मसाक्षात्कार हो जानेसे मनुष्य परमात्माका सान्निध्य प्राप्त करता है—

गायत्र्युपासनाकरणादात्मशक्तिस्तु लभ्यते।
प्राप्यते क्रमशोऽजस्य सामीप्यं परमात्मनः॥

'गायत्रीकी उपासना करनेसे मनुष्य आत्मशक्तिकी प्राप्ति करता है। पश्चात् वह क्रमशः अजन्मा (जन्मरहित) परमात्माका सान्निध्य प्राप्त करता है।'

गायत्रीकी उपासनासे मनुष्य **'सर्वं खल्विदं ब्रह्म'** (छान्दोग्योपनिषद् ३।१४।१), **'अयमात्मा ब्रह्म'** (बृहदारण्यकोपनिषद् २।५।१९), **'ब्रह्मैवेदम्'** (मुण्डकोपनिषद् २।२।११) और **'एकमेवाद्वितीयम्'** (छान्दोग्योपनिषद् ६।२।१) आदि महावाक्योंका यथार्थ बोध प्राप्त करता है।

गायत्रीकी उपासनासे मनुष्यमें सद्बुद्धि, सद्विचार और सद्धर्मका उदय होता है। गायत्रीकी उपासनासे मनुष्यमें आस्तिकता, धार्मिकता आदि सद्गुणोंका समावेश होता है। गायत्रीकी उपासनासे मनुष्यमें श्रद्धा, भक्ति और ईश्वर-विश्वासकी परिपूर्णता हो जाती है। गायत्रीकी उपासनासे मनुष्य इहलोकमें जीवनपर्यन्त सर्वविध सुखोंको भोगता है और मरनेके बाद शाश्वत परम पदको प्राप्त करता है।

गायत्रीकी उपासनासे मनुष्यकी ज्ञानशक्ति और जीवनशक्ति बढ़ती है तथा उसके समस्त पापोंका उच्छेद हो जाता है। गायत्रीकी उपासनासे मनुष्य समस्त प्रकारके रोग, शोक, चिन्ता, आधि-व्याधि और दीनतासे मुक्त हो जाता है। गायत्रीकी उपासनासे मनुष्यकी समस्त प्रकारकी विघ्न-बाधाएँ टल जाती हैं। गायत्रीकी उपासनासे मनुष्य सम्पूर्ण अभीष्ट सिद्धियोंको प्राप्त करता है।

गायत्रीके उपासकपर दैत्य, दानव, भूत-प्रेत, पिचाश, यक्ष और राक्षसोंका वश नहीं चलता। गायत्रीका उपासक क्रूर ग्रहोंकी बाधाओंसे दूर हो जाता है। गायत्रीका उपासक दीर्घायु, विपुल लक्ष्मी, सत्पुत्र, सत्कीर्ति और सत्प्रतिष्ठा प्राप्त करता है। गायत्रीका उपासक धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन पुरुषार्थ-चतुष्टयको हस्तगत

कर लेता है। गायत्रीका उपासक नित्य, नैमित्तिक और काम्य—इन तीनों प्रकारके कर्मफलको प्राप्त करता है।

गायत्रीके उपासककी अपमृत्यु नहीं होती। गायत्रीके उपासकको कभी 'हार्टफेल' नहीं होता। हार्टफेल रोकनेके लिये गायत्रीकी उपासना 'रामबाण' दवा है। गायत्रीका उपासक प्रायः भयंकर रोगसे ग्रस्त नहीं होता। यदि वह कभी संयोगवश रोगग्रस्त होता है, तो उसे डाक्टर और वैद्यकी शरण नहीं लेनी पड़ती, प्रत्युत वह गायत्रीकी उपासनासे ही स्वयं अपने सर्वविध रोगोंको समूल नष्ट कर देता है।

जिस गायत्रीकी उपासनासे मनुष्य समस्त प्रकारके सुख-साधनोंको प्राप्त करता है, उस गायत्रीकी अद्भुत महिमा है। महिमामयी गायत्री निगमागम वचनोंसे प्रशंसित, ऋषि, महर्षि, साधु, महात्माओंसे पूजित, श्रौत-स्मार्तकर्मानुष्ठानमें निरत ब्राह्मणोंसे उपासित, सद्धर्म और सदाचार-परिपालनमें सन्नद्ध क्षत्रियोंसे संसेवित, सत्य-सनातन-धर्मोपदिष्ट मार्गावलम्बी वैश्योंसे पूजित और द्विजातियोंसे निर्धारित मार्गका अनुसरण करनेवाले शूद्रोंसे माताकी तरह सम्मानित है।

गायत्री माता समस्त धर्मावलम्बी मानवोंका कल्याण करनेवाली, सज्जनोंके शोकको हरनेवाली, जीवोंके जन्म-मरणके विविध सन्ताप एवं विविध दुःखतरङ्गोंको हरनेवाली, समस्त लोकोंको पवित्र और शक्तिसम्पन्न करनेवाली, भूत, भविष्य और वर्तमान कालका निर्माण करनेवाली, ऐहलौकिक और पारलौकिक सर्वविध सुख, ऐश्वर्य, भोग और मोक्षको देनेवाली, महान् अनुग्रहपूर्ण शीतल (कोमल) स्वभाववाली, समस्त देवताओंको आश्रय देनेवाली, समस्त लोकोंमें विराजमान होनेवाली, चारों वेदोंके मातृरूपको धारण करनेवाली, समस्त शास्त्रोंको आत्मसात् करनेवाली, समस्त प्रकारके वरदानोंको देनेवाली, सर्वविध कष्टोंको दूर करनेवाली, भक्तजनोंकी पीड़ाको विनाश करनेवाली, समस्त शक्ति-सामर्थ्योंसे परिपूर्ण रहनेवाली, सबको प्रकाशित करनेवाले तेजःस्वरूपको धारण करनेवाली, सच्चिदानन्दात्मक ब्रह्मविद्याके स्वरूपको धारण करनेवाली, समस्त प्राणियोंमें ज्ञानरूपसे विद्यमान रहनेवाली, चतुर्विंशत्यक्षरात्मक गायत्री मन्त्रवाली और ब्रह्मा, विष्णु एवं शिवके स्वरूपको धारण करनेवाली है।

गायत्री माता विद्या-प्रदान करनेवाली, सद्ज्ञान देनेवाली, सद्बुद्धि देनेवाली, सुख-शान्ति देनेवाली समस्त अभीष्ट सिद्धियोंको

देनेवाली, श्रीकी वृद्धि करनेवाली, तत्त्वज्ञानका प्रबोधन करनेवाली, चित्तका विशोधन करनेवाली, दुःखोंका निवारण करनेवाली, भवतापका विनाश करनेवाली, विपत्तिका विदारण करनेवाली, दुर्गतिका नाश करनेवाली, सद्गति देनेवाली और पुरुषार्थ-चतुष्टयकी देनेवाली है।

गायत्रीकी महिमासे समस्त संस्कृत वाङ्मय ओतप्रोत है। अतः गायत्री-महिमाके सूचक कतिपय शास्त्रीय वाक्य उद्धृत किये जाते हैं—

'गायत्री वा इदं सर्वं भूतं यदिदं किञ्च वाग्वै गायत्री, वाग्वा इदं सर्वं भूतम्, गायति च त्रायते च।'

(छान्दोग्योपनिषद् ३।१२।१)

'इस संसारमें स्थावर-जङ्गमात्मक जो पदार्थ हैं, वे सभी गायत्री ही हैं। वाक् ही गायत्री है। वाक् ही सब कुछ है। वाक् ही गायन करती है और वह ही सबकी (अपने उपासकोंकी) रक्षा करती है।'

नृसिंहपूर्वतापनीयोपनिषद् (४।२) में भी **'गायत्री वा इदं सर्वम्०'** आदिद्वारा गायत्रीका महत्त्व गाया गया है।

गायत्री वा इदं सर्वं ब्रह्माण्डं ब्राह्मणानि तु।
वेदोपनिषच्छाखासु ब्राह्मणानि विधानतः॥
पुराणधर्मशास्त्राणि गायत्र्याः पावनानि तु।
कीर्तितानि त्वनेकानि गायत्र्याः पावनानि च॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।५–७)

'यह सब ब्रह्माण्ड गायत्री ही है। वेद, उपनिषद्, वेदोंकी शाखाएँ; ब्राह्मण, पुराण और धर्मशास्त्र—ये सभी गायत्रीके ही कारण पवित्र माने जाते हैं। अनेक शास्त्र-पुराणादिके कीर्तन करनेपर भी ये सभी शास्त्र गायत्रीके द्वारा ही पावन होते हैं।'

गायत्र्येव परो विष्णुर्गायत्र्येव परः शिवः।
गायत्र्येव परो ब्रह्मा गायत्र्येव त्रयी ततः॥

(स्कन्दपुराण, काशीखण्ड ६।५३)

'गायत्री ही परमात्मा विष्णु है, गायत्री ही परमात्मा शिव है

और गायत्री ही परमात्मा ब्रह्म है। अतः गायत्रीसे ही तीनों वेदोंकी उत्पत्ति हुई।'

गायत्री वेदजननी गायत्रीब्राह्मणप्रसूः।
गातारं त्रायते यस्माद् गायत्री तेन गीयते॥

(स्कन्दपुराण, काशीखण्ड ९।५३)

'गायत्री वेदोंकी माता और ब्राह्मणोंकी माता है। चूँकि वह गान (जप) करनेवाले द्विजका त्राण (रक्षण) करती है, इससे गायत्री कही जाती है।'

गायत्री वेदजननी गायत्री लोकपावनी।
गायत्र्या न परं जप्यमेतद् विज्ञाय मुच्यते॥

(पद्मपुराण, स्वर्गखण्ड ५३।५८)

'गायत्री वेदोंकी माता है, गायत्री समस्त लोकोंको पावन करनेवाली है। गायत्रीसे बढ़कर जपने योग्य और कुछ भी नहीं है, ऐसा जाननेवाला मुक्त हो जाता है।'

गायत्री वेदजननी गायत्री लोकपावनी।
न गायत्र्याः परं जप्यमेतद् विज्ञाय मुच्यते॥

(कूर्मपुराण, उत्तरार्ध १४।५८)

'गायत्री वेदोंकी माता और वह समस्त लोकोंको पावन करनेवाली है। गायत्रीसे बढ़कर जप करनेके योग्य और कोई मन्त्र नहीं है, यह जाननेवाला मुक्त हो जाता है।

गायत्री वेदजननी गायत्री पापनाशिनी।
गायत्र्याः परमं नास्ति दिवि चेह च पावनम्॥

(शङ्खस्मृति १२।११)

'गायत्री समस्त वेदोंकी जननी और सम्पूर्ण पापोंको नष्ट करनेवाली है। स्वर्गलोकमें तथा पृथ्वीपर गायत्रीसे बढ़कर पवित्र करनेवाला और कोई मन्त्र नहीं है।'

गायत्री चैव जननी गायत्री पापनाशिनी।
गायत्र्यास्तु परं नास्ति दिवि चेह च पावनम्॥

(शङ्खसंहिता ११।१३)

गायत्रीं चैव वेदांश्च तुलया तोलयत्प्रभुः।
एकतश्चतुरो वेदा गायत्रीं च तथैकतः॥

(पद्मपुराण, स्वर्गखण्ड ५३।५२)

'प्रभुने तराजूसे गायत्री और वेदोंको तौला। एक ओर चारों वेद थे तथा दूसरी ओर गायत्री थी, किन्तु वेदोंसे गायत्री श्रेष्ठ हुई।'

गायत्रीं चैव वेदांस्तु तुलया तोलयत् प्रभुः।
एकतश्चतुरो वेदान् गायत्रीं च तथैकतः॥

(कूर्मपुराण, उत्तरार्ध १४।५२)

गायत्रीं चैव वेदांश्च तुलया समतोलयत्।
एकतश्चतुरो वेदान् गायत्रीमेकतः समा॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।८०)

'विधाताने तराजूसे गायत्री और वेदोंको तौला। एक ओर चारों वेद थे तथा एक ओर गायत्री थी, किन्तु दोनोंकी समता बराबर हुई।'

गायत्रीं चैव वेदांश्च तुलया समतोलयत्।
वेदा एकत्र साङ्गास्तु गायत्री चैकतः स्मृता॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यसंहिता ४।८०)

'ब्रह्माजीने तराजूके एक पलड़ेमें चारों वेदोंको और दूसरे पलड़ेमें गायत्रीको स्थापित किया। दोनोंको तौलनेसे गायत्रीका ही पलड़ा भारी हुआ।'

चतुर्वेदाश्च गायत्री पुरा वै तुलिता मया।
चतुर्वेदात्परा गुर्वी गायत्री मोक्षदा स्मृता॥

(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ४८।१९३-१९४)

ब्रह्मा कहते हैं—'मैंने पूर्वकालमें चारों वेदोंकी और गायत्रीकी तुलना की थी, उस समय चारों वेदोंकी अपेक्षा गायत्री ही गुरुतर सिद्ध हुई, अतः गायत्री मोक्ष देनेवाली मानी गयी है।'

गायत्री चैव वेदाश्च ब्रह्मणा तोतिलाः पुरा।
वेदेभ्यश्च सहस्रेभ्यो गायत्र्यति गरीयसी॥

(बृहत्पाराशरस्मृति ५।१६)

'पूर्वकालमें ब्रह्माके द्वारा तराजूके एक पलड़ेपर गायत्री और दूसरे पलड़ेपर सभी वेद तोले गये। तोलनेपर वेदोंसे हजारों गुना अधिक गायत्रीका वजन निकला।'

'गायत्री तु परं तत्त्वं गायत्री परमा गतिः।'

(बृहत्पाराशरस्मृति ५।४)

'गायत्री परम तत्त्व है और गायत्री ही परम गति है।'

देवी दात्री च भोक्त्री च देवी सर्वमिदं जगत् ।
देवी जयति सर्वत्र या देवी साहमेव च ॥
सर्वात्मना हि सा देवी सर्वभूतेषु संस्थिता ।
गायत्री मोक्षहेतुर्वै मोक्षस्थानमलक्षणम् ॥

(ऋष्यशृङ्गः)

'देवी गायत्री देनेवाली और भोगनेवाली है। यह समस्त संसार गायत्री ही है। गायत्री ही सर्वत्र श्रेष्ठरूपमें रहती है, जो गायत्री देवी है, वह मैं ही हूँ। यह गायत्री सब प्रकारसे समस्त प्राणियोंमें रहनेवाली है। गायत्री ही मोक्षका कारण है और वही मोक्षका अदृश्य स्थान है।'

'गायत्र्यास्तु परं नास्ति दिवि देह च पावनम् ।'

(अग्निपुराण)

'गायत्रीसे बढ़कर पवित्र करनेवाला दूसरा कोई मन्त्र न तो इस मर्त्यलोकमें है और न स्वर्गलोकमें है।'

'गायत्र्यास्तु परं नास्ति इहलोके परत्र च '

(देवीभागवत ११।३।१०)

'गायत्रीसे बढ़कर इहलोक और परलोकमें और कोई वस्तु श्रेष्ठ नहीं है।'

'गायत्र्यास्तु परं नास्ति शोधनं पापकर्मणाम् ।'

(संवर्तस्मृति २२०)

'गायत्रीसे बढ़कर पाप-कर्मोंका नाश करनेवाला और कोई मन्त्र नहीं है।'

गायत्र्या न परं जप्यं गायत्र्या न परं तपः ।
गायत्र्या न परं ध्यानं गायत्र्या न परं श्रुतम् ॥

(बृहद् यमस्मृति)

'गायत्रीसे बढ़कर कोई जप नही है, कोई तप नहीं है, कोई ध्यान नहीं है और कोई शास्त्र नहीं है।'

अष्टादशसु विद्यासु मीमांसातिगरीयसी ।
ततोऽपि तर्कशास्त्राणि पुराणं तेभ्य एव च ॥
ततोऽपि धर्मशास्त्राणि तेभ्यो गुर्वी श्रुतिर्द्विज ।
ततोऽप्युपनिषच्छ्रेष्ठा गायत्री च ततोऽधिका ॥

(स्कन्दपुराण, काशीखण्ड ९।४९-५०)

'अष्टादश विद्याओंमें मीमांसाशास्त्र, मीमांसासे तर्कशास्त्र, तर्कशास्त्रसे पुराणशास्त्र, पुराणसे धर्मशास्त्र, धर्मशास्त्रसे वेद, वेदसे उपनिषद् और उपनिषद्से गायत्रीका महत्त्व अधिक है।'

तदित्यृचः समो नास्ति मन्त्रो वेदचतुष्टये।
सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च दानानि च तपांसि च॥
समानि कलया प्राहुर्मुनयो न तदित्यृचः।
बहुना किमिहोक्तेन यथावत् साधुसाधिता॥
द्विजन्मनामियं विद्या सिद्धिकामदुघा मता॥

(विश्वामित्रः)

'चारों वेदोंमें 'तत्सवितुर्वरेण्यम्' इत्यादि गायत्री-मन्त्रके सदृश और कोई महत्त्वपूर्ण मन्त्र नहीं है। समस्त वेद, यज्ञ, दान और तप गायत्री-मन्त्रके सोलहवें हिस्सेके बराबर भी नहीं कहे गये हैं। अधिक क्या कहा जाय, गायत्रीकी उपासना करनेपर यह (गायत्री) ब्राह्मणोंको सब प्रकारकी सिद्धियोंको देनेवाली है।'

दुर्लभा सर्वमन्त्रेषु गायत्री प्रणवान्विता।
गायत्र्या नाधिकं किञ्चित् त्रयीषु परिगीयते॥

(स्कन्दपुराण, काशीखण्ड ६।५१)

'समस्त मन्त्रोंमें प्रणव (ॐ) से युक्त गायत्री दुर्लभ है। तीनों वेदोंमें गायत्रीसे बढ़कर और कोई मन्त्र नहीं है।'

न गायत्रीसमो मन्त्रः। (स्कन्दपुराण, काशीखण्ड ६।५२)
न गायत्र्याः परं परम्। (भारद्वाजस्मृति १२।४२)
न गायत्र्याः परो मन्त्रः। (चाणक्यनीति)
गायत्री परमो मन्त्रः। (अग्निपुराण २८४।२)
गायत्र्यास्तु परं नास्ति। (देवीभागवत १३।३।१०, ११।२१।३६)
गायत्र्यास्तु परं नास्ति। (संवर्तस्मृति २२०)
सावित्र्यास्तु परं नास्ति। (अग्निपुराण २१५।५)
सावित्र्यास्तु परं नास्ति। (मनुस्मृति २।८३)
सावित्र्यास्तु परं नास्ति। (बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति २।६३)
गायत्र्यतिगरीयसी। (बृहत् पाराशरस्मृति ४।१६)

हमारे पूर्वकालीन महापुरुष भौतिक जगत्की उपेक्षाकर सर्वदा आध्यात्मिक-पथपर ही अग्रसर रहा करते थे। वे आन्तरिक सुख-साधनकी प्राप्तिके लिये सर्वदा आध्यात्मिक साधनोंका अनुसन्धान और अभ्यास करते थे। वे बड़े-बड़े विशाल भवन, रेडियो, ट्रांजिस्टर,

मोटर आदि आधुनिक भौतिक सुख-साधनोंसे सर्वदा दूर रहते थे और वे सदैव अपनी अन्तरात्मामें तल्लीन रहकर अपना और संसारका कल्याण करते थे। इस प्रकारके आध्यात्मिक साधनसम्पन्न महापुरुषोंसे लाभान्वित होनेके लिये सांसारिक क्लेशोंसे पीड़ित पाश्चात्यशिक्षा-दीक्षितसमाज अमेरिका, रूस आदि विदेशोंसे भारतमें आते हैं और वे महापुरुषोंके दर्शन और सत्सङ्गद्वारा आन्तरिक सुखकी प्राप्तिकर अपने जीवनको सुख-शान्तिमय बनाते हैं।

आजकलके भारतीय आधुनिक शिक्षितवर्ग मानसिक और शारीरिक सुख-शान्तिकी प्राप्तिके लिये अमेरिका, स्विटजरलैण्ड आदि स्थानोंमें जाते हैं, किन्तु उन्हें वहाँ वास्तविक सुख-शान्ति प्राप्त नहीं होती।

हमारे यहाँ त्रैवर्णिकोंके लिये मानसिक और शारीरिक सुख-शान्तिके निमित्त 'गायत्री-मन्त्रकी उपासना' लिखी है। श्रद्धालु मर्मज्ञ लोगोंने गायत्री-मन्त्रकी उपासनाद्वारा मानसिक और शारीरिक सुख-शान्ति प्राप्त की है और कर रहे हैं।

अमेरिका आदि देशोंमें विविध लौकिक सुख-साधनोंकी उपलब्धि तो सम्भव है, किन्तु वहाँ मनुष्यकी बुद्धिको सुसंस्कृत करनेका कोई साधन उपलब्ध नहीं है। हमारे यहाँ भारतवर्षमें मनुष्यकी बुद्धिको सुसंस्कृत करनेके लिये **'धियो यो नः प्रचोदयात्'** (शु० य० ३।३५) यह अमूल्य साधन है। **'धियो यो नः प्रचोदयात्'** यह गायत्री-मन्त्रका तृतीय चरण (पाद) है, जोकि मनुष्यकी बुद्धिको सुसंस्कृतकर सन्मार्गमें प्रवृत्त करता है। सन्मार्गमें बुद्धिके प्रवृत्त होनेसे ही मनुष्य आत्मशान्ति और आत्मसन्तोषका अनुभव करता है।

गायत्री-मन्त्रके अधिष्ठातृदेव भगवान् सूर्य हैं, जोकि अपने उपासकको सद्बुद्धि प्रदान करते हैं। अतः भगवान् सूर्यसे **'धियो यो नः प्रचोदयात्'** के द्वारा सद्बुद्धि की प्राप्तिके लिये प्रार्थना की गयी है।

मनुष्य-जीवनमें सद्बुद्धिकी विशेष आवश्यकता है। सद्बुद्धिसे ही मनुष्य अपना और संसारका कल्याण कर सकता है। जिस मनुष्यमें सद्बुद्धिका अस्तित्व होता है, वह सर्वदा उचितानुचितका यथार्थ विचारकर आत्मकल्याण कर सकता है और जिस मनुष्यमें सद्बुद्धिका अभाव होता है, वह उचितानुचितका यथार्थरूपसे विचार न कर सकनेके कारण आत्मकल्याण नहीं कर सकता। अतः मनुष्यमें

सद्बुद्धिका होना परमावश्यक है। सद्बुद्धिकी प्राप्ति गायत्रीकी उपासनासे ही हो सकती है। अतः प्रत्येक द्विजको सद्बुद्धिकी प्राप्तिके लिये गायत्रीकी उपासना करनी चाहिये।

जो द्विज विधिपूर्वक गायत्रीकी उपासना करता है, उसे गायत्री माता सब कुछ प्रदान करती हैं, यह स्पष्ट लिखा है—

प्रभावेणैव गायत्र्याः क्षत्रियः कौशिको वशी।
राजर्षित्वं परित्यज्य ब्रह्मर्षिपदमीयिवान्॥
सामर्थ्यं प्राप चात्युच्चैरन्यद् भुवनसर्जने।
किं किं न दद्याद् गायत्री सम्यगेवमुपासिता॥

(स्कन्दपुराण, काशीखण्ड ९।५५, ५६)

'गायत्रीके प्रभावसे क्षत्रिय कौशिक (विश्वामित्र) ने विश्वको वशीकरण कर राजर्षिको त्यागकर 'ब्रह्मर्षि' पद प्राप्त किया और उन्होंने गायत्रीके प्रभावसे ही अनेक उत्कृष्ट जगत् के निर्माणकी अपूर्व शक्ति प्राप्त की। अतः जो द्विज विधिपूर्वक गायत्रीकी उपासना करता है, उसे गायत्री माता क्या-क्या नहीं देतीं? सब कुछ प्रदान करती हैं।'

अतः द्विजमात्रको आत्मकल्याणार्थ सत्य-सनातन दिव्य ज्योतिः—स्वरूपा वेदमाता गायत्रीकी उपासना प्रतिदिन करनी चाहिये। गायत्रीकी उपासना करना प्रत्येक द्विजका आवश्यक धर्म और कर्तव्य है।

गायत्री-उपासनाके अनेक भेद

गायत्रीकी उपासनाके अनेक भेद हैं। उनमें गायत्रीकी जपात्मक, पाठात्मक और हवनात्मक उपासना विशेष प्रचलित है। गायत्री-मन्त्रका जप करना जपात्मक उपासना, गायत्रीके स्तोत्र आदिका पाठ करना पाठात्मक उपासना और गायत्री-मन्त्रसे हवन करना हवनात्मक उपासना कही जाती है। इनमें गायत्रीकी जपात्मक उपासना सर्वश्रेष्ठ कही गयी है। भगवान् श्रीकृष्णने 'यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि' (गीता १०।२५) ऐसा कहा है, वह गायत्री-जपके सम्बन्धमें ही कहा है। अतः गायत्रीका जप विशेष महत्त्व रखता है।

वेदोंमें गायत्रीका महत्त्व

गायत्री-मन्त्र अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। गायत्री-मन्त्रमें 'देवस्य' यह जो पद है, वह परब्रह्म परमेश्वरका ही वाचक है। गायत्री-मन्त्रके प्रत्येक अक्षरमें परब्रह्मकी दिव्य ज्योति और दिव्य शक्ति विद्यमान है, जिसके द्वारा मनुष्यको परब्रह्म परमेश्वरकी प्राप्ति होती है।

गायत्री परब्रह्मका स्वरूप है, अतः गायत्रीको ही 'परब्रह्म' कहते हैं। इस ब्रह्माण्डमें जो कुछ है, वह परब्रह्मस्वरूपा गायत्री ही है—

'गायत्री वा इदं सर्वम्।'

(छान्दोग्योपनिषद् ३।१२।१)

अतः गायत्रीसे बढ़कर और कोई महत्त्वपूर्ण मन्त्र नहीं है। इसलिये मनुष्यको गायत्री-मन्त्रका जप सर्वदा करना चाहिये। गायत्री-मन्त्रके जपसे परब्रह्म परमेश्वरकी प्राप्ति होती है।

भगवान् शङ्कराचार्यजीने ब्रह्मसूत्र (१।१।२५) के शारीरिक भाष्यमें कहा है—'गायत्री-मन्त्रके जपसे ब्रह्मकी प्राप्ति होती है।'

भगवान् मनुने भी मनुस्मृति (२।८२) में लिखा है कि 'जो जापक तीन वर्षतक प्रतिदिन गायत्रीका जप करता है, वह पवनरूप और आकाशरूप होकर परब्रह्मको प्राप्त करता है।'

तदित्यृचः समो नास्ति मन्त्रो वेदचतुष्टये।
सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च दानानि च तपांसि च॥
समानि कलया प्राहुर्मुनयो न तदित्यृचः।
बहुना किमिहोक्तेन यथावत् साधुसाधिता॥
द्विजन्मनामियं विद्या सिद्धिकामदुधा मता॥

(विश्वामित्रः)

'चारों वेदोंमें 'तत्सवितुर्वरेण्यम्' इत्यादि गायत्री-मन्त्रके सदृश और कोई महत्त्वपूर्ण मन्त्र नहीं है। समस्त वेद, यज्ञ, दान और तप गायत्री-मन्त्रके सोलहवें हिस्सेके बराबर भी नहीं कहे गये हैं। अधिक क्या कहा जाय, गायत्रीकी उपासना करनेपर यह (गायत्री) ब्राह्मणोंको सब प्रकारकी सिद्धियोंको देनेवाली है।'

दुर्लभा सर्वमन्त्रेषु गायत्री प्रणवान्विता।
गायत्र्या नाधिकं किञ्चित् त्रयीषु परिगीयते॥

(स्कन्दपुराण, काशीखण्ड ९।५१)

'समस्त मन्त्रोंमें प्रणव (ॐ) से युक्त गायत्री दुर्लभ है। तीनों वेदोंमें गायत्रीसे बढ़कर और कोई मन्त्र नहीं है।'

न गायत्रीसमो मन्त्रः । (स्कन्दपुराण, काशीखण्ड ९।५२)
न गायत्र्याः परं परम् । (भारद्वाजस्मृति १२।४२)
न गायत्र्याः परो मन्त्रः । (चाणक्यनीति)
गायत्री परमो मन्त्रः । (अग्निपुराण २८४।२)
गायत्र्यास्तु परं नास्ति । (देवीभागवत ११।३।१०, ११।२१।३९)
गायत्र्यास्तु परं नास्ति । (संवर्तस्मृति २२०)
सावित्र्यास्तु परं नास्ति । (अग्निपुराण २१५।५)
सावित्र्यास्तु परं नास्ति । (मनुस्मृति २।८३)
सावित्र्यास्तु परं नास्ति । (बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति २।६३)
गायत्र्यतिगरीयसी । (बृहत्पाराशरस्मृति ५।१६)

वेदोंमें भी गायत्रीमहिमाविषयक अनेक मन्त्र उपलब्ध हैं, जिनमेंसे कुछ मन्त्र उद्धृत किये जाते हैं—

स्तुता मया वरदा वेदमाता
प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम् ।
आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविणं
ब्रह्मवर्चसं मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम् ॥
(अथर्ववेद १९।७१।१)

'वेदोंकी माता गायत्री अपने उपासकको दीर्घायु, स्वस्थता, सन्तति, यश, कीर्ति, गौ आदि पशु, धन और ब्रह्मतेज प्रदान करती है तथा अन्तमें ब्रह्मलोकमें पहुँचाती है।'

'गायत्री वै प्राणः । स यत्कृत्स्नां गायत्रीमन्वाह । तत्कृत्स्नं प्राणं दधाति ।' (शतपथब्राह्मण १।३।५।१५)

'गायत्री ही प्राण है। केवल गायत्रीमन्त्रका जप करनेसे एक पूर्ण प्राणकी धारणा होती है।'

'इयं गायत्री............सर्वान् कामान् दोग्धाता ।'
(शतपथब्राह्मण ४।२।४।२१)

'यह गायत्री अपने उपासकके लिये समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेके कारण श्रेष्ठ कही गयी है।'

'तस्या ऽअग्निरेव मुखम् । यदि ह वा अपि बह्विवाग्नावभ्यादधति सर्वमेव तत्संदहति, एवं हैवैवं विद्यपि बह्विव पापं करोति सर्वमेव तत्सम्प्साय शुद्धः पूतोऽजरोऽमृतः सम्भवति ।'

(शतपथब्राह्मण १४।८।१५।१२)

'गायत्रीका अग्नि ही मुख है । जैसे लोग बहुत लकड़ीको अग्निमें डालते हैं, तो वह उसको जला देता है, वैसे ही (ऐसा जाननेवाला अर्थात् गायत्रीका मुख अग्नि है, यह जाननेवाला) गायत्रीका उपासक यद्यपि बहुत-सा पाप भी करता है अर्थात् प्रतिग्रह आदि दोष करता है, उस सब पापराशिको पूर्णरूपसे पचाकर (भस्मकर) अग्निके तुल्य शुद्ध अर्थात् पापस्पर्शरहित तथा पवित्र अर्थात् प्रतिग्रहादि दोषोंसे उत्पन्न पापके फलके सम्बन्धसे रहित हो जाता है । गायत्रीके इस विज्ञानसे उसे क्रममुक्तिरूप फल मिलता है । गायत्रीकी उपासनासे मनुष्य गायत्रीरूप होकर अजर–अमर हो जाता है ।'

'सा हैषा गयान् तत्रे' (**तस्य प्राणान् त्रायते**) ।

(शतपथब्राह्मण १४।८।१५।७)

'यह गायत्री अपने उपासकके प्राणोंकी रक्षा करती है ।'

'तेजो वै गायत्री, तमः पाप्मा रात्रिस्तेन तेजसा तमः पाप्मानं तरन्तीति ।' (गोपथब्राह्मण ५।५।४)

'गायत्री ही तेज है और रात्रि पापरूपी अन्धकार है । इसलिये गायत्रीके तेजसे पापरूपी अन्धकार दूर हो जाता है ।'

'गायत्री वा इदं सर्वं भूतं यदिदं किञ्च वाग्वै गायत्री, वाग्वा इदं सर्वं भूतम् , गायति च त्रायते च ।'

(छान्दोग्योपनिषद् ३।१२।१)

'इस संसारमें स्थावर-जङ्गमात्मक जो पदार्थ हैं, वे सभी गायत्री ही हैं । वाक् ही गायत्री है । वाक् ही सबकुछ है । वाक् ही गायन करती है और वही सबकी (अपने उपासकों की) रक्षा करती है ।'

नृसिंहपूर्वतापनीयोपनिषद् (४।२) में भी **'गायत्री वा इदं सर्वम्०'** आदि द्वारा गायत्रीका महत्त्व गाया गया है ।

इसी प्रकार और भी गायत्रीके महत्त्वके सम्बन्धमें कहा गया है—

अथर्ववेद (१९।७१।१) में गायत्रीको 'वेदमाता' कहा है— **'स्तुता मया वरदा वेदमाता ।'**

नारायणोपनिषद् (१४।३४) में गायत्रीको 'वेदोंकी माता' कहा है—[1]**'गायत्री छन्दसां माता।'**

छान्दोग्योपनिषद् (३।१२।१) में गायत्रीको परब्रह्मस्वरूपा, सर्वात्मिका और सर्वस्वरूपा कहा गया है।

शतपथब्राह्मण (१।३।५।१५) में गायत्रीको 'प्राण' कहा है—**'गायत्री वै प्राणः।'**

शतपथब्राह्मण (४।२।४।२०) में गायत्रीको 'यज्ञ' कहा है—**'यज्ञो वै गायत्री।'**

शतपथब्राह्मण (६।४।२।७) में गायत्रीको 'अग्नि' कहा है—**'अग्निर्वै गायत्री।'**

शतपथब्राह्मण (१४।८।१५।७) में गायत्रीको 'प्राणरक्षिणी' कहा है—**'तस्य** (उपासकस्य) **प्राणान् त्रायते।'**

ऐतरेयब्राह्मण (३।३।३४।३) में गायत्रीको 'ब्रह्म' कहा है।

गोपथब्राह्मण (५।५।४) में गायत्रीको 'तेज' कहा है।

बोधायनगृह्यशेषसूत्र (३।६।१) में गायत्रीको 'वेदमाता' कहा है—**'गायत्री छन्दसां मातः।'**

भगवद्गीता (१०।३५) में भगवान् श्रीकृष्णने कहा है—'छन्दोंमें मैं गायत्री हूँ'—**'गायत्री छन्दसामहम्।'**

मनुस्मृति (२।८१) में गायत्रीको 'वेदका मुख' कहा है—**'सावित्री** (गायत्री) **ब्रह्मणो मुखम्।'**

गायत्रीकल्पमें गायत्रीको 'वेदका मूल' कहा है—**'गायत्री वेदमूला स्यात्।'**

वेदोंमें गायत्रीको सर्ववेदात्मक, सर्वदेवात्मक और सर्वात्मक कहा है।

वेदोंमें गायत्रीको 'मोक्षका साधन' कहा है।

वेदोंमें गायत्रीको मृत्युलोकका 'कल्पवृक्ष' अथवा 'कामधेनु' कहा गया है।

भगवान् आद्य शङ्कराचार्यने गायत्रीको 'जगन्माता' कहा है।

---

१. 'गायत्री छन्दसां माता।' (नारदपुराण ७।६३)

उपर्युक्त वेदादि शास्त्रोंसे सिद्ध है कि—वेदोंमें गायत्री—मन्त्रसे बढ़कर दूसरा कोई मन्त्र नहीं है। इसीलिये वैदिक-मन्त्रोंमें गायत्रीमन्त्र सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण और प्रतिष्ठित है। अत: द्विज, विशेषत: ब्राह्मण गायत्रीको अपना जीवन, प्राण और सर्वस्व समझकर उसकी सर्वदा उपासना करे। गायत्रीकी उपासनासे ही मनुष्य गायत्रीके यथार्थ तत्त्वको जान सकता है। गायत्रीके यथार्थ तत्त्वको जाननेसे ही मनुष्य सबकुछ जान सकता है और सबकुछ प्राप्त कर सकता है। अत: मनुष्यको जीवनपर्यन्त गायत्रीकी उपासनाद्वारा अपना मानव-जीवन सफल बनाना चाहिये।

गायत्री वेदजननी

'वेदो नारायणः साक्षात्' (श्रीमद्भागवत ६।१।४०) के अनुसार वेद स्वयं नारायणस्वरूप हैं। नारायणस्वरूप वेदोंकी माता होनेका गौरव 'गायत्री'को ही है। अतएव गायत्रीको वेदोंकी जननी कहा है— **'गायत्री वेदजननी'** (पद्मपुराण, स्वर्गखण्ड ५३।५८)।

स्वयं गायत्री माताने कहा है कि मैं समस्त वेदोंकी माता हूँ— **'माताऽहं सर्ववेदानाम्'** (पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड १७।२८६)।

गायत्री साक्षात् नारायणस्वरूप वेदोंकी माता होनेके कारण मनुष्यमात्रके लिये कल्याणकारिणी कही गयी है—

'गायत्री सर्ववेदानां माता श्रेयस्करी शिवा।'

(लोगाक्षिस्मृति)

गायत्री माताकी अद्भुतशक्ति और महिमा है, अतएव गायत्रीसे वेद, स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा और दीक्षाकी उत्पत्ति हुई, यह स्पष्ट लिखा है—

गायत्री प्रभवा वेदा वेदात्सर्वं स्थितं जगत्।
स्वस्ति स्वाहा स्वधा दीक्षा एता गायत्रिजाः स्मृताः॥

(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ६४।६४)

'गायत्रीसे समस्त वेद उद्भूत हुए और उन वेदोंमें समस्त संसार स्थित है। स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा और दीक्षा—ये सभी गायत्रीसे ही उत्पन्न हुए हैं।'

जिस प्रकार गायत्री वेदोंकी माता है, उसी प्रकार वह देवताओं-की भी माता है—**'गायत्री देवजननी'** (कूर्मपुराण, उत्तरार्ध १४।५८)।, **'गायत्री सर्वदेवानाम्'** (पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड १७।३२५)। अतएव जिस प्रकार देवता समस्त लोकोंमें तथा स्थावर, जङ्गममें व्याप्त हैं, उसी प्रकार गायत्री भी देवताओंकी माता होनेके कारण समस्त लोकोंमें तथा समस्त चराचरमें व्याप्त हैं। गायत्रीकी सर्वव्यापकताके सम्बन्धमें छान्दोग्योपनिषद् (३।१२।१) में भी स्पष्ट उल्लेख है।

जो गायत्री वेदोंकी, देवताओंकी और स्वस्ति, स्वाहा आदिकी माता हैं, उन मातृस्वरूपा गायत्रीका गायत्री-मन्त्रके जप करनेसे चारों वेदोंके स्वाध्यायका पुण्य-फल प्राप्त होता है। अतः द्विजातिमात्रके लिये गायत्री माता उपास्य हैं।

वेदमाता गायत्री चारों वेदोंकी सारभूत, चारों आश्रमोंकी अवलंबनीय, वर्णत्रयकी प्राणस्वरूप, मनुष्यमात्रकी परमानन्दस्वरूप, अपने (गायत्रीके) उपासकोंकी मोक्षस्वरूप और समस्त लोकोंकी आराधनीय हैं।

गायत्री और वेद

गायत्री वेद-माता है। यह परब्रह्म परमेश्वरकी आदिशक्ति है। **'या सर्वं जगत्कर्तुं शक्नोति सा शक्तिः'** के अनुसार जो समस्त जगत्-का निर्माण करनेमें समर्थ है, उसको 'शक्ति' कहते हैं। व्याकरणके अनुसार शक्ति शब्द स्त्रीलिङ्ग है, अतः वह स्त्रीरूपसे पूजित है।

गायत्री स्वयं जिस प्रकार सर्वदा सुस्थिर और सुरक्षित रहती है, उसी प्रकार यह वेदोंको भी सर्वदा सुरक्षित रखती है। इसीलिये महाप्रलयमें भी वेदोंका लय नहीं होता—**'नैव वेदाः प्रलीयन्ते महाप्रलयेऽपि ।'**

---

१. 'जननी सर्वदेवानां गायत्री परमाङ्गना ।'

(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड १७।३२५)

'गायत्री समस्त देवताओंकी जननी प्रकृतिस्वरूप श्रेष्ठ अङ्गना है।'

महाप्रलयके समय चारों वेद अपनी माता गायत्रीमें विलीन हो जाते हैं और वे गायत्रीकी कृपासे सर्वदा सुरक्षित रहते हैं।

गायत्री और वेदका परस्पर अभेद सम्बन्ध है। अतएव चारों वेदोंमें गायत्री-मन्त्रका उल्लेख है। **'ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम्०'** (शु० य० ३६।३) इस गायत्री-मन्त्रमें भूः, भुवः और स्वः—ये तीन व्याहृतियाँ हैं, जो कि वेदोंमें प्रधान हैं। इन तीनों व्याहृतियोंको क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेदरूपमें ग्रहण किया गया है। इस विषयका उल्लेख छान्दोग्योपनिषद् (१।३७) के शाङ्कर-भाष्यमें इस प्रकार किया गया है—

'भूरिति व्याहृतिमृग्भ्यो जग्राह, भुव इति व्याहृतिं यजुर्भ्यः, स्व इति सामभ्य इति।'

अर्थात् भूः इस व्याहृतिसे ऋग्वेद, भुवः इस व्याहृतिसे यजुर्वेद और स्वः इस व्याहृतिसे सामवेदका ग्रहण किया गया है।

शुक्लयजुर्वेद (१८।६७) में भी इसी विषयका आध्यात्मिक रूपमें वर्णन किया गया है—

'ऋचो नामास्मि यजूꣳषि नामास्मि सामानि नामास्मि।'

भूः, भुवः और स्वः—ये तीनों व्याहृतियाँ क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेदसे सम्बन्धित हैं। अतः तीनों व्याहृतियाँ वेदोंका ही स्वरूप है, यह तैत्तिरीयोपनिषद् (अनु० ५।२।१) में भी कहा गया है—

'भूरिति ऋचः, भुवः इति सामानि, सुवः (स्वः) इति यजूंषि।'

'भू से ऋग्वेद, भुवः से सामवेद और सुवः (स्वः) से यजुर्वेदका ग्रहण होता है।'

अतः वेदत्रयीद्वारा व्याहृतिसहित गायत्रीकी उपासना करनी चाहिये।

गायत्री-तन्त्र (तृतीय ब्राह्मण, पटल १) में भी कहा है—

'गायत्री च स्वयं वेदः प्रणवत्रयसंयुतः।'

अर्थात् अकार, उकार और मकार—इन तीनों प्रणवों (वर्णों) से संयुक्त वेद साक्षात् स्वयं गायत्री ही है।

ज्ञानसङ्कलिनीतन्त्र (पटल १०१।१) में प्रणवको वेदस्वरूप कहा गया है—

अकारश्चैव ऋग्वेद उकारो यदुरुच्यते।
मकारः सामवेदस्तु त्रिषु युक्तोऽप्यथर्वणः॥

'प्रणव (ॐ) वेदका मुख्य स्वरूप है, जो कि वेदोंमें सर्वप्रथम प्रयुक्त होता है। प्रणवमें अकार, उकार तथा मकार (अ, उ, म्) ये तीन वर्ण क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेदके रूपमें विद्यमान हैं।'

अतः स्पष्ट है कि प्रणव एवं तीनों व्याहृतियोंसे युक्त वेद साक्षात् गायत्रीस्वरूप है। अतएव गायत्रीस्वरूप वेदको गायत्रीमूलक कहा गया है—

'गायत्रीमूलका वेदाः।' (मार्कण्डेयस्मृति)
'गायत्रीमूलको वेदः।' (लौगाक्षिस्मृति)

गायत्रीको ही 'ओङ्कार' कहा गया है—

'ओमिति ब्रह्म।' (तैत्तिरीयोपनिषद् ८।१)
'ब्रह्म गायत्रीति।' (शतपथब्राह्मण ६।६।२।७)

अतः ओङ्कार शब्दसे गायत्री ही सिद्ध है। गायत्रीकी उपासना-विधिका प्रतिपादक चौबीस अक्षरोंका गायत्री-छन्दवाला सावित्री-मन्त्र कहा जाता है। वह सावित्री-मन्त्र 'भूः, भुवः, स्वः' इन तीन व्याहृतियों-से युक्त **'तत्सवितुर्वरेण्यम्०'** इत्यादि कहा गया है।

जिस प्रकार गायत्रीको ओङ्कार कहा गया है, उसी प्रकार ओङ्कारको भी गायत्री-मन्त्र कहा गया है—

ओङ्कारस्तु परं ब्रह्म गायत्री स्यात्तदक्षरम्।
एवं मन्त्रो महायोगः साक्षात्सार उदाहृतः॥

(उशनःसंहिता ३।५२।१)

'ओङ्कार परं ब्रह्म है और गायत्री उसका अक्षर है। इस प्रकार गायत्री-मन्त्र और प्रणवात्मक परं ब्रह्म—इन दोनोंका महायोग साक्षात् सार बतलाया गया है।'

प्रणव गायत्री है। गायत्रीके मुखसे वेद उत्पन्न होते हैं। क्योंकि प्रणव गायत्रीका ज्योतिःस्वरूप है, अतः ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद-संज्ञक वेद गुणभेदसे गायत्रीके ही सगुणरूप हैं।

'वाङ्मयं प्रणवः सर्वं तस्मात्प्रणवमभ्यसेत्।'

(याज्ञवल्क्यसंहिता, पूर्वार्ध)

'समस्त वैदिक वाङ्मय गायत्रीमय प्रणव है, इसलिये प्रणवका अभ्यास करना चाहिये।'

अतः समस्त वैदिक वाङ्मय प्रणव ही है, इसलिये प्रणवका प्रयोग सर्वत्र करना चाहिये। महर्षि याज्ञवल्क्यने भी **'प्रणवं प्राक् प्रयुञ्जीत'** (याज्ञवल्क्यशिक्षा) के द्वारा वेदारम्भके पूर्व प्रणवके प्रयोग-को आवश्यक बतलाया है।

गायत्री और सूर्य

द्विजातिके लिये सन्ध्योपासन नित्य और आवश्यक कर्तव्य कहा गया है। सन्ध्योपासनको 'ब्रह्मोपासन' भी कहा जाता है, क्योंकि सन्ध्योपासनमें साक्षात् ब्रह्मकी उपासना होती है। अतएव श्रुतिमें कहा गया है—

'यः सन्ध्यामुपासते ब्रह्मैव तदुपासते।'

अर्थात् 'जो सन्ध्योपासन करता है, वह ब्रह्मकी ही उपासना करता है।'

इसीलिये गायत्रीको भी 'ब्रह्मगायत्री' कहते हैं। वह ब्रह्म ही प्रतीक-रूपमें 'आदित्य' है—

'आदित्यो ब्रह्म।' (छान्दोग्योपनिषद् ३।१९।१)
'असावादित्यो ब्रह्म।' (तैत्तिरीयारण्यक २।२)
'असौ यः स आदित्यः।' (शतपथब्रा० १०।५।१।४, १४।१।१।६)

सन्ध्योपासनमें गायत्रीका जप और सूर्योपासना प्रधान है। इसीलिये सन्ध्योपासनमें ब्रह्म-गायत्रीका जप और सूर्यकी उपासना विशेषरूपसे की जाती है। सन्ध्योपासनमें गायत्रीका जो जप किया जाता है, वह भगवान् सूर्य (ब्रह्म) की ही उपासना है। गायत्री-मन्त्र सूर्यदेव (सविता) को उद्देश्य करके ही प्रवृत्त हुआ है। अतः गायत्री-मन्त्रके द्वारा सूर्य (ब्रह्म) की उपासना की जाती है।

गायत्रीका आध्यात्मिक अर्थ परमात्मा है और आधिदैविक अर्थ है सूर्य। 'षू प्रेरणे' (धातुपाठ ६।१२४) और 'षूङ् प्राणि-प्रसवे' (धातुपाठ ४।२४) के अनुसार विश्वको जन्म देनेवाला तथा प्रेरक

परमात्मा [1]सविता है, जो कि परमात्मा है। इसलिये गायत्री-मन्त्रमें सूर्यके रूपमें परब्रह्म परमेश्वरकी ही उपासना बतलायी गयी है। अतः सूर्य परब्रह्म परमेश्वरके ही प्रतीक हैं और उन्हींकी विभूति हैं।

गायत्री-मन्त्रमें कहे गये 'सवितुः' पदसे सूर्यका ही ग्रहण होता है। अतः सूर्य सविताका ही पर्यायवाची शब्द है।

'असौ वा आदित्यो देवः सविता।'

(शतपथब्रा० ६।३।१।२०)

'आदित्योऽपि सवितैवोच्यते।' (निरुक्त, दैवतकाण्ड ४।३१)

गायत्री सविताकी शक्ति है। सविताकी शक्ति ही 'गायत्री' के नामसे प्रसिद्ध है और वह इसी शक्तिकी उपासनाके लिये देवीरूपमें कल्पित कर ली गयी है।

गायत्री सूर्यकी शक्तिसे अनुप्राणित है। अतः गायत्रीका ध्यान करनेसे सूर्यका स्वरूप प्रकट हो जाता है और सूर्यका ध्यान करनेसे गायत्रीका स्वरूप प्रकट हो जाता है। अतः गायत्री और सूर्यका परस्पर अभिन्न सम्बन्ध है, जो वाच्य-वाचकरूपसे निर्दिष्ट है—

वाच्यवाचकसम्बन्धो गायत्र्याः सवितुर्द्वयोः।
वाच्योऽसौ सविता साक्षाद् गायत्री वाचिका परा॥

(स्कन्दपुराण, काशीखण्ड, पूर्वार्ध ९।५४)

'सूर्य और गायत्रीका परस्पर वाच्य-वाचक सम्बन्ध है। सूर्य तो गायत्रीके साक्षात् वाच्य हैं और गायत्री उन सविताकी वाचिका है।'

गायत्रीमन्त्रतोयाढ्यं दत्तं येनाञ्जलित्रयम्।
काले सवित्रे किं न स्यात्तेन दत्तं जगत्त्रयम्॥

(स्कन्दपुराण ४।९।४६)

---

१. 'प्रजानां च प्रसवनात् सवितेत्यभिधीयते।' (विष्णुधर्मोत्तरपुराण)
'प्रजाओंकी उत्पत्ति करनेके कारण विद्वान् पुरुष उसे सविता कहते हैं।'

सविता सर्वभावानां सर्वभावांश्च सूयते।
सवनात् प्रेरणाच्चैव सविता तेन चोच्यते॥

(बृहद्योगियाज्ञवल्क्य-स्मृति ९।५५–५६)

'समस्त प्राणियोंके सभी भावोंको उत्पन्न करनेसे, यज्ञस्वरूप होनेसे और बुद्धिके प्रवर्तक होनेसे वे 'सविता' कहे जाते हैं।'

'गायत्री मन्त्रद्वारा जलको अभिमन्त्रितकर जिसने भगवान् सूर्यको यथासमय तीन अञ्जलियाँ अर्पित कीं, उसने तीनों लोकोंको भला क्या नहीं दे दिया ।'

तां देवीमुपतिष्ठन्ते ब्राह्मणा ये जितेन्द्रियाः ।
सूर्यलोकं ते प्रयान्ति क्रमान्मुक्तिं च पार्थिव ॥

(पद्मपुराण)

'जो ब्राह्मण जितेन्द्रिय होकर गायत्री देवीकी उपासना करते हैं, वे सूर्यलोकमें जाते हैं और हे राजन् ! इस प्रकार क्रमसे वे मुक्तिको प्राप्त करते हैं ।'

अन्य लोग—**'ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्ती नारायणः सरसिजासनसन्निविष्टः'** से सूर्यमण्डलमें भी नारायण या परब्रह्मको ही ब्रह्म-गायत्रीका परम उपास्य तत्त्व मानते हैं ।

सुतरां प्रत्येक द्विजको गायत्री और सूर्यकी उपासना अवश्य करनी चाहिये । जो द्विज गायत्री और सूर्यकी प्रतिदिन उपासना करते हैं, वे इस लोकमें अभ्युदय (सांसारिक उन्नति) और परलोकमें निःश्रेयस (मुक्ति) को प्राप्त करते हैं ।

गायत्री और ब्राह्मण

गायत्री और ब्राह्मणका सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ठ है । उपनयन-संस्कारद्वारा ही ब्राह्मण-क्षत्रियादि वर्ण द्विजत्वको प्राप्त होते हैं । उपनयन-संस्कारमें ब्राह्मणादि द्विजको गुरुके द्वारा 'गायत्री-मन्त्र' की दीक्षा दी जाती है, जो उनके लिये आजीवन उपास्य है । विशेषकर ब्राह्मणके लिये तो गायत्रीकी उपासना परम आवश्यक है; क्योंकि इसके बिना वह केवल नामधारी ब्राह्मण रह जाता है, जिसे यथार्थतः ब्राह्मण नहीं कहा जा सकता । यथार्थ ब्राह्मण तो वही है, जो गायत्री-का उपासक है—

गायत्रीजपकृद् भक्त्या सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
गायत्रीजपशुद्धो हि शुद्धो ब्राह्मण उच्यते ॥

(शिवपुराण, विद्येश्वरसंहिता १५।१८)

'भक्तिपूर्वक गायत्री-जप करनेवाला समस्त पापोंसे मुक्त हो जाता है । गायत्री-जपसे पवित्र ब्राह्मण ही पवित्र या शुद्ध ब्राह्मण कहा जाता है ।'

'बृहत्सन्ध्याभाष्य' में तो यहाँ तक कहा गया है कि जो ब्राह्मण बारह लाख गायत्री-मन्त्रका जप करता है, वही 'पूर्ण ब्राह्मण' कहलाता है—

'लक्षद्वादशयुक्तस्तु पूर्णो ब्राह्मण ईरितः।'

जो चौबीस लाख गायत्री-मन्त्रका जप करता है, वह 'सुपात्र ब्राह्मण' कहा जाता है—

चतुर्विंशतिलक्षं वा गायत्र्या जपसंयुतः।
ब्राह्मणस्तु भवेत् पात्रम्……………॥

(शिवपुराण, विद्येश्वरसंहिता १५।१४)

लक्षद्वादशयुक्तस्तु पूर्ण ब्राह्मण इङ्गितः।
गायत्र्या लक्षहीनस्तु वेदकार्ये न योजयेत्॥

(शिवपुराण, विद्येश्वरसंहिता ११।४६।६७)

'गायत्रीका बारह लाख जप करनेपर ही पूर्ण ब्राह्मण होता है और जो एक लाख गायत्री-जपसे हीन है, उसे वैदिक कर्ममें नियुक्त नहीं करना चाहिये।'

बृहत्पाराशरस्मृति (५।१४) में लिखा है कि जो ब्राह्मण गायत्री-जपसे विहीन है, वह ब्राह्मणत्वको प्राप्त नहीं कर सकता।

'सावित्रीविहीनो यो वै न विप्रत्वमवाप्नुयात्।'

गायत्री-मन्त्र द्विजत्वका सम्पादक है। अतः द्विजत्वकी प्राप्तिके लिये ब्राह्मणको प्रतिदिन गायत्रीका जप करना चाहिये। गायत्रीका जप 'द्विजधर्म' कहा गया है। उस द्विजधर्मकी रक्षा गायत्रीके जपसे ही होती है। गायत्रीके जपके बिना ब्राह्मण भी ब्राह्मणत्वसे च्युत हो जाता है—

'अज्ञात्वा चैव गायत्रीं ब्राह्मण्यादेव हीयते।'

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।७१)

अतः ब्राह्मणको अपने ब्राह्मणत्वकी रक्षाके लिये प्रतिदिन गायत्रीका जप करना चाहिये।

गायत्र्युपासना नित्या सर्ववेदैः समीरिता।
यया विना त्वधः पातो ब्राह्मणस्यास्ति सर्वथा॥
तावता कृतकृत्यत्वं नान्यापेक्षा द्विजस्य हि।
गायत्रीमात्रनिष्णातो द्विजो मोक्षमवाप्नुयात्॥

(देवीभागवत १२।८।८९-९०)

'समस्त वेदोंमें गायत्रीकी उपासना नित्य कही गयी है। अतः गायत्रीकी उपासनाके बिना ब्राह्मणका सर्वथा अधःपतन होता है। द्विज गायत्रीकी उपासनासे ही कृतार्थ हो जाता है, उसे अन्य किसी उपासनाकी अपेक्षा नहीं होती। अतः जो द्विज केवल गायत्री-उपासनामें निष्णात है, वह मोक्षको प्राप्त होता है।'

महाराज मनुने गायत्रीके ज्ञाताकी विशेष प्रशंसा की है—

सावित्रीमात्रसारोऽपि वरं विप्रः सुयन्त्रितः।
नायन्त्रितस्त्रिवेदोऽपि सर्वाशी सर्वविक्रयी॥

(मनुस्मृति २।११८)

'केवल गायत्रीको जाननेवाला ही संयमी (जितेन्द्रिय) ब्राह्मण श्रेष्ठ है, किन्तु तीनों वेदोंका ज्ञाता होनेपर भी जो असंयमी, सर्वभक्षी और समस्त वस्तुओंको बेचनेवाला है, वह श्रेष्ठ नहीं है।'

योगि याज्ञवल्क्यने भी स्वल्पान्तरसे यही बात कही है—

गायत्रीमात्रसन्तुष्टो वरं विप्रः सुयन्त्रितः।
नायन्त्रितश्चतुर्वेदः सर्वाशी सर्वविक्रयी॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।७६,७७)

'केवल गायत्री-मन्त्रसे ही सन्तुष्ट (कृतकृत्य) सदाचारी संयमी ब्राह्मण तो मान्य है, किन्तु चारों वेदोंका ज्ञाता होनेपर भी जो असंयमी, सर्वभक्षी और सर्वविक्रयी है, वह मार्गस्थ या मान्य नहीं है।'

भगवान् वेदव्यासजीने भी कहा है—

गायत्रीमात्रसारोऽपि वरं विप्रः सुसंयतः।
नायन्त्रितश्चतुर्वेदी सर्वाशी सर्वविक्रयी॥

(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड १७।२८८)

'केवल गायत्रीमात्रको जाननेवाला ही संयमी ब्राह्मण श्रेष्ठ है, किन्तु चारों वेदोंको जाननेवाला भी जो असंयमी, सर्वभक्षी और सर्वविक्रयी है, वह श्रेष्ठ नहीं है।'

पाराशरस्मृति (८।३२) में भी गायत्रीसे रहित ब्राह्मणकी निन्दा और गायत्रीके तत्त्वको जाननेवालेकी प्रशंसा की गयी है—

गायत्रीरहितो विप्रः शूद्रादप्यशुचिर्भवेत्।
गायत्रीब्रह्मतत्त्वज्ञाः सम्पूज्यन्ते द्विजोत्तमाः॥

'गायत्रीसे रहित ब्राह्मण शूद्रसे भी अधिक अपवित्र होता है। गायत्रीरूप वेदके तत्त्वको जाननेवाले ब्राह्मण पूजित होते हैं।'

पद्मपुराणमें लिखा है कि जो द्विज उपनयन-संस्कारके बाद लगातार तीन दिन गायत्री-मन्त्रका जप नहीं करता, वह द्विजत्वसे च्युत हो जाता है और जो लगातार सात दिन (एक सप्ताह) गायत्री-मन्त्रका जप नहीं करता, वह जीवित ही 'पतित' हो जाता है तथा मरनेके बाद चाण्डाल, व्याघ्र अथवा शूकर-योनिको प्राप्त होता है। अतः ब्राह्मणके लिये गायत्रीका जप आवश्यक है। गायत्रीके जपसे ब्राह्मण समस्त प्रकारकी शक्ति-सामर्थ्यको प्राप्तकर मोक्षतकको प्राप्त कर लेता है।

स्कन्दपुराणमें लिखा है कि जो ब्राह्मण गायत्रीका जप करता है, वह असत् प्रतिग्रह एवं अन्य दोष आदिके पापोंसे मुक्त हो जाता है। जो ब्राह्मण पुष्कर तीर्थमें स्नानकर गायत्रीका ग्यारह हजार जप करता है, वह असत् प्रतिग्रहजनित पापसे निवृत्त हो जाता है। जो ब्राह्मण ब्रह्मचर्यपूर्वक गायत्रीका चौबीस लाख जप पूर्णकर प्रतिदिन तीन हजार गायत्रीका जप करता है, वह अद्‌भुत शक्तिशाली बन जाता है और वह गायत्री-मन्त्रसे अभिमन्त्रित जलरूपी वज्रसे दैत्य, दानव, राक्षस, भूत, प्रेत, पिशाच आदिकी क्रूर बाधाओं और सभी प्रकारके रोग तथा नजर आदि दोषोंको नष्ट कर देता है। अतः प्रत्येक ब्राह्मणको गायत्रीका जप प्रतिदिन करना चाहिये। जो ब्राह्मण उत्तम, मध्यम अथवा अधम किसी भी रूपमें गायत्रीका जप प्रतिदिन करता है, वह कभी किसी भी पापसे लिप्त नहीं होता, यह स्पष्ट लिखा है—

सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां दशावराम्।
गायत्रीं च जपन् विप्रो न स पापेन लिप्यते ॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति १०।११-१२)

'प्रतिदिन एक हजार गायत्रीका जप श्रेष्ठ, सौ बार गायत्रीका जप मध्यम और दस बार गायत्रीका जप अधम है। जो ब्राह्मण किसी भी रूपमें गायत्रीका जप करता है, वह पापसे लिप्त नहीं होता।'

दुःखका विषय है कि आजका ब्राह्मण केवल दान लेना जानता है, वह गायत्रीका जप करना नहीं जानता। दान लेनेसे उसे प्रतिग्रही बनना पड़ता है। इसके निवारणार्थ केवल गायत्रीका जप ही सर्वश्रेष्ठ उपाय है। अतः दान लेनेवाले ब्राह्मणको कमसे-कम ग्यारह हजार गायत्री-मन्त्रका जप प्रतिदिन करना चाहिये। ऐसा करनेसे ही ब्राह्मण प्रतिग्रहजन्य दोषसे मुक्त हो सकता है।

शास्त्रोंमें गायत्री-मन्त्रके जपकी महिमा अनन्त है। हम यहाँ ऐसे ही कतिपय वचन उद्धृत करते हैं—

जप्येनैव हि संसिद्ध्येद् ब्राह्मणो नात्र संशयः।
कुर्यादन्यन्न वा कुर्यान्मैत्रो ब्राह्मण उच्यते॥

(मनुस्मृति २।८७)

'ब्राह्मण गायत्रीके जपसे ही सिद्धिको प्राप्त करता है, इसमें सन्देह नहीं। वह दूसरा कुछ करे अथवा न करे, किन्तु गायत्री-जपके प्रभावसे ब्रह्ममें लीन होकर सभीका [1]'मित्र' कहलाता है।'

गायत्री वेदजननी गायत्री पापनाशिनी।
गायत्र्याः परमं नास्ति दिवि चेह च पावनम्॥
हस्तत्राणप्रदा देवी पततां नरकार्णवे।
तस्मात्तामभ्यसेन्नित्यं ब्राह्मणो नियतः शुचिः॥
गायत्रीजाप्यनिरतं हव्यकव्येषु भोजयेत्।
तस्मिन्न तिष्ठते पापमब्बिन्दुरिव पुष्करे॥
जप्येनैव तु संसिद्ध्येद् ब्राह्मणो नात्र संशयः।
कुर्यादन्यन्न वा कुर्यान्मैत्रो ब्राह्मण उच्यते[2]॥

(शङ्खस्मृति १२।११-१४)

'गायत्री वेदोंकी माता और समस्त पापोंका नाश करनेवाली है। गायत्रीसे बढ़कर इहलोक और द्युलोकमें पवित्र करनेवाला मन्त्र नहीं है। गायत्री नरकरूपी समुद्रमें गिरनेवालोंको हाथका सहारा देकर बचा लेती है। इसलिये ब्राह्मणको नियमपूर्वक शुद्ध होकर प्रतिदिन गायत्री-मन्त्रका जप करना चाहिये। गायत्री-जपमें लगे हुए ब्राह्मणको ही देव एवं पितृकार्योंमें भोजन कराना चाहिये। उस व्यक्तिमें पाप वैसे ही नहीं ठहर पाता, जैसे कमल-पत्रपर जलबिन्दु।'

सहस्रकृत्वस्त्वभ्यस्य बहिरेतत्त्रिकं द्विजः।
महतोऽप्येनसो मासात्त्वचेवाहिर्विमुच्यते॥

(मनुस्मृति २।७९)

'जो ब्राह्मण ग्रामसे बाहर एकान्त स्थानमें प्रणव (ओङ्कार) और तीन व्याहृतियोंके सहित गायत्री-मन्त्रका एक हजार बार जप

---

१. मित्रका अर्थ है सूर्य। सूर्यदेवतासे सम्बन्धित गायत्री-मन्त्रके जपके कारण ही ब्राह्मण मैत्र (मित्रोपासक) कहलाता है।

२. यह श्लोक अधिकांश स्मृतियोंमें प्राप्त होता है।

प्रतिदिन करता है, वह एक ही महीनेमें बड़े-बड़े पापोंसे उस प्रकार छूट जाता है, जिस प्रकार कँचुलीसे सर्प छूट जाता है।'।

यही बात बृहद्योगियाज्ञवल्क्यस्मृति (४।४८) में भी ठीक इसी प्रकारके श्लोकमें कही गयी है।

अहन्यहनि योऽधीते गायत्रीं वै द्विजोत्तमः।
मासेन मुच्यते पापादुरगः कञ्चुकाद्यथा॥
गायत्रीं यस्तु विप्रो वै जपते नियतः सदा।
स याति परमं स्थानं वायुभूतः स्वमूर्तिमान्॥

(संवर्तस्मृति २२३, २२४)

'जो श्रेष्ठ ब्राह्मण प्रतिदिन गायत्रीका जप करता है, वह एक ही मासमें पापोंसे उस प्रकार छूट जाता है, जिस प्रकार कँचुलीसे सर्प छूट जाता है। जो ब्राह्मण नियमपूर्वक सदा गायत्रीका जप करता है, वह मृत्युके अनन्तर वायुभूत एवं स्वरूपनिष्ठ हो परमपदको प्राप्त करता है।'

गायत्रीं जपते यस्तु द्वौ कालौ ब्राह्मणः सदा।
तथा राजन् स विज्ञेयः पङ्क्तिपावनपावनः॥
कामकामो लभेत् कामं गतिकामस्तु सद्गतिम्।
अकामस्तु तदाप्नोति यद् विष्णोः परमं पदम्॥

(विष्णुधर्मोत्तरपुराण ३)

'राजन्! जो ब्राह्मण प्रातःकाल और सायंकाल दोनों समय सर्वदा गायत्री-जप करता है, वह उसके प्रभावसे पङ्क्तिपावनोंको भी पवित्र कर देता है। जो सकाम-भावसे गायत्रीका जप करता है, उसे अभीष्ट वस्तुकी प्राप्ति होती है। जो श्रेष्ठ गति चाहता है, उसे सद्गति मिलती है और जो निष्काम-भावसे जप करता है, उसे भगवान् विष्णुके परमपदकी प्राप्ति होती है।'

तदित्यृचः समो नास्ति मन्त्रो वेदचतुष्टये।
सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च दानानि च तपांसि च॥
समानि कलया प्राहुर्मुनयो न तदित्यृचः।
बहुना किमिहोक्तेन यथावत् साधुसाधिता॥
द्विजन्मनामियं विद्या सिद्धिकामदुघा मता॥

(विश्वामित्रः)

'चारों वेदोंमें **'तत्सवितुर्वरेण्यम्'** इत्यादि गायत्री-मन्त्रके सदृश और कोई महत्त्वपूर्ण मन्त्र नहीं है। समस्त वेद, यज्ञ, दान और तप—गायत्री-मन्त्रके सोलहवें हिस्सेके बराबर भी नहीं कहे गये हैं। अधिक क्या कहा जाय, गायत्रीका जप करनेपर यह (गायत्री) ब्राह्मणोंको सब प्रकारकी सिद्धियोंको देनेवाली है।'

'वाग्वै गायत्री' (छान्दोग्योपनिषद् ३।१२।१) के अनुसार गायत्री वेद-वाणी है। चारों वेदोंके अध्ययनका जो फल है, वह गायत्री-मन्त्रके जप करनेसे ही प्राप्त हो जाता है। अतएव प्राचीन मेधावी ब्राह्मण गायत्रीके जपमें ही अपनी समस्त आयु व्यतीत करते थे।

ब्राह्मणोंने सर्वदा गायत्री-मन्त्ररूपी निधिको ही अपनाया और उसके सामने विश्वकी समस्त भौतिक निधिको तुच्छ एवं क्षणभङ्गुर जानकर ठुकरा दिया। उनका एकमात्र सिद्धान्त था—

आत्मानं चेद् विजानीयादयमस्मीति पूरुषः।
किमिच्छन् कस्य कामाय शरीरमनुसंज्वरेत्॥

(बृह० उ० ४।४।१२)

'यदि पुरुष अपने आत्माको 'मैं यह हूँ'—इस प्रकार ठीक-ठीक जान ले तो फिर किस इच्छासे और किस कामनाके लिये वह इस मिथ्या शरीरके पीछे सन्तप्त हो।'

ब्राह्मणके लिये गायत्रीको 'कामधेनु' कहा गया है। कामधेनुरूप गायत्रीके जपसे वह सब कुछ प्राप्त कर सकता है, अतः उसके लिये गायत्रीको 'प्राण' कहा गया है। जिस प्रकार मनुष्यके शरीरमें प्राण न रहनेसे वह 'मृतक' कहा जाता है, उसी प्रकार गायत्रीके जपके बिना ब्राह्मण जीवित रहता हुआ भी मृतकके सदृश ही कहा जाता है। अतः ब्राह्मणको कामधेनुतुल्य और प्राणस्वरूप गायत्रीका जप जीवनपर्यन्त करते रहना चाहिये। इसी प्रकार क्षत्रिय एवं वैश्यवर्णके लोगोंको भी इससे पूर्ण लाभ उठाना चाहिये।

सन्ध्या और गायत्री

गायत्री सन्ध्याका सर्वस्व है। सन्ध्यामें गायत्रीकी ही प्रधानता और महत्ता है। जो द्विज नित्य नियमपूर्वक सन्ध्या करते हैं, उनकी सन्ध्याके साथ-साथ गायत्रीकी भी उपासना स्वतः हो जाती है।

भगवान्ने गीता (१८।५) में कहा है कि यज्ञ, दान और तप—ये तीनों ही बुद्धिमान् मनुष्योंको पवित्र करते हैं—

'यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ।'

वस्तुतः उपर्युक्त भगवद्वाक्य सन्ध्यामें विशेषरूपसे चरितार्थ होता है; क्योंकि इसमें यज्ञ, दान और तप—ये तीनों कृत्य नित्य किये जाते हैं। इसमें जप, अर्घ्य और प्राणायाम—ये तीन कृत्य महत्त्वपूर्ण हैं, जो गीतोक्त यज्ञ, दान और तप—इन तीनों रूपोंमें चरितार्थ हो जाते हैं। इससे जो गायत्रीका जप किया जाता है, उसे यज्ञ (जप-यज्ञ) कहते हैं—**'यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि'** (गीता १०।२५)।

सन्ध्योपासनमें सूर्यको जो अर्घ्य दिया जाता है, उसे 'दान' (अर्घ्य-दान) कहते हैं और इसमें जो प्राणायाम किया जाता है, उसे 'तप' कहते हैं—

'प्राणायामः परं तपः ।' (मनुस्मृति २।८३)

सन्ध्यामें यज्ञ (गायत्री-जप) से तीनों व्याहृतियोंद्वारा तीनों देवता[1], तीनों अग्नि[2], तीनों लोक[3], तीनों प्रकृति[4] और तीनों काल[5]-की भावना होती है तथा गाने अर्थात् जप करनेवालेकी वह सब प्रकारसे रक्षा करती है एवं मनुष्यको सद्बुद्धि प्रदान करती है और उसके मनको निर्मल करती है। इसमें अर्घ्यदानसे सूर्यपर मन्देह असुरोंद्वारा किये गये आक्रमणोंका निराकरण होता है और तप (प्राणायाम) से ब्रह्मा, विष्णु और महेश—इन तीनों आदिदेवोंका दर्शन तथा आयुकी वृद्धि होती है।

सन्यामें गायत्री ही प्रधान है। अतएव इसमें गायत्रीकी उपासना विशेषरूपसे की जाती है। जो द्विज सन्ध्या नहीं करता, वह गायत्रीकी उपासनासे भी वञ्चित रहता है।

---

१. ब्रह्मा, विष्णु और महेश ।
२. दक्षिणाग्नि, गार्हपत्याग्नि और आहवनीयाग्नि ।
३. स्वर्ग, मर्त्य और पाताललोक ।
४. सात्त्विकी, राजसी और तामसी ।
५. भूत, भविष्य और वर्तमान ।

भगवान् मनुने प्रातःकाल और सायंकाल सन्ध्योपासनके समय गायत्रीके जप करनेका विशेष महत्त्व बतलाया है—

पूर्वां सन्ध्यां जपंस्तिष्ठन्नैशमेनो व्यपोहति ।
पश्चिमां तु समासीनो मलं हन्ति दिवाकृतम् ॥

(मनुस्मृति २।१०२)

'प्रातः सन्ध्योपासनके समय खड़ा होकर गायत्रीके जप करनेसे मनुष्यका रातका किया हुआ पाप नष्ट हो जाता है तथा सायं सन्ध्योपासनके समय बैठकर गायत्रीके जप करनेसे दिनका किया हुआ पाप नष्ट हो जाता है ।'

यही बात बृहद्योगियाज्ञवल्क्यस्मृति (१०।८-९) में भी ठींक इसो श्लोक द्वारा कही गयी है।

सन्ध्या और गायत्रीका अभिन्न सम्बन्ध है। अतः गायत्रीकी उपासना करना आवश्यक है। वस्तुतः सन्ध्याको ही गायत्री कहा जाता है—

'या सन्ध्या सैव गायत्री ।'

(देवीभागवत ११।१७,१८)

'या सन्ध्या सैव गायत्री ।'

(गृह्यसूत्रावली)

'या सन्ध्या सा तु गायत्री ।'

(बृहद्योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ६।१०)

सन्ध्यामें गायत्रीकी प्रधानता और महत्ता होनेके कारण ब्रह्मा आदि देवगण भी सन्ध्योपासनके समय गायत्रीका ध्यान और गायत्री-मन्त्रका जप करते हैं—

सर्ववेदसारभूता गायत्र्यास्तु समर्चना ।
ब्रह्मादयोऽपि सन्ध्यायां तां ध्यायन्ति जपन्ति च ॥

(देवीभागवत ११।१६।१५-१६)

'गायत्रीकी अर्चना समस्त वेदोंकी सारभूत है। ब्रह्मा आदि भी सन्ध्या करनेके समय गायत्रीका ध्यान और गायत्री-मन्त्रका जप करते हैं।'

भीष्मपितामहने भी युधिष्ठिरसे—सूर्यवंशी, चन्द्रवंशी, रघुवंशी और कुरुवंशी राजाओंके द्वारा गायत्री-जप करनेकी परम्परा बतलाया है—

सोमादित्यान्वयाः सर्वे राघवाः कुरवस्तथा।
पठन्ति शुचयो नित्यं सावित्रीं परमां गतिम्॥

(महाभारत, अनुशासनपर्व १५०।७८)

'सोमवंशी (चन्द्रवंशी), आदित्यवंशी (सूर्यवंशी), रघुवंशी और कुरुवंशी राजा पवित्र होकर परम गति देनेवाली सावित्री (गायत्री) का प्रतिदिन जप करते थे।'

अतः प्रत्येक द्विजको, विशेषतः ब्राह्मणको सन्ध्योपासनके समय गायत्रीका जप अवश्य करना चाहिये। जो ब्राह्मण सन्ध्योपासनके समय गायत्रीका जप नहीं करता, वह जीवित ही शूद्र कहलाता है और मरनेके बाद वह कुत्ता होता है—

सन्ध्यायां च प्रभाते च मध्याह्ने च ततः पुनः।
सन्ध्यां नोपासते यस्तु ब्राह्मणो हि विशेषतः॥
स जीवन्नेव शूद्रः स्यान्मृतः श्वा चैव जायते॥

(दक्षसंहिता २।१८)

'सन्ध्योपासनके समय प्रातःकाल और सायंकालमें विशेषकर जो ब्राह्मण गायत्रीका जप नहीं करता, वह जीते-जी शूद्रके सदृश है और मरनेके बाद कुत्तेकी योनिको प्राप्त होता है।'

'सन्ध्याकाले ह्यजपन्तः श्व-शूकर-शृगाल-कुक्कुट-सर्पयोनिषु वर्ष-सहस्राणि जायन्ते।'

(अथर्ववेदपरिशिष्ट, सन्ध्यासूत्र ३।४)

'सन्ध्योपासनके समय गायत्रीका जप न करनेवाले कुत्ता, शूकर, शृगाल, मुर्गा और सर्पकी योनिमें एक हजार वर्षतक रहते हैं।'

'य इमां न विन्दन्ति नाधीयते सन्ध्याकाले नोपासते ते ह्यश्रोत्रिया भवन्त्यनुपनीता कृत्यहीनाश्छेदन-भेदन-भोजन-मैथुनायभिचरन्तः।'

(अथर्ववेदपरिशिष्ट, सन्ध्यासूत्र ३।३)

'जो द्विज गायत्रीको नहीं जानते, गायत्रीका अध्ययन नहीं करते और सन्ध्योपासनके समय गायत्रीकी उपासना नहीं करते तथा जो वृक्षादिके छेदन, भेदन एवं भोजन और मैथुन करते हैं, वे समस्त कृत्योंसे हीन होकर अश्रोत्रिय और अनुपनीत कहलाते हैं।'

सृष्टिकर्ता ब्रह्माने विकर्मस्थ (उच्छृङ्खल) द्विजोंको पवित्र करनेके लिये ही सन्ध्या और गायत्रीका प्रादुर्भाव किया है। यह सन्ध्या अथवा गायत्री तीन रूपोंमें प्रतिष्ठित है—

यावन्तोऽस्यां पृथिव्यां तु विकर्मस्था द्विजातयः।
तेषां तु पावनार्थाय सन्ध्या सृष्टा स्वयम्भुवा॥
या सन्ध्या सा तु गायत्री त्रिधा भूत्वा प्रतिष्ठिता।
सन्ध्या ह्युपासिता येन तेन विष्णुरुपासितः॥

(बृहद्योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ६।९–१०)

'इस पृथिवीमें जितने विकर्मस्थ (दुष्कर्म करनेवाले) द्विज हैं, उनको पवित्र करनेके लिये ही सृष्टिकर्ता ब्रह्माने सन्ध्या और गायत्रीका निर्माण किया है। वह सन्ध्या अथवा गायत्री तीन रूपोंमें प्रतिष्ठित है। अतः जिसने सन्ध्योपासन किया, उसने भगवान् विष्णुकी उपासना कर ली।'

ब्रह्माके द्वारा निर्मित सन्ध्या और गायत्रीकी उपासना मर्यादा-पुरुषोत्तम भगवान् राम और भगवान् कृष्ण भी प्रतिदिन करते थे। इसी प्रकार सूर्यवंशी तथा चन्द्रवंशी सभी राजा-महाराजा सन्ध्या और गायत्रीकी उपासना करते थे। अतः स्पष्ट है कि सन्ध्या और गायत्री अत्यन्त प्राचीन और महत्त्वपूर्ण है। इसलिये सन्ध्या और गायत्री द्विजमात्रके लिये प्रतिदिन अनुष्ठेय है। अतः जो द्विज प्रतिदिन प्रातःकाल और सायंकाल सन्ध्योपासन और गायत्रीका जप करता है, वह परम पवित्र और निष्पाप हो जाता है।

सायं प्रातस्तु यः सन्ध्यां समक्षां सेवते द्विजः।
जपन् वै पावनीं देवीं सावित्रीं लोकमातरम्॥
स तया पावितो देव्या ब्राह्मणो धूतकिल्बिषः।
न सीदेत् प्रतिगृह्णानः पृथिवीं च ससागराम्॥
गोघ्नः पितृघ्नो मातृघ्नो भ्रूणहा गुरुतल्पगः।
ब्रह्महा हेमहारी च यस्तु विप्रः सुरां पिबेत्॥
गायत्र्याः शतसाहस्रे जपे भवति वै शुचिः॥

(बृहद्योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।५९–६२)

'जो द्विज सायंकाल तथा प्रातःकाल नक्षत्रके रहते हुए सन्ध्या करता है और सबको पवित्र करनेवाली गायत्री-मन्त्रका जप करता है, वह उन्हीं गायत्री माताकी कृपासे पवित्र और पाप-रहित हो जाता है। वह सागरके सहित समस्त पृथिवीका दान लेनेपर भी पतनोन्मुख नहीं होता। जो मनुष्य गोघाती, पितृघाती, मातृघाती, गर्भघाती, गुरुपत्नीगामी, ब्रह्मघाती, सुवर्णहारी और मदिरासेवी है, वह भी एक लाख गायत्रीके जप करनेसे निश्चय ही पवित्र हो जाता है।'

सायं प्रातश्च यः सन्ध्यामुपास्ते शुद्धमानसः।
जपन् हि पावनीं देवीं गायत्रीं वेदमातरम्॥
यावन्तश्च पृथिव्यां हि चीर्णवेदव्रता द्विजाः।
अचीर्णव्रतवेदा वा विकर्मपथमाश्रिताः॥
तेषां हि पावनार्थाय गायत्री नित्यमेव हि॥

(अग्निपुराण)

'जो द्विज शुद्ध मनसे सायङ्काल और प्रातःकाल सन्ध्योपासन करता है और जो पवित्र करनेवाली वेदमाता गायत्री देवीका जप करता है वह तथा पृथिवीमें जितने वेदका अनुष्ठान करनेवाले द्विज हैं और जिन्होंने वेदका अनुष्ठान नहीं किया है तथा जो कुमार्गमें संलग्न हैं, उन सभीको पवित्र करनेके लिये गायत्री देवीका नित्य जप कहा गया है।'

सायं प्रातश्च सन्ध्यां यो ब्राह्मणोऽभ्युपसेवते।
प्रजपन् पावनीं देवीं गायत्रीं वेदमातरम्॥
स तया पावितो देव्या ब्राह्मणो नष्टकिल्बिषः।
न सीदेत् प्रतिगृह्णानो महीमपि ससागराम्॥

(महाभारत, वनपर्व २००।८३-८४)

'जो ब्राह्मण प्रातःकाल और सायंकाल इन दोनों समयकी सन्ध्या करता है और सबको पवित्र करनेवाली वेदमाता गायत्री-मन्त्रका जप करता है, वह उन्हीं गायत्री देवीकी कृपासे परम पवित्र और निष्पाप हो जाता है। वह समुद्र-पर्यन्त समस्त पृथिवीका दान ग्रहण कर ले तो भी किसी संकटमें नहीं पड़ता।'

ये चास्य दारुणाः केचिद् ग्रहाः सूर्यादयो दिवि।
ते चास्य सौम्या जायन्ते शिवाः शिवतराः सदा॥

(महाभारत, वनपर्व २००।८५)

'आकाशके सूर्य आदि ग्रहोंमेंसे जो कोई भी ग्रह मनुष्यके लिये भयंकर होते हैं, वे गायत्री-जपके प्रभावसे उसके लिये सदा सौम्य, सुखद एवं परम मङ्गलकारी हो जाते हैं।'

सर्वे नानुगतं चैनं दारुणाः पिशिताशनाः।
घोररूपा महाकाया मर्षयन्ति द्विजोत्तमम्॥

(महाभारत, वनपर्व २००।८६)

'भयंकर रूप और विशाल शरीरवाले, समस्त क्रूरकर्मा, मांसभक्षी राक्षस भी गायत्री-जप-परायण श्रेष्ठ द्विजपर आक्रमण नहीं करते।'

'देवीभागवत' में कहा गया है कि जो ब्राह्मण प्रतिदिन गायत्रीका जप करता है, वह सन्ध्योपासनका समस्त फल प्राप्त करता है—

ॐकारं पूर्वमुच्चार्य भूर्भुवः स्वस्तथैव च।
चतुर्विंशत्यक्षरां च गायत्रीं प्रोच्चरेत्ततः॥
एवं नित्यं जपं कुर्याद् ब्राह्मणो विप्रपुङ्गवः।
स समग्रं फलं प्राप्य सन्ध्यायाः सुखमेधते॥

(११।१६।१०५-१०६)

'गायत्रीका जापक पहले ॐकारका उच्चारण करे, पश्चात् **'भूर्भुवः स्वः'** कहे। अनन्तर चौबीस अक्षरवाली ब्रह्मगायत्रीका जप करे। इस प्रकार जो ब्राह्मण प्रतिदिन गायत्रीका जप करता है, वह सन्ध्योपासनका समस्त फल प्राप्तकर सुखकी प्राप्ति करता है।'

निष्कर्ष यह है कि जो ब्राह्मण प्रतिदिन गायत्रीका जप करता है, वह सन्ध्योपासन और गायत्री-जप इन दोनोंके फलको प्राप्त करता है। अतः स्पष्ट है कि सन्ध्या और गायत्री दोनों एक ही हैं। इसीलिये सन्ध्याका सर्वस्व गायत्री है और गायत्रीकी सर्वस्वभूता सन्ध्या।

'या सन्ध्या सैव गायत्री द्विधा भूता व्यवस्थिता' के अनुसार जो सन्ध्या है, वही गायत्री है और ये दोनों ही सन्ध्या और गायत्रीके रूपमें व्यवस्थित हैं।

सन्ध्यामें गायत्री देवीके ब्राह्मी, वैष्णवी और रौद्री—इन तीन रूपोंका ध्यान किया जाता है, जिससे गायत्रीकी उपासना ब्रह्मोपासना कही जाती है।

सन्ध्योपासन और गायत्री उपासनामें ब्राह्मी, वैष्णवी और रौद्री—इन तीनों त्रिशक्तियोंकी उपासना होती है। जिस प्रकार त्रिकाल सन्ध्यामें उक्त तीनों शक्तियाँ पृथक्-पृथक् रूपसे उपस्थित होती हैं, उसी प्रकार गायत्री-मन्त्रके जपमें भी यही तीनों शक्तियाँ उपस्थित होती हैं, जिससे सन्ध्योपासना और गायत्री—उपासना ये दोनों ही ब्रह्मोपासना कही जाती हैं। अतः ब्रह्मोपासनास्वरूपा सन्ध्योपासना और गायत्री—उपासना करनेवालेको परब्रह्मका साक्षात्कार अवश्य ही होता है।

गायत्रीविषयक विविध प्रश्नोंके उत्तर

प्रश्न १—गायत्री स्वयं स्त्रीस्वरूपिणी है, तो इसका अधिकार स्त्रियोंको क्यों नहीं है ?

उत्तर—गायत्री छन्द है और वह मूर्तिमती स्त्री है। प्रायः जितने भी छन्द हैं, वे सभी स्त्रीलिंग हैं। इसलिये प्रतीत होता है कि गायत्री स्त्रीरूपिणी हैं। यों तो श्रुति भी स्त्री है, सरस्वती स्त्री है और लक्ष्मी भी स्त्री ही है। इसी प्रकार सभी देवियाँ स्त्रीस्वरूपिणी हैं, परन्तु गायत्री आदि देवियाँ लौकिक स्त्रियोंसे विलक्षण हैं, अलौकिक हैं और दिव्य हैं।

लौकिक स्त्रियाँ मासिक-धर्मवाली होती हैं, अतः वे निसर्गतः अशुचि हैं। गायत्री, सरस्वती और लक्ष्मी आदि देवियाँ मासिक-धर्मसे विहीन हैं, अतः ये शुचि होती हैं। इसलिये प्रकृतिसे अशुचि स्त्रियोंसे और निसर्गतः शुचि दिव्य देवियोंसे परस्पर तुलना नहीं की जा सकती। अतः अशुचि स्त्रियोंको गायत्री-मन्त्रका अधिकार नहीं है।

गायत्री-मन्त्र परम पवित्र वेदमन्त्र है। वेदमन्त्रका अधिकार स्त्रियोंको नहीं है। जिनको गायत्री-मन्त्रका अधिकार नहीं है, उन्हींके लिये वेदमन्त्र पुराणके रूपमें मन्त्र बनकर प्रकट हुए हैं और अपने मन्त्रमय पौराणिक श्लोकोंकी दीक्षा और जप करनेका सबको अधिकार देते हैं।

प्रश्न २—गायत्रीका सबको अधिकार क्यों नहीं है ?

उत्तर—**'देवो भूत्वा देवं यजेत्'** के अनुसार किसी भी देवताका आराधन करनेके लिये स्वयं भी देवता बनना चाहिये। जिस प्रकार श्रौत इष्टियोंमें यजमान व्रत ग्रहणकर स्वयं अपनेको देवमय बना लेता है और इष्टि समाप्त होनेपर वह पुनः उसी प्रकार मानव बन जाता है। अतएव गायत्रीके लिये उत्कृष्ट शुचि भावकी अपेक्षा है। कपूरमें सुगन्धि है, किन्तु उसकी सावधानीसे रक्षा न की जाय तो वह शीघ्र ही उड़ जाता है। अतः गायत्री-मन्त्रकी पवित्रताकी रक्षाकी दृष्टिसे इसका अधिकार केवल (आचरणसे शुद्ध लोगोंको) द्विजको है, सबको नहीं।

गायत्री वैदिक देवता है। अतः यह परम पवित्र और देवमय है। इसलिये यह केवल **शुद्धाचरण** द्विजके लिये ही उपास्य है, **अशुद्धाचरण** स्त्री और शूद्रके लिये नहीं।

प्रश्न ३—गायत्री-मन्त्र सौर है या शाक्त ? यदि सौर है तो गायत्री-का ध्यान क्यों किया जाता है ?

उत्तर—गायत्री-मन्त्र न तो सौर है और न शाक्त। यह तो सविताका मन्त्र है।

वैदिक शब्द यौगिक होते हैं। सविताका अर्थ इस प्रकार है—'षू प्रेरणे'। **'सुवति बुद्धिं प्रेरयति इति सविता।'**

बुद्धिकी प्रेरणा शक्ति भी करती है और सूर्य भी करते हैं एवं शिव भी करते हैं। अतः सभी सविता हो सकते हैं। संस्कृतमें सविता और सूर्य एक ही हैं, परन्तु वेदोंमें सविता स्वतन्त्र देवता भी हैं। शुक्ल-यजुर्वेद (३३।३०–४३) के 'विभ्राट् सूक्त' में सूर्यके बहुत मन्त्र भी हैं।

सविता स्वतन्त्र और पृथक् देवता हैं। सविताका कार्य समस्त कार्योंमें मनुष्यकी बुद्धिको प्रेरित करना है। अतः सविताके स्वरूपको प्रकट करनेके लिये गायत्रीका ध्यान करना आवश्यक है। गायत्री ही सविताको प्रकट करनेके लिये मनुष्यकी बुद्धिको प्रेरित करती है।

प्रश्न ४—गायत्री यदि शाक्त है तो इससे सूर्योपासना क्यों की जाती है ?

उत्तर—गायत्री-मन्त्रका छन्द गायत्री है। उसकी अधिष्ठातृ-देवता गायत्री देवी हैं, इसीलिये उनके ध्यानका वर्णन है। गायत्री-मन्त्रमें सूर्यके रूपमें परब्रह्म परमेश्वरकी ही उपासना बतलायी गयी है। अतः सूर्य उन प्रभुके ही प्रतीक हैं और वह उन्हींकी विभूति हैं। इस दृष्टिसे सूर्यकी उपासना (ध्यान, स्मरण) की जाती है।

प्रश्न ५—गायत्री-मन्त्रका अर्थ सूर्यपरक प्रतीत होता है, अतः इसका नाम 'सूर्यमन्त्र' होना चाहिये। किन्तु इसको 'गायत्री-मन्त्र' क्यों कहा जाता है ?

उत्तर—गायत्रीका आध्यात्मिक अर्थ परमात्मा है और आधि-दैविक अर्थ है सूर्य। 'षू प्रेरणे' (धातुपाठ ६।१२४) और 'षूङ् प्राणिप्रसवे' (धातुपाठ ४।२४) के अनुसार विश्वको जन्म देनेवाला तथा प्रेरक परमात्मा सविता है, जो कि परमात्मा है। इसलिये गायत्री-मन्त्र प्रधानतः परमात्म-परक है। जब हम सूर्यको अर्घ्य प्रदान करते हैं, तब गायत्रीका सूर्यपरक अर्थ हो जाता है। गायत्री-मन्त्रका नाम 'सूर्यमन्त्र' होता तो हम परमात्मपरक अर्थसे वञ्चित रह जाते। इसलिये गायत्री-मन्त्रका नाम 'सावित्री' है। **'सविता देवता यस्याः सा सावित्री।'**

गायत्री-मन्त्रका गायत्री छन्द है। सविता तो अन्य छन्दोंवाले मन्त्रोंका भी देवता है, किन्तु यह ऋचा गायत्री छन्दवाली है, इसलिये उसका नाम 'सावित्री गायत्री' है। अतः गायत्रीके आवाहनके श्लोकमें **'गायत्री छन्दसां मातः'** (बोधायनगृह्यशेषसूत्र ३।६।१) कहा गया है।

प्रश्न ९—गायत्री-मन्त्रके अर्थका ध्यान करनेसे पुल्लिङ्ग प्रतीत होता है, किन्तु गायत्रीका ध्यान **'श्वेतवर्णा समुद्दिष्टा०'** के द्वारा किया जाता है तो स्त्रीलिङ्ग प्रतीत होता है, ऐसा क्यों ?

उत्तर—हमारे धर्मग्रन्थोंमें समस्त भावोंकी आधिभौतिक कल्पना मूर्तरूपमें होती है। देवी-देवताओंके यथार्थ स्वरूपको बोधगम्य करनेके लिये ही उनके आकार (स्वरूप) की कल्पना की जाती है। अतएव **'या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण, क्षुधारूपेण, लक्ष्मीरूपेण, दयारूपेण'** आदि-आदि कहकर उनका चिन्तन और मनन किया जाता है। अतः हमें लौकिक दृष्टिसे ही देवी-देवताओंके पुल्लिङ्ग, स्त्रीलिङ्गकी कल्पना करके ही निश्चिन्त नहीं हो जाना है, किन्तु उनके यथार्थ तत्त्वको भी समझना है। क्योंकि लोकमें स्त्रीको अबला (शक्तिहीना) कहा जाता है और वेदमें स्त्रीको जगन्माता, जगत्पूज्या और शक्तिशालिनी कहा जाता है।

हमारी उपास्य दुर्गा आदि देवियाँ शक्तिकी मूल स्रोत हैं, अतः हमें देवी-देवताओंके सम्बन्धमें पुल्लिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग आदिकी कल्पना सतर्क होकर ही करना चाहिये।

देवी-देवताओंमें पुल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग आदिका भेद नहीं है। पुल्लिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग का भेद करना केवल उपासकोंकी सुविधाके लिये ही है। वस्तुतः देवी-देवता लोकोत्तर तत्त्व है, जो कि अत्यन्त दुरूह है[1]। उपासकके चंचल-चित्तमें देवी-देवताओंका यथार्थ तत्त्व सरलतासे अवगम्य हो सके, इसीलिये पुल्लिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग आदिकी कल्पना की गई है।

---

१. पुराणोंमें आता है कि—एक समय गायत्री 'श्येन' पक्षी बनकर अमृत लाई थी, उस समय उसने 'चतुष्पदी' रूप धारण किया था। शतपथब्राह्मण (१।७।१।८) में कहा है कि—गायत्रीने पक्षीका रूप धारणकर जब स्वर्गसे 'सोमलता' का हरण किया, उसी समय सोमलताका पत्र पृथ्वीपर गिरा और वह पलाशका वृक्ष हुआ। इसीलिये पलाश-वृक्षको श्रेष्ठत्व और ब्रह्मत्व कहा गया है।

प्रश्न ७—गायत्री त्रिपदा क्यों ? गायत्री चतुष्पाद कब और कैसे ?

उत्तर—गायत्री एकपदी, द्विपदी, त्रिपदी और चतुष्पदी है, यह सन्ध्योपासन-पद्धतिमें कहा गया है—**'गायत्र्यस्येकपदी द्विपदी त्रिपदी चतुष्पदी'** इत्यादि ।

गायत्री-मन्त्रके दो विभाग करने पर यह द्विपदी और तीन विभाग करने पर वह त्रिपदी है। अतएव गायत्री-छन्दके तीन चरण होते हैं।

गायत्री-मन्त्रके एक चरणको षडक्षर माननेपर यह 'अनुष्टुप् छन्द' हो जाता है। गायत्री समस्त छन्दोंकी जननी हैं—**'गायत्री छन्दसां माता'** (नारायणोपनिषद् १४।३४)। गायत्रीके आवाहनमें **'गायत्री छन्दसां मातः'** (बोधायनगृह्यशेषसूत्र ३।६।१) कहा गया है। अथर्ववेद (१९।७१।१) में भी **'स्तुता मया वरदा वेदमाता'** इत्यादि मन्त्रद्वारा गायत्रीको समस्त छन्दोंकी माता कहा है। अतः गायत्री एकपदी, द्विपदी, त्रिपदी और चतुष्पदी आदि समस्त स्वरूपों-को धारण कर सकती है। अतः गायत्री सर्वसमर्थ और सर्वरूपा है।

प्रश्न ८—गायत्रीके ऋषि क्षत्रिय कुलोत्पन्न विश्वामित्र क्यों ?

उत्तर—प्रत्येक वेद-मन्त्रका कोई न कोई 'ऋषि' होता है। जो ऋषि जिस वेद-मन्त्रद्वारा जिस कार्यको करनेमें सर्वप्रथम सफलता प्राप्त करता है, वही उस मन्त्रका 'ऋषि' कहलाता है।

'ऋषयो मन्त्रद्रष्टारः' के अनुसार जिसने जिस मन्त्रका दर्शन किया अथवा साक्षात्कार किया, वह उस मन्त्रका ऋषि हो गया। विश्वामित्रने गायत्री-मन्त्रके जपद्वारा सर्वप्रथम गायत्री-मन्त्रका दर्शन किया, अतः वह गायत्री-मन्त्रके ऋषि हुए। इसी विषयको सायणाचार्यने ऋग्वेदभाष्यकी भूमिकामें लिखा है—

युगान्तेऽन्तर्हितान् वेदान् सेतिहासान् महर्षयः ।
लेभिरे तपसा पूर्वं मनसा क्षीणकल्मषाः ॥

'युगान्तमें इतिहासादिके साथ समस्त वेद अन्तर्हित हो जाते हैं। पश्चात् उन वेदोंकी प्राप्तिके लिये ऋषियोंके द्वारा तपस्या करनेपर ईश्वरकी कृपासे पुनः वेद प्रकट हो जाते हैं। इस प्रकार वेद पुनः-पुनः प्रकट होते रहते हैं। युगान्तमें वेदोंके अन्तर्हित होनेपर जो ऋषि सर्वप्रथम उनको पाता था, वही उनका 'ऋषि' कहलाता था।'

विश्वामित्रको जिस समय गायत्री-मन्त्रने दर्शन दिया, उस समय वह 'ब्रह्मर्षि' हो गये थे। अतः स्पष्ट है कि ब्राह्मण बन जाने पर ही

विश्वामित्रजी गायन्त्री-मन्त्रके मन्त्रद्रष्टा 'ऋषि' बने । इसीलिये सन्ध्योपासनमें 'गायत्र्या विश्वामित्र ऋषिर्गायत्रीछन्दः सविता देवता' यह कहा जाता है ।

ऋषि, छन्द, देवता और विनियोग—इन चारोंका मन्त्रके साथ हम स्मरण करते हैं तो विश्वामित्र ऋषि हैं, आचार्य नहीं हैं ।[1]

प्रश्न ९—शिव, विष्णु, राम और कृष्ण आदिकी तरह गायत्रीका मन्दिर सर्वत्र क्यों नहीं है ?

उत्तर—गायत्री वैदिक देवता है। यह केवल द्विजके लिये ही उपास्य है, स्त्री और शूद्रके लिये नहीं । अतः गायत्रीका मन्दिर सर्वत्र विशेषरूपमें न होकर यत्र-तत्र विरलरूपमें है ।

गायत्री-जपका महत्त्व

वेदका मुख्य मन्त्र गायत्री है । गायत्री-मन्त्रमें परब्रह्म परमेश्वरके स्वरूप एवं उनकी स्तुति-प्रार्थनाका और ध्यानका अद्भुत और महत्त्वपूर्ण वर्णन है । अतः गायत्री-मन्त्र परब्रह्मपरक है । परब्रह्मपरक गायत्री-मन्त्रके जपसे परब्रह्म परमेश्वरका स्तवन अथवा स्मरण होता है । परब्रह्म परमेश्वरके स्तुतिपरक गायत्री-मन्त्रके जपसे मनुष्य जन्म-जन्मान्तरके पापोंसे और जन्म-मरणके बन्धनोंसे मुक्त होकर मोक्षको प्राप्त करता है ।

गायत्रीके जपसे मनुष्य परम धार्मिक, आस्तिक और ईश्वरभक्त बन जाता है । गायत्रीके जपसे मनुष्यकी आत्मशुद्धि होती है । आत्म-शुद्धि होनेसे मनुष्य आत्मज्ञान प्राप्त करता है । आत्मज्ञान प्राप्त होनें-पर मनुष्यका चित्त अन्तर्मुख हो जाता है । चित्तके अन्तर्मुख होनेपर मनुष्य गायत्री-माताका प्रत्यक्ष दर्शनकर जीवन्मुक्त हो जाता है ।

---

१. वैदिक-मन्त्रके कुछ ऋषि शूद्र और स्त्री भी हुई हैं । जैसे—कवष, ऐलूष—ये ऋग्वेदके 'आपोनप्त्रीयसूक्त' के ऋषि हैं, किन्तु ये साधारण कोटि-के शूद्र नहीं थे । ये अपनी विशिष्ट तपस्यासे अपने समस्त शारीरिक कल्मषों-को निर्दग्ध करके ही तत्तत् सूक्तोंके द्रष्टा ऋषि बने ।

गायत्रीके जपसे मनुष्यकी अध्यात्मशक्ति, आत्मज्ञानशक्ति और दैवीशक्ति बढ़ जाती है। गायत्रीके जपसे मनुष्य सर्वसमर्थ बन जाता है, जिससे वह अपना और दूसरोंका कल्याण करता है।

गायत्रीके जपसे मनुष्य दैवीसम्पदाओंसे परिपूर्ण होकर अखण्ड सच्चिदानन्दात्मक परब्रह्मकी प्राप्ति कर लेता है। भगवान् आद्य शङ्कराचार्यजीने भी बादरायणके ब्रह्मसूत्र (१।१।२५) पर शारीरिक भाष्यमें कहा है—'गायत्री-मन्त्रके जपसे परब्रह्मकी प्राप्ति होती है।'

गायत्रीके जपसे द्विजका दैनन्दिन किया हुआ पाप, ताप, क्लेश, आधि-व्याधि और अविद्याका आत्यन्तिक क्षय हो जाता है।

गायत्रीके जपसे मनुष्य शारीरिक रोगोंसे और मानसिक चिन्ताओंसे मुक्त रहता है। गायत्रीके जपसे मनुष्यकी अपमृत्युका निवारण होता है, जिससे वह दीर्घजीवी होता है। गायत्रीके जपसे मनुष्यके समस्त दुःख दूर हो जाते हैं और वह सर्वदा सुख-शान्तिमय जीवन व्यतीत करता है। गायत्रीके जपसे मनुष्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन पुरुषार्थ चतुष्टयकी प्राप्ति करता है। गायत्रीके जपसे मनुष्यकी समस्त कामनाएं परिपूर्ण होती हैं। गायत्रीके जपसे मनुष्य इहलोक और परलोकमें सर्वमान्य और सर्वपूजित होता है।

गायत्रीके जपसे द्विजकी क्रूर ग्रह-बाधा आदि भी सौम्य होकर कल्याणकारिणी हो जाती है—

प्रजपन् पावनीं देवीं गायत्रीं वेदमातरम्।
ये चास्य दारुणाः केचिद् ग्रहाः सूर्यादयो दिवि॥
ते चास्य सौम्या जायन्ते शिवाः शिवतराः सदा॥

(महाभारत, वनपर्व २००।८३, ८५)

'सबको पवित्र करनेवाली वेदमाता गायत्री-मन्त्रका जो जप करता है, उसके लिये आकाशके सूर्य आदि ग्रहोंमेंसे जो कोई भी ग्रह भयङ्कर होते हैं, वे गायत्री-जपके प्रभावसे उसके लिये सदा सौम्य, सुखद एवं परम मङ्गलकारी हो जाते हैं।'

सर्वे नानुगतं चैवं दारुणाः पिशिताशनाः।
घोररूपा महाकाया धर्षयन्ति द्विजोत्तमम्॥

(महाभारत, वनपर्व २००।८६)

'भयङ्कर रूप और विशाल शरीरवाले समस्त क्रूरकर्मा, मांसभक्षी राक्षस भी गायत्री-जपपरायण उस श्रेष्ठ द्विजपर आक्रमण नहीं करते।'

राक्षसाश्च पिशाचाश्च महासर्पाश्च भीषणाः।
जपितान्नोपसर्पन्ति दूरादेव प्रयान्ति ते॥

(हारीतस्मृति ४।४६)

'गायत्री-जपसे भयङ्कर राक्षस, पिशाच और सर्प ये जापकके समीप नहीं आते, किन्तु वे दूरसे ही भाग जाते हैं।'

इसी प्रकार और भी गायत्री-जपकी महिमा तथा विशेषताका उल्लेख श्रुति, स्मृति और पुराणादि शास्त्रोंमें प्राप्त होता है—

स्तुता मया वरदा वेदमाता
प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्।
आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविणं
ब्रह्मवर्चसं मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्॥

(अथर्ववेद १९।७१।१)

'वेदोंकी माता गायत्री अपने उपासकको दीर्घायु, स्वस्थता, सन्तति, यश, कीर्ति, गौ आदि पशु, धन और ब्रह्मतेज प्रदान करती है तथा अन्तमें ब्रह्मलोकमें पहुँचाती है।'

जपेन देवता नित्यं स्तूयमाना प्रसीदति।
प्रसन्ने विपुलान् गोत्रान् प्राप्नुवन्ति मनीषिणः॥

(हारीतस्मृति ४।४५)

'प्रतिदिन गायत्री-मन्त्रके जपसे स्तुति करनेपर देवता प्रसन्न होते हैं। देवताओंके प्रसन्न होनेपर बुद्धिमान् मनुष्य अपने वंशकी विपुल वृद्धि प्राप्त करते हैं।'

जपेन देवता नित्यं स्तुवतः सम्प्रसीदति।
तस्मात्स्वाध्यायसम्पन्नो लभेत् सर्वान् मनोरथान्॥

(नारदपुराण, पूर्वार्ध १।३।३३।६६)

'नित्य गायत्रीके जपसे स्तुति करनेपर देवता प्रसन्न होते हैं। अतः गायत्रीका स्वाध्याय करनेवाला समस्त मनोरथोंको प्राप्त करता है।'

जपेन येनेह कृतेन पुंसो
ददाति मार्गं सविताऽपि कर्तुः।
अयं हि सर्वेष्टिकृतां वरिष्ठो
विधेः पदं यास्यति निर्विकल्पम्॥

(बृहत्पाराशरस्मृति २।१०६)

'गायत्रीके जप करनेसे जपकर्ता पुरुषको सविता (सूर्य) भी मार्ग देता है। यह गायत्री-जप समस्त यज्ञोंमें श्रेष्ठ है, इसके जपसे मनुष्य निर्विकल्प ब्रह्मपदको प्राप्त करता है।'

सावित्र्याश्चैव माहात्म्यं ज्ञात्वा चैव यथार्थतः।
तस्यां यदुक्तं चोपास्य ब्रह्मभूयाय कल्पते॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ६।४०)

'सावित्री-मन्त्रके महत्त्वको यथार्थरूपसे जानकर उसमें जो तत्त्व वर्णित है, उसकी उपासनाकर जपकर्ता अवश्य ही ब्रह्मरूप (मोक्ष) हो जाता है।'

गायत्रीं पावनीं जप्त्वा ज्ञात्वा याति परां गतिम्।
न गायत्रीविहीनस्य भद्रमत्र परत्र च॥

'जो द्विज परम पवित्र गायत्री-मन्त्रको जपकर और उसके महत्त्वको जानकर गायत्रीका जप करता है, वह परम गतिको प्राप्त करता है। जो मनुष्य गायत्रीसे रहित है, उसका न तो इस लोकमें और न परलोकमें कल्याण होता है।'

यं यं पश्यति चक्षुर्भ्यां यं यं स्पृशति पाणिना।
यं यमाभाषते किञ्चित् तत्सर्वं पूतमेव च॥

(बृहत्पाराशरस्मृति २।६७)

'गायत्रीजप करनेवाला पुरुष जिसको नेत्रोंसे देखता है, हाथोंसे स्पर्श करता है और वाणीसे जो कुछ कहता है; वह सब पवित्र हो जाता है।'

जो द्विज प्रतिदिन गायत्रीका जप करता है, वह करोड़ों जन्मोंमें किये हुए समस्त प्रकारके पापोंसे मुक्त होकर ब्रह्मकी पदवीको प्राप्त करता है—

गायत्रीं यो जपेन्नित्यं प्राणायामसमन्विताम्।
प्रत्यक्षरामरैर्युक्तां स्वाङ्गे विन्यस्यतामपि॥
सर्वपापाद् विनिर्मुक्तो जन्मकोटिकृतादपि।
ब्रह्मणः पदवीं प्राप्य स गच्छेत्प्रकृतेः परम्॥

(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ४८।१५५, १५६)

'जो द्विज गायत्रीके प्रत्येक अक्षरका उसके देवतासहित अपने शरीरमें न्यास करके प्रतिदिन प्राणायामपूर्वक उसका जप करता है, वह करोड़ों जन्मोंके किये हुए समस्त पापोंसे छुटकारा पा जाता है

इतना ही नहीं, वह ब्रह्मपदको प्राप्त होकर प्रकृतिसे परे अर्थात् मोक्ष-को प्राप्त हो जाता है।'

गायत्र्या अक्षमालायां सायं प्रातः शतं जपेत्।
चतुर्णां खलु वेदानां समग्रं लभते फलम्॥
(अथर्ववेद परिशिष्ट, सन्ध्यासूत्र ४।५)

'जो प्रातःकाल और सायङ्काल रुद्राक्षकी मालापर सौ बार गायत्रीका जप करता है, वह निश्चय ही चारों वेदोंके अध्ययनका समस्त फल प्राप्त करता है।'

गायत्रीमक्षमालायां सायं प्रातश्च यो जपेत्॥
चतुर्णामपि वेदानां फलं प्राप्नोत्यसंशयम्।
त्रिसन्ध्यं यो जपेन्नित्यं गायत्रीं ह्ययनं द्विजः॥
तस्य पापं क्षयं याति जन्मकोटि-समुद्भवम्।
गायत्र्युच्चारमात्रेण पापकूटात्पुनाति च॥
स्वर्गापवर्गमाप्नोति जप्त्वा नित्यं द्विजोत्तमः।
(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ४८।१९५-१९८)

'जो प्रातःकाल और सायङ्कालको रुद्राक्षकी मालापर गायत्रीका जप करता है, वह निःसन्देह चारों वेदोंका फल प्राप्त करता है। जो द्विज एक वर्षतक तीनों समय गायत्रीका जप करता है, उसके करोड़ों जन्मोंके उपार्जित पाप नष्ट हो जाते हैं। गायत्रीके उच्चारणमात्रसे पापराशिसे छुटकारा मिल जाता है और वह मनुष्य पवित्र हो जाता है। जो द्विजश्रेष्ठ प्रतिदिन गायत्रीका जप करता है, उसे स्वर्ग और मोक्ष—ये दोनों प्राप्त होते हैं।'

जो द्विज प्रतिदिन तीनों कालोंमें गायत्रीका जप करता है, वह परम धार्मिक बन जाता है, जिससे उसका चित्त कभी भी अधर्ममें प्रवृत्त नहीं होता—

प्रातः प्रदोषे रात्रौ वा जपेद् ब्रह्म मनोभवन्।
सर्वपापविमुक्तोऽसौ नाधर्मे कुरुते मनः॥

'जो द्विज प्रातःकाल, प्रदोषके समय (सन्ध्याकाल) में अथवा रात्रिमें ब्रह्ममें अपना चित्त लगाकर गायत्रीका जप करता है, वह समस्त प्रकारके पापोंसे मुक्त हो जाता है और उसका मन कभी अधर्ममें प्रवृत्त नहीं होता।'

गायत्रीं जपते यस्तु द्वौ कालौ ब्राह्मणः सदा।
तया राजन् स विज्ञेयः पङ्क्तिपावनपावनः॥

(विष्णुधर्मोत्तरपुराण)

'राजन्! जो ब्राह्मण सर्वदा दोनों समय (प्रातः और सायङ्काल) गायत्रीका जप करता है, वह उसके प्रभावसे पङ्क्तिपावनोंको भी पवित्र कर देता है।'

गायत्रीं जपते यस्तु कल्पमुत्थाय वै द्विजः।
लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा॥

(विष्णुधर्मोत्तरपुराण)

'जो द्विज प्रातःकाल उठकर गायत्रीका जप करता है, वह पापसे वैसे ही लिप्त नहीं होता, जैसे कमलका पत्ता जलसे लिप्त नहीं होता। अर्थात् उसे पाप वैसे ही स्पर्श नहीं करता, जैसे जल कमलके पत्तेको स्पर्श नहीं करता।'

सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां दशावराम्।
गायत्रीं यो जपेन्नित्यं न स पापैर्हि लिप्यते॥

(नरसिंहपुराण)

'हजार गायत्रीका जप उत्तम, सौ गायत्रीका जप मध्यम और दस गायत्रीका जप अधम कहा गया है। जो द्विज प्रतिदिन उत्तम, मध्यम अथवा अधमरूपमें कही गई किसी भी प्रकारकी गायत्रीका जप करता है, वह पापोंसे लिप्त नहीं होता।'

इसी प्रकार बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति (१०।११, १२) और हारीतस्मृति (४।४८) तथा हारीतसंहिता (४।४८) में भी लिखा है।

'रात्रावहनि धर्मज्ञ जपन् पापैर्न लिप्यते।'

(महाभारत, अनुशासनपर्व १५०।६)

भीष्मपितामहने युधिष्ठिरजीसे कहा है—'धर्मज्ञ नरेश्वर! जो रात-दिन गायत्री-मन्त्रका जप करता है, वह पापोंसे लिप्त नहीं होता।'

सावित्रीजाप्यनिरतः स्वर्गमाप्नोति मानवः।
गायत्रीजाप्यनिरतो मोक्षोपायं च विन्दति॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन स्नातः प्रयतमानसः।
गायत्रीं तु जपेद् भक्त्या सर्वपापप्रणाशिनीम्॥

(शङ्खस्मृति १२।१६-१७)

'जो मनुष्य गायत्रीके जपमें तत्पर है, वह स्वर्गको प्राप्त करता है और जो गायत्रीके जपमें तत्पर रहता है, वह मोक्षके उपायको भी

प्राप्त करता है। अतः सर्वथा प्रयत्नपूर्वक स्नानकर शुद्धचित्तसे समस्त पापोंको नाश करनेवाली गायत्रीका भक्तिपूर्वक जप करे।'

इसी प्रकार शङ्खसंहिता (११।१८–१९) में भी लिखा है।

गायत्रीं संस्मरेद्योगात् स याति ब्रह्मणः पदम्।
गायत्रीजप्यनिरतो मोक्षोपायश्च विन्दति॥

(बृहत् पाराशरस्मृति ५।७८)

'जो गायत्रीका स्थिरचित्त होकर स्मरण करता है, वह ब्रह्मपदको प्राप्त करता है और जो गायत्रीके जपमें अनुरक्त रहता है, वह मोक्षके उपायको भी प्राप्त करता है।'

'गायत्री परमो मन्त्रस्तं जप्त्वा भुक्ति-मुक्तिभाक्।'

(अग्निपुराण २८४।२)

'गायत्री परम मन्त्र है, इसके जपनेसे भोग और मोक्ष ये दोनों प्राप्त होते हैं।'

'ऐहिकामुष्मिकं सर्वं गायत्रीजपतो भवेत्।'

(अग्निपुराण)

'गायत्रीके जपसे इहलोक और परलोक दोनों सुखद बन जाते हैं।'

'गायत्रीजप्यनिरता गच्छन्त्यमृततां द्विजाः।'

(बृहद्यमस्मृति)

'जो द्विज गायत्री-जपमें संलग्न हैं, वे अमृतत्व (मोक्ष) को प्राप्त करते हैं।'

न तथा वेदजपतः पापं निर्दहति द्विजः।
तथा सावित्रीजपतः सर्वपापैः प्रमुच्यते॥

(बृहद्यमस्मृति)

'द्विज केवल वेदके स्वाध्यायसे उस प्रकार अपने पापोंको दग्ध नहीं कर सकता, जिस प्रकार वह सावित्री-जपके द्वारा समस्त पापोंको दग्धकर मुक्त हो जाता है।'

गायत्र्यास्तु परं नास्ति शोधनं पापकर्मणाम्॥
महाव्याहृतिसंयुक्तां प्राणायामेन संयुताम्।
गायत्रीं प्रजपन् विप्रः सर्वपापैः प्रमुच्यते॥

(संवर्तसंहिता २१४, २१५)

'गायत्रीसे बढ़कर पाप-कर्मोंका नाश करनेवाला और कोई मन्त्र नहीं है। महाव्याहृति और प्राणायामके सहित गायत्रीका जप करनेवाला ब्राह्मण समस्त पापोंसे मुक्त हो जाता है।'

गायत्र्यास्तु परं नास्ति शोधनं पापकर्मणाम् ।
महाव्याहृतिसंयुक्तां प्रणवेन च संजपेत् ॥

(संवर्तस्मृति २२०)

'गायत्रीसे बढ़कर पापकर्मोंका नाश करनेवाला और कोई मन्त्र नहीं है। अतः प्रणव (ओङ्कार) के सहित व्याहृतियोंसे युक्त गायत्री-मन्त्रका जप करना चाहिये ।'

'सर्वपापानि नश्यन्ति गायत्रीजपतो नृप ॥'

(भविष्यपुराण)

'हे राजन् ! गायत्रीके जपसे समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं ।'

'गायत्रीजपकृद् भक्त्या सर्वपापैः प्रमुच्यते ।'

(बृद्ध पाराशरस्मृति)

'भक्तिपूर्वक गायत्रीके जप करनेसे मनुष्य समस्त पापोंसे मुक्त हो जाता है ।'

सावित्रीमप्यधीयीत शुचौ देशे मिताशनः ।
अहिंसो मन्दको जप्यो मुच्यते सर्वकिल्बिषैः ॥

(महाभारत, शान्तिपर्व ३५।३७)

'जो पवित्र स्थानमें मिताहारी होकर, हिंसाका सर्वथा त्याग कर, राग-द्वेष, मान-अपमान आदिसे शून्य होकर मौन-भावसे सावित्रीका जप करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो जाता है ।'

जपेन पापं शमयेदशेषं
यत्तत्कृतं जन्मपरम्परासु ।
जपेन भोगान् जयते च मृत्युं
जपेन सिद्धिं लभते च मुक्तिम् ॥

(लिङ्गपुराण, पूर्वार्ध, ८५।१२४)

'जो पाप जन्म-परम्परासे किये गये हैं, वे समस्त पाप गायत्री-जपसे नष्ट हो जाते हैं। गायत्री-जपसे मनुष्य भोगोंको और मृत्युको जीत लेता है। गायत्री-जपसे सिद्धि और मुक्तिकी प्राप्ति होती है ।'

'गायत्रीजप्यनिरतो मुच्यतेऽसत्प्रतिग्रहात् ।'

(याज्ञवल्क्यसंहिता ३।२९०)

'जो गायत्रीके जपमें संलग्न रहता है, वह असत्प्रतिग्रहजनित पापसे मुक्त हो जाता है ।'

सप्रभं सत्यमानन्दं हृदये मण्डलेऽपि च।
ध्यायन् जपेत्तदित्येतन्निष्कामो मुच्यतेऽचिरात्॥
(विश्वामित्रः)

'जो द्विज अपने हृदयमें एवं सूर्य, चन्द्र आदि मण्डलमें सत्य, आनन्दस्वरूप और प्रभायुक्त ब्रह्मका ध्यान करता हुआ निष्कामभावसे गायत्री-मन्त्रका जप करता है, वह संसारके समस्त बन्धनोंसे शीघ्र ही मुक्त हो जाता है।'

योऽधीतेऽहन्यहन्येतां गायत्रीं वेदमातरम्।
विज्ञायार्थं ब्रह्मचारी स याति परमां गतिम्॥
(पद्मपुराण, स्वर्गखण्ड ५३।५७)

'जो ब्रह्मचारी वेदमाता गायत्रीका प्रतिदिन अर्थज्ञानके साथ अध्ययन करता है, वह परम गतिको प्राप्त करता है।'

योऽधीतेऽहन्यहन्येतां सावित्रीं वेदमातरम्।
विज्ञायार्थं ब्रह्मचारी स याति परमां गतिम्॥
(कूर्मपुराण, उत्तरार्ध १४।५७)

'जो ब्रह्मचारी वेदमाता सावित्रीका प्रतिदिन अर्थज्ञानके साथ अध्ययन करता है, वह परम गतिको प्राप्त करता है।'

योऽधीतेऽहन्यहन्येतां गायत्रीं वेदमातरम्।
विज्ञायार्थं ब्रह्मचारी स याति परमां गतिम्॥
(उशनःसंहिता ३।५३)

'जो ब्रह्मचारी वेदमाता गायत्रीका प्रतिदिन अर्थज्ञानके साथ अध्ययन करता है, वह परम गतिको प्राप्त करता है।'

योऽधीतेऽहन्यहन्येतांस्त्रीणि वर्षाण्यतन्द्रितः।
स ब्रह्म परमभ्येति वायुभूतः खमूर्तिमान्॥
(अग्निपुराण २१५।४)

'जो पुरुष आलस्य त्यागकर तीन वर्षतक प्रतिदिन गायत्रीका जप करता है, वह पवनरूप और आकाशरूप होकर परब्रह्मको प्राप्त करता है।'

योऽधीतेऽहन्यहन्येतांस्त्रीणि वर्षाण्यतन्द्रितः।
स ब्रह्म परमभ्येति वायुभूतः खमूर्तिमान्॥
(मनुस्मृति २।८२)

'जो मनुष्य आलस्यका त्यागकर तीन वर्षतक प्रतिदिन सावधान होकर गायत्रीका जप करता है, वह पवनरूप और आकाशरूप होकर परब्रह्म-पदको प्राप्त करता है।'

इसी प्रकार बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति (४।७७) में भी लिखा है।

एतदक्षरमेतां च जपन् व्याहृतिपूर्विकाम्।
सन्ध्ययोर्वेदविद् विप्रो वेदपुण्येन युज्यते॥

(मनुस्मृति २।७८)

'इस ॐ (प्रणव) अक्षर और व्याहृतिपूर्वक सावित्री (गायत्री) का दोनों सन्ध्याओंमें जप करता हुआ वेदज्ञ ब्राह्मण समस्त वेदाध्ययनके पाठ करनेका पुण्य-फल प्राप्त करता है।'

बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति (४।४८) में भी यही लिखा है।

गायत्र्या वेदमातुस्तु जपमात्रेण केवलम्।
ब्राह्मण्यं सुस्थिरं सम्यग् गायत्री तादृशी शिवा॥

(मार्कण्डेयस्मृति)

'वेदमाता गायत्रीके केवल जप-मात्रसे ब्राह्मणत्व सदा-सर्वदा सुरक्षित रहता है तथा उसी प्रकार गायत्री भी सदा कल्याणकारिणी होती है।'

गायत्रीजप्यनिरता ब्राह्मणा ब्रह्मचिन्तकाः।
सूर्योपस्थाननिरतास्तस्य सायुज्यभागिनः॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति १०।१७)

'जो ब्राह्मण गायत्री-जपपरायण तथा ब्रह्मचिन्तक एवं सूर्योपस्थान करनेवाले हैं, वे उस परब्रह्म परमात्माके सायुज्यरूपके भागी हैं।'

इदमाह्निकमव्यग्रं कुर्वद्भिर्नियतैः सदा।
नृपैर्भरतशार्दूल प्राप्यते श्रीरनुत्तमा॥

(महाभारत, अनुशासनपर्व १५०।८)

'भरतसिंह ! जो राजा मन और इन्द्रियोंको वशमें करके शान्तिपूर्वक प्रतिदिन गायत्री-मन्त्रका जप करते हैं, उन्हें सर्वोत्तम सम्पत्ति प्राप्त होती है।'

यक्ष-विद्याधरत्वं वा गन्धर्वत्वमथापि वा।
देवत्वमथवा राज्यं भूलोके हतकण्टकम्॥

'गायत्रीके जपसे मनुष्य यक्षयोनि, विद्याधरयोनि अथवा गन्धर्व-योनि अथवा देवयोनि तकको प्राप्त करता है अथवा भू-लोकमें निष्कण्टक राज्य प्राप्त करता है।'

भगवती गायत्री देवीने भी स्वयं अपने जपका महत्त्व इस प्रकार कहा है—

मदीयेन तु जाप्येन जन्मभिस्तु त्रिभिः कृतम्।
ब्रह्महत्यासमं पापं तत्क्षणादेव नश्यति॥
दशभिर्जन्मभिर्जातं शतेन च पुराकृतम्।
त्रियुगेन सहस्रेण गायत्री हन्ति किल्बिषम्॥
एवं ज्ञात्वा सदा पूता जाप्ये तु मम वै कृते।
भविष्यध्वं न सन्देहो नात्र कार्या विचारणा॥
प्रणवेन त्रिमात्रेण सार्द्धं जप्त्वा विशेषतः।
पूताः सर्वे न सन्देहो जप्त्वा मां शिरसा सह॥
अष्टाक्षरा स्थिता चाहं जगद्व्याप्तं मया त्विदम्।
माताऽहं सर्ववेदानां पदैः सर्वैरलङ्कृता॥
जप्त्वा मां भक्तितः सिद्धिं यास्यन्ति द्विजसत्तमाः।
प्राधान्यं मम जाप्येन सर्वेषां वो भविष्यति॥
गायत्रीमात्रसारोऽपि वरं विप्रः सुसंयतः।
नायन्त्रितश्चतुर्वेदी सर्वाशी सर्वविक्रयी॥

(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड १७।२८२–२८८)

'मेरे जप करनेमात्रसे तीन जन्मोंके किये गये ब्रह्महत्याके सदृश पाप तत्काल ही नष्ट हो जाते हैं। गायत्री दस बार जपनेसे वर्तमान जन्मके, सौ बार जपनेसे पिछले जन्मके और एक हजार बार जपनेसे तीन युगोंके पाप नष्ट हो जाते हैं। ऐसा जानकर मेरे जप करनेमात्रसे ही आप सभी सदा पवित्र हो जायँगे, इसमें सन्देहकी तनिक भी गुञ्जाइश नहीं है। तीन प्रणवके साथ जप करके तथा विशेषकर गायत्रीशीर्षके साथ जप करके सभी पवित्र होते हैं इसमें सन्देहकी कोई बात नहीं। मेरे प्रत्येक पादमें आठ-आठ अक्षर हैं। मुझमें समस्त संसार व्याप्त है, मैं समस्त वेदोंकी जननी हूँ और समस्त पदोंसे विभूषित हूँ। श्रेष्ठ द्विजगण भक्तिपूर्वक मेरे जप करनेसे सिद्धिको प्राप्त करते हैं, मेरे जपमात्रसे आप सभोकी प्रधानता होगी। केवल गायत्री-मन्त्रसे ही सन्तुष्ट रहनेवाला जितेन्द्रिय ब्राह्मण श्रेष्ठ है, किन्तु चारों

वेदोंको जाननेवाला भी जो असंयमी, सर्वभक्षी और सर्वविक्रयी है, वह श्रेष्ठ नहीं है।'

कामकामो लभेत्कामं गतिकामस्तु सद्गतिम्।
अकामस्तु तदाप्नोति यद्विष्णोः परमं पदम्॥

(विष्णुधर्मोत्तरपुराण ३)

'जपकर्ता यदि किसी कामनाके लिये गायत्रीजप करे तो वह उस कामनाको प्राप्त करता है। यदि वह उत्तम गतिकी इच्छासे गायत्री-जप करे तो सद्गति (परमगति) को प्राप्त करता है। यदि वह अकाम (किसी भी कामनासे रहित) होकर निष्काम-भावसे गायत्रीका जप करे तो भगवान् विष्णुका जो परम पद है, उसे प्राप्त करता है।'

यथा कथञ्चिज्जप्तैषा देवी परमपावनी।
सर्वकामप्रदा प्रोक्ता विधिना किं पुनर्नृप:॥

'राजन्, चाहे जिस किसी प्रकार भी जपी हुई यह परम पावनी देवी समस्त कामनाओंको देनेवाली कही गई है। यदि विधि-विधानसे जपी गई हो तो फिर कहना ही क्या है अर्थात् अवश्यमेव सकल कामनाओंकी पूर्ति करती है।'

गायत्री-जपका महत्त्व समस्त शास्त्रोंमें पाया जाता है। सभी शास्त्रकारोंने अपने-अपने ग्रन्थमें—

गायत्र्या न परं जप्यम्। (पद्मपुराण, स्वर्गखण्ड ५३।५८)
गायत्र्या न परं जप्यम्। (बृहद् यमस्मृति)
गायत्र्यास्तु परं जप्यं न भूतो न भविष्यति।
(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति १०।१०)
न गायत्र्याः परं जप्यम्। (कूर्मपुराण, उत्तरार्घ १४।५८)
न गायत्र्याः परं जप्यम्। (अग्निपुराण २१५।८)
न गायत्र्याः परं जाप्यम्। (उशनःसंहिता ३।५४)
न गायत्र्याः समं जाप्यम्। (पद्मपुराण, पातालखण्ड ६४।५०)
न सावित्र्याः समं जाप्यम्। (शङ्खस्मृति १२।३)
न सावित्र्याः समं जप्यम्। (स्कन्दपुराण, सूतसंहिता, यज्ञवैभवखण्ड ६।३०)
न सावित्र्याः परं जप्यम्। (शङ्खसंहिता ११।२)
न गायत्रीसमो जपः। (व्याघ्रपादस्मृति ३६९)

गायत्रीजप उत्तमः। (देवीभागवत ११।१६।२३)
गायत्री परमो जपः। (बृहत्पाराशरस्मृति ४।४)
—इत्यादि कहकर गायत्री-जपकी महिमाका उल्लेख किया है।

मानव-जीवन दोषमय कहा गया है। अतः मानवसे ज्ञान और अज्ञानमें अगणित दोष होते रहते हैं। उन समस्त दोषोंका निवारण केवल गायत्री-जपसे ही हो सकता है, दूसरेसे नहीं। इसलिये मनुष्य-को अपने दैनन्दिन दोषोंकी निवृत्तिके लिये प्रतिदिन गायत्रीका जप करना चाहिये।

गायत्री-जपकी एक खास विशेषता यह है कि वह जिस प्रकार मनुष्यके किये हुए ब्रह्महत्यादि सभी प्रकारके छोटे-बड़े पापोंको नष्ट कर देता है, उस प्रकार दूसरा कोई जप मनुष्यके पापोंको नष्ट नहीं कर सकता। अतः गायत्रीसे बढ़कर और कोई पापनाशक जप नहीं है—

ब्रह्महत्यादि पापानि गुरूणि वा लघूनि च।
नाशयत्यचिरेणैष गायत्रीजापको द्विजः॥

(पद्मपुराण)

'गायत्री-जप करनेवाला द्विज अपने छोटे-बड़े ब्रह्महत्यादि समस्त पापोंको शीघ्र ही नष्ट कर देता है।'

गायत्री-जपका विशेष महत्त्व है। अतः जो द्विज विधिपूर्वक गायत्रीका जप करता है, उसे गायत्री माता क्या-क्या नहीं देतीं ? सब कुछ प्रदान करती हैं।

'किं किं न दद्याद् गायत्री सम्यगेवमुपासिता।'

(स्कन्दपुराण, काशीखण्ड ९।५६)

अतः द्विजमात्रको गायत्रीका जप प्रतिदिन करना चाहिये। गायत्रीका जप द्विजके लिये अनिवार्य और आवश्यक है।

गायत्री-जपकी आवश्यकता

गायत्री वेदोंकी माता, वेदोंका सार और वेदोंका सर्वस्व है। गायत्री परब्रह्मस्वरूपा, सर्वात्मिका और सर्वस्वरूपा है। गायत्री सर्ववेदात्मक और सर्वदेवात्मक है।

प्राचीन कालके ऋषि, महर्षि, तपस्वी, विद्वान् एवं ब्राह्मण गायत्रीके महत्त्वको भलीभाँति जानते थे, अतएव वे गायत्रीको अपना परम उपास्य समझकर प्रतिदिन गायत्रीका ही जप किया करते थे। गायत्रीके जपके प्रभावसे उस समय कोई भी ऐसा द्विज नहीं था, जो गायत्री-जप न करता हो। इस समय सैकड़ों-हजारोंमें भी ढूँढ़नेसे गायत्री-जप करनेवाले अत्यल्प संख्यामें द्विज दिखलायी पड़ते हैं।

पूर्वकालमें जब द्विज गायत्रीका जप करते थे, तब सभी द्विज सुख-शान्तिका अनुभव करते थे और वे सर्वप्रकारसे सुखी और समृद्ध थे। आज गायत्रीके जपके अभावके कारण ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य—ये तीनों वर्ण भवरोगसे ग्रस्त हैं, जिससे इनकी आध्यात्मिक हानि हो रही है। आध्यात्मिक हानि होनेसे वे अत्याचार, अनाचार, व्यभिचार, जीवहिंसा आदि तमोगुणी वृत्तियोंमें फँसकर सर्वदा मानसिक और शारीरिक कष्टोंसे पीड़ित रहते हैं। अतः त्रैवर्णिकोंके भवरोगको दूर करनेके लिये गायत्री-जप प्रमुख साधन है, जिससे त्रैवर्णिकोंकी आध्यात्मिक उन्नति हो सकती है। आध्यात्मिक उन्नति होनेसे ही त्रैवर्णिकोंका चित्त पवित्र और निर्मल होता है, जिससे वे असन्मार्गमें प्रवृत्त न होकर सदा सन्मार्गमें ही प्रवृत्त रहते हैं। अतः स्पष्ट है कि आध्यात्मिक उन्नतिके लिये गायत्रीका जप ही सर्वश्रेष्ठ साधन है।

द्विजातिके लिये गायत्रीका जप अत्यन्त उपकारक कहा गया है। अतः जिस प्रकार द्विजातिका गायत्री-जप उपकार करता है, उस प्रकार उसका धन, मित्र, बन्धु-बान्धवगण आदि उपकार नहीं कर सकते, यह स्पष्ट लिखा है—

न धनान्युपकुर्वन्ति न मित्राणि न बान्धवाः।
न हस्तपादचलनं न देशान्तरसङ्गतम्॥
न कायक्लेशवैधुर्यं न तीर्थायतनाश्रयः।
केवलं तन्मनस्कस्य जपेनासाद्यते पदम्॥

(पद्मपुराण, पातालखण्ड ९९।४०–४१)

'धन, मित्र, बान्धवगण, हाथ और पैरोंका चालन, दूसरे देशमें जाना, शरीरको कष्ट देना और तीर्थस्थानोंका आश्रय—ये सभी मनुष्यका उतना उपकार नहीं करते, जितना गायत्री-जप करता है। अत: तन्मनस्क अर्थात् दत्तचित्त होकर केवल गायत्रीका जप करनेसे मनुष्य श्रेष्ठ- पदको प्राप्त करता है।'

अत: द्विजमात्रको परमोपकारक गायत्रीका ही जप करना चाहिये। गायत्रीके जपके बारेमें तो यहाँ तक लिखा है कि जो द्विज गायत्रीका जप करता है. उसे अन्य अनुष्ठानादि करनेकी आवश्यकता नहीं है। वह केवल गायत्रीके जप करनेसे ही कृतकृत्य हो जाता है—

कुर्यादन्यन्न वा कुर्यादनुष्ठानादिकं तथा।
गायत्रीमात्रनिष्ठस्तु कृतकृत्यो भवेद् द्विजः॥

(देवीभागवत, उत्तरार्ध ११।१।८)

'द्विज दूसरा कुछ अनुष्ठान आदि करे या न करे, किन्तु गायत्रीका जप अवश्य करे। जिसकी केवल गायत्रीमें ही निष्ठा है, वह उसीसे कृतकृत्य हो जाता है।'

गायत्री-जपमें निष्ठा रखनेवालेको समस्त यज्ञोंका फल प्राप्त होता है, यह स्पष्ट लिखा है—

जपनिष्ठो द्विजः श्रेष्ठोऽखिलयज्ञफलं लभेत्।
सर्वेषामेव यज्ञानां जायतेऽसौ महाफलः॥

(तन्त्रसार ३९)

'जो द्विज गायत्री-जपमें निष्ठा रखता है, उसे श्रेष्ठ कहा गया है और वह गायत्री-जपके द्वारा समस्त यज्ञोंके फलको प्राप्त करता है।'

सर्वेषां जप्यसूक्तानामृचाश्च यजुषां तथा।
साम्नां चैकाक्षरादीनां गायत्री परमो जपः॥

(वृद्ध पाराशरस्मृति ४।४)

'समस्त जप-सूक्तों और ऋक्, यजु और सामवेदके मन्त्रों तथा एकाक्षर (ॐ) आदि मन्त्रोंमें गायत्री-मन्त्रका जप सर्वश्रेष्ठ है।'

गायत्री-मन्त्रके जपकी श्रेष्ठताके सम्बन्धमें वृद्ध योगियाज्ञवल्क्य-स्मृति (१०।११०) में भी लिखा है—

'गायत्र्यास्तु परं जाप्यं न भूतं न भविष्यति।'

'गायत्रीसे अधिक महत्त्वपूर्ण जपनीय मन्त्र न हुआ और न होगा।'

महर्षि मार्कण्डेयने भी गायत्री-मन्त्र और गायत्री-जपके महत्त्वके सम्बन्धमें कहा है—

न गायत्र्याः परो मन्त्रः सा सर्वश्रुतिमध्यगा।
यज्जपेनाखिलजपः सिद्धो भवति सन्ततम्॥
यज्जपेन विना सर्वः साक्षादीशसमोऽपि वै।
द्विजमात्रो निपतति तत्तुल्योऽन्यो मनुर्न हि॥

(मार्कण्डेयस्मृति)

'इस संसारमें गायत्रीके सदृश और कोई मन्त्र नहीं है और वह गायत्री समस्त श्रुतियोंके मध्यमें अधिष्ठातृरूपमें विराजमान रहती है। जिस गायत्रीके मन्त्रके निरन्तर जप करनेसे समस्त मन्त्रोंका जप हो जाता है और जप करनेवाला सिद्धिको प्राप्त होता है, उस गायत्रीके जप के बिना समस्त द्विजमात्रका पतन हो जाता है, चाहे वे ईश्वरतुल्य ही क्यों न हों। अतः गायत्रीसे बढ़कर और कोई दूसरा मन्त्र नहीं है।'

गायत्री-जपकी महत्ता, विशेषता और आवश्यकताको ध्यानमें रखकर भगवान् मनुने भी द्विजमात्रको गायत्री-जप करनेके लिये विशेषरूपसे आदेश दिया है—

अपां समीपे नियतो नैत्यिकं विधिमास्थितः।
सावित्रीमप्यधीयीत गत्वारण्यं समाहितः॥[1]

(मनुस्मृति २।१०४)

'जङ्गलमें जाकर जलके समीप अपनी समस्त इन्द्रियोंको दमनकर एकाग्रचित्तसे नित्यकर्मको पूर्णकर गायत्रीका जप करे।'

जो द्विज अपने घरमें अथवा देवमन्दिरमें अथवा किसी पवित्र नदीके तटमें अथवा जङ्गलमें जाकर एकान्त स्थानमें प्रतिदिन प्रातः, मध्याह्न और सायं तीनों समय अथवा प्रातः और मध्याह्न दोनों समय गायत्रीका जप करता है, उसके अनेक जन्मोंके उपार्जित भयङ्कर पाप नष्ट हो जाते हैं और वह इहलोकमें सर्वप्रकारसे सुखी रहता है और परलोकमें मोक्षकी प्राप्ति करता है।

---

१. अपां समीपे नियतो नैत्यिकं विधिमाश्रितः।
गायत्रीमप्यधीयीत गत्वारण्यं समाहितः॥
(कूर्मपुराण, उत्तरार्ध १४।५०)

गायत्री चैव संसेव्या धर्मकामार्थमोक्षदा।
नित्ये नैमित्तिके काम्ये त्रितये तु परायणः॥
गायत्र्यास्तु परं नास्ति इहलोके परत्र च॥

(देवीभागवत ११।२१।३८, ३९)

'गायत्री धर्म, अर्थ, काम और मोक्षको प्रदान करती है। अतः इनका जप परमावश्यक है। नित्य, नैमित्तिक और काम्य— इन तीनों कर्मोंमें गायत्रीका जप उपयोगी है। इससे बढ़कर इस लोक और परलोकमें कोई भी दूसरा जप अथवा साधन नहीं है।'

अतः धर्म, अर्थ, काम और मोक्षको देनेवाली गायत्रीका जप द्विजमात्रके लिये अनिवार्य और आवश्यक है।

गायत्रीका जप नित्यकर्ममें सम्मिलित है। अतः नित्यकर्ममें गायत्रीका जप आवश्यक और अनुष्ठेय कहा गया है। इसलिये प्रत्येक द्विजको प्रतिदिन गायत्रीका जप करना चाहिये।

सप्रणव और सव्याहृति गायत्री-जपका महत्त्व

सव्याहृतिका सप्रणवा जप्तव्या शिरसा सह।
प्राणायामे तथा व्यस्ता वाच्या व्याहृतयः पृथक्॥

(विष्णुधर्मोत्तरपुराण)

'प्रणव ॐकारयुक्त 'भूर्भुवः स्वः' इन तीन व्याहृतियोंके सहित 'आपो ज्योति रसोऽमृतं भूर्भुवः स्वरोम्' इस शिर (गायत्रीशिर) के साथ गायत्रीका जप करना चाहिये। प्राणायाममें अलग 'भूः भुवः स्वः महः जनः तपः सत्यम्' ये सात व्यस्त व्याहृतियाँ कहनी चाहिये।'

आद्यास्तु व्याहृतीस्तिस्रो गायत्रीस्वशिरोयुताम्।
ओङ्कारं विन्दते यस्तु स मुनिर्नेतरो जनः॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति २।६५)

'भूः, भुवः, स्वः—इन तीन व्याहृतियों तथा शिरसहित गायत्री और ॐकारको जो प्राप्त करता है, वही मुनि है, अन्य जन मुनि नहीं हैं।'

आद्या व्याहृतयः सप्त गायत्री सशिरास्तथा ।
ओङ्कारं विन्दते यस्तु स मुनिर्नेतरो जनः ॥

'भूः आदि (भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्य) सात व्याहृतियों तथा शिरसहित गायत्री और ॐकारको जो प्राप्त करता है, वही मुनि है, अन्य जन मुनि नहीं हैं ।'

'व्याहृत्योङ्कारसहिता सशिरश्च यथार्थतः ।'

'व्याहृति और ॐकारसहित तथा शिरसहित गायत्रीका यथार्थरूपसे अर्थात् विधि-विधानसे जप करना चाहिये ।'

सशिराश्चैव गायत्री यैर्विप्रैरवधारिता ।
ते जन्मबन्धनिर्मुक्ताः परं ब्रह्म विशन्ति वै ॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।४३–४४)

'जिन श्रेष्ठ ब्राह्मणोंने शिरसहित गायत्रीका 'यही हमारा उद्धार ऊर्ध्वगति करनेमें समर्थ है' यह निश्चयपूर्वक गायत्रीकी जपादिद्वारा उपासना की है, वे जन्मरूप-बन्धनसे सदाके लिये छुटकारा पाकर परब्रह्मको प्राप्त होते हैं ।'

षोडशाक्षरकं ब्रह्म गायत्री सशिरास्तथा ।
सकृदावर्तयेद्यस्तु सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।४४, ४५)

'षोडशाक्षरक ब्रह्मरूप तथा शिरसहित गायत्रीको जो एक बार भी आवृत्ति करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो जाता है ।'

सर्वात्मना हि या देवी सर्वभूतानि संस्थिता ।
गायत्री मोक्षसेतुर्वै मोक्षस्थानमनुत्तमम् ॥
षोडशाक्षरकं ब्रह्म गायत्री सशिरा स्मृता ।
अपि पादमधीयीत गायत्री सशिरास्तथा ॥
सर्वपापैः प्रमुच्यन्ते ब्रह्म अध्यापयन् तथा ॥

(ऋष्यशृङ्गः)

'जो देवी सब भूतोंमें सब प्रकारसे स्थित है, वह गायत्री भवसागरके उस पाररूप मोक्षकी प्राप्तिके लिये सेतु (पुल) है एवं सर्वश्रेष्ठ मोक्षस्थान है । सशिराः (शिरसहित) गायत्री षोडशाक्षरक ब्रह्म कही गयी है । सशिरस्का गायत्रीका एक पाद भी यदि पढ़े (एक पादकी भी यदि आवृत्ति करे) तो वह सब पापोंसे मुक्त हो जाता है और उसे वेदके अध्यापनका पुण्य प्राप्त होता है ।'

सव्याहृतिं सप्रणवां गायत्रीं शिरसा सह ।
ये जपन्ति सदा तेषां न भयं विद्यते क्वचित् ॥

(शङ्खस्मृति १२।१)

'प्रणव और व्याहृतिके सहित गायत्रीका सर्वदा शिरके सहित जो जप करते हैं, उनको कहीं भी भय नहीं होता है ।'

प्रणवव्याहृतिभ्याञ्च गायत्री पठिता यदि ।
सर्वासु ब्रह्मविद्यासु भवेदाशु शुभप्रदा ॥

(म० त०)

'प्रणव (ॐ) और व्याहृति (भूर्भुवः स्वः) के सहित यदि गायत्रीका पाठ (जप) किया जाय, तो वह समस्त ब्रह्मविद्याओंमें शीघ्र शुभ फलको देनेवाली होती है ।'

गायत्री-जपद्वारा विविध पापोंका प्रायश्चित्त

आदित्योऽभ्युदियाद्यस्य सन्ध्योपास्तिमकुर्वतः ।
स्नात्वा प्राणांस्त्रिरायम्य गायत्र्यष्टशतं जपेत् ॥

(मदनपारिजात)

'यदि सन्ध्योपासन किये बिना सूर्योदय हो जाय तो प्रायश्चित्तार्थ स्नानके बाद प्राणायाम करके गायत्रीका १०८ बार जप करना चाहिये ।'

सन्ध्यायां पतितायान्तु गायत्रीं दशधा जपेत् ।
गायत्रीं दशधा जप्त्वा पुनः सन्ध्यां समाचरेत् ॥

(नित्यकृत्यार्णव)

'यदि सन्ध्या-कर्म छूट गया हो तो दस बार गायत्रीका जप करे । दस बार जप करनेके बाद पुनः सन्ध्योपासनकर्म करे ।'

सन्ध्याकाले व्यतीते तु न च सन्ध्यां समाचरेत् ।
गायत्रीं दशधा जप्त्वा पुनः सन्ध्यां समाचरेत् ॥

(मदनपारिजात)

'सन्ध्याका समय बीत जानेपर सन्ध्या न करे । प्रायश्चित्तरूपमें दस बार गायत्री-जप करके ही सन्ध्या करनी चाहिये ।'

एकाहं चाप्यतिक्रम्य सन्ध्यावन्दनकर्म च ।
अहोरात्रोषितो भूत्वा गायत्र्या अयुतं जपेत् ॥

द्विरात्रे द्विगुणं प्रोक्तं त्रिरात्रे त्रिगुणं भवेत् ।
त्रिरात्रानन्तरं चेत् स्याच्छूद्र एव न संशयः ॥

(जमदग्निः)

'यदि कोई एक दिन भी सन्ध्यावन्दनादि कर्मसे रहित हो गया हो, तो वह रात-दिन उपवास रहकर दस हजार गायत्रीका जप करे। यदि दो रात बीत गयी हो तो बीस हजार और यदि तीन रात बीत गयी हो तो तीस हजार जप करे। तीन रातसे अधिक होने पर वह शूद्र ही है, इसमें कोई सन्देह नहीं।'

एकाहं समतिक्रम्य प्रमादादकृतं यदि ।
अहोरात्रोषितो भूत्वा गायत्र्याश्चायुतं जपेत् ॥

(जमदग्निः)

'यदि प्रमादवश एक दिन सन्ध्योपासन कर्म न किया गया हो, तो उसके प्रायश्चित्तरूपमें अहोरात्र (एक दिन और एक रात) उपवास करके दस हजार गायत्रीका जप करना चाहिये।'

सायं प्रातस्तु यः सन्ध्यां प्रमादाद् [1]विक्रमेत् सकृत् ।
गायत्र्यास्तु सहस्रं हि जपेत् स्नात्वा समाहितः ॥

(अत्रिस्मृति ६३)

'यदि कोई प्रमादवश प्रातः और सायं सन्ध्याका अतिलङ्घन कर जाय अर्थात् सन्ध्या न कर पावे तो उसे स्नान करके समाहित चित्तसे गायत्रीका एक हजार जप करना चाहिये।'

समुत्पन्ने यदा स्नाने भुङ्क्ते वापि पिबेद्यदि ।
गायत्र्यष्टसहस्रं[2] तु जपेत्स्नात्वा समाहितः ॥

(अत्रिस्मृति ३१३)

'स्नान कर लेने पर भी सन्ध्यावन्दनादि किये बिना यदि कोई भोजन अथवा जलपान कर लेता है तो उसे स्नान करके समाहित चित्तसे प्रायश्चित्तार्थ गायत्रीका एक हजार आठ बार जप करना चाहिये।'

उपासीत न चेत् सन्ध्यामग्निकार्यं न वा कृतम् ।
गायत्र्यष्टसहस्रं तु जपेत्स्नात्वा समाहितः ॥

(संवर्तस्मृति २२)

---

१. अतिलङ्घयेत् ।

२. 'अष्टोत्तरसहस्रमित्यष्टसहस्रम्' इसके अनुसार एक हजार आठ (१००८) संख्या होनी चाहिये ।

'यदि किसी द्विजने सन्ध्योपासन न किया हो और सायं तथा प्रातः होम न किया हो तो उक्त कर्म न करनेसे उत्पन्न प्रत्यवायकी निवृत्तिके लिये उसे स्नान करके एकाग्र मनसे एक हजार आठ बार गायत्रीका जप करना चाहिये।'

उपासीत न चेत्सन्ध्यामग्निकार्यं न वा कृतम्।
गायत्र्यष्टसहस्रं तु जपेत् स्नात्वा समाहितः॥

(संवर्तसंहिता २३)

'यदि किसीने सन्ध्या न किया हो या अग्निहोत्रादिकर्म न किया हो तो उसे स्नान करके प्रायश्चित्तार्थ समाहित चित्तसे गायत्रीका एक हजार आठ बार जप करना चाहिये।'

सन्ध्यावन्दनहानौ तु नित्यस्नानं विलुप्य च।
होमं च नैत्यिकं शुद्धं सावित्र्यष्टसहस्रकम्॥

'प्रतिदिनकी सन्ध्यावन्दनकी हानि होनेपर, नित्यस्नानके लुप्त होनेपर और नित्य हवनके लुप्त होनेपर एक हजार आठ गायत्रीके जपसे शुद्धि होती है।'

अनाचान्तः पिबेद्यस्तु योऽपि वा भक्षयेत् द्विजः।
गायत्र्यष्टसहस्रं तु जपं कुर्वन् विशुद्ध्यति॥

(संवर्तस्मृति १४)

'यदि द्विज (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य) आचमन किये विना (स्नान, आचमन आदिद्वारा पवित्र हुए बिना) जल, दुग्ध आदि पीये अथवा भोजन करे तो वह एक हजार आठ बार गायत्रीका जप करनेसे शुद्ध होता है।'

ब्राह्मणस्य यदोच्छिष्टमश्नात्यज्ञानतो द्विजः।
अहोरात्रं तु गायत्र्या जपं कृत्वा विशुद्ध्यति॥

(आपस्तम्बस्मृति ५।५)

'यदि कोई द्विज अज्ञानतासे किसी ब्राह्मणका उच्छिष्ट भक्षण करता है तो वह एक रात और दिन गायत्रीका जप करके शुद्ध हो जाता है।'

मूर्छिते पतिते चापि गवि यष्टिप्रहारिते।
गायत्र्यष्टसहस्रं तु प्रायश्चित्तं विशोधनम्॥

(आङ्गिरसस्मृति ३४)

'यदि किसीके द्वारा यष्टिके प्रहार करनेसे गौ मूर्च्छित हो जाय या गिर जाय तो उस पापकी शुद्धिके लिये उसे प्रायश्चित्तार्थ गायत्रीका एक हजार आठ बार जप करना चाहिये ।'

दिवा स्वपिति यः स्वस्थो ब्रह्मचारी कथञ्चन ।
स्नात्वा सूर्यं समीक्षेत गायत्र्यष्टशतं जपेत् ॥

(संवर्तस्मृति ३२)

'कदाचित् ब्रह्मचारी स्वस्थ होने पर भी दिनमें शयन करता है तो वह प्रायश्चित्तरूपमें सूर्यका निरीक्षणकर गायत्रीका एक सौ आठ बार जप करे ।'

सङ्कल्पितव्रतापूर्तौ देवनिर्माल्यलङ्घने ।
अशुचौ देवतास्पर्शे गायत्रीजपमाचरेत् ॥
[1]अपोशानमकृत्वा तु यो भुङ्क्तेऽनापदि द्विजः ।
भुञ्जानो वा तथा ब्रूयाद् गायत्र्यष्टशतं जपेत् ॥

(याज्ञवल्क्यः)

'सङ्कल्पित व्रतकी पूर्ति न होने पर, देवताओंके निर्माल्यका लङ्घन होनेपर तथा अपवित्रावस्थामें देवविग्रहका स्पर्श होनेपर गायत्रीका जप करना चाहिये । निरापद अवस्थामें (रोगादि आपत्तिकी अवस्थामें नहीं) जो द्विज 'अपोशान' किये बिना भोजन करता है अथवा भोजन करता हुआ बोलता है, तो उसे १०८ बार गायत्री-जप करना चाहिये ।'

अज्ञानाद् भुञ्जते विप्राः सूतके मृतकेऽपि वा ।
प्रायश्चित्तं कथं तेषां वर्णे वर्णे विनिर्दिशेत् ॥
गायत्र्यष्टसहस्रेण शुद्धिः स्याच्छूद्रसूतके ।
वैश्ये पञ्चसहस्रेण त्रिसहस्रेण क्षत्रिये ॥
ब्राह्मणस्य यदा भुङ्क्ते द्विसहस्रं तु दापयेत् ।
अथवा वामदेव्येन साम्ना चैकेन शुद्ध्यति ॥

(पाराशरस्मृति ११।१७-१९)

---

१. हाथमें जल लेकर—'अन्नं ब्रह्म रसो विष्णुर्भोक्ता देवो महेश्वरः' इत्यादि तथा 'अन्तश्चरसि भूतेषु गुहायां विश्वतोमुखः' इत्यादि तथा 'ॐ अन्नपतेऽन्नस्य' इत्यादि मन्त्र पढ़कर 'अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा' कहकर जल पीया जाता है । यही 'अपोशान' कहलाता है ।

'यदि ब्राह्मण जननाशौच अथवा मरणाशौचमें बिना जाने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रके यहाँ भोजन करते हैं, तो उनको प्रायश्चित्त कैसा बतलाया जाय ? इस प्रश्नका उत्तर यह है कि—यदि सूतकी शूद्रके यहाँ बिना जाने भोजन करे तो उसकी शुद्धि आठ हजार गायत्रीके जप करनेसे होती है। यदि सूतकी वैश्यके यहाँ बिना जाने भोजन करे तो पाँच हजार गायत्री-जप करनेसे और यदि सूतकी क्षत्रियके यहाँ बिना जाने भोजन करे तो तीन हजार गायत्री-जपसे उसकी शुद्धि होती है। यदि क्षत्रिय सूतकी ब्राह्मणके यहाँ अज्ञानसे भोजन करे तो उससे दो हजार दण्ड दिलाना चाहिये। अथवा एक वामदेव्य सामके अनुष्ठानसे उसकी शुद्धि होती है।'

अयाज्ययाजनं कृत्वा भुक्त्वा चान्नं विगर्हितम् ।
गायत्र्यष्टसहस्रं तु जपं कृत्वा विशुद्ध्यति ॥

(संवर्तस्मृति २२२)

'जिसको यज्ञ नहीं कराना चाहिये ऐसे शूद्र आदिको यज्ञ कराकर तथा उनका निन्दित अन्न भोजन कर ब्राह्मण एक हजार आठ गायत्री-का जप करनेसे शुद्ध होता है।'

सर्वेषामेव पापानां सङ्करे समुपस्थिते ।
दशसाहस्रमभ्यस्ता गायत्रीशोधनं परम् ॥

(पाराशरस्मृति ११।५७)

'यदि बहुतसे पापोंका साङ्कर्य (सम्मिश्रण) उपस्थित हो जाय अर्थात् बहुतसे पाप इकट्ठे हो जायँ, तो दस हजार बार जपी गई गायत्री परम विशुद्धिकारिणी है। अर्थात् बहुत प्रकारके पाप भी यदि एकत्र उपस्थित हों तो उनकी विशुद्धि दस हजार गायत्री-जपसे हो जाती है।'

सर्वेषामेव पापानां सङ्करे समुपस्थिते ।
शतसाहस्रमभ्यस्ता गायत्रीशोधनं तथा ॥

(पाराशरसंहिता ११।५३)

'यदि बहुतसे पापोंका सम्मिश्रण उपस्थित हो जाय तो एक लक्ष गायत्री-जप करनेसे उनकी विशुद्धि हो जाती है।'

सर्वेषां भवपापानां सङ्करे समुपस्थिते ।
दशसाहस्रिकोऽभ्यासो गायत्र्याः शोधनं परम् ॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।५३–५४)

'समस्त सांसारिक पापोंके साङ्कर्य होने पर अर्थात् सभी प्रकारके पापोंके होनेपर उन पापोंकी विशुद्धि गायत्रीके दस हजार जपसे होती है।'

गायत्रीके कोटि, लक्ष, सहस्र आदि जप करनेसे विविध पापोंसे मुक्ति

गायत्र्यास्तु जपन् कोटिं ब्रह्महत्यां व्यपोहति।
लक्षाशीतिं जपेद्यस्तु सुरापानाद् विमुच्यते॥
पुनाति हेमहर्तारं गायत्र्या लक्षसप्ततिः।
गायत्र्या लक्षषष्ट्या तु मुच्यते गुरुतल्पगः॥

(चतुर्विंशतिमते)

'एक करोड़ गायत्रीके जप करनेवाला ब्रह्महत्याजनित पापको नष्ट कर देता है और अस्सी लाख जप करनेसे सुरापानजनित पापसे मुक्त हो जाता है। सत्तर लाख गायत्रीका जप सोनेकी चोरीसे उत्पन्न होनेवाले पापको पवित्र कर देता है और गायत्रीके साठ लाख जपसे मनुष्य गुरुपत्नीगामिताके दोषसे मुक्त हो जाता है।'

ब्रह्मचारी निराहारः सर्वभूतहिते रतः।
गायत्र्या लक्षजप्येन सर्वपापैः प्रमुच्यते॥

(संवर्तस्मृति २२१)

'ब्रह्मचर्यके साथ उपवास रहकर सभी प्राणियोंके हित करनेमें संलग्न व्यक्ति गायत्रीके एक लाख जप करनेसे सभी पापोंसे मुक्त हो जाता है।'

ब्रह्मचारी मिताहारः सर्वभूतहिते रतः।
गायत्र्या लक्षजप्येन सर्वपापैः प्रमुच्यते॥

(संवर्तसंहिता २१६)

'ब्रह्मचर्यके साथ अल्प आहार करनेवाला तथा सभी प्राणियोंके हित-साधनमें संलग्न व्यक्ति गायत्रीके एक लक्ष जप करनेसे सभी पापोंसे मुक्त हो जाता है।'

शतजप्ता तु सा देवी दिनपापप्रणाशिनी।
सहस्रजप्ता तु तथा पातकेभ्यः समुद्धरेत्॥
दशसाहस्रजप्ता तु सर्वकल्मषनाशिनी।
सुवर्णस्तेयकृद् विप्रो ब्रह्महा गुरुतल्पगः।
सुरापश्च विशुद्ध्येत लक्षजप्यान्न संशयः॥

(शङ्खस्मृति १२।२-४)

'सौ बार जपी गई वह गायत्री देवी दिनके पापोंका विनाश कर देती है तथा हजार बार जपी हुई वह देवी जप-कर्ताको समस्त पापोंसे उबार देती है। यदि दस हजार बार गायत्री जपी गई हो, तो वह सब पापोंका विनाश कर देती है। सुवर्णकी चोरी करनेवाला, ब्रह्महत्या करनेवाला; गुरुतल्पगामी और मद्यपो ब्राह्मण भी एक लाख गायत्री-जपसे शुद्ध हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं।'

शतजप्ता तु सावित्री महापातकनाशिनी।
सहस्रजप्ता तु तथा पातकेभ्यः प्रमोचिनी॥
दशसाहस्रजाप्येन सर्वाकल्मषनाशिनी।
लक्षं जप्ता तु सा देवी महापातकनाशिनी॥
सुवर्णस्तेयकृद् विप्रो ब्रह्महा गुरुतल्पगः।
सुरापश्च विशुद्ध्यन्ति लक्षं जप्त्वा न संशयः॥

(बृहत्शङ्खः)

'सौ बार जपी गई सावित्री महापातकका नाश करनेवाली, हजार बार जपी हुई समस्त पातकोंसे मुक्त करनेवाली, दस हजार जपी हुई समस्त पापोंको विनाश करनेवाली और लाख जपी हुई वह देवी महापातकोंका नाश कर देती है। सुवर्णकी चोरी करनेवाला, ब्रह्महत्या करनेवाला, गुरुतल्पसे गमन करनेवाला, शराब पीनेवाला ब्राह्मण भी एक लाख गायत्री-जप करनेसे शुद्ध हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं।'

गोघ्नः पितृघ्नो मातृघ्नो भ्रूणहा गुरुतल्पगः॥
ब्रह्महा हेमहारी च यस्तु विप्रः सुरां पिबेत्।
गायत्र्याः शतसाहस्रे जपे भवति वै शुचिः॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।६१, ६२)

'जो मनुष्य गोघाती, पितृघाती, मातृघाती, गर्भपाती, गुरुपत्नी-गामी, ब्रह्मघाती, सुवर्णहारी और मदिरासेवी है, वह भी एक लाख गायत्रीके जप करनेसे निश्चय ही पवित्र हो जाता है।'

संवर्तस्मृति (२२१) में भी कहा है—

'गायत्र्या लक्षजप्येन सर्वपापैः प्रमुच्यते।'

'गायत्री-मन्त्रके एक लाख जप करनेसे मनुष्य समस्त प्रकारके पापोंसे मुक्त हो जाता है।'

गोघ्नः पितृघ्नो मातृघ्नो भ्रूणहा गुरुतल्पगः।
ब्रह्मस्वक्षेत्रहारी च यश्च विप्रः सुरां पिबेत्॥
स गायत्र्याः सहस्रेण पूतो भवति मानवः।
मानसं वाचिकं पापं विषयेन्द्रियसङ्गजम्॥
तत् किल्बिषं नाशयति त्रीणि जन्मानि मानवः।
गायत्रीं यो न जानाति वृथा तस्य परिश्रमः॥
पठेच्च चतुरो वेदान् गायत्रीं चैकतो जपेत्।
वेदानां चाऽऽवृतेस्तद्वद् गायत्रीजप उत्तमः॥
(देवीभागवत ११।१६।२०–२३)

'गौको मारनेवाला, पिता और माताको मारनेवाला तथा भ्रूण-हत्यारा, गुरुपत्नीगामी, ब्राह्मणोंके धन तथा खेतका हरण करने-वाला तथा जो ब्राह्मण मद्यपान करनेवाला हो, वह भी गायत्रीके एक हजार जप करनेसे मानसिक, वाचिक तथा विषयेन्द्रियोंके सङ्गसे उत्पन्न होनेवाले समस्त पाप और त्रिजन्मकृत पापोंको नष्ट कर देता है। जो गायत्रीको नहीं जानता उसका समस्त परिश्रम व्यर्थ है। जो चारों वेदोंका पाठ करता है और जो केवल गायत्रीका जप करता है, वह दोनों एक समान ही हैं। जैसे चारों वेदोंकी आवृत्ति करना उत्तम माना जाता है, उसी प्रकार गायत्रीका जप भी उत्तम कहा गया है।'

दशसहस्रजप्येन निष्कामः पुरुषोत्तमः।
विधिना राजशार्दूल प्राप्नोति परमं पदम्॥

'हे राजश्रेष्ठ ! निष्काम-भाववाला उत्तम पुरुष विधिपूर्वक गायत्रीका दस हजार जप करनेसे परम पदको प्राप्त करता है।'

दशभिर्जन्मजनितं शतेन च पुरा कृतम् ।
सहस्रेण त्रिजन्मोत्थं गायत्री हन्ति दुष्कृतम् ॥
(वृद्ध पाराशरसंहिता ५।६२)

'देवी गायत्रीके दस बार जप करनेसे वह इस जन्ममें उत्पन्न पापको, सौ बार जप करनेसे पूर्वजन्मकृत पापको तथा हजार बार जप करनेसे त्रिजन्मजनित पापोंको नष्ट कर देती है ।'

दशकृत्वः प्रजप्ता सा रात्र्याह्ना यत्कृतं लघु ।
तत्पापं प्रणुदत्याशु नात्र कार्या विचारणा ॥

'दस बार जपी हुई गायत्री रात्रि और दिनमें किया गया जो लघु पाप है, उस पापको शीघ्र नष्ट करती है, इस विषयमें किसी प्रकारके विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है ।'

शतजप्ता तु सा देवी पापोपशमनी स्मृता ।
सहस्रजप्ता तु सा देवी उपपातकनाशिनी ॥

'सौ बार जपी हुई वह देवी गायत्री समस्त पापोंका विनाश करती है, किन्तु हजार बार जपी गई वह देवी गायत्री समस्त उपपातकोंका विनाश कर देती है ।'

लक्षजप्येन च तथा महापातकनाशिनी ।
कोटिजप्येन राजेन्द्र यदिच्छति तदाप्नुयात् ॥

'एक लाख बार जपनेसे वह गायत्री महापातकों तकका विनाश कर देती है । हे राजश्रेष्ठ ! एक करोड़ गायत्रीका जप करनेसे मनुष्य जो कुछ स्वर्गापवर्गतक चाहता है, उसको प्राप्त करता है ।'

सप्तावर्त्ता पापहरा दशभिः प्रापयेद् दिवम् ।
विंशावर्त्ता तु सा देवी नयते ह्रीश्वरालयम् ॥
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा तीर्णः संसारसागरात् ।
रुद्र-कूष्माण्डजप्येभ्यो गायत्री तु विशिष्यते ॥
न गायत्र्याः परं जप्यं न व्याहृतिसमं हुतम् ।
गायत्र्याः पादमप्यर्द्धमृगर्द्धं मृचमेव वा ॥
ब्रह्महत्या सुरापानं सुवर्णस्तेयमेव च ।
गुरुदारागमश्चैव जप्येनैव पुनाति सा ॥
पापे कृते तिलैर्होमो गायत्रीजप ईरितः ।
जप्त्वा सहस्रं गायत्र्या उपवासी स पापहा ॥

गोघ्नः पितृघ्नो मातृघ्नो ब्रह्महा गुरुतल्पगः ।
ब्रह्मघ्नः स्वर्णहारी च सुरापो लक्षजप्यतः ॥
शुद्‌ध्यते वाऽथवा स्नात्वा शतमन्तर्जले जपेत् ।
अपः शतेन पीत्वा तु गायत्र्याः पापहा भवेत् ॥
शतं जप्ता तु गायत्री पापोपशमनी स्मृता ।
सहस्रं जप्ता सा देवी उपपातकनाशिनी ॥
अभीष्टदा कोटिजप्ता देवत्वं राजतामियात् ।
(अग्निपुराण २१५।६–१४)

'देवी गायत्री सात बार जप करनेसे पापहरण करनेवाली होती है, दस बार जप करने से स्वर्ग प्रदान करती है और बीस बार जप करनेसे वह देवी ईश्वरालय (वैकुण्ठ) को प्राप्त कराती है। एक सौ आठ बार जपनेसे मनुष्य संसार-सागरसे पार हो जाता है, पन्द्रह सौ जप करनेसे जापककी गायत्री सर्वश्रेष्ठ हो जाती है। गायत्रीसे बढ़कर कोई जप नहीं तथा व्याहृतिके समान कोई हवन नहीं है। गायत्रीके एक पाद, आधा पाद, आधा मन्त्र या पूर्ण मन्त्रके जप करनेसे देवी गायत्री ब्रह्महत्या, सुरापान, सुवर्णचोरी तथा गुरुपत्नी-गमनादि पापोंसे लोगोंको पवित्र कर देती है। पाप हो जानेपर प्रायश्चित्तके रूप-में तिलोंसे होम और गायत्री-जपका विधान किया गया है। गायत्रीके एक हजार जप करके उपवास करनेवाला समस्त पापोंको नष्ट करनेवाला होता है। गोघाती, पितृघाती, मातृघाती, ब्रह्मघाती, गुरुपत्नीगामी, ब्रह्मघ्न तथा सुवर्ण चुरानेवाला और मद्यपान करनेवाला इन सभीकी शुद्धि गायत्रीके एक लक्ष जप करनेसे होती है। अथवा स्नान करके जलके भीतर एक सौ बार गायत्रीके जपनेसे शुद्ध होता है अथवा सौ बार जप करनेके बाद गायत्री-मन्त्रसे अभिमन्त्रित जलके पान करनेसे व्यक्ति सर्व पापोंको नष्ट करनेवाला होता है। सौ बार जप करनेसे गायत्री पापोंको नाश करनेवाली, हजार बार जप करनेसे उपपातकोंको नाश करनेवाली तथा एक करोड़ जप करनेसे समस्त मनोरथोंको पूर्ण करनेवाली होती है, साथ ही जापक देवत्व तथा राजत्वको प्राप्त करता है।'

सप्तावृत्त्या पुनेद्देहं दशभिः प्राप्यते दिवम् ॥
विंशावृत्त्या तु सा देवी नयते हीश्वरालयम् ।
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा तरते जन्मसागरम् ॥

तीर्णो भूयो न पश्येत जन्ममृत्युं सुदारुणम् ।
गायत्रीं जपते यस्तु सोमवद् भासते तु सः ॥
पादार्धं पादमर्धं वा समस्तामृचमेव वा ।
सर्वेषां भवपापानां सङ्करे समुपस्थिते ।
दशसाहस्रिकोऽभ्यासो गायत्र्याः शोधनं परम् ।
रुद्र-कूष्माण्डजप्यैश्च जप्यैः सौरार्णवैस्तथा ॥
ऋषिभिर्विरजा जाप्यैर्गायत्री च विशिष्यते ।
ब्रह्महत्यां सुरापानं सुवर्णस्तेयमेव वा ॥
गुरुदारागमं चैव जप्येनैव पुनाति सा ।
(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।५०–५६)

'देवी गायत्री सात बार जपनेसे शरीरको पवित्र करती है, दस बार जपनेसे स्वर्गको देती है और बीस बार जपनेसे ईश्वरालय (वैकुण्ठ) को प्राप्त कराती है । एक सौ आठ बार जप करके मनुष्य बार-बारके जन्मरूपी सागरको पार कर लेता है, पश्चात् वह पुनः अति-दारुणजन्य मृत्युको नहीं देखता । जो व्यक्ति गायत्रीके एक पाद, आधा पाद, आधा मन्त्र या पूर्णमन्त्रको जपता है, वह चन्द्रके समान भासित होता है । समस्त प्रकारके सांसारिक पापोंके साङ्कर्य उपस्थित हो जानेपर उसके शोधनका एकमात्र उपाय गायत्रीका दस हजार जप ही है। पन्द्रह सौ जप करनेसे तथा सोलह सौ जप करनेसे या सात सौ जप करनेसे जापककी विरजा गायत्री सर्वश्रेष्ठ हो जाती हैं। ब्रह्महत्या, मद्यपान, सुवर्ण चोरी तथा गुरुपत्नी-गमनादि पापोंको देवी गायत्री जप करने मात्रसे पवित्र कर देती है ।'

सप्तभिः पावयेद्देहं दशभिः प्रापयेद् दिवम् ।
विंशत्यावर्तिता देवी नयते चेश्वरालयम् ॥
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा तारयेज्जन्मसागरात् ।
तीर्णो न पश्यति प्रायो जन्ममृत्युं हि दारुणम् ॥
दशभिर्जन्मजनितं शतेन तु पुराकृतम् ।
त्रिजन्मजं सहस्रेण गायत्री हन्ति किल्बिषम् ॥
(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।७२–७४)

'प्रतिदिन सात बार गायत्रीका जप करनेसे गायत्री देवी शरीरको पवित्र करती है, दस बार जप करनेसे स्वर्गलोककी प्राप्ति कराती है, बीस बार जप करनेसे शिवलोकमें पहुँचाती है और एक सौ आठ बार

जप करनेसे जन्म-समुद्रसे पारकर देती है। जो इससे पार हो जाता है, वह फिर इस जन्म और मृत्युके दुःखको नहीं देखता। गायत्रीके दस बार जपनेसे वर्तमान जन्मका, सौ बारके जपनेसे पूर्वजन्मका और एक हजार बार जपनेसे तीन जन्मोंका पाप नष्ट कर देती है।'

दशभिर्जन्मजनितं शतेन च पुराकृतम्।
त्रियुगं तु सहस्रेण गायत्री हन्ति किल्बिषम्॥

(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ४८।१६४)

'गायत्रीका दस बार जप करनेसे इस जन्मके पापोंका, सौ बार जप करनेसे पूर्व जन्मके पापोंका तथा एक हजार जप करनेसे तीन युगके पापोंका नाश हो जाता है।'

दशजप्ता तु सा देवी दिनपापप्रणाशिनी।
शतं जप्ता तथा सा तु सर्वकल्मषनाशिनी॥
सहस्रं जप्ता सा नृणां पातकेभ्यः समुद्धरेत्।
स्वर्णस्तेयी कृतघ्नश्च ब्रह्महा गुरुतल्पगः॥
सुरापश्च विशुद्ध्येत लक्षजप्तेन सर्वदा॥

(शंखसंहिता ११।४-५)

'दस बार जप करनेसे देवी गायत्री दिनमें किये हुए पापको नाश करनेवाली है, सौ बार जप करनेसे समस्त पापोंको नाश करनेवाली है तथा हजार बार जप करनेसे मनुष्योंको समस्त पापोंसे छुड़ा देती है। एक लक्ष जप करनेसे सोनेकी चोरी करनेवाला, कृतघ्न, ब्रह्म-हत्यारा, गुरुपत्नीगामी और मद्यपायी—ये सभी सर्वदाके लिये पवित्र हो जाते हैं।'

ऐहिकामुष्मिकं पापं सर्वं निरवशेषतः।
पञ्चरात्रेण गायत्रीं जपमानो व्यपोहति॥

(संवर्तस्मृति २१६)

'इस जन्म और पूर्वजन्मके समस्त पापोंको पाँच रात्रिपर्यन्त गायत्री-जप करनेवाला नष्ट कर डालता है।'

ऐहिकामुष्मिकं लोके पापं सर्वं विशेषतः।
पञ्चरात्रेण गायत्रीं जपमानो व्यपोहति॥

(संवर्तसंहिता २१३)

'इस जन्म तथा पूर्वजन्मके समस्त पापोंको विशेषकर पाँचरात्रि-पर्यन्त गायत्रीके जप करनेवाला नष्ट कर देता है।'

सकृज्जपश्च गायत्र्याः पापं दिनभवं हरेत्।
दशवारं जपेनैव नश्येत्पापं दिवानिशम्॥
शतवारं जपश्चैव पापं मासार्जितं हरेत्।
सहस्रधा जपश्चैव कल्मषं वत्सरार्जितम्॥
लक्षो जन्मकृतं पापं दशलक्षोऽन्यजन्मजम्।
सर्वजन्मकृतं पापं शतलक्षाद् विनश्यति॥
करोति मुक्तिं विप्राणां जपो दशगुणस्ततः।
(देवीभागवत ९।२६।१४-१७)

'गायत्रीका एक बार जप करनेसे दिनमें किये हुए समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। दस बार जप करनेसे दिन और रात के समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। सौ बारके जप करनेसे महीने भरके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। एक हजार जप करनेसे साल भरके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। एक लाख बार जप करनेसे इस जन्मके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं और दस लाख बार जप करनेसे दूसरे जन्मके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। एक करोड़ जप करनेसे समस्त जन्मोंमें किये हुए समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं और दस करोड़ जप करनेसे ब्राह्मणोंकी मुक्ति हो जाती है।'

एकधा दशधा वा यः शतधा वा पठेदिमाम्।
एकाकी बहुभिर्वापि संसिद्ध्येदुत्तरोत्तरम्॥

'गायत्री-मन्त्रको एक बार, दस बार अथवा सौ बार पढ़े। गायत्री-मन्त्रको एक बार अथवा अनेक बार पढ़नेसे मनुष्य उत्तरोत्तर सिद्धिको प्राप्त करता है।'

गायत्री-मन्त्रद्वारा हवनका विविध फल

पद्मानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने।
प्राप्नोति निखिलं मोक्षं सिध्यत्येव न संशयः॥
(देवीभागवत ११।२१।४४)

'एक लाख घृताक्त कमलके पुष्पोंसे हवन करनेपर मनुष्य सम्पूर्ण मनोरथोंको प्राप्त कर लेता है। मुक्ति भी सुलभ हो जाती है, इसमें कोई संशय नहीं।'

पञ्चविंशतिलक्षेण दध्ना क्षीरेण वा हुतात् ।
स्वदेहे सिध्यते जन्तुर्महर्षीणां मतं तथा ॥
(देवीभागवत ११।२१।४६)

'पचीस लाख गायत्रीके जप तथा दही और दूधसे हवन करनेपर मनुष्य स्वयं सिद्ध हो जाता है, यह महर्षियोंका मत है ।'

गुडूच्याः पर्वविच्छिन्नाः पयोक्ता जुहुयाद् द्विजः ॥
एवं मृत्युञ्जयो होमः सर्वव्याधिविनाशनः ।
आम्रस्य जुहुयात्पत्रैः पयोक्तैर्ज्वरशान्तये ॥
वचाभिः पयसाक्ताभिः क्षयं हुत्वा विनाशयेत् ।
मधुत्रितयहोमेन राजयक्ष्मा विनश्यति ॥
निवेद्य भास्करायान्नं पायसं होमपूर्वकम् ।
राजयक्ष्माभिभूतं च प्राशयेच्छान्तिमाप्नुयात् ॥
लताः पर्वसु विच्छिद्य सोमस्य जुहुयाद् द्विजः ।
सोमे सूर्येण संयुक्ते पयोक्ताः क्षयशान्तये ॥
कुसुमैः शङ्खवृक्षस्य हुत्वा कुष्ठं विनाशयेत् ।
अपस्मारविनाशः स्यादपामार्गस्य तण्डुलैः ॥
क्षीरवृक्षसमिद्धोमादुन्मादोऽपि विनश्यति ।
औदुम्बरसमिद्धोमादतिमेहः क्षयं व्रजेत् ॥
प्रमेहं शमयेद् हुत्वा मधुनेक्षुरसेन वा ।
मधुत्रितयहोमेन नयेच्छान्तिं मसूरिकाम् ॥
कपिलासर्पिषा हुत्वा नयेच्छान्तिं मसूरिकाम् ।
उदुम्बरवटाश्वत्थैर्गोगजाश्वामयं हरेत् ॥
पिपीलिका मधुवल्मीके गृहे जाते शतं शतम् ।
शमीसमिद्भिरन्नेन सर्पिषा जुहुयाद् द्विजः ॥
तदुत्थं शान्तिमायाति शेषैस्तत्र बलिं हरेत् ।
अभ्रस्तनितभूकम्पा लक्ष्यादौ वनवेतसः ॥
सप्ताहं जुहुयादेवं राष्ट्रे राज्यं सुखी भवेत् ।
(देवीभागवत ११।२४।२२–३३)

'द्विजको चाहिये कि गुरुचको टुकड़े-टुकड़े करके उन्हें क्षीरमें भिगोकर अग्निमें आहुति दे । इस प्रकारके होमको 'मृत्युञ्जय' कहते हैं । इसमें सम्पूर्ण व्याधियोंका नाश करनेकी शक्ति है । ज्वरकी शान्तिके लिये दुग्धमें भिगोये हुए आमके पत्रोंसे हवन करे । क्षीराक्त

मीठे वचका हवन करनेसे क्षयरोग दूर होता है। तीन मधु (दूध, दही और घृत) से किये हुए होममें राजयक्ष्माको दूर करनेकी शक्ति है। खीरका हवन करके उसे भगवान् सूर्यको अर्पण करे। फिर प्रसादरूपसे स्वयं खाये तो राजयक्ष्माका उपद्रव शान्त हो जाता है। सोमलताको गाँठोंपरसे अलग-अलग करके उसे दूधमें भिगोकर क्षयरोगकी शान्तिके लिये द्विज अमावास्या तिथिको हवन करे। शङ्खके वृक्षके पुष्पोंसे हवन करके कुष्ठ रोगका निवारण करे। अपामार्गके बीजसे यदि हवन किया जाय तो मृगी दूर हो सकती है। क्षीरी वृक्षकी समिधासे हवन करनेपर उन्माद रोग शान्त हो जाता है। गूलरकी समिधाका हवन करनेसे असाध्य प्रमेह रोग दूर हो जाता है। मधु अथवा ईखके रससे हवन करके पुरुष प्रमेह रोगको शान्त करे। त्रिमधु (दूध, दही और घृत) के हवनसे मसूरिका (चेचक) रोग शान्त होता है। कपिला गौके घृतसे हवन करके भी मसूरिका (चेचक) रोगको शान्त किया जा सकता है। गूलर, वट और पीपलकी समिधाओंसे हवन करके गौ, घोड़े और हाथीके रोगको दूर करे। पिपीलिका और मधुवल्मीक-संज्ञक जन्तुओंद्वारा घरमें उपद्रव उपस्थित होनेपर द्विज शमीकी समिधाओं, खीर और घृतसे प्रत्येक कार्यके लिये दो सौ बार हवन करे। इस प्रकार करनेसे वह उपद्रव शान्त हो जाता है। अवशिष्ट पदार्थोंसे वहाँ बलि प्रदान करनी चाहिये। बिजली गिरने और भूकम्प आदिके लक्षित होनेपर जंगली बेंतकी समिधासे सात दिनों तक हवन करे। ऐसा करनेसे राष्ट्रमें राज्यसुख विद्यमान रहता है।'

अथ पुष्टिं श्रियं लक्ष्मीं पुष्पैर्हुत्वाऽऽप्नुयाद् द्विजः।
श्रीकामो जुहुयात् पद्मै रक्तैः श्रियमवाप्नुयात्॥
हुत्वा श्रियमवाप्नोति जातीपुष्पैर्नवैः शुभैः।
शालितण्डुलहोमेन श्रियमाप्नोति पुष्कलाम्॥
समिद्भिर्बिल्ववृक्षस्य हुत्वा श्रियमवाप्नुयात्।
बिल्वस्य शकलैर्हुत्वा पत्रैः पुष्पैः फलैरपि॥
श्रियमाप्नोति परमां मूलस्य शकलैरपि।
समिद्भिर्बिल्ववृक्षस्य पायसेन च सर्पिषा॥
शतं शतं च सप्ताहं हुत्वा श्रियमवाप्नुयात्।
लाजैस्त्रिमधुरोपेतैर्होमे कन्यामवाप्नुयात्॥
अनेन विधिना कन्या वरमाप्नोति वाञ्छितम्।
रक्तोत्पलशतं हुत्वा सप्ताहं हेम चाप्नुयात्॥

सूर्यबिम्बे जलं हुत्वा जलस्थं हेम चाप्नुयात् ।
अन्नं हुत्वाऽऽप्नुयादन्नं व्रीहीन् व्रीहिपतिर्भवेत् ॥
करीषचूर्णैर्वत्सस्य हुत्वा पशुमवाप्नुयात् ।
प्रियङ्गु-पायसाज्यैश्च भवेद्धोमादिभिः प्रजा ॥
निवेद्य भास्करायान्नं पायसं होमपूर्वकम् ।
भोजयेदृतुस्नातां पुत्रं परमवाप्नुयात् ॥
सप्ररोहाभिरार्द्राभिरायुर्हुत्वा समाप्नुयात् ।
समिद्भिः क्षीरवृक्षस्य हुत्वाऽऽयुषमवाप्नुयात् ॥
सप्ररोहाभिरार्द्राभिः रक्तभिर्मधुरत्रयैः ।
व्रीहीणां च शतं हुत्वा हेम चायुरवाप्नुयात् ॥
सुवर्णकुड्मलं हुत्वा शतमायुरवाप्नुयात् ।
दूर्वाभिः पयसा वापि मधुना सर्पिषाऽपि वा ॥
शतं शतं च सप्ताहमपमृत्युं व्यपोहति ।
शमीसमिद्भिरन्नेन पयसा वा च सर्पिषा ॥
शतं शतं च सप्ताहमपमृत्युं व्यपोहति ।
न्यग्रोधसमिधो हुत्वा पायसं होमयेत्ततः ॥
शतं शतं च सप्ताहमपमृत्युं व्यपोहति ।
(देवीभागवत ११।२४।३८-५२)

'तदनन्तर पुष्टि, श्री और लक्ष्मीकी प्राप्तिके लिये द्विजको चाहिये कि पुष्पोंकी आहुति दे। लक्ष्मी चाहनेवाला पुरुष लाल पुष्पोंसे हवन करे, इससे उसे लक्ष्मी प्राप्त हो जाती है। बिल्वफलके खण्डों, पत्रों और पुष्पोंसे हवन करके पुरुष उत्तम लक्ष्मी प्राप्त कर लेता है। समिधाएँ भी बिल्ववृक्षकी ही होनी चाहिये। दूध और घृतसे मिश्रित हवन करे। सात दिनोंतक प्रतिदिन दो-दो सौ आहुतियाँ देनेपर वह लक्ष्मीको पानेका अधिकारी होता है। तीन मधुओंसे युक्त लाजाका हवन करनेसे पुरुषको कन्या प्राप्त होती है। इस विधिका पालन करनेसे कन्या अभिलषित वर प्राप्त कर लेती है। एक सप्ताहतक लाल कमलकी सौ आहुति देनेपर सुवर्णकी प्राप्ति होती है। गायत्री-मन्त्रका उच्चारण करके सूर्यका तर्पण करनेसे जलमें छिपा हुआ सुवर्ण पुरुष प्राप्त कर लेता है। अन्नका हवन करनेसे अन्नके तथा व्रीहिका हवन करनेसे पुरुष व्रीहिके स्वामी हो जाते हैं। बछड़ेके गोबरके खण्डोंका हवन करनेसे पुरुष पशुधन प्राप्त करता है। दूध

और घृतमिश्रित प्रियङ्गुके हवनसे प्रजाकी अनुकूलता प्राप्त करता है। खीर बनाकर हवन करे और उसे भगवान् सूर्यको अर्पण करके ऋतुस्नाता ब्राह्मणीको भोजन कराये तो पुरुषको श्रेष्ठ पुत्रकी प्राप्ति होती है। पलाशके अग्रभागसे युक्त समिधाका हवन करके पुरुष दीर्घ आयु प्राप्त करता है। पीपल, गूलर, वट और पाकरकी समिधाका हवन दीर्घ आयु प्रदान करनेवाला है। क्षीरी वृक्षोंकी अग्रभागयुक्त समिधाओंसे, जो तीनों मधुओंसे आर्द्र हों तथा व्रीहियोंसे सौ आहुति देकर पुरुष सुवर्ण और दीर्घायु प्राप्त करता है। सुनहरे रंगके कमलसे आहुति देनेपर सौ वर्षकी आयु प्राप्त होती है। दूर्वा, दूध, मधु अथवा घृतसे प्रतिदिन सौ-सौ आहुति देनेपर एक सप्ताहमें अपमृत्यु दूर होती है। ऐसे ही शमीकी समिधा, अन्न, क्षीर और घृतकी एक सप्ताहतक दी हुई सौ-सौ आहुतियाँ अपमृत्युका विनाश करती हैं। न्यग्रोधकी समिधाका हवन करके खीरका हवन करे। एक सप्ताहतक प्रतिदिन सौ-सौ आहुतियाँ होनी चाहिये। इसके प्रभावसे अपमृत्यु दूर हो जाती है।'

बिल्वं हुत्वाऽऽप्नुयाद्राज्यं समूलफलपल्लवम् ॥
हुत्वा पद्मशतं मासं राज्यमाप्नोत्यकण्टकम् ।
यवागूं ग्राममाप्नोति हुत्वा शालिसमन्वितम् ॥
अश्वत्थसमिधो हुत्वा युद्धादौ जयमाप्नुयात् ।
अर्कस्य समिधो हुत्वा सर्वत्र विजयी भवेत् ॥
संयुक्तैः पयसा पत्रैः पुष्पैर्वा वेतसस्य च ।
पायसेन शतं हुत्वा सप्ताहं वृष्टिमाप्नुयात् ॥
नाभिदघ्ने जले जप्त्वा सप्ताहं वृष्टिमाप्नुयात् ।
जले भस्म शतं हुत्वा महावृष्टिं निवारयेत् ॥
पालाशाभिरवाप्नोति समिद्भिर्ब्रह्मवर्चसम् ।
पलाशकुसुमैर्हुत्वा सर्वमिष्टमवाप्नुयात् ॥
पयो हुत्वाऽऽप्नुयान्मेधामाज्यं बुद्धिमवाप्नुयात् ।
अभिमन्त्र्य पिबेद् ब्राह्मं रसं मेधामवाप्नुयात् ॥
पुष्पहोमे भवेद् वासस्तन्तुभिस्तद्विधं पटम् ।
लवणं मधुसम्मिश्रं हुत्वेष्टं वशमानयेत् ॥
नयेदिष्टं वशं हुत्वा लक्ष्मीपुष्पैर्मधुप्लुतैः ।
(देवीभागवत ११।२४।५४-६२)

'मूल, फल और पल्लवसहित बिल्वकी आहुति राज्य प्रदान करती है। कमलकी सौ आहुति देनेपर मानव निष्कण्टक राज्य प्राप्त करता है। अगहनीके चूर्णकी लपसीका हवन करके पुरुष ग्राम प्राप्त करता है। पीपलके वृक्षकी समिधाओंका हवन युद्ध आदिके अवसर पर विजय प्रदान करता है। मदारकी समिधाके हवनसे मनुष्य सर्वत्र विजयी होता है। क्षीरके संयुक्त बेंतके पत्रोंसे अथवा खीरसे यदि सौ आहुति दी जाय तो एक सप्ताहमें वृष्टि होती है अथवा नाभिपर्यन्त जलमें खड़े होकर एक सप्ताहतक जप करनेपर वृष्टि होती है। जलमें भस्मकी सौ आहुति देनेसे घोर वृष्टि बन्द हो जाती है। पलाशकी समिधासे हवन करनेपर ब्रह्मतेज प्राप्त होता है। पलाशके पुष्पोंकी आहुतियाँ सम्पूर्ण अभीष्ट प्रदान करती हैं। दूधकी आहुति मेधा तथा घृतकी आहुति बुद्धिकी प्राप्तिमें सहायक होती है। ब्राह्मी-बूटीके रसको गायत्री-मन्त्रसे अभिमन्त्रित करके यदि पान किया जाय तो निर्मल बुद्धि प्राप्त होती है। ब्राह्मी-बूटीके पुष्पोंका हवन करनेसे सुगन्ध तथा तन्तुओंके हवनसे उसीके सदृश पट प्राप्त होते हैं। मधु-मिश्रित बिल्व-पुष्पोंकी आहुति इष्टको वशमें करनेवाली है।'

ध्यानकाले पापहरा हुतैषा सर्वकामदा।
गायत्र्यास्तु तिलैर्होमः सर्वपापप्रणाशनः।
शान्तिकामो यवैः कुर्यादायुष्कामो घृतेन च॥
सिद्धार्थकैः कर्मसिद्ध्यै पयसा ब्रह्मवर्चसे।
पुत्रकामस्तथा दध्ना धान्यकामस्तु शालिभिः॥
क्षीरवृक्षसमिद्भिस्तु ग्रहपीडोपशान्तये।
धनकामस्तथा बिल्वैः श्रीकामः कमलैस्तथा॥
आरोग्यकामो दूर्वाभिर्गुरूत्पाते स एव हि।
सौभाग्येच्छुर्गुग्गुलानां विद्यार्थी पायसेन च॥
अयुतेनोक्तसिद्धिः स्याल्लक्षेण मनसेप्सितम्।
कोट्या ब्रह्मवधान्मुक्तः कुलोद्धारी हरिर्भवेत्॥

(अग्निपुराण २१५।२४–२६)

'ध्यानके समय अर्थात् ध्यान करनेसे गायत्री सब पापोंको हर लेती है। यदि गायत्रीका हवन किया जाय, तो यह सब कामनाओंको देती है। गायत्रीका तिलोंद्वारा किया गया होम सब पापोंका विनाशक है। ग्रहपीड़ा आदिकी शान्तिकी कामनावाला पुरुष यवोंसे गायत्रीका हवन

करे, दीर्घजीवनकी कामनावाला पुरुष घृतसे गायत्रीका हवन करे। कार्यकी सिद्धिके लिये पीले सरसोंसे, ब्रह्मवर्चस्‌के लिये दूबसे, पुत्रकी कामनावाला पुरुष दहीसे, धान्योंकी कामनावाला पुरुष धानोंसे, ग्रह-पीड़ाकी उपशान्तिके लिये क्षीरी दूधवाले (बड़ आदि) वृक्षोंकी समिधाओंसे गायत्रीका हवन करे। धनकी अभिलाषावाला पुरुष बिल्वफलोंसे, लक्ष्मीकी कामनावाला पुरुष कमलोंसे, आरोग्य (रोग-निवृत्ति) की कामनावाला पुरुष दूबसे, कोई बड़ा भारी उत्पात आकर उपस्थित हो तो उसमें भी वही पूर्वोक्त प्रकार ही अवलम्बनीय है अर्थात् दूर्वासे ही हवन करना चाहिये। सौभाग्य चाहनेवाला गुग्गुलोंसे, विद्या चाहनेवाला खीरसे देवी गायत्रीका हवन करे। गायत्री-मन्त्रके द्वारा दस हजार हवनसे पूर्वोक्त सिद्धि होती है, लक्ष हवनसे मनोरथ-की प्राप्ति होती है और करोड़ हवनसे हवनकर्ता ब्रह्महत्यासे छुटकारा पा जाता है एवं अपने कुलका उद्धारकर्ता तथा साक्षात् हरिरूप हो जाता है।'

पुस्तकालय परिग्रहण सं. 16 दि० 22/91

हुता देवी विशेषेण सर्वकामप्रदायिनी।
सर्वपापक्षयकरी वरदा भक्तवत्सला॥
शान्तिकामस्तु जुहुयात् सावित्रीमक्षतैः शुचिः।
हन्तुकामोऽपमृत्युं च घृतेन जुहुयात्तथा॥
श्रीकामस्तु तथा पद्मैर्बिल्वैः काञ्चनकामुकः।
ब्रह्मवर्चसकामस्तु पयसा जुहुयात्तथा॥
घृतप्लुतैस्तिलैर्वह्नि जुहुयात् सुसमाहितः।
गायत्र्ययुतहोमाच्च सर्वपापैः प्रमुच्यते॥
पापात्मा लक्षहोमेन पातकेभ्यः प्रमुच्यते।
अभीष्टं लोकमाप्नोति प्राप्नुयात् काममीप्सितम्॥
(शङ्खस्मृति १२।६-१०)

'वरदायिनी और भक्तवत्सला देवी गायत्रीके उद्देश्यसे यदि हवन किया जाय तो वह विशेषरूपसे समस्त कामनाओंकी पूर्ति करती है और सब प्रकारके पापोंका विनाश करती है। ग्रहपीड़ा आदिकी शान्तिकी कामना हो तो पवित्र होकर तण्डुलोंसे गायत्रीका हवन करना चाहिये। यदि अपमृत्युके निवारणकी कामना हो तो घृत से गायत्रीका हवन करना चाहिये। लक्ष्मीकी कामनावालेको कमलोंसे, सुवर्णकी कामनावालेको बिल्वफलोंसे और ब्रह्मवर्चस्‌की कामनावाले-

को दूधसे गायत्रीका हवन करना चाहिये। घृतसे खूब सने हुए तिलोंसे एकाग्र मन होकर यदि अग्निमें हवन करें तो इस प्रकारके गायत्रीके अयुतहोम (दस हजार आहुतियोंके होम) से होमकर्ता समस्त पापोंसे छुटकारा पा जाता है। पापात्मा (अत्यन्त पापी) घृताक्त तिलोंके द्वारा लक्ष होम करनेसे समस्त पातकोंसे मुक्त हो जाता है और वह इस लोकमें इच्छित कामनाओंको प्राप्त करता है तथा वह मरनेके उपरान्त अभीष्ट लोकको प्राप्त करता है।'

त्रिरात्रोपोषितः सम्यग् घृतं हुत्वा सहस्रशः।
सहस्रं लाभमाप्नोति हुत्वाऽग्नौ खदिरेन्धनम्॥
पालाशैः समिधैश्चैव घृताक्तानां हुताशने।
सहस्रं लाभमाप्नोति राहु-सूर्यसमागमे॥
हुत्वा तु खदिरं वह्नौ घृताक्तं रक्तचन्दनम्।
सहस्रं हेममाप्नोति राहु-चन्द्रसमागमे॥
रक्तचन्दनमिश्रं तु सघृतं हव्यवाहने।
हुत्वा गोमयमाप्नोति सहस्रं गोमयं द्विजः॥
जाती-चम्पक-राजार्क-कुसुमानां सहस्रशः।
हुत्वा वस्त्रमवाप्नोति घृताक्तानां हुताशने॥
सूर्यमण्डलबिम्बे च हुत्वा तोयं सहस्रशः।
सहस्रं प्राप्नुयाद् हैमं रौप्यमिन्दुमये हुते॥

(गायत्रीपटल ६–११)

'हवनकर्ता तीन रात्रि उपवासकर खैरकी लकड़ीको घृतमें डुबोकर उससे हवन करे तो हजारोंकी प्राप्ति होती है। पलाशकी लकड़ी घीमें डुबोकर सूर्यग्रहणके समय गायत्रीके मन्त्रसे एक हजार हवन करे तो हजारोंका लाभ होता है। खैरकी लकड़ी और लाल चन्दनको घृतमें डुबोकर चन्द्रग्रहणमें गायत्री-मन्त्रसे एक हजार हवन करे तो सुवर्णकी प्राप्ति होती है। लाल चन्दनसे और घीसे मिले हुए गायके कण्डेको गायत्री-मन्त्रसे जो ब्राह्मण अग्निमें हवन करता है, उसको हजारों गोमय (रत्नविशेष) की प्राप्ति होती है। मालती, चम्पा और राजार्क (मदार) के पुष्पोंको घृतमें मिलाकर गायत्री-मन्त्रसे हवन करे तो हजारों वस्त्रोंकी प्राप्ति होती है। सूर्यमण्डलके बिम्बमें गायत्रीके मन्त्रसे प्रतिदिन एक हजार जलद्वारा अर्घ्यदान करे, तो सुवर्णकी प्राप्ति और चन्द्रमण्डलमें गायत्री-मन्त्रसे प्रतिदिन जलद्वारा अर्घ्यदान करे, तो चाँदीकी प्राप्ति होती है।'

गोघृतेन सहस्रेण लोध्रेण जुहुयाद् यदि।
चौराग्नि-मारुतोत्थानि भयानि न भवन्ति वै॥
(गायत्रीपटल १३)

'लोधका पुष्प गौके घृतके साथ गायत्री-मन्त्रसे प्रतिदिन एक हजार हवन करे तो चोर, अग्नि और वायुसे उत्पन्न होनेवाले भय निश्चित ही नहीं होते।'

हुत्वा वेतसपत्राणि घृताक्तानि हुताशने।
लक्षाधिपस्य पदवीं सार्वभौमं न संशयः॥
लक्षेण भस्महोमस्य हुत्वा ह्युत्तिष्ठते जलात्।
आदित्याभिमुखं स्थित्वा नाभिमात्रजले शुचौ॥
गर्भपातादिप्रदरश्चान्ये स्त्रीणां महारुजः।
नाशमेष्यन्ति ते सर्वे मृतवत्सादिदुःखदाः॥
तिलानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने।
सर्वकामसमृद्धात्मा परं स्थानमवाप्नुयात्॥
यवानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने।
सर्वकामसमृद्धात्मा परां सिद्धिमवाप्नुयात्॥
घृतस्याहुतिलक्षेण सर्वान् कामानवाप्नुयात्।
पञ्चगव्याशनो लक्षं जपेज्जातिस्मृतिर्भवेत्॥
तदेव ह्यनले हुत्वा प्राप्नोति बहुसाधनम्।
अन्नादि-हवनान्नित्यमन्नाद्यं च भवेत् सदा॥
जुहुयात् सर्वसाध्यानामाहुत्यायुतसंख्यया।
रक्तसिद्धार्थकान् हुत्वा सर्वान् साधयते रिपून्॥
लवणं मधुसंयुक्तं हुत्वा सर्ववशी भवेत।
हुत्वा तु करवीराणि रक्तानि ज्वालयेज्ज्वरम्॥
हुत्वा भल्लातकं तैलं देशादेव प्रचालयेत्।
हुत्वा तु निम्बपत्राणि विद्वेषं शान्तये नृणाम्॥
रक्तानां तण्डुलानां च घृताक्तानां हुताशने।
हुत्वा बलमवाप्नोति शत्रुभिर्न स जीयते॥
प्रत्यानयनसिद्ध्यर्थं मधुसर्पिः समन्वितम्।
गवां क्षीरं प्रदीप्तेऽग्नौ जुह्वतस्तत्प्रशाम्यति॥
(गायत्रीपटल १५–२६)

'वेंतके पत्तेको घीमें मिलाकर गायत्री-मन्त्रसे अग्निमें हवन करनेसे मनुष्य लक्षाधिपति और सार्वभौम बन जाता है, इसमें कोई संशय नहीं है। जो ग्रीष्म ऋतुमें नाभिमात्र जलमें खड़ा होकर गायत्री-मन्त्रसे एक लाख भस्मकी आहुति देता है और जलके बाहर होकर पुनः गायत्री-मन्त्रसे सूर्यका उपस्थान करता है, तो उसके प्रभावसे स्त्रियोंके गर्भपात, प्रदर और मृतवत्सा आदि समस्त दोष निश्चय ही नष्ट हो जाते हैं। घृतमें तिलको मिलाकर गायत्री-मन्त्रसे अग्निमें एक लाख हवन करनेसे मनुष्यकी समस्त कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं और वह श्रेष्ठ स्थानको प्राप्त करता है। यवको घीमें मिलाकर गायत्री-मन्त्रसे अग्निमें एक लक्ष हवन करनेसे मनुष्यकी सभी कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं और उसको समस्त सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं। गायत्री-मन्त्रसे गौके घृतके द्वारा एक लाख आहुति करनेसे सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं। पञ्चगव्यका पानकर एक लाख गायत्री-जप करनेसे मनुष्यको पूर्वजन्मका स्मरण हो जाता है। पञ्चगव्यका एक लाख हवन करनेसे समस्त प्रकारके साधन प्राप्त हो जाते हैं और प्रतिदिन विविध प्रकारके अन्नादिद्वारा हवन करनेसे सदा अन्न आदिकी प्राप्ति होती है। गायत्री-मन्त्रसे लाल सिद्धार्थक (लाल सरसों) का दस हजार हवन करनेसे समस्त शत्रु वशमें हो जाते हैं। मधुमें सेंधा नमकको मिलाकर दस हजार गायत्री-मन्त्रद्वारा हवन करनेसे सभी वशमें हो जाते हैं। लाल करवीर (कनैल) के पुष्पोंसे हवन करनेसे सभी प्रकारके ज्वर नष्ट हो जाते हैं। गायत्री-मन्त्रसे भल्लातक (लोध) के तेलका एक लाख हवन करनेसे शत्रु दूसरे देशमें चला जाता है और एक लाख नीमके पत्तोंसे हवन करनेसे मनुष्योंके विद्वेषकी शान्ति हो जाती है। लाल चावलको घीमें मिलाकर एक लक्ष हवन करनेसे मनुष्य बलवान् होता है और उसका शत्रु उसको कभी पराजित नहीं कर सकता। गौका दुग्ध और मधुको घृतमें मिलाकर गायत्री-मन्त्रसे एक लाख हवन करनेसे दूसरे देश (विदेश) में गया हुआ मनुष्य अपने घर वापस आ जाता है।'

शमी-बिल्व-पलाशानामर्कस्य तु विशेषतः।
पुष्पाणां समिधश्चैव हुत्वा हेममवाप्नुयात् ॥

(गायत्रीपटल २८)

'गायत्री-मन्त्रसे शमी, बेल, पलाश और मदारके पुष्पोंसे और इनकी लकड़ियोंसे एक लाख हवन करनेसे सुवर्णकी प्राप्ति होती है।'

बिल्वानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने।
परां श्रियमवाप्नोति यदि न भ्रूणहा भवेत् ॥
पद्मानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने।
प्राप्नोति राज्यमखिलं सुसम्पन्नमकण्टकम् ॥
पञ्चविंशतिलक्षेण दधि-क्षीरं हुताशने।
स्वदेहे सिद्ध्यते जन्तुः कौशिकस्य मतं यथा ॥
(गायत्रीपटल ३०–३२)

'गायत्री-मन्त्रसे घृतमें मिलाकर बेलकी लकड़ियोंसे अग्निमें एक लाख हवन करनेसे मनुष्यको लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है। यदि वह मनुष्य भ्रूणहा अर्थात् गर्भस्थ शिशुकी हत्या करनेवाला न हो तो गायत्री-मन्त्रके द्वारा घृतसे मिले हुए कमलके पुष्पोंसे एक लाख अग्निमें हवन करनेसे अकण्टक, समस्त सम्पत्तिशाली राज्यकी प्राप्ति होती है। गायत्री-मन्त्रसे गौके दुग्ध और दधिसे पचीस लाख अग्निमें हवन करनेसे मनुष्य इसी शरीरसे सिद्धिको प्राप्त कर लेता है, यह कौशिक (विश्वामित्र) का मत है।'

गोघ्नः पितृघ्न-मातृघ्नौ ब्रह्महा गुरुतल्पगः।
स्वर्णहारी तैलहारी यस्तु विप्रः सुरां पिबेत् ॥
चन्दनद्वयसंयुक्तं कर्पूरं तण्डुलं यवम्।
लवङ्गं सुफलं चाज्यं सिता चाम्रस्य दारुकैः ॥
अयं न्यूनविधिः प्रोक्तो गायत्र्याः प्रीतिकारकः।
एवं कृते महासौख्यं प्राप्नोति साधको ध्रुवम् ॥
अन्नाज्यभोजनं हुत्वा कृत्वा वा कर्म गर्हितम्।
न सीदेत् प्रतिगृह्णानो महीमपि ससागराम् ॥
(गायत्रीपटल ३५–३८)

'गौ, पिता, माता और ब्राह्मणका वध करनेवाला, गुरुपत्नीसे गमन करनेवाला, सुवर्ण और तेलको चुरानेवाला और मद्यपान करनेवाला ब्राह्मण गायत्री-जपसे लाल और सफेद चन्दन, कपूर, चावल, यव, लवंग, सुन्दर फल, घृत और मिश्रीसे तथा आमकी लकड़ीसे एक लाख हवन करनेसे गायत्री देवी हवन करनेवालेके ऊपर प्रसन्न होकर उसको अनेक प्रकारके महान् सुखोंको देती हैं। अज्ञात (अनजान) रूपसे निकृष्ट कार्य करनेपर घीसे मिले हुए अन्नसे अग्निमें हवन करनेसे किये हुए अज्ञात निकृष्ट कार्योंका क्षय हो जाता

है और सागरपर्यन्त पृथ्वीका लेनेवाला भी पतित नहीं हो सकता।'

तत्त्वसंख्यासहस्राणि समन्त्रं जुहुयात् तिलैः।
सर्वपापविनिर्मुक्तो दीर्घमायुश्च विन्दति॥
आयुष्यं साज्यहविषा केवलेनाथ सर्पिषा।
पर्वाङ्कितैस्तिलैर्मन्त्री जुहुयात् त्रिसहस्रकम्॥
अरुणाक्षैस्त्रिमध्वाज्यैः प्रसूनैर्ब्रह्मवृक्षजैः॥

(गायत्रीपद्धति)

'गायत्री-मन्त्रसे तिलोंके द्वारा चौबीस हजार हवन करनेसे मनुष्य समस्त पापोंसे मुक्त हो जाता है और वह दीर्घायुको प्राप्त करता है। दीर्घायुकी कामनाके लिये घीके सहित हविसे अथवा केवल घृतसे अथवा तिलसे गायत्री-मन्त्रद्वारा तीन हजार हवन करे। अरुणाक्ष (मजीठ), मधु, घृत और ब्रह्मवृक्ष (पलाश, गूलर) के पुष्पोंसे विशेष फल प्राप्त होता है।'

'गायत्र्याः लक्षहोमेन मुच्यते सर्वपातकः।'

(बृहद् यमस्मृति)

'गायत्री-मन्त्रके द्वारा लक्ष होम करनेसे मनुष्य समस्त पापोंसे मुक्त हो जाता है।'

इसी प्रकार अनेक पुराणोंमें, स्मृतियोंमें और गायत्रीसम्बन्धी स्तोत्रादिकोंमें भी गायत्रीके हवनका फल विशेष विस्तारसे लिखा है।

गायत्रीके विविध प्रयोग

जानुदघ्ने जले जप्त्वा सर्वान् दोषाञ्छमं नयेत्॥
कण्ठदघ्ने जले जप्त्वा मुच्येत्प्राणान्तिकाद् भयात्।
सर्वेभ्यः शान्तिकर्मभ्यो निमज्याऽप्सु जपः स्मृतः॥

(देवीभागवत ११।२४।५-६)

'जानुपर्यन्त जलमें रहकर गायत्रीका जप करनेसे पुरुषके समस्त दोष शान्त हो जाते हैं। कण्ठपर्यन्त जलमें जप करनेसे प्राणान्तकारी

भय दूर हो जाता है। सभी प्रकारकी शान्तिके लिये जलमें डूबकर गायत्रीका जप करना चाहिये, ऐसा कहा गया है।'

निखने मुच्यते तेभ्यो लिखने मध्यतोऽपि च।
मण्डले शूलमालिख्य पूर्वोक्ते च क्रमेऽपि वा॥
अभिमन्त्र्य सहस्रं तन्निखनेत्सर्वशान्तये।
सौवर्णं राजतं वाऽपि कुम्भं ताम्रमयं च वा॥
मृण्मयं वा नवं दिव्यं सूत्रवेष्टितमव्रणम्।
स्थण्डिले सैकते स्थाप्य पूरयेन्मन्त्रविज्जलैः॥
दिग्भ्य आहृत्य तीर्थानि चतसृभ्यो द्विजोत्तमैः।
एला-चन्दन-कर्पूर-जाती-पाटल-मल्लिकाः ॥
बिल्वपत्रं तथा क्रान्तां देवीं व्रीहियवांस्तिलान्।
सर्षपान् क्षीरवृक्षाणां प्रवालानि च निःक्षिपेत्॥
सर्वाण्यभिविधायैवं कुशकूर्चसमन्वितम्।
स्नातः समाहितो विप्रः सहस्रं मन्त्रयेद् बुधः॥
दिक्षु सौरानधीयीरन् मन्त्रान् विप्रास्त्रयीविदः।
प्रोक्षयेत् पाययेदेनं नीरं तेनाभिषिञ्चयेत्॥
भूतरोगाभिचारेभ्यः स निर्मुक्तः सुखी भवेत्।
अभिषेकेण मुच्येत मृत्योरास्यगतो नरः॥
अवश्यं कारयेद् विद्वान् राजा दीर्घजिजीविषुः।
गावो देयाश्च ऋत्विग्भ्य अभिषेके शतं मुने!॥
दक्षिणा येन वा तुष्टिर्यथाशक्त्याऽथवा भवेत्।
(देवीभागवत ११।२४।१२-२१)

'भूमिमें चतुष्कोण मण्डल लिखकर उसके मध्यमें गायत्री-मन्त्र पढ़कर त्रिशूल धँसा दें। इससे पिशाचोंके आक्रमणसे पुरुष बच सकता है अथवा सब प्रकारकी शान्तिके लिये पूर्वोक्त कर्ममें ही गायत्रीके एक हजार मन्त्रसे अभिमन्त्रित करके त्रिशूल गाड़े। वहीं सुवर्ण, चाँदी, ताँबा अथवा मिट्टीका नवीन दिव्य कलश स्थापित करे। उस कलशमें छिद्र नहीं होना चाहिये। उसे वस्त्रसे वेष्टित कर दे। बालूसे बनी हुई वेदीपर उसे स्थापित करे। मन्त्रज्ञ पुरुष जलसे उस कलशको भर दे। फिर श्रेष्ठ द्विज चारों दिशाओंके तीर्थोंका उसमें आवाहन करे। इलायची, चन्दन, कपूर, जायफल, गुलाब, मालती, बिल्वपत्र, विष्णुक्रान्ता, सहदेवी, धान, यव, तिल, सरसों तथा क्षीरवृक्षवाले वृक्ष

अर्थात् पीपल, गूलर, पाकर और वटके कोमल पल्लव उस कलशमें छोड़ दे। उसमें सताईस कुशोंसे निर्मित एक कूर्च रख दे। यों सभी विधि सम्पन्न हो जानेपर स्नान आदिसे पवित्र हुआ जितेन्द्रिय बुद्धिमान् ब्राह्मण एक हजार गायत्रीके मन्त्रसे उस कलशको अभिमन्त्रित करे। वेदज्ञ ब्राह्मण चारों दिशाओंमें बैठकर सूर्य आदि देवताओंके मन्त्रोंका पाठ करे। साथ ही इस अभिमन्त्रित जलसे प्रोक्षण, पान और अभिषेक करे। इस प्रकारकी विधिको सम्पन्न करनेवाला पुरुष भौतिक-रोगों और उपचारोंसे मुक्त होकर परम सुखी हो सकता है। इस अभिषेकके प्रभावसे मृत्युके मुखमें गया हुआ मनुष्य भी मुक्त हो जाता है। विद्वान् पुरुष दीर्घ समय तक जीवन धारण करनेकी इच्छावाले राजाको ऐसा अनुष्ठान करनेकी अवश्य प्रेरणा करे। मुने! अभिषेक समाप्त हो जानेपर ऋत्विजोंको दक्षिणामें सौ गौएँ दे। दक्षिणा उतनी देनी चाहिये, जिससे ऋत्विक्‌गण सन्तुष्ट हो सकें अथवा जिसकी जैसी शक्ति हो, तदनुसार दक्षिणा दी जा सकती है।'

जपेदश्वत्थमालभ्य मन्दवारे शतं द्विजः ॥
भूतरोगाभिचारेभ्यो मुच्यते महतां भयात्।

(देवीभागवत ११।२४।२१–२२)

'द्विज शनिवारके दिन पीपलके वृक्षके नीचे गायत्रीका सौ बार जप करे। इससे वह भौतिकरोग एवं अभिचारजनित महान् भयसे मुक्त हो जाता है।'

यां दिशं शतजप्तेन लोष्टेनाभिप्रताडयेत् ॥
ततोऽग्निमारुतारिभ्यो भयं तस्य विनश्यति।
मनसैव जपेदेनां बद्धो मुच्येत बन्धनात् ॥
भूतरोगविषादिभ्यः स्पृशञ्जप्त्वा विमोचयेत्।
भूतादिभ्यो विमुच्येत जलं पीत्वाऽभिमन्त्रितम् ॥
अभिमन्त्र्य शतं भस्मन्यसेद् भूतादिशान्तये।
शिरसा धारयेद् भस्म मन्त्रयित्वा तदित्यृचा ॥
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तः सुखी जीवेच्छतं समाः।
अशक्तः कारयेच्छान्तिं विप्रं दत्वा तु दक्षिणाम् ॥

(देवीभागवत ११।२४।३३–३७)

'जो पुरुष सौ बार गायत्री-मन्त्रका जप करके जिस दिशामें लोष्ट-द्वारा प्रताड़न करता है, वहाँ अग्नि, पवन और शत्रुओंसे भय नहीं

हो सकता। इस गायत्रीका जप मानसिक ही करना चाहिये। ऐसा करनेसे बन्धनमें पड़ा हुआ मनुष्य उससे मुक्त हो जाता है। गायत्रीका जप करके कुशसे स्पर्श करता हुआ पुरुष भौतिक रोग और विष आदिके भयसे रोगीको मुक्त कर देता है। गायत्री-मन्त्रसे अभिमन्त्रित जलका पान करके भूत, प्रेत आदिके उपद्रवोंसे मनुष्य मुक्त हो जाते हैं। भूतादिके उपद्रवको शान्त करनेके लिये गायत्री-मन्त्रका सौ बार उच्चारण करके अभिमन्त्रित किये हुए भस्मको सिरपर धारण करे। ऐसा करनेसे पुरुष सम्पूर्ण व्याधियोंसे मुक्त होकर सौ वर्षोंतक सुखपूर्वक जीवन धारण कर सकता है। यदि स्वयं ऐसा करनेमें मनुष्य अशक्त हो तो दक्षिणा देकर ब्राह्मणद्वारा करवानेकी चेष्टा करे।'

क्षीराहारो जपेन्मृत्योः सप्ताहाद् विजयी भवेत्॥
अनश्नन् वाग्यतो जप्त्वा त्रिरात्रं मुच्यते यमात्।
निमज्याऽऽप्सु जपेदेवं सद्यो मृत्योर्विमुच्यते॥
जपेद् बिल्वं समाश्रित्य मासं राज्यमवाप्नुयात्।
(देवीभागवत ११।२४।५२–५४)

'जो पुरुष केवल दूध पीकर गायत्रीका जप करता है, वह एक सप्ताहमें मृत्युपर विजय प्राप्त करता है। यदि मौन रहकर बिना कुछ खाये-पीये जप करे तो तीन रातमें यमके पाशसे मुक्त हो जाता है। यदि जलमें डूबकर जप करे तो उसी क्षण मृत्युसे छुटकारा मिल जाता है। यदि बिल्ववृक्षके नीचे बैठकर जप करे तो एक महीनेमें राज्य मिल सकता है।'

नित्यमञ्जलिनाऽऽत्मानभिषिञ्चेज्जले स्थितः॥
मतिमारोग्यमायुष्यमग्र्यं स्वास्थ्यमवाप्नुयात्।
कुर्याद्विप्रोऽन्यमुद्दिश्य सोऽपि पुष्टिमवाप्नुयात्॥
(देवीभागवत ११।२४।६२–६३)

'जलमें खड़े होकर गायत्री-मन्त्रको पढ़ते हुए प्रतिदिन अञ्जलिसे अपने ऊपर अभिषेक करे। ऐसा करनेसे पुरुष बुद्धि, आरोग्यता, उत्तम आयु और स्वास्थ्य प्राप्त करता है। यदि ब्राह्मण दूसरेके निमित्तसे करे तो उस अन्य पुरुषको भी तुष्टि प्राप्त होती है।'

अथ चारुविधिर्मासं सहस्रं प्रत्यहं जपेत्।
आयुष्कामः शुचौ देशे प्राप्नुयादायुरुत्तमम्॥

आयुरारोग्यकामस्तु जपेन्मासद्वयं द्विजः।
भवेदायुष्यमारोग्यं श्रियै मासत्रयं जपेत्॥
आयुः श्रीपुत्रदाराद्याश्चतुर्भिश्च यशो जपात्।
पुत्रदाराऽऽयुरारोग्यश्रियं विद्यां च पञ्चभिः॥
एवमेवोत्तरान् कामान् मासैरेवोत्तरैर्व्रजेत्।
(देवीभागवत ११।२४।६४–६७)

'आयुकी कामनावाला द्विज किसी पवित्र स्थानमें बैठकर उत्तम विधिके साथ एक मासतक प्रतिदिन एक हजार गायत्री-मन्त्रका जप करे। इससे उत्तम आयुकी प्राप्ति होती है। यदि आयु और आरोग्य दोनोंकी कामना हो तो द्विजको चाहिये कि दो मासतक एक हजार गायत्री-मन्त्रका नियमसे जप करे। आयु, आरोग्यता और लक्ष्मी चाहनेवालेको तीन महीनेतक गायत्री-मन्त्रका जप करना चाहिये। आयु, लक्ष्मी, पुत्र, स्त्री और यशकी कामनावाला द्विज चार मासतक गायत्री-मन्त्रका जप करे। पुत्र, स्त्री, आयु, आरोग्य, लक्ष्मी और विद्या—इनकी कामना करनेवालेको पाँच मासतक एक हजार नियमसे जप करनेका विधान है। यों जितने-जितने मनोरथ अधिक हों, उसीके क्रमसे महीनेकी संख्या भी बढ़ानी चाहिये।'

एकपादो जपेदूर्ध्वबाहुः स्थित्वा निराश्रयः॥
मासं शतत्रयं विप्रः सर्वान् कामानवाप्नुयात्।
एवं शतोत्तरं जप्त्वा सहस्रं सर्वमाप्नुयात्॥
रुद्ध्वा प्राणमपानं च जपेन्मासं शतत्रयम्।
यदिच्छेत्तदवाप्नोति सहस्रात्परमाप्नुयात्॥
एकपादो जपेदूर्ध्वबाहू रुद्ध्वाऽनिलं वशः।
मासं शतमवाप्नोति यदिच्छेदिति कौशिकः॥
एवं शतत्रयं जप्त्वा सहस्रं सर्वमाप्नुयात्।
निमज्याऽऽप्सु जपेन्मासं शतमिष्टमवाप्नुयात्॥
एवं शतत्रयं जप्त्वा सहस्रं सर्वमाप्नुयात्।
(देवीभागवत ११।२४।६७–७२)

'एक पैरपर खड़े होकर बिना किसी अवलम्बके बाहोंको ऊपर उठाये हुए तीन सौ मन्त्रोंका प्रतिदिन महीनेभर जप करनेसे द्विजको सम्पूर्ण कामनाएँ प्राप्त हो जाती हैं। इस प्रकार ग्यारह सौ मन्त्रोंका महीनेभर जप करनेसे द्विजकी कोई भी अभिलाषा अधूरी नहीं रह

सकती। यदि प्राण और अपान वायुको रोककर तीन सौ गायत्री-मन्त्रका एक महीना जप करे तो वह जिस वस्तुकी इच्छा करे, वह उसे प्राप्त हो जाय। यों ग्यारह सौ मन्त्रोंका जप करनेपर पुरुष सर्वस्व पा जाता है। कौशिकजीका कथन है कि एक पैरपर खड़े होकर बाहें ऊपर उठाकर श्वास रोकते हुए सौ मन्त्रोंके क्रमसे एक महीना जप करे तो उसकी यथेष्ट कामनाएँ पूरी हो जाती हैं। इस प्रकार तेरह सौ मन्त्रोंका प्रतिदिन महीनेभर जप करनेसे सम्पूर्ण मनोरथ प्राप्त हो जाते हैं। जलमें डूबकर सौ मन्त्रोंके नियमसे एक मासतक जप करे तो पुरुष अपना अभीष्ट प्राप्त कर लेता है। यों तेरह सौ मन्त्रोंका महीनेभर जप करनेसे द्विजकी सारी कामनाएँ पूर्ण हो जाती है।'

एकपादो जपेदूर्ध्वबाहू रुद्ध्वा निराश्रयः ॥
नक्तमश्नन् हविष्यान्नं वत्सराद् ऋषितामियात्।
गीरमोघा भवेदेवं जप्त्वा सम्बत्सरद्वयम् ॥
त्रिवत्सरं जपेदेवं भवेत् त्रैकालदर्शनम्।
आयाति भगवान् देवश्चतुः सम्बत्सरं जपेत् ॥
पञ्चभिर्वत्सरैरेवमणिमादिगुणो भवेत्।
एवं षड्वत्सरं जप्त्वा कामरूपित्वमाप्नुयात् ॥
सप्तभिर्वत्सरैरेवममरत्वमवाप्नुयात् ।
मनुत्वं नवभिः सिद्धमिन्द्रत्वं दशभिर्भवेत् ॥
एकादशभिराप्नोति प्राजापत्यं सुवत्सरैः।
ब्रह्मत्वं प्राप्नुयादेवं जप्त्वा द्वादश वत्सरान् ॥
(देवीभागवत ११।२४।७२-७७)

'यदि एक पैरसे, बिना किसी सहारे बाहें ऊपर उठाकर खड़े होकर एक वर्षतक गायत्री का जप करे और रात्रिमें केवल हविष्यान्न खावे तो वह पुरुष 'ऋषि' हो जाता है। यों यदि दो वर्षतक गायत्रीका जप करे तो उसकी वाणी अमोघ हो जाती है अर्थात् वह जो कहता है, सो हो जाता है। इस नियमसे तीन वर्षोंतक जप करनेपर मनुष्य त्रिकालदर्शी हो जाता है। यदि चार वर्षोंतक जप करे तो स्वयं भगवान् सूर्य उसके सामने आकर दर्शन देते हैं। पांच वर्षोंतक जप करनेसे अणिमादि सिद्धियोंकी प्राप्ति होती है। इस प्रकार यदि छः वर्षोंतक जप करे तो पुरुषमें इच्छानुसार रूप धारण करनेकी योग्यता प्राप्त हो जाती है। सात वर्षोंतक जप करनेसे देवत्व,

नौ वर्षोंतक जप करनेसे मनुष्यत्व और दस वर्षोंतक जप करनेसे इन्द्रपद प्राप्त हो सकता है : ग्यारह वर्षोंतक जप करनेसे पुरुष प्रजापति तथा बारह वर्षोंके जप करनेसे ब्रह्माकी योग्यता प्राप्त हो जाती है।'

अथ शुद्ध्यै रहस्यानां त्रिसहस्रं जपेद् द्विजः ॥
मासं शुद्धो भवेत् स्तेयात्सुवर्णस्य द्विजोत्तमः ।
जपेन्मासं त्रिसाहस्रं सुरापः शुद्धिमाप्नुयात् ॥
मासं जपेत् त्रिसाहस्रं शुचिः स्यात् गुरुतल्पगः ।
त्रिसहस्रं जपेन्मासं कुटीं कृत्वा वने वसन् ॥
ब्रह्महा मुच्यते पापादिति कौशिकभाषितम् ।
द्वादशाहं निमज्याप्सु सहस्रं प्रत्यहं जपेत् ॥
मुच्येरन्नंहसः सर्वे महापातकिनो द्विजाः ।
त्रिसाहस्रं जपेन्मासं प्राणानायम्य वाग्यतः ॥
महापातकयुक्तो वा मुच्यते महतो भयात् ।
प्राणायामसहस्रेण ब्रह्महापि विशुद्ध्यति ॥
षट्कृत्वस्त्वभ्यसेदूर्ध्वं प्राणापानौ समाहितः ।
प्राणायामो भवेदेष सर्वपापप्रणाशनः ॥
सहस्रमभ्यसेन्मासं क्षितिपः शुचितामियात् ।
द्वादशाहं त्रिसाहस्रं जपेद्धि गोवधे द्विजः ॥
अगम्याऽऽगमनस्तेयहननाभक्ष्यभक्षणे ।
दशसाहस्रमभ्यस्ता गायत्री शोधयेद् द्विजम् ॥
प्राणायामशतं कृत्वा मुच्यते सर्वकिल्विषात् ।
सर्वेषामेव पापानां सङ्करे सति शुद्धये ॥
सहस्रमभ्यसेन्मासं नित्यजापी वने वसन् ।
उपवाससमं जप्यं त्रिसहस्रं तदित्यृचम् ॥
चतुर्विंशति साहस्रमभ्यस्तात्कृच्छ्रसंज्ञिता ।
चतुःषष्टिसहस्राणि चान्द्रायणसमानि तु ॥
शतकृत्वोऽभ्यसेन्नित्यं प्राणानायम्य सन्ध्ययोः ।
तदित्यृचमवाप्नोति सर्वपापक्षयं परम् ॥
निमज्याप्सु जपेन्नित्यं शतकृत्वस्तदित्यृचम् ।
ध्यायन् देवीं सूर्यरूपां सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥

(देवीभागवत ११।२४।८०-९३)

'अब पातकोंकी शुद्धिके लिये द्विजको चाहिये कि तीन हजार गायत्री-मन्त्रका जप करे। एक महीनेतक प्रतिदिन तीन हजार गायत्री-जप करनेसे सुवर्णकी चोरीके पापसे उत्तम द्विज मुक्त हो जाता है। यदि महीनेभर प्रतिदिन तीन हजार गायत्री-जप करे तो सुरा-पानके पापसे शुद्धि हो जाती है। प्रतिदिन तीन हजार गायत्री-मन्त्र-का महीनेभर जप करनेवाला मनुष्य यदि गुरुतल्पगामी हो तो भी पवित्र हो जाता है। वनमें कुटी बनाकर वहीं रहते हुए एक महीनेतक प्रतिदिन तीन हजार गायत्रीका जप करे। कौशिक मुनि कहते हैं कि ऐसा करनेसे पुरुष ब्रह्महत्याके पापसे मुक्त हो जाता है। जलमें डूबकर बारह दिनोंतक प्रतिदिन एक-एक हजार गायत्रीका जप करे तो महान् पापी द्विज समस्त पापोंसे छूट जाता है। प्राणायाम-पूर्वक मौन होकर एक मासतक प्रतिदिन तीन हजार गायत्रीका जप करनेसे महान् पातकी व्यक्ति भी असीम भयसे मुक्त हो जाता है। एक हजार प्राणायाम करनेसे ब्रह्महत्यारा भी शुद्ध हो सकता है। प्राण और अपान-वायुको ऊपर चढ़ाकर संयमपूर्वक गायत्री-मन्त्रका छः बार अभ्यास करे। यह प्राणायाम सम्पूर्ण पापोंका नाशक है। मास-पर्यन्त प्रतिदिन एक हजार गायत्रीका अभ्यास करनेसे राजा पवित्र हो जाता है। द्विजको चाहिये कि यदि गोवधकी हत्या लग जाय, तो उसकी शुद्धिके लिये बारह दिनोंतक तीन-तीन हजार गायत्रीका जप करे। दस हजार गायत्रीका जप द्विजको अगम्यागमन, चोरी, प्राणिहिंसा और अभक्ष्यभक्षणके पापसे शुद्ध कर देता है। सौ बार प्राणायाम करके पुरुष समस्त पापोंसे छूट जाता है। यदि पुरुष सम्पूर्ण मिश्रित पापोंसे ग्रस्त हो गया हो तो उनकी शुद्धिके लिये वनमें रह-कर एक मासतक प्रतिदिन गायत्रीके एक हजार मन्त्रोंका अभ्यास करना चाहिये। चौबीस हजार गायत्रीके अभ्यासको 'कृच्छ्रव्रत' कहते हैं। चौसठ हजार गायत्रीका जप 'चान्द्रायणव्रत' के समान है। यदि प्रातः और सायं दोनों सन्ध्याओंके समय प्रतिदिन प्राणायाम करके गायत्रीके सौ मन्त्रका जप किया जाय तो उससे समस्त पापोंका क्षय हो जाता है। जलमें डूबकर सूर्यमयी गायत्री देवीका ध्यान करते हुए त्रिपदा गायत्रीका प्रतिदिन सौ बार जप करनेवाला पुरुष समस्त पापोंसे छुटकारा पा जाता है।'

गायत्री-मन्त्र-जप-सिद्ध एक ऋषिकुमारकी कथा

महाभारतके शान्तिपर्वमें लिखा है—महर्षि पिप्पलपादके पुत्र सुशर्माने कई वर्षतक निरन्तर श्रद्धा-भक्तिपूर्वक गायत्री-मन्त्रका अनुष्ठान किया। व्रतके अन्तमें भगवती सावित्रीने उसके अनुष्ठानसे सन्तुष्ट हो दर्शन देकर कहा—'पुत्र ! मैं तेरी तपस्यासे पूर्ण सन्तुष्ट हूँ, वर माँग।' उस समय ऋषिकुमार अपने जपयज्ञमें इतना तन्मय हो रहा था कि उसने सावित्रीकी ओर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। थोड़ी देरमें जप समाप्त होनेपर वह स्वयं उठा और भगवतीको सम्मुख खड़ी देख साष्टाङ्ग प्रणामकर बोला—"मातः ! 'यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं, तो यह वर दीजिये कि मेरा मन इसी प्रकार आपके ध्यानमें लगा रहे।" इस पर सावित्रीजी 'तथास्तु' कहकर अन्तर्ध्यान हो गईं। इसके अनन्तर ऋषिकुमार एक सौ वर्षके गायत्री-जपानुष्ठानका संकल्पकर फिर जपमें तत्पर हो गया। एक सौ वर्ष पूर्ण होनेपर भगवती सावित्री, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, यम, वरुण आदि देवताओंने उसे दर्शन देकर अपनी प्रसन्नता प्रकट की और कहा—"वत्स ! हम तेरी तपस्यासे प्रसन्न हैं, तू धन, ऐश्वर्य, पुत्र, कलत्र आदि ऐहलौकिक सम्पत्ति अथवा स्वर्ग-सुख-भोग वा अन्य उत्तम लोककी प्राप्ति आदि पारलौकिक अभीष्ट पदार्थ यथेच्छ माँग ले।"

ऐसा सुन, ऋषिकुमारने विनयपूर्वक सबको प्रणामकर निवेदन किया—"पूज्य महानुभावो ! मैं समस्त आशाओंका परित्याग कर चुका हूँ। मुझको भोग्य वस्तुकी अभिलाषा नहीं है। वर्तमान स्थितिमें सन्तुष्ट हूँ।" इस पर समस्त देवगण आशीर्वाद देते हुए अपने-अपने धाममें चले गये। इसी समय महाराज इक्ष्वाकु तीर्थयात्रा-प्रसंगसे इस ऋषिकुमारके आश्रममें आ गये ऋषिकुमारके सदाचरणसे प्रसन्न हो सम्मानपूर्वक बोले—"ऋषिकुमार ! यदि आपको धन, वैभव, भूमि अथवा अन्य किसी अभीष्ट पदार्थकी इच्छा हो, तो कहिये, मैं आपकी भेंट करूँ।" ऋषिकुमारने कहा—"महाराज ! मुझको तो किसी वस्तुकी आकाँक्षा नहीं है। हाँ यदि आपको किसी अभीष्ट वस्तुकी इच्छा हो तो कहिये ! मैं तपके प्रभावसे आपकी अभिलाषा पूर्ण करूँगा।" महाराज बोले—"यदि ऐसा है तो आप मुझको अपने गायत्री-जपका फल दे दीजिये।"

इस पर ऋषिकुमार प्रसन्न हो जपका फल राजाको देनेके लिये उद्यत हो गये और बोले—"लीजिये"। परन्तु धर्मभीरु राजाको इससे बहुत आश्चर्य और संकोच हुआ। वे बोले—"ऋषे! मैं क्षत्रिय हूँ। आपसे दान नहीं ले सकता।" ऋषिकुमारने कहा—"महाराज! स्वयं माँगकर क्यों नहीं लेते? अब तो आपको लेना ही होगा।" इस पर वाद-विवाद बढ़ा और अन्तमें यह समझौता हुआ कि परस्पर आदान-प्रदान किया जाय। महाराजका भी पुण्यसंचय अपरिमित था। अतः राजाने ऋषिकुमारके गायत्री-जपका फल ले लिया और ऋषिकुमारने धर्मात्मा इक्ष्वाकुके पुण्यकर्मोंका फल ग्रहण कर लिया। पश्चात् ऋषिकुमार पुनः अपने उसी परिचित गायत्री-ध्यानमें लीन हो गया। इसी अवस्थामें एक दिन इसके कपाल-केन्द्रसे देदीप्यमान एक ज्योति निकलकर 'भूर्भुवः स्वः' आदि लोकोंका अतिक्रमण करती हुई सत्यलोकमें पहुँची, जहाँ ब्रह्माजीने उसका हार्दिक स्वागत किया और उसकी प्रशंसा करते हुए बोले—"जो परम गति असम्प्रज्ञात-समाधि-साधक योगियोंको एवं हरि-प्रदत्त भक्तोंको प्राप्त होती है, वही आनन्ददा गति गायत्रीके विधिपूर्वक जपनेवालेको मिलती है।" इतनेमें ही वह ज्योति ब्रह्माजीके मुखमें प्रविष्ट हो गई।

कथाका सार यह है कि जो द्विज परम पावन गायत्री-मन्त्रका जप करते हैं, वे इस लोकमें अभ्युदय और परलोकमें निःश्रेयस (मुक्ति) की प्राप्ति करते हैं।

ब्रह्माजीके यज्ञका वर्णन

[ब्रह्माजीने पुष्कर-तीर्थमें यज्ञ किया। उस यज्ञमें उन्होंने गोपकन्यासे अपना विवाह किया। गोपकन्याके साथ विवाह करनेके कारण सावित्रीने क्रुद्ध होकर ब्रह्मा आदि देवताओं, देवपत्नियों और ब्राह्मण आदिको शाप दिया। पश्चात् गायत्री देवीने शापित देवी-देवता आदिको शापसे मुक्तकर उन्हें वरदान देकर सन्तुष्ट किया।]

कृतयुगमें ब्रह्माजीने देवताओं और मनुष्योंके कल्याणके लिये पुष्करतीर्थमें यज्ञ किया। उन्होंने अध्वर्युको सावित्रीके पास भेजा और कहलाया कि—'यज्ञके प्रारम्भका शुभ मुहूर्त व्यतीत होना चाहता

है, अतः वह यज्ञस्थलमें शीघ्र आ जावे, जिससे यज्ञ प्रारम्भ किया जाय। जब अध्वर्युने सावित्रीके पास पहुँचकर ब्रह्माका सन्देश सुनाया, तब उन्होंने कहा—'मेरी लक्ष्मी आदि सखियाँ इस समय उपस्थित नहीं हैं, इसलिये मैं अभी अकेली नहीं जाऊँगी। जब सखियाँ आ जायँगी, तब मैं उन सखियोंको साथ लेकर यथासमय यज्ञमण्डपमें पहुँच जाऊँगी।'

जब अध्वर्युने सावित्रीका समाचार ब्रह्माजीको सुनाया, तो वे अत्यन्त क्रुद्ध होकर देवराज इन्द्रसे बोले—'यज्ञमें देर हो रही है, इसलिये आप मेरे लिये किसी दूसरी पत्नीको ढूँढ़ लाइये।' ब्रह्माकी आज्ञानुसार इन्द्र कन्याको ढूँढ़ने लगे, तो उनको मार्गमें एक सुन्दरी कन्या मिल गई। इन्द्रने उस कन्यासे पूछा—'तुम कौन हो और क्या काम करती हो?' तब उस कन्याने कहा—'मैं आभीरकन्या (गोप-कन्या) हूँ और दुग्ध बेचनेके लिये जा रही हूँ।' इन्द्रने उस गोप-कन्याको पकड़ लिया और उसे ब्रह्माके पास ले जानेके लिये अपने साथ ले लिया। इन्द्रके साथ जाती हुई गोपकन्याने मार्गमें इन्द्रसे कहा—'यदि आपको दुग्ध, दधि, मक्खनकी आवश्यकता हो, तो यथेच्छ ले सकते हैं। व्यर्थमें मुझे पकड़कर अपने साथ क्यों ले जा रहे हैं?' जब इन्द्रने गोपकन्याकी बात नहीं सुनी, तो वह दुःखित होकर अपनी रक्षार्थ अपने माता, पिता, भाई आदिको पुकारने लगी 'एक मनुष्य मुझे बलात् पकड़कर अपने साथ ले जा रहा है, आपलोग मेरी रक्षा करें और वह गोपकन्या इन्द्रसे यह भी कहती रही कि—यदि आपको मेरेसे कुछ काम है, तो आप मेरे माता, पितासे मुझको माँग लीजिये। मेरे माता, पिता धर्मवत्सल हैं, वे अवश्य ही मुझे आपको दे देंगे।' इन्द्रने गोपकन्याकी एक बात भी न सुनी और वह उसे ब्रह्माके पास यज्ञमण्डपमें ले आये। गोपकन्याको जब यह ज्ञात हुआ कि ब्रह्माजी मुझे अपनी पत्नी बनाकर यज्ञ करेंगे, तो वह अत्यन्त सन्तुष्ट हुई और उसने अपनेको भाग्यशालिनी समझा। पश्चात् ब्रह्माने विष्णुकी आज्ञासे उस गोपकन्याके साथ अपना 'गान्धर्व-विवाह' कर उस गोपकन्याका नाम 'गायत्री' रख दिया और अपना यज्ञ-कार्य प्रारम्भ किया।

ब्रह्माजीका यज्ञ हो रहा था, उसी बीचमें सावित्री अपनी समस्त सखियोंके साथ ब्रह्माजीके समीप यज्ञमण्डपमें उपस्थित हो गई। वहाँ ब्रह्माजीके समीप पत्नीके रूपमें गोपकन्याको बैठी हुई देखकर

सावित्री बहुत कुपित हुई और उन्होंने ब्रह्मासे कहा—'आपने मेरा परित्यागकर गोपकन्याको अपनी पत्नी बनाकर जो यज्ञकार्य प्रारम्भ किया है, यह बहुत बड़ा पाप है। यह गोपकन्या मेरे पैरकी धूलिकी भी समानता नहीं कर सकती।' ब्रह्माजीने उत्तर दिया—'तुमको मैंने यज्ञार्थ बुलाया था। तुमने यहाँ आनेमें देर की, जिससे मेरे यज्ञका मुहूर्त बीत रहा था, अतः विवश होकर मैंने देवराज इन्द्रके द्वारा इस गोपकन्याको प्राप्त किया और भगवान् विष्णुकी आज्ञासे इसके साथ मैंने 'गान्धर्वविवाह' कर लिया। अतः विवशतावश मुझसे जो अपराध हो गया है, उसे क्षमा करो।'

कुपित सावित्रीने ब्रह्माको शाप दिया कि—'तुम्हारी पूजा केवल पुष्करतीर्थमें ही होगी, अन्यत्र न होगी।' पश्चात् उन्होंने देवराज इन्द्रको, भगवान् शिवको, कृष्णको, अग्नि आदि देवताओंको, ऋत्विजों एवं ब्राह्मणोंको तथा इन्द्राणीको, देवपत्नियोंको और गौको विविध रूपमें पृथक्-पृथक् शाप दिया।

सावित्रीके द्वारा ब्रह्मा आदि देवताओं और देवपत्नियों एवं ब्राह्मणादिको शाप देनेसे गायत्रीको अत्यन्त दुःख हुआ और उन्होंने कहा—ब्रह्माजीके साथ विवाह हो जानेके कारण अब मैं समस्त वेदोंकी माता गायत्री देवी हूँ। अतः श्रद्धा-भक्तिपूर्वक मेरा जप (गायत्री-जप) किया जाय, तो दस जन्मके ब्रह्महत्या जैसे भयङ्कर पाप भी तत्काल नष्ट हो जाते हैं और जप करनेवाले परम पवित्र हो जाते हैं। अतः मैं देवी-देवता एवं ब्राह्मणोंको वरदान देती हूँ कि—'आपलोगोंको सावित्रीके द्वारा दिया हुआ शाप व्यर्थ हो जायगा।

(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड १६ तथा १७ अध्याय)

गायत्रीके उच्चारण और जपका महत्त्व

गायत्र्युच्चारमात्रेण पापकूटात्पुनाति च।
स्वर्गापवर्गमाप्नोति जप्त्वा नित्यं द्विजोत्तमः॥

(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ४८।१९७-१९८)

'गायत्रीके उच्चारणमात्रसे पापराशिसे छुटकारा मिल जाता है और वह मनुष्य पवित्र हो जाता है और जो द्विजश्रेष्ठ प्रतिदिन गायत्रीका जप करता है, उसे स्वर्ग और मोक्ष—ये दोनों प्राप्त होते हैं।'

गायत्रीके स्वयं पाठ करनेका और दूसरोंसे श्रवण करनेका महत्त्व

गायत्रीं विस्तराद् दिव्यां पठेदेव शृणोति च ।
मुच्यते सर्वपापेभ्यः परं ब्रह्माधिगच्छति ॥

ब्रह्माजी कहते हैं—जो दिव्य गायत्री-मन्त्रका विस्तारसे पाठ (जप) करता है और श्रवण करता है, वह समस्त पापोंसे मुक्त हो जाता है और परब्रह्म पदको प्राप्त करता है ।'

'गायत्री' शब्दकी बार-बार आवृत्ति करनेका महत्त्व

जिनको गायत्री-मन्त्रके उच्चारणका अधिकार नहीं है, उनको केवल 'गायत्री-गायत्री' इस प्रकार शब्दोच्चारण करना चाहिये । गायत्री-गायत्री शब्दोच्चारणमात्रसे ही मनुष्य समस्त पापोंसे मुक्त होकर परब्रह्म-पदको प्राप्त करता है ।

गायत्रीति पदावृत्त्या तत्फलं प्राप्नुवन् नरः ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो ब्रह्मलोकं स गच्छति ॥

'गायत्री इस पदकी बार-बार आवृत्ति करनेसे (बार-बार कहनेसे) गायत्री-जपका फल प्राप्त करता हुआ मनुष्य समस्त पापोंसे मुक्त होकर ब्रह्मलोकको प्राप्त करता है ।'

गायत्री-मन्त्रके गुणोंके कीर्तन सुननेका फल

न तेषां विद्यते दुःखं गच्छन्ति परमां गतिम् ।
ये शृण्वन्ति महद्ब्रह्म सावित्रीगुणकीर्तनम् ॥

(महाभारत, अनुशासनपर्व २५५।७२)

'जो परब्रह्म-स्वरूप गायत्री-मन्त्रके गुणोंका कीर्तन सुनते हैं, उन्हें कभी दुःख नहीं होता तथा वे परम गतिको प्राप्त होते हैं ।'

गायत्री-मन्त्रके श्रवणका महत्त्व

आयुष्मान् भवते चैव यं श्रुत्वा पार्थिवात्मज।
पुरुषस्तु सुसिद्धार्थः प्रेत्य चेह च मोदते॥

(महाभारत, अनुशासनपर्व २५५।७)

'राजकुमार ! जो गायत्री-मन्त्रको सुनता है, वह पुरुष दीर्घजीवी और सफल मनोरथ होता है और वह इहलोक तथा परलोकमें भी आनन्द भोगता है।'

गायत्रीके स्मरणका महत्त्व

'गायत्रीं संस्मरेद्योगात् स याति ब्रह्मणः पदम्।'

(वृद्ध पाराशरस्मृति ५।७८)

'जो गायत्रीका स्थिरचित्त होकर स्मरण करता है, वह ब्रह्म-पदको प्राप्त करता है।'

गायत्रीके ध्यानका महत्त्व

ब्रह्माने गायत्री मातासे कहा है—

कुर्वन्तोऽपीह पापानि ये त्वां ध्यायन्ति पावनि !।
उभे सन्ध्ये न तेषां हि विद्यते देवि पातकम्॥

(अग्निपुराण)

'हे पवित्र करनेवाली गायत्रि ! इस संसारमें पाप करनेपर भी जो प्रातःकाल और सायंकाल तुम्हारा ध्यान करते हैं, हे देवि ! निश्चित ही उनके पाप नहीं रहते।'

चारों वेदोंमें गायत्री-मन्त्र

गायत्री-मन्त्र चारों वेदोंमें पाया जाता है—

ऋग्वेद, शाकलसंहिता ३।६२।१०। शुक्ल यजुर्वेद, माध्यन्दिनीय-संहिता ३।३५, २२।६, ३०।२, ३६।३। कृष्णयजुर्वेद, तैत्तिरीयसंहिता

१।५।६।१२, १।५।८।१०, ४।१।११।७ तथा कृष्णयजुर्वेद, मैत्रायणीसंहिता ४।१०।७७। सामवेद, कौथुमसंहिता, उत्तरार्चिक १३।३।३ तथा १३।४।३।१। अथर्ववेद, शौनकसंहिता १९।७१।१।

वर्णत्रयकी भिन्न-भिन्न गायत्री

ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यके लिये पृथक्-पृथक् गायत्री इस प्रकार लिखी है—

गायत्रीं ब्राह्मणाय अनुब्रूयात्। त्रिष्टुभं राजन्यस्य। जगतीं वैश्यस्य।

(पारस्करगृह्यसूत्र २।३।७–९)

इसी प्रकार वाराहगृह्यसूत्र (पाँचवाँ खण्ड), मानवगृह्यसूत्र (१।२।३), वशिष्ठधर्मसूत्र (४।३) और ऐतरेयब्राह्मण (१।५।२८) में वर्णत्रयकी गायत्री कही गयी है।

ब्राह्मणके लिये गायत्रीछन्दकी गायत्री कही गयी है। अतः ब्राह्मणके उपनयनमें गायत्रीछन्दकी गायत्रीका उपदेश होता है। गायत्रीछन्दकी गायत्रीमें ८ अक्षर होते हैं, अतः ब्राह्मणका ८वें वर्षमें उपनयन लिखा है।

क्षत्रियके लिये त्रिष्टुप्छन्दकी गायत्री कही गयी है। अतः क्षत्रियके उपनयनमें त्रिष्टुप्छन्दकी गायत्रीका उपदेश होता है। त्रिष्टुप्छन्दकी गायत्रीमें ११ अक्षर होते हैं, अतः क्षत्रियका ११वें वर्षमें उपनयन कहा गया है।

वैश्यके लिये जगतीछन्दकी गायत्री कही गयी है। अतः वैश्यके उपनयनमें जगतीछन्दकी गायत्रीका उपदेश होता है। जगतीछन्दकी गायत्रीमें १२ अक्षर होते हैं, अतः वैश्यका १२वें वर्षमें उपनयन कहा गया है।

गृह्यसूत्रोंमें ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यके लिये भिन्न-भिन्न छन्दकी गायत्रीका उल्लेख किया गया है, किन्तु सभी वर्ण गायत्रीछन्दवाली गायत्री ('**ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम्०**' शु० य० ३६।३) का भी उच्चारण कर सकते हैं—'**सर्वेषां वा गायत्रीम्**' (पारस्कर-गृह्यसूत्र २।३।१०)।

वर्त्तमान समयमें उपनयनके समय गुरु (आचार्य) त्रैवर्णिकोंको गायत्रीछन्दवाली 'त्रिपदा-गायत्री' का उपदेश करते हैं। इसीलिये सभी त्रैवर्णिक गायत्रीछन्दवाली 'त्रिपदा-गायत्री' का ही जप और अनुष्ठान करते हैं।

यद्यपि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यके लिये क्रमशः गायत्रीछन्द, त्रिष्टुप्छन्द एवं जगतीछन्दकी गायत्रीमें मुख्य अधिकार कहा गया है, तथापि गायत्रीछन्दकी गायत्रीमें भी सबका अधिकार है।

ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यके लिये जिस-जिस गायत्रीका अधिकार लिखा है, तदनुसार वे अपनी-अपनी निर्दिष्ट गायत्रीका भी जप कर सकते हैं।

जो ब्राह्मण गायत्रीछन्दकी गायत्रीका जप करता है, वह ब्रह्मतेजको प्राप्त करता है।

जो क्षत्रिय त्रिष्टुप्छन्दकी गायत्रीका जप करता है, वह उत्कृष्ट प्रतापको प्राप्त करता है।

जो वैश्य जगतीछन्दकी गायत्रीका जप करता है, वह धन, धान्य आदि विविध ऐश्वर्योंको प्राप्त करता है।

वर्णत्रयकी गायत्रीके मन्त्र

ब्राह्मणकी गायत्री—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्॥ (शुक्लयजुर्वेद ३६।३)

क्षत्रियकी गायत्री—

(क) **ॐ देवसवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाजं नः स्वदतु स्वाहा॥** (शुक्लयजुर्वेद ९।१)

(ख) **ॐ ताᳪं सवितुर्वरेण्यस्य चित्रामाहं वृणे सुमतिं विश्वजन्याम्। यामस्य कण्वो अदुहत्प्रपीनाᳪं सहस्रधारां पयसा महीं गाम्॥** (शुक्लयजुर्वेद १७।७४)

१।५।६।१२, १।५।८।१०, ४।१।११।७ तथा कृष्णयजुर्वेद, मैत्रायणी-संहिता ४।१०।७७। सामवेद, कौथुमसंहिता, उत्तरार्चिक १३।३।३ तथा १३।४।३।१। अथर्ववेद, शौनकसंहिता १९।७१।१।

वर्णत्रयकी भिन्न-भिन्न गायत्री

ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यके लिये पृथक्-पृथक् गायत्री इस प्रकार लिखी है—

गायत्रीं ब्राह्मणाय अनुब्रूयात्। त्रिष्टुभं राजन्यस्य। जगतीं वैश्यस्य।

(पारस्करगृह्यसूत्र २।३।७–९)

इसी प्रकार वाराहगृह्यसूत्र (पाँचवाँ खण्ड), मानवगृह्यसूत्र (१।२।३), वशिष्ठधर्मसूत्र (४।३) और ऐतरेयब्राह्मण (१५।२८) में वर्णत्रयकी गायत्री कही गयी है।

ब्राह्मणके लिये गायत्रीछन्दकी गायत्री कही गयी है। अतः ब्राह्मणके उपनयनमें गायत्रीछन्दकी गायत्रीका उपदेश होता है। गायत्रीछन्दकी गायत्रीमें ८ अक्षर होते हैं, अतः ब्राह्मणका ८वें वर्षमें उपनयन लिखा है।

क्षत्रियके लिये त्रिष्टुप्छन्दकी गायत्री कही गयी है। अतः क्षत्रियके उपनयनमें त्रिष्टुप्छन्दकी गायत्रीका उपदेश होता है। त्रिष्टुप्छन्दकी गायत्रीमें ११ अक्षर होते हैं, अतः क्षत्रियका ११वें वर्षमें उपनयन कहा गया है।

वैश्यके लिये जगतीछन्दकी गायत्री कही गयी है। अतः वैश्यके उपनयनमें जगतीछन्दकी गायत्रीका उपदेश होता है। जगतीछन्दकी गायत्रीमें १२ अक्षर होते हैं, अतः वैश्यका १२वें वर्षमें उपनयन कहा गया है।

गृह्यसूत्रोंमें ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यके लिये भिन्न-भिन्न छन्दकी गायत्रीका उल्लेख किया गया है, किन्तु सभी वर्ण गायत्रीछन्दवाली गायत्री (**'ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम्०'** शु० य० ३६।३) का भी उच्चारण कर सकते हैं—**'सर्वेषां वा गायत्रीम्'** (पारस्कर-गृह्यसूत्र २।३।१०)।

वर्तमान समयमें उपनयनके समय गुरु (आचार्य) त्रैवर्णिकोंको गायत्रीछन्दवाली 'त्रिपदा-गायत्री' का उपदेश करते हैं। इसीलिये सभी त्रैवर्णिक गायत्रीछन्दवाली 'त्रिपदा-गायत्री' का ही जप और अनुष्ठान करते हैं।

यद्यपि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यके लिये क्रमशः गायत्रीछन्द, त्रिष्टुप्छन्द एवं जगतीछन्दकी गायत्रीमें मुख्य अधिकार कहा गया है, तथापि गायत्रीछन्दकी गायत्रीमें भी सबका अधिकार है।

ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यके लिये जिस-जिस गायत्रीका अधिकार लिखा है, तदनुसार वे अपनी-अपनी निर्दिष्ट गायत्रीका भी जप कर सकते हैं।

जो ब्राह्मण गायत्रीछन्दकी गायत्रीका जप करता है, वह ब्रह्म-तेजको प्राप्त करता है।

जो क्षत्रिय त्रिष्टुप्छन्दकी गायत्रीका जप करता है, वह उत्कृष्ट प्रतापको प्राप्त करता है।

जो वैश्य जगतीछन्दकी गायत्रीका जप करता है, वह धन, धान्य आदि विविध ऐश्वर्योंको प्राप्त करता है।

वर्णत्रयकी गायत्रीके मन्त्र

ब्राह्मणकी गायत्री—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्॥ (शुक्लयजुर्वेद ३६।३)

क्षत्रियकी गायत्री—

(क) **ॐ देवसवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाजं नः स्वदतु स्वाहा॥** (शुक्लयजुर्वेद ९।१)

(ख) **ॐ ताँ सवितुर्वरेण्यस्य चित्रामाहं वृणे सुमतिं विश्वजन्याम्। यामस्य कण्वो अदुहत्प्रपीनाँ सहस्रधारां पयसा महीं गाम्॥** (शुक्लयजुर्वेद १७।७४)

(ग) ॐ आ देवो यातु सविता सुरत्नोऽन्तरिक्षप्रा वहमानो अश्वैः। हस्ते दधानो नर्या पुरूणि निवेशयञ्च प्रसुवञ्च भूम॥ (ऋग्वेद ७।४५।१)

वैश्यकी गायत्री—

(क) ॐ विश्वा रूपाणि प्रतिमुञ्चते कविः प्रासावीद् भद्रं द्विपदे चतुष्पदे।

वि नाकमख्यत्सविता वरेण्योऽनु प्रयाणमुषसो विराजति॥ (शुक्लयजुर्वेद १२।३)

(ख) ॐ युञ्जते मन ऽउत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः। वि होत्रा दधे वयुनाविदेक ऽइन्मही देवस्य सवितुः परिष्टुतिः॥ (शुक्लयजुर्वेद ३७।२)

(ग) ॐ युञ्जते मन उत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः। वि होत्रा दधे वयुनाविदेक इन्मही देवस्य सवितुः परिष्टुतिः॥ (ऋग्वेद ५।८१।१)

वेदाधिकार-रहितोंका गायत्री-मन्त्र

ह्रीं यो देवः सविताऽस्माकं मनः प्राणेन्द्रियक्रियाः।
प्रचोदयति [1]तद् भर्गं वरेण्यं समुपास्महे॥

ब्रह्म-गायत्री

ॐ भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्॥ (शुक्लयजुर्वेद ३६।३)

---

१. तद् भर्गो।

[1]शताक्षरा गायत्री

"ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥ ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्॥ ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः॥" यह सौ अक्षरकी गायत्री है।

गायत्री-मन्त्रके उच्चारणकी विधि

"चतुर्विंशत्यक्षरां तु गायत्रीं प्रजपन् हृदि।"

(संस्काररत्नमाला)

—के अनुसार चौबीस अक्षरका गायत्री-मन्त्र प्रसिद्ध है। स्वर और अक्षर पर्यायवाची हैं। गायत्री-मन्त्रमें २३ स्वर (अक्षर) हैं, २४ नहीं। अतः 'इयादिपूरणः' (पिङ्गलछन्दसूत्र ३।२) इस सूत्रसे 'इय्' आदेश करके 'वरेण्यम्' की जगह 'वरेणियम्' ऐसी भावना करके २४ अक्षर समझना चाहिये। 'वरेण्यम्' में 'वरेणियम्' की भावना करनी चाहिये, किन्तु उच्चारण नहीं। उच्चारण तो जप-कालमें 'वरेण्यम्' ऐसा ही होता है। गायत्र्युपदेश कालमें 'वरेण्यम्' का ही उपदेश होता है। अतः जिस प्रकार गायत्र्युपदेश कालमें 'वरेण्यम्' का उपदेश होता है, उसी प्रकार जपकालमें भी गायत्री-मन्त्रमें 'वरेण्यम्' ही उच्चारण करना चाहिये। इसी अभिप्रायको 'संस्काररत्नमाला' में भी लिखा है—

चतुर्विंशत्यक्षरां तु गायत्रीं प्रजपन् हृदि।
सर्वान् वर्णानभिध्यायेद् देवतामर्थमेव च॥

'अक्षरशब्दः स्वरेषु वर्त्तते। तत्र यद्यपि स्वरास्त्रयोविंशतिरेव गायत्रीमन्त्रे वर्तन्ते, तथापि ण्यमित्यत्र भावनया णियमिति स्वरद्वयं ज्ञेयम्।'

उक्तं च पिङ्गलेन—'इयादिपूरणः' (३।२) इति।

---

१. शताक्षरा गायत्रीमें 'भूर्भुवः स्वः' ये तीन व्याहृतियाँ नहीं गिनी जाती हैं। शताक्षरा गायत्री ॐ (एक प्रणव) से सम्पन्न है।

'पादः' इत्यनुवर्त्तते। इत्यादिः पूरणो यस्य स इयादिपूरणः। आदिशब्देनोवादयोऽपि गृह्यन्ते। तत्रायमर्थः—यत्र गायत्र्यादिछन्दसि पादस्याक्षरसंख्या न पूर्यते, तत्रेयादिभिः पूरयितव्या। यथा—'तत्सवितुर्वरेणियम्', 'दिवं गच्छ सुवः पत' इत्यादयः इति हलायुधेन व्याख्यातम्।

पिङ्गलछन्दसूत्रके 'इयादिपूरणः' (३।२) इस सूत्रसे जो 'णियम्' होता है, वह केवल पादपूर्ति के लिये, नकि उच्चारणके लिये। अतः सिद्ध हुआ कि—गायत्री-मन्त्रके उपदेशमें और जपमें 'वरेण्यम्' यही ठीक पाठ है। छन्दोविचारमें केवल 'वरेणियम्' ऐसी भावना कर चौबीस अक्षर समझना चाहिये।

उपनिषद्में 'वरेण्यम्' शब्दकी जगह 'वरेणियम्' शब्दका उल्लेख मिलता है, जिससे गायत्री-मन्त्रमें २४ अक्षर सिद्ध हो जाते हैं।

'तज्जपस्तदर्थभावनम्' (योगसूत्र १।२८) के अनुसार गायत्री-मन्त्रका जप अर्थानुसन्धानपूर्वक करना चाहिये। गायत्री-मन्त्रमें 'वरेणियम्' ऐसा उच्चारण करनेसे मन्त्रका ठीक-ठीक अर्थज्ञान नहीं होगा। अतः जपकालमें 'वरेण्यम्' ही कहना चाहिये। इसीका समर्थन गायत्रीपुरश्चरणपद्धति और विश्वामित्रकल्पमें भी मिलता है।

'पाठकाले वरेण्यं स्याज्जपकाले वरेणियम्' आदि श्लोकोंमें **'जपकाले वरेणियम्'** जो लिखा है, वह चौबीस अक्षरकी पादपूर्तिके लिये ही लिखा है, उच्चारणके लिये नहीं। अतः चारों वेदोंमें जिस प्रकार गायत्री-मन्त्र कहा गया है, उसी प्रकार जपमें और हवनादिमें उच्चारण करना चाहिये।

गायत्रीके ऋषि, छन्द, देवता आदिका ज्ञान आवश्यक है

आर्षं छन्दश्च दैवत्यं विनियोगस्तथैव च।
वेदितव्यं प्रयत्नेन ब्राह्मणेन विपश्चिता॥

(बृहद्योगियाज्ञवल्क्यस्मृति १।२७)

'विद्वान् ब्राह्मणको प्रयत्नपूर्वक गायत्री आदि मन्त्रोंके ऋषि, छन्द, देवता और विनियोगको अवश्य जानना चाहिये।'

आर्षं छन्दश्च दैवत्यं विनियोगश्च ब्राह्मणम् ।
ध्यानं जपः प्रयोगश्च येषु कर्मसु यादृशम् ॥
ज्ञातव्यं ब्राह्मणैर्यत्नात् ब्राह्मण्यं येन वै भवेत् ।
(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।२, ३)

'जिन कर्मोंमें जिस प्रकार मन्त्रका ऋषि, छन्द, देवता, विनियोग, ध्यान, जप आदिका विधान बताया गया है, उसी प्रकार ब्राह्मणको प्रयत्नपूर्वक जानना चाहिये, जिससे ब्राह्मणत्व सुरक्षित रहता है ।'

गायत्रीके ऋषि, छन्द, देवता आदिके जाननेसे लाभ

यस्तु जानाति तत्त्वेन आर्षं छन्दश्च दैवतम् ।
विनियोगं ब्राह्मणं च मन्त्रार्थं ज्ञानकर्मणी ॥
देवतायाश्च सायुज्यं गच्छत्यत्र न संशयः ।
मन्त्रे मन्त्रे प्रयत्नेन ज्ञातव्यं ब्राह्मणेन तु ॥
(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति १।३१,३३,३४)

'जो वस्तुतः ठीक-ठीक मन्त्रोंका ऋषि, छन्द, देवता, विनियोग आदिको जानता है, वह उस देवताका सायुज्य प्राप्त करता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं । अतः ब्राह्मणको प्रत्येक मन्त्रका ऋषि, छन्द, देवता और विनियोग आदि जानना चाहिये ।'

गायत्रीके ऋषि, छन्द, देतवता आदिके न जाननेसे हानि

अविदित्वा तु यः कुर्याद्यजनाध्यापनं जपम् ।
आपद्यते स्थाणुगर्तं स्वयं वापि प्रमीयते ॥
नाधिकारोऽस्ति मन्त्राणामेवं श्रुतिनिदर्शनम् ॥
(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति १।२८, ३०)

'जो ऋषि, छन्द, देवता आदि न जानकर गायत्री आदिके मन्त्रका जप, यज्ञ, अध्ययन आदि करता है, उसपर विपत्ति आती है, वह मरता है, गड्ढेमें गिरता है अथवा ऊपरसे गिरता है। ऐसे व्यक्तिको मन्त्रका अधिकार नहीं है, ऐसा वेदोंका सिद्धान्त है।'

अन्यत्र भी लिखा है—

अविदित्वा ऋषिं छन्दो दैवतं योगमेव च।
योऽध्यापयेज्जपेद्वापि पापीयाञ्जायते तु सः॥

(बृहद्देवता ८।१३२)

अविदित्वा ऋषिं छन्दो दैवतं योगमेव च।
योऽध्यापयेद्याजयेद्वा पापीयाञ्जायते तु सः॥

(बृहद् यमस्मृति)

गायत्रीके ऋषि, छन्द और देवताका विवरण

सविता देवता ह्यस्या मुखमग्निस्तदित्यृचः।
विश्वामित्र ऋषिश्छन्दो गायत्री तु विधीयते॥
विश्वस्य जगतो मित्रं विश्वामित्रः प्रजापतिः॥

(बृहद्योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।४)

'गायत्री-मन्त्रका देवता सविता है, मुख अग्नि है, तत् ऋचा है, विश्वामित्र ऋषि है और छन्द गायत्री है। सम्पूर्ण जगत्का मित्र प्रजापति ही विश्वामित्र है।'

सविता देवता यस्य मुखमग्निस्त्रिपात्स्थिता।
विश्वामित्र ऋषिश्छन्दो गायत्री सा विशिष्यते॥

(दक्षस्मृति २।४५)

'त्रिपाद गायत्री-मन्त्रका देवता सविता, मुख अग्नि, ऋषि विश्वामित्र और छन्द गायत्री है, ऐसी गायत्री सर्वोत्कृष्ट है।'

दैवमस्यास्तु सविता सुराचर्यश्छन्दोऽपि गायत्र्यमभूत् परस्याः।
विश्वस्य मित्रो द्विजराज पूज्यो मुनिर्नियोगस्तु जपादिकेषु॥

(बृहत्पाराशरस्मृति २।८-९)

'इस गायत्रीके देवताओंके पूज्य सविता देवता हैं, जो जगत् के उत्पादक हैं। गायत्रीके विश्वामित्र ऋषि हैं, जो द्विजोंमें राजा होनेसे पूज्य हैं, उनका मुनियोंने जप आदिमें विनियोग किया है।'

गायत्रीके २४ वर्णोंके २४ ऋषि

वामदेवोऽत्रिर्वसिष्ठः शुक्रः कण्वः पराशरः।
विश्वामित्रो महातेजाः कपिलः शौनको महान्॥
याज्ञवल्क्यो भरद्वाजो जमदग्निस्तपोनिधिः।
गौतमो मुद्गलश्चैव वेदव्यासश्च लोमशः॥
अगस्त्यः कौशिको वत्सः पुलस्त्यो माण्डुकस्तथा।
दुर्वासास्तपसां श्रेष्ठो नारदः कश्यपस्तथा॥
इत्येते ऋषयः प्रोक्ता वर्णानां क्रमशो मुने!॥

(देवीभागवत १२।१।१३-१६)

'१ वामदेव, २ अत्रि, ३ वसिष्ठ, ४ शुक्र, ५ कण्व, ६ पराशर, ७ महान् तेजस्वी विश्वामित्र, ८ कपिल, ९ महाभाग शौनक, १० याज्ञवल्क्य, ११ भरद्वाज, १२ तपोनिधि जगदग्नि, १३ गौतम, १४ मुद्गल, १५ वेदव्यास, १६ लोमश, १७ अगस्त्य, १८ कौशिक, १९ वत्स, २० पुलस्त्य, २१ माण्डुक, २२ परम तपस्वी दुर्वासा, २३ नारद और २४ कश्यप ये वर्णोंके क्रमसे चौबीस ऋषि कहे गये हैं।'

गायत्रीके २४ वर्णोंके २४ छन्द

गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च बृहती पङ्क्तिरेव च॥
त्रिष्टुभं जगती चैव तथाऽतिजगती मता।
शक्वर्यतिशक्वरी च धृतिश्चातिधृतिस्तथा॥
विराट् प्रस्तारपङ्क्तिश्च कृतिः प्रकृतिराकृतिः।
विकृतिः सङ्कृतिश्चैवाऽक्षरपङ्क्तिस्तथैव च॥
भूर्भुवः स्वरितिच्छन्दस्तथा ज्योतिष्मती स्मृतम्।
इत्येतानि च छन्दांसि कीर्तितानि महामुने!॥

(देवीभागवत १२।१।१६-१९)

'१ गायत्री, २ उष्णिक्, ३ अनुष्टुप्, ४ बृहती, ५ पंक्ति, ६ त्रिष्टुप्, ७ जगती, ८ अतिजगती, ९ शक्वरी, १० अतिशक्वरी, ११ धृति, १२ अतिधृति, १३ विराट्, १४ प्रस्तारपंक्ति, १५ कृति, १६ प्रकृति, १७ आकृति, १८ विकृति, १९ संस्कृति, २० अक्षरपंक्ति, २१ भूः, २२ भुवर्, २३ स्वर और २४ ज्योतिष्मती—महामुने! ये गायत्रीके चौबीस वर्णोंके २४ छन्द हैं।'

गायत्रीके २४ वर्णोंके २४ देवता

आग्नेयं प्रथमं प्रोक्तं प्राजापत्यं द्वितीयकम्॥
तृतीयं च तथा सौम्यमीशानं च चतुर्थकम्।
सावित्रं पञ्चमं प्रोक्तं षष्ठमादित्यदैवतम्॥
बार्हस्पत्यं सप्तमं तु मैत्रावरुणमष्टमम्।
नवमं भगदैवत्यं दशमं चार्यमीश्वरम्॥
गणेशमेकादशकं त्वाष्ट्रं द्वादशकं स्मृतम्।
पौष्णं त्रयोदशं प्रोक्तमैन्द्राग्नं च चतुर्दशम्॥
वायव्यं पञ्चदशकं वामदेव्यं च षोडशम्।
मैत्रावरुणिदैवत्यं प्रोक्तं सप्तदशाक्षरम्॥
अष्टादशं वैश्वदेवमूनविंशं तु मातृकम्।
वैष्णवं विंशतितमं वसुदैवतमीरितम्॥
एकविंशतिसङ्ख्याकं द्वाविंशं रुद्रदैवतम्।
त्रयोविंशं च कौबेरमाश्विनं तत्त्वसङ्ख्यकम्॥
चतुर्विंशतिवर्णानां देवतानां च सङ्ग्रहः।
कथितः परमश्रेष्ठो महापापैकशोधनः॥
(देवीभागवत १२।१।२०-२७)

'१ अग्नि, २ प्रजापति, ३ चन्द्रमा, ४ ईशान, ५ सविता (सूर्य), ६ आदित्य (सूर्य), ७ बृहस्पति, ८ मित्रावरुण, ९ भग, १० ईश्वर, ११ गणेश, १२ त्वष्टा, १३ पूषा, १४ इन्द्राग्नि, १५ वायु, १६ वामदेव, १७ मैत्रावरुणि, १८ विश्वेदेव, १९ मातृक, २० विष्णु, २१ वसुगण, २२ रुद्र, २३ कुबेर और २४ अश्विनीकुमार—ये गायत्रीके चौबीस वर्णोंके २४ देवता कहे गये हैं।'

आग्नेयं प्रथमं ज्ञेयं वायव्यं तु द्वितीयकम्।
तृतीयं सूर्यदैवत्यं चतुर्थं वैयतं तथा॥
पञ्चमं यमदैवत्यं वारुणं षष्ठमुच्यते।
सप्तमं बार्हस्पत्यं तु पर्जन्यं चाष्टमं विदुः॥
ऐन्द्रं च नवमं ज्ञेयं गान्धर्वं दशमं तथा।
पौष्णमेकादशं विद्धि मैत्रं द्वादशकं स्मृतम्॥
त्वाष्ट्रं त्रयोदशं ज्ञेयं वासवं तु चतुर्दशम्।
मारुतं पञ्चदशकं सौम्यं षोडशकं स्मृतम्॥
आङ्गिरसं सप्तदशं वैश्वदेवमतः परम्।
आश्विनं चैकोनविंशं प्राजापत्यं तु विंशकम्॥
सर्वदेवमयं ज्ञेयमेकविंशकमक्षरम्।
रौद्रं द्वाविंशकं ज्ञेयं ब्राह्मं ज्ञेयमतः परम्॥
वैष्णवं तु चतुर्विंशमेता अक्षरदेवताः॥

(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ४८।१६४–१७०)

'प्रथम अक्षरके देवता अग्नि, दूसरेके वायु, तीसरेके सूर्य, चौथेके वियत् (आकाश), पाँचवेंके यमराज, छठेके वरुण, सातवेंके बृहस्पति, आठवेंके पर्जन्य, नवेंके इन्द्र, दसवेंके गन्धर्व, ग्यारहवेंके पूषा, बारहवेंके मित्र, तेरहवेंके त्वष्टा, चौदहवेंके वसु, पन्द्रहवेंके मरुद्गण, सोलहवेंके सोम, सतरहवेंके अङ्गिरा, अठारहवेंके विश्वेदेव, उन्नीसवेंके अश्विनीकुमार, बीसवेंके प्रजापति, इक्कीसवेंके सम्पूर्ण देवता, बाईसवेंके रुद्र, तेइसवेंके ब्रह्मा और चौबीसवेंके विष्णु हैं। इस प्रकार चौबीस अक्षरोंके ये चौबीस देवता कहे गये हैं।'

अग्निर्वायू रविर्विद्युद्यमो जलपतिर्गुरुः॥
पर्जन्य इन्द्रो गन्धर्वः पूषा च तदनन्तरम्।
मित्रोऽथ वरुणस्त्वष्टा वासवो मरुतः शशी॥
अङ्गिरा विश्वनासत्यौकस्तथा सर्वदेवताः।
रुद्रो ब्रह्मा च विष्णुश्च क्रमशोऽक्षरदेवताः॥

(अग्निपुराण २१५।१६–१८)

''तत्' का अग्नि, 'स' का वायु, 'वि' का सूर्य, 'तुः' का विद्युत्, 'वः' का यम, 'रे' का वरुण, 'णी' का बृहस्पति, 'यं' का पर्जन्य, 'भ' का इन्द्र, 'र्ग' का गन्धर्व, 'दे' का पूषा, 'व' का मैत्रावरुण, 'स्य' का त्वष्टा, 'धी' का वासव, 'म' का मरुद्गण, 'हि' का सोम, 'धि' का अङ्गिरा, 'यो' का विश्वेदेव, 'यः' का आश्विनीकुमार,

'नः' का प्रजापति, 'प्र' का सर्वदेव, 'चो' का रुद्र, 'द' का ब्रह्मा और 'यात्' का विष्णु देवता है।'

अक्षराणि च दैवत्यं सम्प्रवक्ष्याम्यतः परम्।
आग्नेयं [तत्] प्रथमं ज्ञेयं वायव्यश्च [स] द्वितीयकम्॥
तृतीयं [वि] सूर्यदैवत्यं चतुर्थं [तु] वैद्युतं स्मृतम्।
पञ्चमं [र्व] यमदैवत्यं वारुणं [रे] षष्ठमुच्यते॥
बार्हस्पत्यं सप्तमं च [णि] पार्जन्यमष्टमं [यम्] विदुः।
ऐन्द्रं तु नवमं [भ] ज्ञेयं गान्धर्वं दशमं [र्गः] स्मृतम्॥
पौष्णमेकादशं [दे] ज्ञेयं द्वादशं मैत्रवारुणम्।
[व] त्वाष्ट्रं त्रयोदशं [स्य] ज्ञेयं वासवं च चतुर्दशम् [धी]॥
मारुतं पञ्चदशकं [म] सौम्यं षोडशकं [हि] स्मृतम्।
सप्तदशं [धि] त्वाङ्गिरसं वैश्वदेवमतः [यः] परम्॥
आश्विनं चैकोनविंशं [यः] प्राजापत्यं तु विंशकम् [नः]।
सर्वदेवमयं ज्ञेयमेकविंशक [प्र] मक्षरम्॥
रौद्रं द्वाविंशकं [चो] प्रोक्तं त्रयोविंशं तु [द] ब्राह्मकम्॥
ऽ ष्णवं तु [यात्] चतुर्विंशमेता अक्षरदेवताः॥
(योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।६३–६९)

'प्रथम वर्णके देवता अग्नि, द्वितीय वर्णके देवता वायु, तृतीय वर्णके देवता सूर्य, चतुर्थ वर्णके देवता विद्युत्, पञ्चम वर्णके देवता यम, षष्ठ वर्णके देवता वरुण, सप्तम वर्णके देवता बृहस्पति, अष्टम वर्णके देवता पर्जन्य, नवम वर्णके देवता इन्द्र, दशम वर्णके देवता गन्धर्व, एकदश वर्णके देवता पूषा, द्वादश वर्णके देवता मैत्रावरुण, त्रयोदश वर्णके देवता त्वष्टा, चतुर्दश वर्णके देवता वासव, पञ्चदश वर्णके देवता मारुत, षोडश वर्णके देवता सोम, सप्तदश वर्णके देवता अङ्गिरा, अष्टादश वर्णके देवता विश्वेदेव, एकोनविंशति वर्णके देवता अश्विनीकुमार, विंशति वर्णके देवता प्रजापति, एकविंशति वर्णके देवता सर्वदेव, द्वाविंशति र्णके देवता रुद्र, त्रयोविंशति वर्णके देवता ब्रह्मा और चतुर्विंशति वर्णके देवता विष्णु हैं।'

'प्रथममाग्नेयं द्वितीयं प्राजापत्यं तृतीयं सौम्यं चतुर्थमैशानं पञ्चममादित्यं षष्ठं बार्हस्पत्यं सप्तमं पितृदैवत्यमष्टमं भगदैवत्यं नवममार्यमं दशमं सावित्रमेकादशं त्वाष्ट्रं द्वादशं पौष्णं त्रयोदशमैन्द्राग्न्यं चतुर्दशं वायव्यं पञ्चदशं वामदैवत्यं षोडशं मैत्रावरुणं सप्तदश-

माङ्गिरसमष्टादशं वैश्वदेव्यमेकोनविंशं वैष्णवं विंशं वासवमेकविंशं रौद्रं द्वाविंशमाश्विनं त्रयोविंशं ब्राह्मं चतुर्विंशं सावित्रम्।'

(गायत्र्युपनिषद्)

'१ अग्नि, २ प्रजापति, ३ सोम, ४ ईशान, ५ आदित्य, ६ बृहस्पति, ७ पितृदेवता, ८ भग-देवता, ९ अर्यमा, १० सविता, ११ त्वष्टा, १२ पूषा, १३ इन्द्राग्नि, १४ वायु, १५ वामदेव, १६ मित्रावरुण, १७ अङ्गिरा, १८ विश्वेदेव, १९ विष्णु, २० इन्द्र, २१ रुद्र, २२ अश्विनीकुमार, २३ ब्रह्मा और २४ सविता—ये २४ देवता हैं।'

गायत्रीके २४ वर्णोंकी २४ शक्तियाँ

वामदेवी प्रिया सत्या विश्वा भद्रविलासिनी ॥
प्रभावती जया शान्ता कान्ता दुर्गा सरस्वती ।
विद्रुमा च विशालेशा व्यापिनी विमला तथा ॥
तमोऽपहारिणी सूक्ष्मा विश्वयोनिर्जया वशा ।
पद्मालया पराशोभा भद्रा च त्रिपदा स्मृता ॥
चतुर्विंशतिवर्णानां शक्तयः समुदाहृताः ॥

(देवीभागवत १२।२।१–४)

'१ वामदेवी, २ प्रिया, ३ सत्या, ४ विश्वा, ५ भद्रविलासिनी, ६ प्रभावती, ७ जया, ८ शान्ता, ९ कान्ता, १० दुर्गा, ११ सरस्वती, १२ विद्रुमा, १३ विशालेशा, १४ व्यापिनी, १५ विमला, १६ तमोऽपहारिणी, १७ सूक्ष्मा, १८ विश्वयोनि, १९ जया, २० वशा, २१ पद्मालया, २२ पराशोभा, २३ भद्रा और २४ त्रिपदा—ये २४ वर्णोंकी २४ शक्तियाँ कही गयी हैं।'

गायत्रीके २४ वर्णोंके २४ रूप

चम्पका अतसीपुष्पसन्निभं विद्रुमं तथा ।
स्फटिकाकारकं चैव पद्मपुष्पसमप्रभम् ॥
तरुणादित्यसङ्काशं शङ्ख-कुन्देन्दुसन्निभम् ।
प्रवाल-पद्म-पत्राभं पद्मरागसमप्रभम् ॥

इन्द्रनीलमणिप्रख्यं मौक्तिकं कुङ्कुमप्रभम्।
अञ्जनाभं च रक्तं च वैदूर्यं क्षौद्रसन्निभम्॥
हारिद्रकुन्ददुग्धाभं रविकान्तिसमप्रभम्।
शुकपुच्छनिभं तद्वच्छतपत्रनिभं तथा॥
केतकीपुष्पसङ्काशं मल्लिकाकुसुमप्रभम्।
करवीरश्च इत्येते क्रमेण परिकीर्तिताः॥
(देवीभागवत १२।२।५-६)

'१ चम्पा, २ अतसीके पुष्प, ३ मूँगा, ४ स्फटिक, ५ कमलके पुष्प, ६ तरुणसूर्य, ७ शङ्ख—चन्द्रमाकुन्दके समान, ८ रक्तदल कमलकी पंखुड़ी, ९ पद्मराग, १० इन्द्रनीलमणि, ११ मोती, १२ कुङ्कुम, १३ काजल, १४ रक्तचन्दन, १५ वैदूर्य, १६ मधु, १७ हल्दी, १८ कुँईके फूल एवं दुग्धके सदृश, १९ सूर्यकान्तमणि, २० सुग्गेकी पूँछ, २१ कमल, २२ केतकी, २३ मल्लिका और २४ कनेरके पुष्पके समान क्रमशः इन चौबीस वर्णोंके चौबीस रूप कहे गये हैं।'

गायत्रीके २४ वर्णोंके २४ तत्त्व

पृथिव्यापस्तथा तेजो वायुराकाश एव च॥
गन्धो रसश्च रूपं च शब्दः स्पर्शस्तथैव च।
उपस्थं पायु-पादं च पाणी वागपि च क्रमात्॥
प्राणं जिह्वा च चक्षुश्च त्वक् श्रोत्रं च ततः परम्।
प्राणोऽपानस्तथा व्यानः समानश्च ततः परम्॥
तत्त्वान्येतानि वर्णानां क्रमशः कीर्तितानि तु॥
(देवीभागवत १२।२।१०-१३)

१ पृथ्वी, २ जल, ३ तेज, ४ वायु, ५ आकाश, ६ गन्ध, ७ रस, ८ रूप, ९ शब्द, १० स्पर्श, ११ उपस्थ, १२ पायु, १३ पाद, १४ हस्त, १५ वागिन्द्रिय, १६ नासिका, १७ जिह्वा, १८ चक्षु, १९ त्वचा, २० श्रोत्र, २१ प्राण, २२ अपान, २३ व्यान और '२४ समान—ये चौबीस वर्णोंके क्रमशः चौबीस तत्त्व कहे गये हैं।'

जपके पूर्वकी गायत्रीकी २४ मुद्राएँ

सुमुखं सम्पुटं चैव विततं विस्तृतं तथा।
द्विमुखं त्रिमुखं चैव चतुः पञ्चमुखं तथा॥
षण्मुखाऽधोमुखं चैव व्यापकाञ्जलिकं तथा।
शकटं यमपाशं च ग्रथितं सन्मुखोन्मुखम्॥
प्रलम्बं मुष्टिकं चैव मत्स्यं कूर्मं वराहकम्'
सिंहाक्रान्तं महाक्रान्तं मुद्गरं पल्लवं तथा॥

(देवीभागवत १२।२।१४–१६)

१ सुमुख, २ सम्पुट, ३ वितत, ४ विस्तृत, ५ द्विमुख, ६ त्रिमुख, ७ चतुर्मुख, ८ पञ्चमुख, ९ षण्मुख, १० अधोमुख, ११ व्यापकाञ्जलि, १२ शकट, १३ यमपाश, १४ ग्रथित, १५ सन्मुखोन्मुख, १६ प्रलम्ब, १७ मुष्टिक, १८ मत्स्य, १९ कूर्म, २० वराह, २१ सिंहाक्रान्त, २२ महाक्रान्त, २३ मुद्गर और २४ पल्लव—ये त्रिपदा गायत्रीके चौबीस वर्णोंकी चौबीस मुद्राएँ हैं।'

गायत्रीकी २४ मुद्राएँ करनेकी विधि

१. **सुमुखम्**—दोनों हाथोंकी अंगुलियोंको मोड़कर परस्पर मिलावें।

२. **सम्पुटम्**—दोनों हाथोंको फुलाकर मिलावें।

३. विततम्—दोनों हाथोंकी हथेली परस्पर सामने करें।

४. **विस्तृतम्**—दोनों हाथोंकी अँगुलियाँ खोलकर हाथोंको कुछ अधिक अलग करें।

५. **द्विमुखम्**—दोनों हाथोंकी कनिष्ठिकासे कनिष्ठिका तथा अनामिकासे अनामिका मिलावें।

६. **त्रिमुखम्**—दोनों मध्यमाओंको भी और मिलावें।

७. **चतुर्मुखम्**—दोनों तर्जनियाँ और मिलावें।

८. **पञ्चमुखम्**—दोनों अँगूठे और मिलावें।

९. **षण्मुखम्**—हाथ वैसे ही रखते हुए दोनों कनिष्ठिकाएँ खोलें।

१०. **अधोमुखम्**—उल्टे हाथोंकी अँगुलियोंको मोड़कर तथा मिलाकर नीचेकी ओर करें।

११. **व्यापकाञ्जलिम्**—वैसे ही मिले हुए हाथोंको शरीरकी तरफसे घुमाकर सीधा करें।

१२. **शकटम्**—दोनों हाथोंको उल्टाकर अँगूठेसे अँगूठा मिलाकर तर्जनियोंको सीधी रखते हुए मुट्ठी बाँधें।

१३. **यमपाशम्**—तर्जनीसे तर्जनी बाँधकर, दोनों मुट्ठी बाँधें।

१४. **ग्रथितम्**—दोनों हाथोंकी अँगुलियोंको परस्पर गूँथें।

१५. **सन्मुखोन्मुखम्**—हाथोंकी पाँचों अँगुलियोंको मिलाकर प्रथम बाएँपर दाहिना, फिर दाहिनेपर बायाँ हाथ रक्खें।

१६. **प्रलम्ब**:—अँगुलियोंको कुछ मोड़कर दोनों हाथोंको उलटा कर नीचेकी ओर करें।

१७. **मुष्टिकः**—दोनों अँगूठे ऊपर रखते हुए दोनों मुट्ठियाँ बाँधकर मिलावें।

१८. **मत्स्यः**—दाहिने हाथकी पीठपर बाएँ हाथको उलटा रखकर दोनों अँगूठे अलग करें।

१९. **कूर्मः**—नीचे बाएँ हाथकी मध्यमा, अनामिका तथा कनिष्ठिका मोड़कर उलटे दाहिने हाथकी मध्यमा–अनामिकाओंको उन तीनों अँगुलियोंके नीचे देकर बायीं तर्जनीपर दाहिनी कनिष्ठिका और बाएँ अँगूठेपर दाहिनी तर्जनी रक्खें।

२०. **वराहकः**—दाहिनी तर्जनीको बाएँ अँगूठेसे मिलाकर दोनों हाथोंकी अँगुलियोंको परस्पर बाँधें।

२१. **सिंहाक्रान्तम्**—दोनों हाथोंको कानोंके समीप करें।

२२. **महाक्रान्तम्**—दोनों हाथोंकी अँगुलियोंको कानोंके समीप करें।

२३. **मुद्गरः**—मुट्ठी बाँधकर दाहिनी कोहनी बायीं हथेली पर रक्खें।

२४. **पल्लवः**—दाहिने हाथकी अँगुलियोंको मुखके सम्मुख हिलावें।

नीचे लिखे अनुसार चित्र देखकर २४ मुद्राएँ करें

जपके बादकी गायत्रीकी ८ मुद्राएँ

[1]सुरभिर्ज्ञानवैराग्ये योनिः शंखोऽथ पङ्कजम् ।
लिङ्ग-निर्वाणमुद्राश्च जपान्तेऽष्टौ प्रदर्शयेत् ॥

'सुरभि, ज्ञान, वैराग्य, योनि, शङ्ख, पङ्कज, लिङ्ग और निर्बाण—ये आठ मुद्राएँ जपके अन्तमें दिखानी चाहिये ।'

---

१. सुरभिर्ज्ञानशूर्पं च कूर्मो योनिश्च पङ्कजम् ।
लिङ्गं निर्वाणकं चैव जपान्तेऽष्टौ प्रदर्शयेत् ॥
(देवीभागवत ११।१७।१८–१९)

गायत्रीकी आठ मुद्राएँ करनेकी विधि

१. **सुरभिः**—दोनों हाथोंकी अँगुलियाँ गूँथकर बाएँ हाथकी तर्जनीसे दाहिने हाथकी मध्यमा, दाहिने हाथकी तर्जनीसे बाएँ हाथकी मध्यमा, इसी प्रकार बाएँ हाथकी अनामिकासे दाहिने हाथकी कनिष्ठा और बाएँ हाथकी कनिष्ठासे दाहिने हाथकी अनामिका अँगुली मिलावें ।

२. **ज्ञानम्**—दाहिने हाथकी तर्जनीसे अँगूठा मिलाकर हृदयमें तथा इसी प्रकार बायाँ हाथ बाएँ घुटनेपर सीधा रक्खें ।

३. **वैराग्यम्**—दोनों तर्जनियोंसे अँगूठा मिलाकर घुटनोंपर सीधा रक्खें ।

४. **योनिः**—दोनों मध्यमाओंके नीचेसे बायीं तर्जनीके ऊपर दाहिनी अनामिका और दाहिनी तर्जनीपर बायीं अनामिका रखकर दोनों तर्जनियोंसे बाँधकर दोनों मध्यमा ऊपर रक्खें ।

५. **शङ्खः**—बाएँ अँगूठेको दाहिनी मुट्ठीसे बाँधकर दाहिने अँगूठेसे बायीं अँगुलियोंको मिलावें ।

६. **पङ्कजम्**—दोनों हाथोंके अँगूठे तथा अँगुलियोंको मिलाकर ऊपरकी ओर करें ।

७. **लिङ्गम्**—दाहिने अँगूठेको सीधा रखते हुए दोनों हाथोंकी अँगुलियोंको गूँथकर बायाँ अँगूठा दाहिने अँगूठेकी जड़के ऊपर रक्खें ।

८. **निर्वाणम्**—उलटे बाएँ हाथपर दाहिना हाथ सीधा रखकर, अँगुलियोंको परस्पर गूँथकर, दोनों हाथ अपनी तरफसे घुमाकर दोनों तर्जनियोंको सीधी कानके समीप करें ।

नीचे लिखे अनुसार चित्र देखकर ८ मुद्राएँ करें

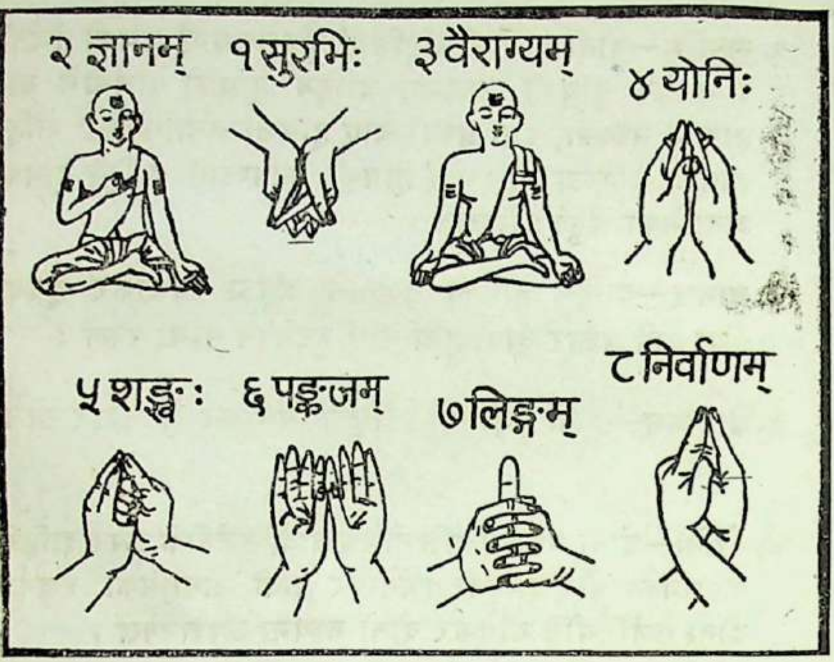

गायत्रीके चतुर्थ चरणकी महामुद्राएँ

[1]त्रिशूलयोनी सुरभिश्चाक्षमालां च लिङ्गकम्।
अम्बुजं च महामुद्रास्तुर्यरूपाः प्रकीर्तिताः॥
(देवीभागवत १२।२।१४-१७)

'त्रिशूल, योनि, सुरभि, अक्षमाला, लिङ्ग और अम्बुज—ये महामुद्राएँ तूर्यरूपा गायत्रीके चतुर्थ चरणकी कही गयी हैं।'

---

१. त्रिशूलयोनी सुरभिमक्षमालां च लिङ्गकम्।
अम्बुजं च महामुद्रामिति सप्त प्रदर्शयेत्॥
(देवीभागवत ११।१७।६)

[1]मुद्राओंके प्रदर्शनकी और इनके ज्ञानकी आवश्यकता

गायत्री आदि जप करनेके पूर्व २४ मुद्राएँ दिखलायी जाती हैं। इनके दिखलाये बिना जपादि करना व्यर्थ कहा गया है—

चतुर्विंशतिमुद्राश्च गायत्र्यादौ प्रदर्शयेत्।
वृथा मन्त्रजपश्चैव स्नानं भोजनमेव च॥
यज्ञश्च निष्फलस्तेषां होमो देवार्चनं वृथा।
तस्मान्मुद्रा सदा ज्ञेया विद्वद्भिर्यत्नमास्थितैः॥

(गायत्रीतन्त्र)

'गायत्री-जपके पूर्व २४ मुद्राओंका प्रदर्शन अवश्य करना चाहिये। क्योंकि मुद्रा-प्रदर्शनके बिना मन्त्रका जप, स्नान, भोजन, यज्ञ, होम तथा देवपूजन करनेवालोंके सम्पूर्ण उपर्युक्त कार्य व्यर्थ हो जाते हैं। अतः शास्त्रज्ञ विद्वानोंका मत है कि २४ मुद्राओंका ज्ञान अपेक्षित है।'

मुद्राओंको न जाननेसे हानि

एता मुद्रा न जानाति तस्य देवी न सिद्ध्यति।
शपन्ति देवताः सर्वा गायत्र्यक्षरसंस्थिताः॥

(महासंहिता)

'जो गायत्रीकी चौबीस मुद्राओंको नहीं जानता, उसकी गायत्री सिद्ध नहीं होती और गायत्री-मन्त्रके अक्षरोंमें स्थित समस्त देवता भी उसे शाप देते हैं।'

'एता मुद्रा न जानाति गायत्री निष्फला भवेत्।'

(गायत्रीतन्त्र)

'जो गायत्रीकी मुद्राओंको नहीं जानता, उसकी गायत्री निष्फल होती है।'

---

१. मुदं ददाति देवानां द्रावयत्यसुरांस्तथा।
मोदनात् द्रावणाच्चैव मुद्रेति परिकीर्तिता॥ (वसिष्ठसंहिता)

'मुद्राएँ देवताओंको आनन्द प्रदान करती हैं तथा असुरोंको द्रवित करती हैं। आनन्द प्रदान करनेसे तथा द्रवित करनेसे ही इनको 'मुद्रा' कहा जाता है।'

गायत्रीके २४ वर्णोंका विवरण

पञ्चेन्द्रियाणि पञ्चैव पञ्च बुद्धीन्द्रियाणि च।
पञ्च बुद्धीन्द्रियार्थाश्च भूतानां चैव पञ्चकम्।
मनो बुद्धिस्तथैवात्मा ह्यव्यक्तं च यदुत्तमम्॥
चतुर्विंशतिरेतानि गायत्र्या अक्षराणि च।
प्रणवं पुरुषं विद्धि सर्वगं पञ्चविंशकम्॥
(विष्णुधर्मोत्तरपुराण)

'पञ्च कर्मेन्द्रिय, पञ्च ज्ञानेन्द्रिय, पञ्च तन्मात्रा, पञ्च महाभूत, मन, बुद्धि, आत्मा और प्रकृति—ये गायत्रीके चौबीस वर्ण हैं। जिस प्रकार चौबीस तत्त्वोंमें पुरुष व्याप्त है, उसी प्रकार गायत्रीमन्त्रके चौबीस अक्षरोंमें प्रणव व्याप्त है। अतः सर्वव्यापक प्रणवको पुरुष समझना चाहिये, जोकि पचीसवाँ वर्ण कहा जाता है।'

कर्मेन्द्रियाणि पञ्चैव पञ्च बुद्धीन्द्रियाणि च।
पञ्च पञ्चेन्द्रियार्थाश्च भूतानां चैव पञ्चकम्॥
मनो बुद्धिस्तथाऽऽत्मा च अव्यक्तं च यदुत्तमम्।
चतुर्विंशस्तथैतानि गायत्र्या अक्षराणि तु॥
प्रणवं पुरुषं विद्धि सर्वगं पञ्चविंशकम्॥
(बृहद्योगियाज्ञवल्क्यः)

'पाँच कर्मेन्द्रिय, पाँच ज्ञानेन्द्रिय, पाँच तन्मात्रा, पाँच महाभूत, मन, बुद्धि, आत्मा और प्रकृति—ये गायत्रीके चौबीस वर्ण हैं। जिस प्रकार चौबीस तत्त्वोंमें पुरुष व्याप्त है, उसी प्रकार गायत्री-मन्त्रके चौबीस वर्णोंमें प्रणव व्याप्त है। अतः सर्वव्यापक प्रणवको पुरुष समझना चाहिये, जो कि पचीसवाँ वर्ण है।'

गायत्रीके चौबीस वर्णोंके द्वारा शरीरका न्यास

गायत्रीं विन्यसेत्पूर्वं शरीरे चात्मनो बुधः।
चतुर्विंशतिस्थानेषु आपादमस्तकेषु च॥
तत्कारं विन्यसेद्योगी पादाङ्गुष्ठे विचक्षणः।
सकारं गुल्फदेशे तु विकारं जङ्घयोर्न्यसेत्॥

तुकारं जानुमध्ये च वकारं चोरुदेशतः।
रेकारं गुह्यदेशे तु णिकारं वृषणे न्यसेत्॥
यङ्कारं कटिदेशे तु भकारं नाभिमण्डले।
र्गोकारं जठरे न्यस्य देकारं स्तनयोर्न्यसेत्॥
वकारं हृदये न्यस्य स्यकारं करदेशतः।
धीकारं वदने न्यस्य मकारं तालुके न्यसेत्॥
हिकारं नासिकाग्रे च धिकारं चक्षुषोर्न्यसेत्।
योकारं तु भ्रुवोर्मध्ये योकारं च ललाटके॥
नः कारं तु मुखे पूर्वे प्रकारं दक्षिणे मुखे।
चोकारं पश्चिमे न्यस्य दकारं चोत्तरे न्यसेत्॥
यात्कारं मूर्ध्नि विन्यस्य सर्वव्यापी व्यवस्थितः।
एतान् विन्यस्य धर्मात्मा ब्रह्मविष्णुशिवात्मकः॥
(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ४८।१७२–१७९)

'विद्वान् पुरुषको चाहिये कि अपने शरीरके पैरसे लेकर सिरतक चौबीस स्थानोंमें पहले गायत्रीके अक्षरोंका न्यास करे। 'तत्'का पैरके अँगूठेमें, 'स'का गुल्फ (घुट्ठी) में, 'वि'का दोनों पिण्डलियोंमें, 'तु'का घुटनोंमें, 'वं'का जाँघोंमें, 'रे'का गुदामें, 'ण्य'का अण्डकोषमें, 'म्'का कटिभागमें, 'भ'का नाभिमण्डलमें, 'र्गो'का उदरमें, 'दे'का दोनों स्तनोंमें, 'व'का हृदयमें, 'स्य'का दोनों हाथोंमें, 'धी'का मुँहमें, 'म'का तालुमें, 'हि'का नासिकाके अग्रभागमें, 'धि'का दोनों नेत्रोंमें, 'यो'का दोनों भौंहोंमें, 'यो'का ललाटमें, 'नः'का मुखके पूर्वभागमें, 'प्र'का मुखके दक्षिण भागमें, 'चो'का मुखके पश्चिम भागमें और 'द'का मुखके उत्तर भागमें न्यास करे। फिर 'यात्'का मस्तकमें न्यास करके सर्वव्यापी स्वरूपसे स्थित हो जाय। धर्मात्मा पुरुष इन अक्षरोंका न्यास करके ब्रह्मा, विष्णु और शिवका स्वरूप हो जाता है।'

न्यासकी आवश्यकता

गायत्रीतन्त्रमें कहा है कि—न्यास किये बिना गायत्रीके जपका फल नहीं मिलता। अतः गायत्री-जपके पूर्व और गायत्री-जपके बाद न्यास करना आवश्यक है।

यतियोंको पञ्च मुद्रा और गृहस्थोंको तत्त्व मुद्रामें न्यास करना चाहिये।

न्यासमूलमिदं कर्म न्यासपूर्वं तु कारयेत्।
न्यासेन रहितं कर्म अर्धं गृह्णन्ति राक्षसाः॥

'समस्त कर्म न्यासमूलक कहा गया है। अतः समस्त कर्म न्यास-पूर्वक करना चाहिये। न्यासके रहित जो कर्म किया जाता है, उसका आधा फल राक्षस ले लेते हैं।'

'न्यासहीनं तु यत्कर्म अर्धं गृह्णन्ति राक्षसाः।'

(प्रतिष्ठातिलक)

'न्यासके बिना जो कर्म किया जाता है, उसका आधा फल राक्षस ग्रहण करते हैं।'

गायत्री-शापविमोचनकी विधि

ब्रह्मा, वसिष्ठ और विश्वामित्रने गायत्री-मन्त्रको शाप दिया है, अतः शाप-निवृत्तिके लिये शाप-विमोचन करना आवश्यक है।

ब्रह्मशापविमोचन—

विनियोगः—अस्य श्रीब्रह्मशापविमोचनमन्त्रस्य निग्रहानुग्रहकर्ता ब्रह्मा ऋषिः कामदुघा गायत्रीच्छन्दो भुक्तिमुक्तिप्रदा ब्रह्मानुगृहीता ब्रह्मशापविमोचनी गायत्रीशक्तिर्देवता ब्रह्मशापविमोचनार्थे जपे विनियोगः।

मन्त्रः—ॐ गायत्रीं ब्रह्मेत्युपासीत यद्रूपं ब्रह्मविदो विदुः।
तां पश्यन्ति धीराः सुमनसा वाचामग्रतः॥
ॐ वेदान्तनाथाय विद्महे हिरण्यगर्भाय धीमहि।
तन्नो ब्रह्म प्रचोदयात्॥
ॐ देवि! गायत्रि! त्वं ब्रह्मशापाद् विमुक्ता भव।

वसिष्ठशापविमोचन—

विनियोगः—अस्य श्रीवसिष्ठशापविमोचनमन्त्रस्य निग्रहानुग्रह-कर्ता वसिष्ठ ऋषिर्विश्वोद्भवा गायत्रीच्छन्दो वसिष्ठानुगृहीता गायत्री-शक्तिर्देवता वसिष्ठशापविमोचनार्थं जपे विनियोगः ।

मन्त्रः—[1]सोऽहमर्कमयं ज्योतिरर्कज्योतिरहं शिवः ।
शिवज्योतिरहं शुक्रः सर्वज्योती रसोऽस्म्यहम् ॥

इस प्रकार कहकर योनिमुद्रा दिखलावे और तीन बार गायत्री-का जप करे । पश्चात्—

ॐ देवि ! गायत्रि ! त्वं वसिष्ठशापाद् विमुक्ता भव ।

विश्वामित्रशापविमोचन—

विनियोगः—अस्य श्रीविश्वामित्रशापविमोचनमन्त्रस्य नूतन-सृष्टिकर्त्ता विश्वामित्र ऋषिर्वाग्देहा गायत्रीच्छन्दः विश्वामित्रानुगृहीता गायत्रीशक्तिर्देवता विश्वामित्रशापविमोचनार्थं जपे विनियोगः ।

मन्त्रः—ॐ गायत्रीं भजाम्यग्निमुखीं विश्वगर्भां यदुद्भवाः ।
देवाश्चक्रिरे विश्वसृष्टिं तां कल्याणीमिष्टकरीं प्रपद्ये ।
यन्मुखान्निःसृतोऽखिलवेदगर्भः ॥
ॐ देवि ! गायत्रि ! त्वं विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ।

गायत्री-प्रार्थना—

ॐ अहो देवि महादेवि सन्ध्ये विद्ये सरस्वति ।
अजरे अमरे चैव ब्रह्मयोनिर्नमोऽस्तु ते[2] ॥

---

१. सोऽहमर्कोऽस्म्यहं ज्योतिरात्मा ज्योतिरहं शिवः ।
आत्मज्योतिरहं शुक्लः सर्वज्योती रसोऽस्म्यहम् ॥
(देवीभागवत ११।१६।५८)

२. बहुरूपिणि गायत्रि दिव्ये सन्ध्ये सरस्वति ।
अजरे अमरे चैव ब्रह्मयोने नमोऽस्तु ते ॥

गायत्री-शापोद्धारकी आवश्यकता

शापमुक्ता तु गायत्री चतुर्वर्गफलप्रदा।
अशापमुक्ता गायत्री चतुर्वर्गफलान्तका॥

'शापसे मुक्त गायत्री धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष इन चारों फलोंको देनेवाली है। जो गायत्री शापसे मुक्त नहीं होती वह उपर्युक्त चतुर्वर्गके फलोंका नाश करती है।'

शापयुक्ता तु गायत्री सफला न कदाचन।
शापादुत्तारिता सा तु भुक्तिमुक्तिफलप्रदा॥

(विश्वामित्रोक्त-गायत्रीकल्प)

'शापसे युक्त गायत्री कभी भी फलदायिनी नहीं होती, किन्तु शापसे मुक्त गायत्री भुक्ति और मुक्तिको देनेवाली होती है।'

गायत्री और ओङ्कार

गायत्री प्रकृतिर्ज्ञेया ओङ्कारः पुरुषः स्मृतः।
ताभ्यामुभाभ्यां संयोगाज्जगत्सर्वं प्रवर्त्तते॥

(बृहद्योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।७)

'गायत्रीको प्रकृति और ओङ्कारको पुरुष कहा है। गायत्री और ओङ्कारके संयोग होनेसे समस्त संसारकी उत्पत्ति होती है।'

गायत्री प्रकृतिर्ज्ञेया ओङ्कारः पुरुषः स्मृतः।
एतयोरेव संयोगाज्जगत्सर्वं प्रवर्त्तते॥

(बृहत्पाराशरस्मृति २।५-६)

'गायत्रीको प्रकृति और ओङ्कारको पुरुष कहा गया है। इन दोनोंके संयोग होनेसे समस्त जगत्‌की उत्पत्ति होती है।'

गायत्री साऽभवत् पत्नी प्रणवोऽभूत् पतिस्तदा।
पुनरन्योन्यदाम्पत्यादिति ताभ्यामभूज्जगत्॥

(बृहत्पाराशरस्मृति २।६)

'उस समय वह गायत्री स्त्री हुई और प्रणव पति हुआ। इन दोनोंके दाम्पत्य-भावसे संसारकी उत्पत्ति हुई।'

अत: प्रत्येक द्विजको विशेषत: ब्राह्मणको चाहिये वह ओङ्कारको पिता और गायत्रीको माता समझे। जो ओङ्कारको पिता और गायत्रीको माता नहीं समझता, उसके लिये यह स्पष्ट लिखा है—

ॐकारं पितृरूपेण गायत्रीं मातरं तथा।
पितरौ यो न जानाति स विप्रस्त्वन्यरेतजः॥

(देवीभागवत)

'विप्रके लिये ओङ्कारको पिता और गायत्रीको माता कहा है। जो ब्राह्मण इन दोनों पिता और माताको नहीं जानता, उसको दूसरेके वीर्यसे उत्पन्न हुआ, यह समझना चाहिये।'

गायत्री और ओङ्कारके जपका महत्त्व

सर्वेषां जप्यसूक्तानामृचां च यजुषां तथा।
साम्नां चैकाक्षरादीनां गायत्री परमो जपः॥
तस्याश्चैव तु ओङ्कारो ब्रह्मणा यमुपासितः।
आभ्यां तु परमं जप्यं त्रैलोक्येऽपि न विद्यते॥

(बृहत्पाराशरस्मृति २।४–५)

'जप करने योग्य समस्त सूक्तोंमें और ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेदमें एवं एक अक्षर (ॐ) आदिके मन्त्रोंमें गायत्रीका जप श्रेष्ठ है। उस गायत्रीका जप ओङ्कार ब्रह्मके द्वारा उपासित है, अतः गायत्री और ओङ्कार इन दोनोंसे श्रेष्ठ जप तीनों लोकोंमें भी नहीं है।'

गायत्री, सावित्री और सरस्वतीका निर्वचन

गायञ्छिष्यान् यतस्त्रायेद् भार्यां प्राणांस्तथैव च॥
ततः स्मृतेयं गायत्री सावित्रीयं ततो यतः।
प्रकाशनात्सा सवितुर्वाग्रूपत्वात् सरस्वती॥

(अग्निपुराण २१६।१–२)

'जिस कारण गायन करनेवाले शिष्योंको भार्या (पत्नी) को और प्राणोंको पालन करती है, अतः यह गायत्री है। सविताके

प्रकाशसे प्रकाशित होनेसे यह सावित्री है और वाणीरूप होनेसे यह सरस्वती कही जाती है।'

प्रतिग्रहादन्नदोषात्पातकादुपपातकात् ।
गायत्री प्रोच्यते यस्मात् गायन्तं त्रायते यतः ॥

(वाधूलस्मृति ११५)

'गायत्री-मन्त्रके जपनेवालेकी गायत्री प्रतिग्रह, अन्नदोष, पातक और उपपातकोंसे रक्षा करती है, इसलिये इसका नाम गायत्री है।'

सवितृद्योतनाच्चैव सावित्री परिकीर्तिता ।
जगतः प्रसवित्री च सा वाग्रूपत्वात्सरस्वती ॥

(वाधूलस्मृति ११६)

'सविताके प्रकाशित करनेसे इसका नाम सावित्री और संसारकी प्रसवित्री वाणीरूप होनेसे इसका नाम सरस्वती है।'

मत्स्यपुराण (३।३०–३२) में लिखा है—

ततः सञ्जपतस्तस्य भित्वा देहमकल्मषम् ॥
स्त्रीरूपमर्द्धमकरोदर्द्धं पुरुषरूपवत् ।
शतरूपा च सा ख्याता सावित्री च निगद्यते ॥
सरस्वत्यथ गायत्री ब्रह्माणी च परन्तप ! ।

'हे परन्तप ! ब्रह्माने अपने शरीरको दो भागोंमें विभक्त कर एक भागसे पुरुष और एक भागसे नारीकी रचना की। ब्रह्माके द्वारा रचित शतरूपा ही सावित्री, सरस्वती, गायत्री और ब्रह्माणी कही जाती है।'

जप-शब्दार्थ

जकारो जन्मविच्छेदः पकारः पापनाशकः ।
तस्माज्जप इति प्रोक्तो जन्मपापविनाशकः ॥

(अग्निपुराण)

'जप शब्दका जकार जन्मबन्धनसे मुक्त करनेवाला है तथा पकार पाप-नाशक है, अतः जन्म और पापोंके नाशक होनेसे ही जप ऐसा कहा गया है।'

जपके लक्षण

'जपो नाम विधिवद् गुरूपदिष्टवेदाविरुद्धमन्त्राभ्यासः ।'

(शाण्डिल्योपनिषद् १।२)

'शास्त्रानुसार विधिवत् गुरुके द्वारा उपदिष्ट वेदसम्मत मन्त्रका अभ्यास ही जप कहलाता है ।'

गुरुणा चोपदिष्टोऽपि तन्त्रसम्बन्धवर्जितः ।
वेदोक्तेनैव मार्गेण मन्त्राभ्यासो जपः स्मृतः ॥
कल्पसूत्रे तथा वेदे धर्मशास्त्रे पुराणके ।
इतिहासे च वृत्तिर्या स जपः प्रोच्यते मया ॥

(जाबालदर्शनोपनिषद् २।११-१२)

'गुरुके द्वारा उपदिष्ट तन्त्रके सम्बन्धसे रहित वेदोक्त मार्गसे ही मन्त्रके अभ्यासको जप कहा जाता है । कल्पसूत्र अथवा वेदमें तथा धर्मशास्त्र, पुराण, इतिहासमें जो अनुवृत्ति मैंने कही है, वह जप कहा जाता है ।'

मनोमध्ये स्थितं मन्त्रं मन्त्रमध्ये स्थितं मनः ।
मनो मन्त्रसमायुक्तमेतच्च जपलक्षणम् ॥

'मनके मध्यमें मन्त्र स्थित हो और मन्त्रके मध्यमें मन स्थित हो, इस प्रकार मन और मन्त्रके सम्मिलित अवस्थाको ही जपका लक्षण जानना जाहिये ।'

जपयज्ञका महत्त्व

शास्त्रोंमें अनेक प्रकारके यज्ञ कहे गये हैं, उनमें 'जपयज्ञ' को सर्व-श्रेष्ठ बतलाया गया है । जपयज्ञमें इष्टदेवके मन्त्रकी बार-बार आवृत्ति की जाती है । इस आवृत्तिका नाम ही जप है और इसीको 'जपयज्ञ' कहते हैं । जप-यज्ञमें इष्टदेवका चिन्तन, मनन और ध्यान किया जाता है । जपयज्ञमें प्रतिदिन देवपूजन और हवनकी आवश्य-कता नहीं होती । यह यज्ञ वगैर किसी सामग्रीके होता है । अतः जप-यज्ञमें विशेष सामग्रीकी आवश्यकता नहीं होती । जपयज्ञ सबसे सुलभ, सुगम और सबसे सुकर है तथा यह श्रद्धामात्रसे सुसाध्य है ।

जपयज्ञमें किसी प्रकारकी जीवहिंसा नहीं होती । जपयज्ञमें **'अहिंसा परमो धर्मः'** के नियमका यथार्थ रूपसे पालन होता है, अतः जपयज्ञ सर्वथा निर्दोष और महत्त्वपूर्ण है ।

स्वामी मधुसूदन सरस्वतीजीने गीता (१०।२५) के **'यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि'** इस श्लोककी टीकामें कहा है—

'यज्ञानां मध्ये हिंसादिदोषशून्यत्वेनात्यन्तशोधकोऽहमस्मि ।'

'जपयज्ञमें हिंसा आदि दोषोंका सर्वथा अभाव है, अतः भगवन्नाम जपयज्ञ अत्यन्त शुद्धि करनेवाला है ।'

हिंसारहित जपयज्ञको समस्त धर्मोंमें श्रेष्ठ धर्म कहा गया है—

जपस्तु सर्वधर्मेभ्यः परमो धर्म उच्यते ।
अहिंसया हि भूतानां जपयज्ञः प्रवर्त्तते ॥

(महाभारत)

'समस्त धर्मोंमें जपको परम धर्म कहा है, क्योंकि जपयज्ञ प्राणियोंकी हिंसाके बिना ही होता है । अतः जपयज्ञ समस्त यज्ञोंमें श्रेष्ठ है ।'

सर्वेषामपि पुण्यानां सर्वेषां श्रेयसामपि ।
सर्वेषामपि यज्ञानां जपयज्ञः परः स्मृतः ॥

(स्कन्दपुराण, ब्रा० ब्रह्मो० १।७)

'समस्त पुण्योंके, सम्पूर्ण श्रेयके साधनों और समस्त यज्ञोंमें जपयज्ञको ही सर्वोत्तम माना गया है ।'

भगवान् श्रीकृष्णने गीता (१०।५२) में **'यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि'** कहकर जपयज्ञको अपनी विशेष विभूति बतलाया है । अतः जपयज्ञकी विशिष्ट महिमा है ।

शास्त्रोंमें लिखा है कि जितने भी यज्ञ और तप हैं, वे जपयज्ञकी सोलहवीं कलाके बराबर भी नहीं हैं—

यावन्तः कर्मयज्ञाः स्युः प्रदिष्टानि तपांसि च ।
सर्वे ते जपयज्ञस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥

(तन्त्रसार)

'जितने भी कर्मयज्ञ और तप कहे गये हैं, वे सभी जपयज्ञकी तुलनामें सोलहवीं कलाको भी प्राप्त नहीं कर सकते ।'

ये [1]पाकयज्ञाश्चत्वारो [2]विधियज्ञसमन्विता।
सर्वे ते जपयज्ञस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्॥

(मनुस्मृति २।८६)

'जो विधियज्ञ अर्थात् श्रौतस्मार्त यज्ञसहित चार पाकयज्ञ (वैश्वदेव, होम, बलिकर्म, नित्यश्राद्ध और अतिथिभोजन ये सब जपयज्ञकी सोलहवीं कलाके बराबर नहीं हैं।'

उपर्युक्त कथनकी पुष्टि महर्षि याज्ञवल्क्यने बृहद् योगियाज्ञवल्क्य-स्मृति (१०।१३) में और भगवान् वेदव्यासने पद्मपुराणमें तथा देवर्षि नारदने नारदपुराणमें की है। अतः सभीको आत्मकल्याणके लिये प्रतिदिन जपयज्ञ करना चाहिये। जपयज्ञ निष्काम-भावसे किया जाय, तो विशेष फलप्रद होता है।

मन्त्र-जपका महत्त्व

मन्त्रोंद्वारा अभीष्ट देवी-देवताओंका ध्यानपूर्वक स्मरण एवं उच्चारण करना, अपने मनको एकाग्रकर उसे देवी-देवताओंकी ओर लगाना और उनमें तन्मय हो जाना ही 'मन्त्र-जप' कहलाता है।

मन्त्र-जपसे मनुष्यकी अन्तःशुद्धि और बाह्यशुद्धि होती है। मन्त्र-जपसे मनुष्यका अन्तःकरण पवित्र और बलवान् बन जाता है। मन्त्र-जपसे मनुष्यमें शुद्ध विचार और शुद्ध सङ्कल्प उद्भूत हो जाते हैं। मन्त्र-जपसे मनुष्य ईश्वरके अस्तित्वको मानकर अनिर्वचनीय आनन्द-का अनुभव करता है। मन्त्रजपसे देवी-देवता प्रसन्न होकर मनुष्यकी सब प्रकारसे रक्षा करते हैं, जिससे उसपर शत्रुके द्वारा चलाये हुए शस्त्र-अस्त्र और मारण-मोहन आदि असत्कर्म व्यर्थ हो जाते हैं। मन्त्रजपसे आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक उन्नति होती है। मन्त्रजपसे मनुष्य सभी प्रकारसे निर्भय हो जाता है। मन्त्रजपसे मनुष्य संशय-विपर्ययके चक्करसे मुक्त होकर दृढ़-निश्चयी बनता है। मन्त्रजपसे मनुष्य असाध्य कार्यको भी सुसाध्य कर लेता है। मन्त्र-जपसे मनुष्य ज्ञानी, पराक्रमी, यशस्वी और तेजस्वी बनता है। मन्त्र-

१. देखिए—पारस्करगृह्यसूत्र (१।४।१)।

२. अमावास्या, पूर्णिमा आदि पर किये जानेवाले दर्शपौर्णमासादि यज्ञ।

जपसे मनुष्य भयङ्कर पापोंसे मुक्त होकर दीर्घायु, धन-धान्य, पुत्र-पौत्र आदि ऐहलौकिक सुख प्राप्त कर अन्तमें पारलौकिक परम पदकी प्राप्ति करता है।

जप भी स्वाध्याय है

'जपः स्वाध्याय उदितः।'

(बृहन्नारदीयपुराण, पूर्वखण्ड १।३३।५०)

'जपको स्वाध्याय कहा है।'

'स्वाध्यायः स्यान्मन्त्रजापः।'

'मन्त्रका जप स्वाध्याय कहा गया है।'

'स्वाध्यायस्तु जपः प्रोक्तः प्रणवाभ्यासनादिकः।'

(स्कन्दपुराण, माहेश्वरखण्ड १, तदन्तर्गत कौमारिकाखण्ड २।५५।२५)

'प्रणवके अभ्यास आदिका स्वाध्याय करना जप कहा जाता है।'

जप-सम्पत्तिके प्रधान कारण

आत्मसंहरणं शौचं मौनं मन्त्रार्थचिन्तनम्।
अव्यग्रत्वमनिर्वेदो जपसम्पत्तिहेतवः॥

'अपना नियन्त्रण, पवित्रता, मौन, मन्त्रार्थका चिन्तन, स्थिरता और दुःखराहित्य होना—ये सभी जप-सम्पत्तिके कारण माने गये हैं।'

मनः संहरणं मौनं शौचं मन्त्रार्थचिन्तनम्।
अव्यग्रत्वमनिर्वेदो जपसम्पत्तिहेतवः॥

'मनका नियन्त्रण, मौन, पवित्रता, मन्त्रका चिन्तन, अव्यग्रता, निर्वेदरहिता—ये सभी जपकी सम्पत्तिके कारण माने गये हैं।'

मनः प्रहर्षणं शौचं मौनं मन्त्रार्थचिन्तनम् ।
अव्यग्रत्वमनिर्वेदो जपसम्पत्तिहेतवः ॥

'मनकी प्रसन्नता, पवित्रता, मौन, मन्त्रके अर्थका चिन्तन, व्याकुलहीनता, जपसे वैराग्यरहित होना—ये छः जपकी सम्पत्तिके कारण हैं।'

जपके शत्रु

निष्ठीवजृम्भणक्रोधनिद्रालस्यक्षुधामदाः ।
पतितश्वान्त्यजा लोका दशैते जपवैरिणः ॥
(भरद्वाजः)

'नाक फटकारना, खखार फेंकना, जमुहाई, क्रोध, निद्रा, आलस्य, भूख, मद, पतित मनुष्य, श्वान (कुत्ता) और अन्त्यज लोग—ये जपके शत्रु हैं।'

भगवन्नाम-जपकी विधि

जापकको एकान्त और पवित्र स्थानमें शुद्ध आसनपर बैठकर शुद्ध-भावसे सर्वव्यापक, सर्वरक्षक और सर्वसमर्थ भगवान्का स्मरण और ध्यान करना चाहिये। जो भगवत्स्वरूप चिन्तनयुक्त भगवन्नामका जप करते हैं, उनपर शीघ्र ही दैवीशक्तिका आविर्भाव होता है और उनको भगवत्प्राप्ति होती है। जो मनुष्य भगवत्स्वरूपचिन्तनके बिना भगवन्नाम-जप करते हैं, उन्हें भी भगवत्प्राप्ति होती है, किन्तु उसमें देर होनेकी संभावना रहती है। अतः मनुष्यको हर समय प्रत्येक अवस्थामें भगवान्के स्वरूपके चिन्तनके साथ-साथ भगवन्नाम-जप करना चाहिये।

परमात्माके अनेकों नाम हैं। अतः जिसकी जिस देवतामें श्रद्धा-भक्ति हो, उसे उसी देवताके नामके स्वरूपका चिन्तन और जप करना चाहिये। जैसे—

'ॐ नमः शिवाय' इस मन्त्रका जप करनेवालेको भगवान् शङ्कर-का ध्यान करना चाहिये। 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' इस मन्त्रका जप करनेवालेको भगवान् वासुदेवका ध्यान करना चाहिये। 'ॐ नमो नारायणाय' इस मन्त्रका जप करनेवालेको भगवान् विष्णुका ध्यान करना चाहिये। 'ॐ रामाय नमः' इस मन्त्रका जप करनेवालेको भगवान् रामका ध्यान करना चाहिये।

गायत्री-जपकी विधि

जपकर्ता पूर्व, पश्चिम अथवा उत्तराभिमुख होकर कुशासनपर पद्मासन अथवा स्वस्तिकासनसे बैठकर [1]रुद्राक्षमालाको वस्त्रसे ढक-कर अथवा गोमुखीमें रखकर गायत्री-मन्त्रका जप करे।

धृत्वा पवित्रं सम्प्रोक्ष्य जपस्थानं कुशोदकैः।
आधारादीन् नमस्कृत्य कुशाग्रैरासनं ततः॥
बुद्ध्वा पद्मासनं वापि स्वस्तिकं वा यथासुखम्।
ॐ भूर्भुवः स्वरोमिति जपित्वाऽऽसनमुपविशेत्॥

(व्यासः)

'पवित्री धारणकर कुशोदकसे जपस्थानको तथा कुशाग्रभागसे आसनको अभिसिञ्चितकर आधारादि स्थलोंको नमस्कारकर, पद्मासन अथवा स्वस्तिकासन सुखपूर्वक लगाकर 'ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः' जपकर पश्चात् आसपर बैठना चाहिये।'

'कुशशय्यामासीनः कुशोत्तरीयो वा कुशपवित्रपाणिः प्राङ्मुखः सूर्याभिमुखो वा अक्षमालामुपादाय देवताध्यायी जपं कुर्यात्।'

(शङ्खस्मृति १२-१)

---

१. रुद्राक्षकी मालाके अभावमें करमालाका भी उपयोग किया जा सकता है। करमालामें अनामिका अँगुलीके मध्यम-पर्वसे आरम्भकर अनामिकाके आदिपर्व, कनिष्ठिकाके आदि, मध्य और अन्त्य-पर्व एवं अनामिका, मध्यमा और तर्जनीके अन्त्यपर्व और तर्जनीके मध्य और आदिपर्व तक जप किया जाता है। मध्यमा अँगुलीके आदि और मध्य दोनों पर्व (सुमेरु-रूपसे) सर्वथा त्याग दिये जाते हैं।

'कुशनिर्मित आसनपर बैठकर कुशोत्तरीयसे युक्त होकर कुशनिर्मित पवित्रीको धारणकर पूर्वाभिमुख अथवा सूर्याभिमुख होकर रुद्राक्षकी माला लेकर देवताका ध्यान करता हुआ गायत्री-मन्त्रका जप करे।'

'दर्भेष्वासीनो दर्भान् धारयमाणः प्राङ्मुखः सावित्रीमावर्त्तयेत्।'

(बौधायनः)

'कुशनिर्मित आसनपर बैठकर हाथमें कुशोंको धारण किया हुआ पूर्वाभिमुख होकर गायत्री-मन्त्रका जप करे।'

जपस्य पुरतः कृत्वा प्राणायमत्रयं बुधः।
मन्त्रार्थस्मृतिपूर्वं च जपेदष्टोत्तरं शतम्॥
शक्तोऽष्टाधिकसाहस्रं जपेत्तं चार्पयञ्जपम्।

(हरिभक्तिविलास)

'बुद्धिमान् मनुष्य जप करनेके पूर्व तीन बार प्राणायाम करके मन्त्रार्थका स्मरण करते हुए एक सौ आठ बार जप करे। जापक यदि समर्थ हो तो, अपनेको समर्पण कर एक हजार आठ बार जप करे।'

शनैः शनैः सुविस्पष्टं न द्रुतं न विलम्बितम्।
न न्यूनं नाधिकं वापि जपं कुर्याद् दिने दिने॥

(नारदपञ्चरात्र)

'धीरे-धीरे अत्यन्त स्पष्ट रूपसे जप करे, किन्तु जल्दी-जल्दी अथवा रुक-रुककर तथा कभी कम और कभी अधिक जप न करे। अर्थात् प्रतिदिन नियमित संख्यामें जप करे।'

नोच्चैर्जपं बुधः कुर्याद्रहः कुर्यादतन्द्रितः।
समाहितमनास्तूष्णीं मनसा वापि चिन्तयेत्॥

(अग्निपुराण)

'विद्वान्को चाहिये कि वह उच्च स्वरसे जप न करे। वह एकान्त स्थानमें आलस्यरहित होकर शान्त चित्तसे मौन होकर या मन-ही-मन मन्त्रका चिन्तन करे।'

'नोच्चैर्जपं बुधः कुर्यात् सावित्र्यास्तु विशेषतः।'

(शङ्खस्मृति १२)

'विद्वान्को विशेषकर सावित्रीका जप उच्च स्वरसे नहीं करना चाहिये।'

तूष्णीमासीत सञ्जल्पश्चाण्डालपतितादिकान्।
दृष्ट्वा तान् वार्युपस्पृश्याभाष्य स्नात्वा पुनर्जपेत्॥
आचम्य प्रयतो नित्यं जपेदशुचिदर्शने।
यदि वा जपलोपः स्याज्जपादिषु कथञ्चन॥
व्याहरेद् वैष्णवं मन्त्रं स्मरेद्वा विष्णुमव्ययम्॥
(त्रैलोक्यमोहनतन्त्र)

'मौन होकर बैठकर जप करे। जप करते समय किसी चाण्डाल या पतितको देख ले तो आचमन करे और उनके साथ वार्तालाप होनेपर स्नान करके पुनः जप करे। अपवित्र-पदार्थका दर्शन होनेपर आचमन करके पुनः प्रयत्नपूर्वक जप करे। जप करते समय यदि कदाचित् जपका नियम भङ्ग हो जाय, तो विष्णु-मन्त्रका उच्चारण करे अथवा अव्यय विष्णु भगवान्का स्मरण करे।'

पर्वभिस्तु जपेद्देवीं माला काम्यजपे स्मृता।
गायत्री वेदमूला स्याद् वेदः पर्वसु गीयते॥
आरभ्यानामिकामध्यं पर्वाण्युक्ताभ्यनुक्रमात्।
तर्जनीमूलपर्यन्तं जपेद्दशसु पर्वसु॥
मध्यमाङ्गुलिमूले तु यत्पर्वद्वितयं भवेत्।
तं वै मेरुं विजानीयाज्जपे तं नातिलङ्घयेत्॥
(गायत्रीकल्प)

'गायत्री देवीका जप अँगुलियोंके पर्वों (पोरों) से करना चाहिये, किन्तु काम्य जपमें मालाका प्रयोग करे ऐसा स्मृतियोंमें कहा है। गायत्री वेदमूलक है और वेद पर्वोंमें गेय होता है। अनामिकाके मध्यसे आरम्भकर तर्जनीके मूलपर्वतक विहित दस पर्वोंमें क्रमशः जप करना चाहिये। मध्यमा अँगुलिके मूलमें जो दो पर्व होते हैं, उन्हें मेरु जानना चाहिये और उसका उल्लंघन जपमें कभी न करे।'

तर्जनी मध्यमाऽनामा कनिष्ठा चेति ताः क्रमात्।
तिस्रोऽङ्गुल्यस्त्रिपर्वाणो मध्यमा चैकपर्विका॥
पर्वद्वयं मध्यमाया मेरुत्वेनोपकल्पयेत्।
अनामामध्यमारभ्य कनिष्ठादित एव च॥
तर्ज्जनीमूलपर्यन्तं दशपर्वसु सञ्जपेत्।
अङ्गुलीर्न वियुञ्जीत किञ्चिदाकुञ्चिते तले।
अङ्गुलीनां वियोगा च छिद्रे च स्रवते जपः॥

अङ्गुल्यग्रे च यज्जप्तं यज्जप्तं मेरुलङ्घने।
पर्वसन्धिषु यज्जप्तं तत्सर्वं निष्फलं भवेत्॥
गणनाविधिमुल्लङ्घ्य यो जपेत्तज्जपं यतः।
गृह्णन्ति राक्षसास्तेन गणयेत्सर्वथा बुधः॥
जपसङ्ख्या तु कर्तव्या नासङ्ख्यातं जपेत्सुधीः।
हृदये हस्तमारोप्य तिर्यक् कृत्वा कराङ्गुलीः॥
आच्छाद्य वाससा हस्तौ दक्षिणेन सदा जपेत्॥
(सनत्कुमारसंहिता)

'जपमें तर्जनी, मध्यमा, अनामिका तथा कनिष्ठा—ये क्रमशः चार अँगुलियाँ उपयोगी हैं, जिनमें तीन अँगुलियोंके तीन-तीन पर्व एवं मध्यमाका एक पर्व उपयोगी है। मध्यमाके अवशिष्ट दो पर्वोंको मेरु समझना चाहिये। अनामिकाके मध्य-पर्वसे आरम्भकर कनिष्ठाके मूलसे होते हुए तर्जनीके मूलपर्वतक दस पर्वोंमें जप करना चाहिये। हथेलीके थोड़ा झुकनेपर अँगुलियोंको अलग-अलग न होने दे, क्योंकि अँगुलियोंके अलग-अलग होनेपर जो छिद्र होता है उसमें जप स्रवित हो जाता है अर्थात् क्षीण हो जाता है। अँगुलीके अग्रभागमें तथा मेरुके लंघनमें जो जप किया जाता है और जो जप पर्वोंके सन्धियों या जोड़ोंमें किया जाता है, वह सब निष्फल हो जाता है। गणनाविधि-का उल्लंघन करके जो जप किया जाता है उसे राक्षस ग्रहण कर लेते हैं। अतः विद्वान्‌को चाहिये कि वह गणनाविधिसे सर्वथा संख्यामें ही जप करे। जपकी संख्या (गिनती) करनी चाहिये एवं विद्वान् कभी असंख्यात जप न करे। हाथको हृदयमें लगाकर हाथकी अँगुलियोंको तिरछाकर तथा वस्त्रसे हाथोंको आच्छादितकर दाहिने हाथसे सदा जप करे।'

अनामामध्यमाक्रम्य जपं कुर्यात्तु मानसम्।
मध्यमामध्यमाक्रम्य जपं कुर्यादुपांशुकम्॥
तर्जनीं तु समाक्रम्य जपं नैव तु कारयेत्।
एकैकमणिमङ्गुष्ठेनाकर्षन् प्रजपेन्मनुम्॥
मेरौ तु लङ्घिते देवि ! न मन्त्रफलभाग्भवेत्॥
(शिवागमः)

'अनामिकाके मध्यको आक्रमण करके अर्थात् अनामिकाके मध्य भागमें जपमाला रखकर एक-एक मणिको अँगूठेसे खींचते हुए मानस-

मन्त्र जप करे और उपांशु-जप मध्यमा अँगुलीके मध्यमें जपमाला रखकर करे। परन्तु तर्जनीके द्वारा मालाका स्पर्शकर जप कभी न करे। हे देवि! मेरुका उल्लंघन करनेपर जपका फल नहीं प्राप्त होता। अर्थात् मेरुके पास जप करते-करते जब पहुँचे, तो उसको लाँघे नहीं, किन्तु वहींसे जप करता हुआ लौटे।'

गायत्री-मन्त्रके त्रैकालिक जपका विधान

प्रातः केवलगायत्री मध्याह्ने व्याहृतियुताः।
सायाह्ने तु यथायुक्ता जाप्यं नित्यं समाचरेत्॥
(व्यासः)

'प्रातःकाल केवल गायत्री-मन्त्रका जप करे, मध्याह्नमें व्याहृति-युक्त गायत्री-मन्त्रका जप करे तथा सायंकालमें जैसा उचित समझे वैसा जप प्रतिदिन करे।'

त्रिकाल सन्ध्यामें गायत्री-जप करनेकी विधि

प्रातर्नाभौ करं कृत्वा मध्याह्ने हृदि संस्थितम्।
सायं जपति नासाग्रे जपस्तु त्रिविधः स्मृतः॥
कृत्वोत्तानौ करौ प्रातः सायं न्युब्जौ करौ तथा।
मध्याह्ने हृदयस्थौ तु कृत्वा जपमुदीरयेत्॥
प्रातर्मध्याह्नयोस्तिष्ठन् गायत्रीजपमारभेत्।
ऊर्ध्वजानुस्तु सायाह्ने ध्यानालोकनतत्परः॥
(आह्निकप्रकाश)

'प्रातःकाल नाभिके समीप हाथको रखकर, मध्याह्नमें हृदयके समीप रखकर और सायंकाल हाथको नाकके अग्रभागके समीप रखकर जप करना करना चाहिये। इस प्रकार जप तीन प्रकारका होता है। प्रातःकाल हाथको उत्तान कर तथा सायंकाल तिरछा कर और मध्याह्नमें हृदयमें रखकर जप करना चाहिये। प्रातः तथा मध्याह्न-कालमें बैठकर और सायंकाल जानुको ऊपर उठाकर, ध्यानमग्न होकर जप करना चाहिये।'

प्रातर्नाभौ करं कृत्वा मध्याह्ने हृदि संस्थितम् ।
सायं जपेच्च नासाग्रे एष जाप्यविधिः स्मृतः ॥
(शौनकः)

'जपके समय प्रातःकाल अपने हाथको नाभिके पास, मध्याह्नमें हृदयके पास और सायङ्कालमें नासिकाके अग्रभागके पास रखकर जप करना चाहिये ।'

कृत्वोत्तानौ करौ प्रातः सायं चाधः करौ तथा ।
मध्याह्ने हृदयस्थौ तु कृत्वा जपमुदीरयेत् ॥
(देवीभागवत ११।१९।१८)

'प्रातःकाल जपके समय दोनों हाथोंको उत्तान (ऊँचा) कर, सायङ्कालमें नीचे कर और मध्याह्नकालमें हृदयके पास करके जप करना चाहिये ।'

कृत्वोत्तानौ करौ प्रातः सायं चाधोमुखौ करौ ।
मध्ये स्कन्धभुजाभ्यां तु जप एवमुदाहृतः ॥
अधोहस्तं तु पैशाचं मध्यहस्तं तु दैवतम् ॥
(वाधूलस्मृति १३७, १३८)

'प्रातःकाल दोनों हाथोंको ऊँचे रखकर, सायंकाल हाथोंको नीचे कर एवं मध्याह्नमें हाथ और कन्धेको बीचमें रखकर गायत्रीका जप करनेसे राक्षस, हाथ बाँधकर जप करनेसे गान्धर्व और ऊपर हाथ उठाकर जप करनेसे दैवत जप होता है ।'

जपमें त्रिपदा और गायत्री-पूजनमें चतुष्पदा गायत्री

जप्ये तु [1]त्रिपदा ज्ञेया पूजने तु चतुष्पदा ।
न्यासे जप्ये तथा ध्याने अग्निकार्ये तथार्चने ॥
सर्वत्र त्रिपदा ज्ञेया ब्राह्मणस्तत्त्वचिन्तकैः ॥
(बृहत्पाराशरस्मृति २।९८–९९)

१. तत्सवितुर्वरेण्यं इति सावित्र्याः प्रथमः पादः । भर्गो देवस्य धीमहि इति सावित्र्याः द्वितीय पादः । धियो यो नः प्रचोदयात् इति सावित्र्याः तृतीयः पादः । (गोपथब्राह्मण १।३४–३६)

'जप करनेमें गायत्री त्रिपदा कही गयी है और पूजनमें चतुष्पदी कही गयी है। तत्त्वचिन्तक ब्राह्मण न्यास, जप, ध्यान, अग्निकार्य और पूजनमें सर्वत्र गायत्रीको त्रिपदा जानें।'

कामना-भेदसे गायत्री-जपके लिये दिशाएँ

तत्पूर्वाभिमुखं वश्यं दक्षिणं चाभिचारकम्।
पश्चिमं धनदं विद्यादौत्तरं शान्तिदं भवेत्॥
(लिङ्गपुराण)

'वशीकरणके लिये पूर्वाभिमुख, अभिचारके लिये (मारणके लिये) दक्षिणाभिमुख, धनके लिये पश्चिमाभिमुख और शान्तिके लिये उत्तराभिमुख होकर जप करना चाहिये।'

गायत्री-जप वस्त्रसे ढककर करना चाहिये

ओङ्कारः पुरुषश्चैव गायत्री सुन्दरी तथा।
तयोः संयोगकाले तु वस्त्रमाच्छाद्य गण्यते॥
(गायत्रीकल्प)

'ओङ्कार पुरुष है और गायत्री उसकी सुन्दरी है। उन दोनोंके संयोग-कालमें अर्थात् प्रणवपूर्वक गायत्री-जप करनेके समय मालाको वस्त्रसे ढककर गायत्री-जप करना चाहिये।'

ओङ्कारः पुरुषो ज्ञेयो गायत्री स्त्री तु कथ्यते।
तयोर्मेलापकं चैव वस्त्रेणाच्छाद्यते करः॥

'ॐकारको पुरुष तथा गायत्रीको स्त्री कहा गया है। जपकालमें इन दोनोंका मिलन होता है, इसीलिये वस्त्रसे हाथको ढक लेना चाहिये।'

जपकर्ताको चाहिये कि वह अपने दाहिने हाथको वस्त्रसे ढककर जप करे। इस प्रकार जप करनेसे ही जप सफल होता है, इसीलिये जपके समय गोमुखीको धारण किया जाता है।

वस्त्रेणाच्छादयेद्धस्तं दक्षिणं यः सदा जपेत् ।
तस्य स्यात् सफलं जाप्यं तद्धीनमफलं स्मृतम् ॥
अतएव जपार्थं सा गोमुखी ध्रियते जनैः ॥
(वृद्ध मनुः)

'जो दाहिने हाथको वस्त्रसे ढककर सर्वदा जप करता है, उसीका जप सफल होता है और जो इसके विरुद्ध जप करता है, उसका जप व्यर्थ ही होता है। इसीलिये मनुष्य जपके लिये—गोमुखीको धारण करते हैं।'

वस्त्रेणाच्छाद्य तु करं दक्षिणं यः सदा जपेत् ।
तस्य स्यात् सफलं जाप्यं तद्धीनमफलं स्मृतम् ॥
(व्यासः)

'जो अपने दाएँ हाथको सर्वदा वस्त्रसे ढककर जप करता है, उसीका जप सफल होता है। जो ऐसा नहीं करता, उसका जप निष्फल होता है।'

वस्त्रेणाच्छाद्य तु करं दक्षिणं यः सदा जपेत् ।
तस्य स्यात् सफलं जाप्यं तद्धीनमफलं स्मृतम् ॥
यक्षरक्षः पिशाचाश्च सिद्धा विद्याधरा गणाः ।
यस्मात् प्रभावं गृह्णन्ति तस्माद् गुप्तं समाचरेत् ॥

'गोमुखी मालाको वस्त्रसे ढककर जो दाहिने हाथसे सर्वदा जप करता है, उसका जप सफल होता है और जो इस प्रकार जप नहीं करता, उसका जप असफल होता है और उसके किये हुए जपके फलको यक्ष, राक्षस, पिशाच, सिद्ध और देवगण ग्रहण कर लेते हैं। अतः गोमुखीमालाको जपके समय सर्वदा गुप्त (ढककर) रखना चाहिये।'

यक्षराक्षसभूतानि सिद्धविद्याधरोरगाः ।
हरन्ति प्रसभं यस्मात्तस्माद् गुप्तं समाचरेत् ॥
(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ७।१४१)

'यक्ष, राक्षस, भूत, सिद्ध, विद्याधर तथा सर्प—ये सभी हाथको बिना ढके हुए जपके फलको हठात् हरण कर लेते हैं। अतः मालाको ढककर ही जप करना चाहिये।'

भूत-राक्षस-वेतालाः सिद्ध-गन्धर्व-चारणाः ।
हरन्ति प्रकटं यस्मात्तस्माद् गुप्तं जपेत्सुधीः ॥

'मालाको खुली रखकर जप करनेसे उसे भूत, राक्षस, बेताल, सिद्ध, गन्धर्व और चारण हर लेते हैं, अतः गुप्त-रूपसे जप करना ही बुद्धिमान् पुरुषका कर्तव्य है ।'

गायत्री-जपके बाद शताक्षरा गायत्री और ब्रह्मगायत्रीका जप भी आवश्यक है

दैनिक गायत्री-मन्त्र-जप करनेके बाद जपकर्ता एक बार शताक्षरा गायत्रीका और एक बार चौबीस अक्षरोंवाली ब्रह्म-गायत्रीका जप अवश्य करे। अन्यथा जपकर्ताको जप करनेका फल प्राप्त नहीं होता।

शताक्षराञ्च गायत्रीं सकृदावर्तयेत्सुधीः ।
चतुर्विंशत्यक्षराणि गायत्र्याः कीर्तितानि हि ।
जातवेदसनाम्नीञ्च ऋचमुच्चारयेदतः ॥
त्र्यम्बकस्यर्चमाकृत्य गायत्री शतवर्णका ।
भवतीयं महापुण्या सकृज्जप्या बुधैरियम् ॥
ॐकारं पूर्वमुच्चार्य भूर्भुवः स्वस्तथैव च ।
चतुर्विंशत्यक्षराञ्च रायत्रीं प्रोच्चरेत्ततः ॥
एवं नित्यं जपं कुर्याद् ब्राह्मण्ये विप्रपुङ्गवः ।
स समग्रं फलं प्राप्य सन्यायाः सुखमेधते ॥

'विज्ञ पुरुषको सौ अक्षरवाली गायत्री (शताक्षरा गायत्री) की एक बार अवश्य जप करना चाहिये ।'

(देवीभागवत ११।१६।१०२–१०६)

शताक्षरा गायत्री इस प्रकार है—

"ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ।। ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ।। ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः । स नः पर्षदतिदुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ।।" यह सौ अक्षरकी गायत्री है । इसमें 'भूर्भुवः स्वः' तीन व्याहृतियाँ नहीं गिनी जाती हैं। यह ॐ (एक प्रणव) से सम्पन्न है। इस शताक्षरा गायत्रीका एक बार प्रतिदिन जप करना विद्वानोंके लिये महान् पुण्यप्रद है। पश्चात् 'ॐ भूर्भुवः स्वः' के साथ

चतुर्विंशति अक्षरवाली गायत्रीका जप करे। इस प्रकार प्रतिदिन गायत्री-जप करनेवाला श्रेष्ठ ब्राह्मण सन्ध्योपासनका सम्पूर्ण फल प्राप्त कर सुख भोगता है।'

जपके बाद आसनके नीचेकी मृतिकाको मस्तक लगाना चाहिये

यस्मिन् स्थाने जपं कृत्वा शक्रो हरति तज्जपम्।
तन्मृदा लक्ष्म कुर्वीत ललाटे तिलकाकृतिः॥
(व्यासस्मृति)

'जिस आसन पर बैठकर जप किया है, उसके नीचेकी मृत्तिका मस्तकमें लगानी चाहिये। अन्यथा जपके फलको इन्द्र ले लेता है।'

'अप्रोक्षितजपस्थानाच्छक्रो हरति यज्जपम्।
तस्माज्जपान्ते तत्प्रोक्ष्य ललाटे तिलकं क्रियात्॥'
(पटले)

'बिना जलसे मार्जित स्थानमें किये गये जपके फलको इन्द्र हरण कर लेता है अतः जपके बाद उस स्थलको जलसे प्रोक्षण करके ललाटमें तिलक करना चाहिये।'

विधिहीन जप निष्फल होता है

गच्छतस्तिष्ठतो वापि स्वेच्छया कर्म कुर्वतः।
अशुचेर्वा विना संख्यां तत्सर्वं निष्फलं भवेत्॥
(गौतमः)

'चलते हुए, बैठे हुए, स्वेच्छासे किसी अन्य कार्य को करते हुए तथा अपवित्र अवस्थामें बिना संख्याका किया हुआ समस्त जप निष्फल होता है।'

अङ्गुल्येषु यज्जप्तं यज्जप्तं मेरुलङ्घने।
असंख्यातं च यज्जप्तं तत्सर्वं निष्फलं भवेत्॥
(व्यासस्मृति)

'अंगुलिके अग्रभागसे जप करनेपर, मेरुका लङ्घन करनेपर तथा बिना संख्याके जप करनेपर वह समस्त जप निष्फल हो जाता है।'

अङ्गुल्यग्रे च यज्जप्तं यज्जप्तं मेरुलङ्घने।
पर्वसन्धिषु यज्जप्तं तत्सर्वं निष्फलं भवेत्॥
(सनत्कुमारसंहिता)

'अङ्गुलीके अग्रभाग (नखके पास) तथा पर्वकी लकीरपर और सुमेरुका उल्लंघन कर किया हुआ जप निष्फल होता है।'

उष्णीषी कञ्चुकी चैव मुक्तकेशी गलावृतः।
प्रलपन् कम्पनश्चैव तत्कृतो निष्फलो जपः॥

'पगड़ी पहनकर, कुर्ता पहनकर, नग्न होकर, शिखा खोलकर, कण्ठको वस्त्रसे लपेटकर, बोलते हुए, और काँपते हुए जो जप किया जाता है, वह निष्फल होता है।'

जपके समय गायत्री-मन्त्रार्थके स्मरणसे पापोंकी निवृत्ति

जपस्याभ्यन्तरे व्याख्या स्मर्तव्या मनसा द्विजैः।
स्मरणात् सर्वपापानि प्रणश्यन्ति न संशयः॥
(भारद्वाजः)

'द्विजोंको चाहिये कि गायत्रीका जप करते समय गायत्री-मन्त्रके अर्थका मनसे अवश्य स्मरण करें। अर्थके स्मरणसे जप करनेवालेके समस्त पाप विनष्ट हो जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं है।'

जपके समय गायत्रीके ऋषि, छन्द, देवताका ध्यान और ज्ञान आवश्यक है

'जपकाले ह्यनुस्मरेत्' इस योगियाज्ञवल्क्यके वचनानुसार जापकको गायत्री-मन्त्र आदिके जपके समय ऋषि, छन्द, देवता, विनियोगका स्मरण और ज्ञान अत्यावश्यक है। अतएव कहा है—

छन्द ऋष्यादि विज्ञाय जपेन्मन्त्रमतन्द्रितः ।
जपेदहरहर्ज्ञात्वा गायत्रीं मनसा द्विजः ॥

(हारीतस्मृति ४।४७)

'गायत्रीके छन्द, ऋषि आदिको जानकर आलस्यरहित होकर द्विज प्रतिदिन मनसे गायत्रीका जप करे ।'

ऋषिश्छन्दोऽधिदैवं च ध्यायन् मन्त्रस्य सत्तमे ।
यस्तु मन्त्रं जपेद् गार्गि तदेव हि फलप्रदम् ॥

(याज्ञवल्क्यसंहिता, उत्तरार्द्ध २।१८)

'हे सत्तमे ! हे गार्गि ! मन्त्रका ऋषि, छन्द, अधिदेवताका ध्यान करता हुआ जो मन्त्रको जपता है, वह मन्त्र अवश्य फल देता है ।'

जपके अन्तमें परब्रह्मका स्मरण करना आवश्यक है

जपान्ते संस्मरेद् भूय एकमेवाद्वयं विभुम् ।
तेनैव सर्वकर्माणि सम्पन्नान्यकृतान्यपि ॥

'जपके अन्तमें पुनः उन एक अद्वितीय परब्रह्मका स्मरण करना चाहिये । ऐसा करनेसे ही समस्त कर्म भूलसे न किये जानेपर भी सुसम्पन्न हो जाते हैं ।'

'गायत्री च यथाशक्ति जप्त्वा ध्यायेत् परं पदम् ।'

(हारीतसंहिता ५।११, हारीतस्मृति ६।११)

'गायत्रीका यथाशक्ति जप करके परब्रह्मका ध्यान करे ।'

जपके समय मौन भंग होनेपर विशेष विधान

यदि वाग्यमलोपः स्याज्जपादिषु कथञ्चन ।
व्याहरेद् वैष्णवं मन्त्रं स्मरेद्वा विष्णुमव्ययम् ॥

(याज्ञवल्क्यस्मृति ७।१४८, १४९)

'यदि जपकालमें मौन भङ्ग हो जाय तो विष्णुसम्बन्धी मन्त्रोंका उच्चारण अथवा भगवान् विष्णुका स्मरण करना चाहिये।'

जपादि कर्ममें त्रुटि होने पर कर्तव्य

यद्यदङ्गं विहीयेत तत्संख्याद्विगुणो जपः।
कर्त्तव्यश्चाङ्ग सिद्ध्यर्थं तदशक्तेन भक्तितः॥
विप्रभोजनमात्रेण व्यङ्गं साङ्गं भवेद् ध्रुवम्।
यत्र भुङ्क्ते द्विजस्तस्मात् तत्र भुङ्क्ते हरिः स्वयम्॥

(वसिष्ठः)

'यदि किसी अङ्गकी हानि हो जाय तो उसकी पूर्तिके लिये द्विगुणित जप करे, ऐसा करनेसे ही अङ्गकी सिद्धि हो जाती है, यदि ऐसा करनेमें वह असमर्थ हो तो भक्तिपूर्वक ब्राह्मणभोजन कराने मात्रसे हीन अङ्ग निश्चित ही साङ्ग हो जाता है, जहाँ पर द्विज भोजन करते हैं वहाँ साक्षात् भगवान् हरि भोजन करते हैं।'

गायत्री-जपमें प्रणवका विचार

जपके समय गायत्री-मन्त्रके आदि और अन्तमें प्रणव लगाना आवश्यक है। इस विषयमें योगी याज्ञवल्क्यका कथन है—

ओङ्कारः पूर्वमुच्चार्य भूर्भुवः स्वस्ततः परम्।
गायत्रीं प्रणवं चान्ते जप्यं ह्येवमुदाहृतः॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४।२६)

'पहले ओङ्कारका उच्चारण कर पश्चात् भूर्भुवः स्वः—इन तीन व्याहृतियोंका उच्चारण करे। अनन्तर गायत्री-मन्त्रका उच्चारण कर फिर अन्तमें प्रणव (ओङ्कार) का उच्चारण करना चाहिये। इस प्रकार गायत्री-मन्त्रका जप बतलाया गया है।'

इसी प्रकार अन्यत्र भी लिखा है—

ओङ्कारं पूर्वमुच्चार्य भूर्भुवः स्वस्तथैव च।
गायत्री प्रणवश्चान्ते जपे चैवमुदाहृतम्॥

(अग्निपुराण २१५।१५)

ॐकारं पूर्वमुच्चार्य भूर्भुवः स्वस्तथैव च।
गायत्री प्रणवश्चान्ते जपो ह्येव उदाहृतः॥
(योगीश्वरः)

प्रणवः पूर्वमुच्चार्य भूर्भुवः स्वस्ततः परम्।
गायत्रीं प्रणवश्चान्ते जपे ह्येवमुदाहृतम्॥
(याज्ञवल्क्यः)

प्रणवं पूर्वमुच्चार्य व्याहृतित्रितयं तथा।
ततस्त्रिपाद्गायत्री प्रणवेन समापयेत्॥

कुछ लोग स्मृतिसारसमुच्चयके **'गृहस्था ब्रह्मचारी च प्रणवाद्यामिमां जपेत्'** इत्यादि वचनके अनुसार गृहस्थ और ब्रह्मचारीके लिये गायत्री-मन्त्रके जपमें आदिप्रणवा गायत्री ही मानते हैं। किन्तु श्रीवीरमित्रोदयने अपने आह्निकप्रकाशमें आद्यन्तप्रणवा गायत्रीके जपका ही उल्लेख किया है। हरिहर आदि भाष्यकारोंने गायत्री-मन्त्रके अन्तमें भी प्रणव लगानेका विधान बतलाया है। अतः योगी याज्ञवल्क्य आदि ऋषि-महर्षियोंके वचनानुसार जपकालमें सभीको आद्यन्तप्रणवा गायत्रीका ही उपयोग करना चाहिये। अन्यत्र गृहस्थ और ब्रह्मचारीको 'आदिप्रणवा' का उपयोग करना चाहिये।

गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित और स्वर्गीय **महामहोपाध्याय पण्डित श्रीविद्याधरजी गौड वेदाचार्य** द्वारा सम्पादित 'नित्यकर्म-प्रयोग' की भूमिका में भी लिखा है कि 'गृहस्थ और ब्रह्मचारीको गायत्री-मन्त्रके जपमें आद्यन्त प्रणवका प्रयोग करना चाहिये।

जपके भेद और उनके उच्चारणकी विधि

त्रिविधो जपयज्ञः स्यात्तस्य भेदं निबोधत।
वाचिकश्च उपांशुश्च मानसस्त्रिविधः स्मृतः॥
त्रयाणां जपयज्ञानां श्रेयान् स्यादुत्तरोत्तरः।
(नरसिंहपुराण)

'जप-यज्ञ तीन प्रकारका होता है—उपांशु और मानस। इन तीनों जप-यज्ञोंमें उत्तरोत्तर जप श्रेष्ठ कहा गया है।'

यदुच्चनीचस्वरितैः शब्दैः स्पष्टपदाक्षरैः।
मन्त्रमुच्चारयेद् वाचा वाचिकोऽयं जपः स्मृतः॥
(विश्वामित्रकल्प)

'उदात्त, अनुदात्त, स्वरित, पद, अक्षर और शब्दके स्पष्ट होनेका ध्यान रखते हुए वाणीसे मन्त्रका स्पष्ट उच्चारण 'वाचिक' जप कहा जाता है।'

शनैरुच्चारयेन्मन्त्रमीषदोष्ठौ च चालयेत्।
अपरैर्न श्रुतः किञ्चित् स उपांशुर्जपः स्मृतः॥
(विश्वामित्रकल्प)

'दूसरोंको शब्द सुनायी न दे, इस प्रकार थोड़ा-थोड़ा ओठ हिलाकर मन्द स्वरसे मन्त्रका उच्चारण करना 'उपांशु' जप कहलाता है।'

धिया यदक्षरश्रेण्या वर्णाद् वर्णं पदात् पदम्।
शब्दार्थचिन्तनं भूप कथ्यते मानसो जपः॥
(विश्वामित्रकल्प)

'मन-बुद्धिके द्वारा मन्त्रके वर्ण, शब्द और अर्थका चिन्तन करना 'मानस' जप कहलाता है।'

उत्तमः मानसं जप्यमुपांशुं मध्यमं विदुः।
अधमं वाचिकं प्राहुः सर्वमन्त्रेषु वै द्विजाः॥
(विश्वामित्रकल्प)

'हे द्विज! मानसजप समस्त मन्त्रोंमें उत्तम, उपांशुजप मध्यम और वाचिकजप अधम कहा गया है।'

महर्षि हारीतने भी तीन प्रकारके जप और उनके भेद तथा उनकी क्रमशः श्रेष्ठताका इस प्रकार उल्लेख किया है—

त्रिविधो जपयज्ञः स्यात्तस्य तत्त्वं निबोधत।
वाचिकश्चाप्युपांशुश्च मानसश्च त्रिधा कृतिः॥
त्रयाणामपि यज्ञानां श्रेष्ठः स्यादुत्तरोत्तरः
यदुच्चनीचोच्चरितैः शब्दैः स्पष्टपदाक्षरैः॥
मन्त्रमुच्चारयन् वाचा जपयज्ञस्तु वाचिकः।
शनैरुच्चारयन् मन्त्र किञ्चिदोष्ठौ प्रचालयेत्॥
किञ्चिच्छ्रवणयोग्यः स्यात् स उपांशुर्जपः स्मृतः।

धिया पदाक्षरश्रेण्या अवर्णमपदाक्षरम् ॥
शब्दार्थचिन्तनाभ्यां तु तदुक्तं मानसं स्मृतम् ॥
(हारीतस्मृति ४।४०–४४)

'वाचिक उपांशु और मानसके भेदसे जपयज्ञ त्रिविध है उसके तत्त्वको आप लोग समझें । स्पष्टाक्षरोंसे युक्त शब्दोंके उदात्त-अनुदात्तादि उच्चारणोंसे उपर्युक्त तीनों जपयज्ञोंमें उत्तरोत्तर श्रेष्ठ माना गया है। जिसमें वाणीके द्वारा मन्त्रोंका उच्चारण किया जाय उसे वाचिक तथा कुछ-कुछ ओष्ठोंके सञ्चालनपूर्वक धीरे से मन्त्रका उच्चारण करता हुआ यदि वह मन्त्र कुछ सुनने योग्य हो तो उसे उपांशु और बुद्धिस्थ पद निबद्ध अक्षरोंकी परम्परासे वर्ण-पद एवं अक्षरोंका जिसमें स्पष्ट उच्चारण न हो केवल शब्द और अर्थका चिन्तन हो तो उसे मानस-यज्ञ कहा जाता है।'

भगवान् मनुने भी तीन प्रकारके जप और उनकी उत्तरोत्तर श्रेष्ठताका इस प्रकार वर्णन किया है—

विधियज्ञाज्जपयज्ञो विशिष्टो दशभिर्गुणैः ।
उपांशुः स्याच्छतगुणः साहस्रो मानसः स्मृतः ॥[1]
(मनुस्मृति २।८५)

'विधियज्ञ (अमावास्या, पूर्णिमा आदिपर किये जानेवाले दर्श-पूर्णमासादि यज्ञ) से जपयज्ञ दस गुना अधिक श्रेष्ठ है। जपयज्ञसे उपांशुजप (जिसको दूसरा कोई न सुन सके) सौ गुना अधिक श्रेष्ठ है। उपांशुजपसे हजार गुना अधिक मानसजप श्रेष्ठ है।'

मनः संहृत्य विषयान्मन्त्रार्थगतमानसः ।
न द्रुतं न विलम्बं च जपेन्मौक्तिकपङ्क्तिवत् ॥
उच्चरेदर्थमुद्दिश्य मानसः स जपः स्मृतः ।
जिह्वोष्ठौ चालयेत् किञ्चिद्देवतागतमानसः ॥
किञ्चिच्छ्रवणयोग्यः स्यादुपांशुः स जपः स्मृतः ।
मन्त्रमुच्चारयेद् वाचा वाचिकः स जपः स्मृतः ॥
जिह्वाजपः शतगुणः साहस्रो मानसः स्मृतः ।
[2]जिह्वाजपः स विज्ञेयः केवलं जिह्वया बुधः ॥ (तन्त्रसार

---

१. विधियज्ञाज्जपयज्ञो विशिष्टो दशभिर्गुणैः ।
उपांशुः स्याच्छतगुणः साहस्रो मानसः स्मृतः ॥
(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति १०।१४)

२. जिह्वाजप केवल जिह्वासे ही किया जाता है ।

'मनको विषयोंसे खींचकर, मन्त्रार्थमें मनको टिकाकर न जल्दी न देरी मोतीकी पंक्तिके समान जप करे। अर्थको ध्यानमें रखता हुआ मन ही मन मन्त्रोच्चारण यदि हो तो उसे मानसजप कहा गया है। मनसे देवताका ध्यान करता हुआ जिह्वा और ओष्ठमात्र चले और कुछ सुनाई दे तो उसे उपांशुजप कहते हैं। वाणीसे यदि मन्त्रोच्चारण किया जाय तो उसे वाचिक जप कहते हैं। जिह्वासे किया हुआ जपका फल सौगुना तथा मनसे किया हुआ जपका फल हजार गुना होता है। जिह्वासे ही मन्त्रोच्चारण हो तो पण्डितलोग उसे जिह्वाजप कहते हैं।'

शास्त्रकारोंने जिन जपोंका उल्लेख किया है, उन सभी जपोंको, विशेषत: गायत्री-जपको ऊँचे स्वरसे नहीं करना चाहिये।

उपांशुः स्याच्छतगुणः साहस्रो मानसः स्मृतः।
नोच्चैर्जाप्यं बुधः कुर्यात् सावित्र्यास्तु विशेषतः॥

(शङ्खस्मृति १२।१५)

'उपांशुजपका सौ गुना फल है और मानसजपका हजार गुना फल है, विद्वान् पुरुष किसी भी जपको ऊँचे स्वरसे न करे। विशेषरूपसे गायत्रीका जप ऊँचे स्वरसे नहीं करना चाहिये।'

मानसिक जपमें कोई नियम नहीं है

अशुचिर्वा शुचिर्वापि गच्छंस्तिष्ठन् स्वपन्नपि।
मन्त्रैकशरणो विद्वान् मनसैवं समभ्यसेत्॥
न दोषो मानसे जापे सर्वदेशेऽपि सर्वदा।
जपनिष्ठो द्विजश्रेष्ठोऽखिलं यज्ञफलं लभेत्॥

'जो विद्वान् निरन्तर मन्त्रोंके जप करनेका व्रत ग्रहण कर चुके हैं, उनके लिये सोते-जागते, चलते-फिरते, पवित्र और अपवित्र किसी भी अवस्थामें, किसी देश अथवा समयमें मानसिक जप करनेमें कोई दोष नहीं है, वे अपने मानसिक जपका अभ्यास चालू रख सकते हैं। इस प्रकार निरन्तर जपपरायण श्रेष्ठ द्विज समस्त यज्ञोंके फलके भाजन होते हैं।'

सप्तव्याहृतिसे सम्पुटित लक्ष गायत्री-मन्त्रके जपसे सर्वविध फलोंकी प्राप्ति

प्रथमं लक्षगायत्रीं सतव्याहृतिसम्पुटाम् ।
ततः सर्वैर्वेदमन्त्रैः सर्वसिद्धिश्च बिन्दति ॥
(शौनकीय ऋग्विधान)

'सर्वप्रथम सप्त व्याहृतियोंसे सम्पुटित गायत्री-मन्त्रका एक लक्ष जप करनेसे समस्त वेदमन्त्रोंसे उपलब्ध फल और समस्त प्रकारकी सिद्धि प्राप्त होती है।'

मन्त्रसिद्धिके बिना जप, होम आदि निष्फल हैं

मन्त्रसिद्धिं विना कर्तुर्जपहोमादिकाः क्रियाः ।
काम्यं वा यदि वा मोक्षः सर्वं तन्निष्फलं भवेत् ॥
(देवीभागवत ११।२१।४५)

'बिना मन्त्रसिद्धिके जपकर्त्ताके जप और होम आदि सभी क्रियाएँ—चाहे वे सकाम हों अथवा निष्काम—सफल नहीं होतीं।'

गायत्री-मन्त्रको सिद्ध करना अनावश्यक है

जिस प्रकार वेदातिरिक्त मन्त्रोंको सिद्ध करनेकी आवश्यकता होती है, उस प्रकार गायत्री-मन्त्रको सिद्ध करनेकी आवश्यकता नहीं है। क्योंकि गायत्री-मन्त्र स्वतः सिद्ध है।

चारों आश्रमोंके लिये गायत्री-जपका विधान

गृहस्थो ब्रह्मचारी च शतमष्टोत्तरं जपेत् ।
वानप्रस्थे यतिश्चैव जपेदष्टसहस्रकम् ॥
(वाधूलस्मृति १५४।)

'गृहस्थ और ब्रह्मचारी १०८ बार गायत्री-मन्त्रका जप करें। वानप्रस्थ तथा यति १००८ बार गायत्रीका जप करें।'

अन्यत्र लिखा भी है—

ब्रह्मचारी गृहस्थश्च शतमष्टोत्तरं जपेत्।
वानप्रस्थश्च संन्यस्तो द्विसहस्राधिकं जपेत्॥

'ब्रह्मचारी और गृहस्थ कमसे कम १०८ बार जप करे तथा वानप्रस्थ एवं संन्यासीको प्रतिदिन दो हजारसे भी अधिक गायत्रीका जप करना चाहिये।'

नित्यं जपेत्तु सावित्रीं सान्ध्यकर्मस्वतन्द्रितः॥
पृथक्त्वेन सहस्रं वै न चेतष्टोत्तरं शतम्।
अष्टाविंशतिसंख्याकं दशन्यूनं कदाचन॥
न कुर्यादेव सहसा कुर्याच्चेद् ब्रह्म नश्यति।
विशेषेणात्र भूयश्च ब्रह्मचारि-गृहस्थयोः॥
यतिरत्र प्रकथितः कुटीचक-बहूदकौ।
हंसस्य परमहंसस्य न गायत्रीजपः स्मृतः॥
तयोर्जपः प्रकथितः प्रणवस्यैव केवलम्।

(लौगाक्षिस्मृति)

'सन्ध्याकर्ममें सावधान होकर सावित्रीका जप करना चाहिये, सन्ध्याकर्मसे अतिरिक्त एक हजार की संख्यामें गायत्रीका जप करे अथवा एक सौ आठ वार जप करें। सन्ध्याकर्ममें सहसा कोई आवश्यक कार्य आ पड़े तो अट्ठाइस बार या कमसे कम दस बार गायत्रीका जप अवश्य करे यह नियम केवल आवश्यक कार्य आ जानेपर ही है अतः एकाएक ऐसा नहीं करना चाहिये यदि करता है तो उसका ब्रह्मत्व नष्ट हो जाता है। यह नियम विशेष करके ब्रह्मचारी और गृहस्थों-के लिये है किन्तु यति कुटीचक और बहूदक व्रतियोंके लिये निरन्तर पूर्ण जपका ही विधान है। हंस और परमहंस कोटिके व्रतियोंके लिये गायत्री-जपका कोई विधान नहीं है। इन दोनोंके लिये मात्र ॐकार ही पर्याप्त है।'

प्रतिदिन गायत्री-जपकी संख्याका विधान

विधिनाऽष्टोत्तरशतमष्टाविंशतिरेव वा।
दशवारमशक्तो वा नातो न्यूनं कदाचन॥

(देवीभागवत ११।१७।१६)

'विधिपूर्वक एक सौ आठ, अट्ठाईस अथवा अशक्त हो तो दस बार गायत्रीका जप करना चाहिये। इससे कम किसी भी स्थितिमें नहीं जपना चाहिये।'

अष्टोत्तरं सहस्रं वा शतं वा दशधापि वा।
जपानां नियमो भद्रे सर्वत्राह्निककर्मणि॥

(आह्निककर्म)

'शिवजी कहते हैं—हे भद्रे! समस्त नित्यकर्ममें सहस्र अथवा अष्टोत्तरशत अथवा दस बार जप करनेका नियम है।'

अष्टोत्तरसहस्रं वा अष्टोत्तरशतं तु वा।
अष्टाविंशतमेवाऽथ गायत्रीदशकं जपेत्॥

(गायत्रीकल्प ७।१५)

'गायत्रीका १००८ बार अथवा १०८ बार अथवा २८ बार अथवा १० बार जप करना चाहिये।'

अष्टोत्तरशतं नित्यमष्टाविंशतिरेव वा।
विधिना दशकं वापि त्रिकालं प्रजपेद् बुधः॥

(व्यासः)

'विद्वान् द्विज प्रतिदिन तीनों कालोंमें विधिपूर्वक १०८ बार अथवा २८ बार अथवा १० बार गायत्रीका जप अवश्य करे।'

एक दूसरे आचार्यका मत है—

सायं प्रातश्च मध्याह्ने सावित्रीं वाग्यतो जपेत्।
सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां दशावराम्॥

'द्विज वाणीका संयमकर प्रातःकाल, मध्याह्नकाल और सायङ्कालमें गायत्रीका जप करे। प्रतिदिन एक हजार गायत्री-जप करना उत्तम है, १०० बार गायत्री-जप करना मध्यम है और १० बार गायत्री-जप करना अधम कहा गया है।'

उदितेषु नक्षत्रेषु त्रीन् प्राणायामान् कृत्वा सावित्रीं सहस्रकृत्व आवर्त्तयेच्छतकृत्वो वा दशावराम्।' (सामवेदीय गह्यसूत्र)

'नक्षत्रोंके उदित हो जानेपर तीन बार प्राणायामकर गायत्री-मन्त्रका हजार बार अथवा सौ बार जप करना श्रेष्ठ कहा गया है। केवल दस बार जप करनेको प्रशस्त नहीं कहा है।'

'अष्टकृत्व एकादशकृत्वो द्वादशकृत्वः पञ्चदशकृत्वः शतकृत्वः सहस्रकृत्व इति।' (अथर्ववेदपरिशिष्ट सन्ध्यासूत्र २।७)

'गायत्रीका जप कमसे कम प्रतिदिन आठ बार, ग्यारह बार, बारह बार, पन्द्रह बार, सौ बार और एक हजार बार करना चाहिये।'

ओं 'पूर्वां गायत्रीमष्टकृत्व एकादशकृत्वो द्वादशकृत्वः पञ्चदशकृत्वः शतकृत्वः सहस्रकृत्वश्चेति।' (गोभिलीय सन्ध्यापरिशिष्ट)

'ॐ है पूर्वमें जिसके ऐसी गायत्रीका आठ बार, ग्यारह बार, बारह बार, पन्द्रह बार, सौ बार अथवा एक हजार बार जप करना चाहिये।'

सव्याहृति जपं कुर्यादष्टोत्तरशतं तु वा।
दशाष्टाविंशतिं चैव करमालाक्षमालया॥

(अथर्ववेदीय कौशिकगृह्यकारिका)

'व्याहृतिपूर्वक गायत्रीका जप एक सौ आठ, दस या अट्ठाइस बार करमाला अथवा अक्षमालासे करना चाहिये।'

सहस्रकृत्वः सावित्रीं जपेदव्यग्रमानसः।
शतकृत्वोऽपि वा सम्यक् प्राणायामपरो यदि॥

(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति)

'सावधान मनसे एक हजार बार गायत्रीका जप करें अथवा प्राणायामके साथ सौ बार गायत्रीका जप करे।'

अत्रि, यम, शौनक और वृद्ध आपस्तम्बने गायत्री-जपकी संख्याके बारेमें इस प्रकार लिखा है—

सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां दशावराम्।
गायत्रीं तु जपेन्नित्यं सर्वपापप्रणाशिनीम्॥

'समस्त पापोंके विनाश करनेवाली गायत्रीका जप यदि एक हजारकी संख्यामें करे तो वह श्रेष्ठ है, सौ की संख्यामें करे तो मध्यम कोटिका है और दसकी संख्यामें करे तो वह अवर कोटिका है।'

भगवान् मनुने गायत्री-जपके सम्बन्धमें यों लिखा है—

सहस्रकृत्वस्त्वभ्यस्य बहिरेतात्त्रिकं द्विजः।
महतोऽप्येनसो मासात्त्वचेवाहिर्विमुच्यते॥

(मनुस्मृति २।७९)

'ब्राह्मण तीन व्याहृतिसहित गायत्रीका एकान्तस्थानमें हजार बार जपकर एक महीनेमें बहुत बड़े पापसे भी उसी प्रकार छूट जाता है जिस प्रकार साँप काँचलीसे छूट जाता है।'

प्रतिदिन गायत्री-जप करनेके लिये अनेक संख्या कही गयी है, जिनमें १००८ जपकी संख्याको सर्वश्रेष्ठ कहा गया है।

काम्यकर्ममें जपसंख्याका विधान

प्रारम्भदिनमारभ्य समाप्तिदिवसावधि।
न न्यूनं नातिरिक्तं च जपं कुर्याद्दिने दिने[1]॥
(वैशम्पायनसंहिता)

'जपके आरम्भकालसे जपके समाप्तिके दिन तक प्रतिदिन जप न कम और न अधिक करना चाहिये। अर्थात् जप प्रारम्भसे समाप्ति तक समान संख्यामें करना चाहिये।'

न न्यूनं नातिरिक्तं च जपं कुर्याद्दिने दिने।
नैरन्तर्येण कुर्वन्ति पुरश्चर्यां मुनीश्वराः॥
(देवीभागवत ११।२१।३४)

'आरम्भ दिनसे लेकर समाप्तिके समयतक समानरूपसे प्रतिदिन जप करना चाहिये। प्रधान मुनिगण निरन्तर पुरश्चरण किया करते हैं।'

युगके अनुसार जपसंख्या

तत्र सर्वत्रमन्त्राणां संख्यावृद्धिर्युगक्रमात्।
कल्पोक्तेनैव कृते संख्या त्रेतायां द्विगुणा भवेत्॥
द्वापरे त्रिगुणा प्रोक्ता कलौ संख्या चतुर्गुणा॥
(वैशम्पायनसंहिता)

---

१. प्रारम्भदिनमारभ्य समाप्तदिवसावधि।
न न्यूनं नातिरिक्तं च जपं कुर्याद्दिने दिने॥
(विश्वामित्र गायत्रीकल्प)

'युगोंके क्रमसे मंत्रोंकी संख्यावृद्धि यत्र-तत्र सर्वत्र कही गयी है, कृतयुगमें कल्पमें कहे हुएके अनुसार संख्या होती है, त्रेतामें मंत्रकी संख्या द्विगुणित हो जाती है। द्वापरमें त्रिगुणित और कलियुगमें चतुर्गुणित हो जाती है।'

आपत्तिकालमें गायत्री-जपका विधान

आपत्तिकालमें गायत्रीका आठ बार जप करना चाहिये। यह स्मृत्यर्थसारमें लिखा है।

कुछ तिथियोंमें तथा श्राद्ध, प्रदोष आदिमें गायत्री-जपका विशेष विधान

अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नित्यादर्धं जपेत्सुधीः।
प्रतिपत्सु तुरीयांशं पर्वण्यल्पतरं जपेत्॥

(सुमन्तुः)

'अष्टमी तथा चतुर्दशी तिथिको गायन्त्री-मन्त्रका जप १०८ का आधा अर्थात् ५४ बार जप करना चाहिये। प्रतिपद तिथिमें १०८ का चौथा भाग अर्थात् २७ बार जप करना चाहिये। किसी पर्वके होनेपर अत्यल्प जप करना चाहिये।'

श्राद्धे प्रदोषे दर्शे च गायत्री दशसंख्यया।
अष्टाविंशत्यनध्याये त्रयोदश्यां तु मानसम्॥

(चन्द्रिका)

'श्राद्धमें प्रदोषमें तथा अमावास्या तिथिमें गायत्री-मन्त्रका जप दस बार करना चाहिये। अनध्यायमें २८ बार तथा त्रयोदशी तिथिमें मानसिक जप करना चाहिये।'

'सर्वत्रैव प्रदोषेषु गायत्रीमष्टसंख्यया।'

(नारदः)

'सर्वत्र प्रदोषकालमें गायत्रीका आठ बार जप करना चाहिये।'

सन्ध्योपासनमें गायत्री-जपकी संख्याका विधान

ब्रह्मचार्याहिताग्निश्च[1] शतमष्टोत्तरं जपेत् ।
वानप्रस्थो यतिश्चैव सहस्रादधिकं जपेत् ॥

(योगियाज्ञवल्क्यः)

'ब्रह्मचारी और अग्निहोत्री गृहस्थको १०८ गायत्रीका जप करना चाहिये, वानप्रस्थ और यतिको एक हजार गायत्रीका जप करना चाहिये ।'

सन्ध्योपासनमें गायत्री-जपका समय

पूर्वां सन्ध्यां सनक्षत्रामुपासीत यथाविधि ।
गायत्रीमभ्यसेत्तावद् यावदादित्यदर्शनात् ॥
उपास्य पश्चिमां सन्ध्यां सादित्याञ्च यथाबिधि ।
गायत्रीमभ्यसेत्तावद् यावत्तारां न पश्यति ॥

(हारीतस्मृति ४।१८, १९)

'विधिविधानपूर्वक तारागणोंके रहते ही प्रातःकालीन संध्या करें और सूर्योदयपर्यन्त गायत्री-मन्त्रका जप करें। विधिविधानपूर्वक सायंकालीन संध्या सूर्यके रहते ही करना चाहिये और तारकोदयपर्यन्त गायत्री-मन्त्रका जप करे ।'

पूर्वां सन्ध्यां जपंस्तिष्ठेत्सावित्रीमार्कदर्शनात् ।
पश्चिमां तु समासीनः सम्यगृक्षविभावनात् ॥

(मनुस्मृति २।१०१)

'प्रातःकालकी सन्ध्यामें सूर्यके उदय (सूर्यके दर्शन) तक और सायङ्कालकी सन्ध्यामें भलीभाँति तारे निकलनेतक (नक्षत्र-दर्शनतक) सावित्रीका जप बैठकर करना चाहिये ।'

पूर्वां सन्ध्यां जपंस्तिष्ठेत् सावित्रीमार्कदर्शनात् ।
पश्चिमां तु समासीनः सम्यग्ग्रहविभावनात् ॥

(कात्यायनः)

---

१. 'अत्राऽऽहिताग्निशब्देन परिशेषाद् गृहस्थ उच्यते' इति पारिजाते ।'

'प्रातःकालीन सन्ध्यामें सूर्योदयपर्यन्त तथा सायंकालीन सन्ध्यामें तारकोदयपर्यन्त बैठकर गायत्री-मन्त्रका जप करना चाहिये।'

पूर्वसन्ध्यां जपंस्तिष्ठन् सावित्रीमर्कदर्शनात्।
पश्चिमां तु समासीनः सम्यङ्नक्षत्रदर्शनात्॥
(शौनकः)

'प्रातःकालीन सन्ध्यामें सूर्योदयपर्यन्त खड़े होकर गायत्री-मन्त्रका जप करना चाहिये तथा सायंकालीन सन्ध्यामें नक्षत्रोदयपर्यन्त बैठकर गायत्री-मन्त्रका जप करना चाहिये।'

तिष्ठत्पूर्वं जपं कुर्यात् सावित्रीमार्कदर्शनात्।
आसीनः पश्चिमां सन्ध्यां सम्यगृक्षविभावनात्॥
(संवर्त्तस्मृति ७)

'प्रातःकालीन सन्ध्यामें सूर्योदयपर्यन्त खड़े होकर गायत्री-मन्त्रका जप करना चाहिये और सायंकालीन सन्ध्यामें नक्षत्रोदयपर्यन्त बैठकर गायत्री-मन्त्रका जप करना चाहिये।'

जपन्नासीत सावित्रीं प्रत्यगातारकोदयात्।
सन्ध्यां प्राक् प्रातरेवं हि तिष्ठेदासूर्यदर्शनात्॥
(मनुः)

'सायङ्कालीन सन्ध्यामें तारकोदयपर्यन्त तथा प्रातःकालीन सन्ध्यामें सूर्योदयपर्यन्त गायत्री-मन्त्रका जप करना चाहिये।'

तिष्ठेदुदयनात्पूर्वां मध्यमामपि शक्तितः।
आसीतोद्गमाच्चान्त्यां सन्ध्यां पूर्वत्रिकं जपन्॥
(छान्दोग्यपरिशिष्टेकात्यायनः)

'सूर्योदयसे पूर्व तीन प्राणायामपूर्वक प्रातःकालीन सन्ध्या तथा यथाशक्ति मध्याह्नकालीन सन्ध्या करनी चाहिये, सायंकालीन सन्ध्या करके नक्षत्रोदयपर्यन्त गायत्रीका जप करना चाहिये।'

'उदितेषु नक्षत्रेषु त्रीन् प्राणायामान् धारयित्वा सावित्रीं सहस्रकृत्व आवर्त्तयेच्छतकृत्वो वा दशावराम्। (सामवेदीये गृह्यसूत्र)

'नक्षत्रोंके उदित हो जानेपर तीन बार प्राणायामकर गायत्री-मन्त्रका हजार बार अथवा सौ बार जप करना श्रेष्ठ माना गया है। केवल दस बार जप करनेको प्रशस्त नहीं माना गया है।'

'उद्यन्मस्तंयन्तमादित्यमभिध्यायन् कुर्वन् ब्राह्मणो विद्वान् सकलं भद्रमश्नुते।' (तैत्तिरीयारण्यक २।२)

'उगते हुए और अस्त होते हुए सूर्यका ध्यान करता हुआ विद्वान् ब्राह्मण समस्त कल्याणकार्योंका पात्र होता है।'

सन्ध्योपासनमें गायत्री-जपसे पापोंकी निवृत्ति

पूर्वां सन्ध्यां जपंस्तिष्ठेन्नैशमेनो व्यपोहति।
पश्चिमां तु समासीनो मलं हन्ति दिवाकृतम्॥

(मनुस्मृति २।१०२)

'प्रातःकाल सन्ध्योपासन करते समय खड़े होकर गायत्रीके जप करनेसे मनुष्यका रात्रिका किया हुआ पाप नष्ट हो जाता है और सायङ्काल सन्ध्योपासन करते समय गायत्रीका जप करनेसे दिनका पाप नष्ट हो जाता है।'

अतः प्रत्येक द्विजको प्रतिदिन दो बार गायत्रीका जप अवश्य करना चाहिये। याज्ञवल्क्य आदि स्मृतियोंमें प्रतिदिन तीन बार गायत्री-जप करनेके लिये लिखा है।

जपकी संख्याका परिज्ञान आवश्यक है

अङ्गुलिभिस्तु रेखाभिः अथवा जपमालया।
जपस्य संख्या विज्ञेया जपकृद्भिर्द्विजोत्तमैः॥
वृथा भवेत्कृतो विप्रैः संख्याज्ञानं विना जपः।
तस्मात्संख्यापरिज्ञानं अवश्यं जपकर्मणि॥

(भारद्वाजस्मृति ६।१०१-१०२)

'अंगुलियोंकी रेखाओंसे अथवा जपमालासे जप करनेवाले द्विजोत्तमोंको जपकी संख्या जाननी चाहिये, यदि विप्रों द्वारा संख्या ज्ञानके बिना जप किया जाता है तो व्यर्थ होता है अतः जप कर्ममें संख्याका ज्ञान अत्यावश्यक है।'

गणनारहित जप निष्फल है

'असंख्यातं च यज्जप्तं तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ।'

(लघुहारीत)

बिना संख्याके किया हुआ जो जप है वह सब निष्फल होता है ।

'असंख्यमासुरं यस्मात्तस्माद् गणयेद् ध्रुवम् ।'

(वृ. प. सं.)

'मन्त्र जपकी संख्या (गिनती) अवश्य रखनी चाहिये, क्योंकि बिना संख्या का जप 'असुर जप' कहलाता है ।'

जप-गणनार्थ विहित वस्तु

लाक्षा [1]कुसीदं सिन्दूरं गोमयं च [2]करीषकम् ।
एभिर्निर्माय गुटिकां जपसंख्या तु कारयेत् ॥

(याम ले)

'लाख, लालचन्दन, सिन्दूर, गोबर और सूखा गोबर—इनकी गुटिका बनाकर जप की गणना करे ।'

जप-गणनार्थ निषिद्ध वस्तु

नाक्षतैः हस्तपर्वैर्वा न धान्यैर्न च पुष्पकैः ।
न चन्दनैर्मृत्तिकया जपसंख्यां तु कारयेत् ॥

(यामल)

'अक्षतसे, हाथोंकी अँगुलियोंके पर्वसे, धान्यसे, पुष्पसे, चन्दनसे और मृत्तिकासे जपकी गणना न करे ।

---

१. कुसीदम्—रक्तचन्दनम् ।

२. करीषकम्—शुष्कगोमयम् ।

जपादिमें माला जपनेकी विधि

शास्त्रीय विधि से मालापर जप करनेसे जपकर्ताको यथार्थ फल प्राप्त होता है। अतः जपकर्ताको सविधि जप करना चाहिये।

मालाके प्रत्येक मणिके बीचमें ग्रन्थि होनी चाहिये। सुमेरूको छोड़कर १०८ मणियोंकी माला श्रेष्ठ कही गयी है।

> अङ्गुल्यग्रे च यज्जप्तं यज्जप्तं मेरुलङ्घनात्।
> सर्वसन्धिषु यज्जप्तं तत्सर्वं निष्फलं भवेत्॥
> संस्थाप्य हृदये हस्तं तिर्यक् कृत्वा कराङ्गुलीः।
> आच्छाद्य हस्तं वस्त्रेण दक्षिणेन सदा जपेत्॥
>
> (मालातन्त्र)

'अँगुलियोंके अग्रभागमें मालाको रखकर किया गया जप तथा सुमेरुलंघनपूर्वक किया गया जप और अँगुलियोंकी रेखाओंमें किया गया जप ये सभी निष्फल माने गये हैं।'

'अपने हाथको हृदयपर रखकर और अँगुलियोंको तिरछी करके एवं हाथको वस्त्रसे ढककर दाहिने हाथसे सर्वदा जप करना चाहिये।'

मालाको अनामिका पर रखकर अँगूठेसे स्पर्श करते हुए मध्यमासे फेरना चाहिये। सुमेरुका उल्लंघन नहीं करना चाहिये। दुबारा फेरते समय सुमेरुके पाससे माला घुमाकर जप करना चाहिये।

दाहिने हाथकी अँगुलियोंको मिलाकर हथेलीकी ओर कुछ टेढ़ी करनी चाहिये। अँगुलियोंके अलग-अलग रहनेसे जपका पूर्ण फल नहीं मिलता है।

> करं सर्पफणाकारं कृत्वा तद्रन्ध्रमुद्रितम्।
> आनम्रमूर्ध्वमचलं प्रजपेत् प्राङ्मुखो द्विजः॥
> अनामिका मध्यदेशादधोऽवाम क्रमेण च।
> तर्जनी मूलपर्यन्तं जपस्यैवं क्रमः करे॥
>
> (देवीभागवत ११२६।१७-१९)

'द्विज पूर्वाभिमुख बैठकर अपने (देवीभागवतका अर्थ देखो) हाथको सर्पके फनके समान कर ले। वह हाथ ऊर्ध्व मुख और ऊपरकी ओरसे कुछ मुद्रित हो, उसे थोड़ा बहुत झुकाये और स्थिर रक्खे। अनामिकाके बिचले पर्वसे आरम्भ करके नीचे और बायें होते हुए तर्जनीके मूल भागतक अँगूठेसे स्पर्शपूर्वक जप करे। करमालाका यही क्रम है।'

करं सर्पफणाकारं कृत्वा तं तूर्ध्वमुद्रितम्
आनम्रमूर्ध्वमचलं प्रजपेत् प्राङ्मुखो द्विजः।
अनामिका मध्यदेशादधो वामक्रमेण च
तर्जनीमूलपर्यन्तं जपस्यैष क्रमः करे॥
(ब्रह्मवैवर्तपुराण, प्रकृतिखण्ड ३१।१७-१९)

'हाथको सर्पके फणके समान करके तथा ऊपरके भागको बन्दकरके और ऊपरका भाग निश्चलतापूर्वक झुकाकर पूर्वाभिमुख हो द्विजको जप करना चाहिये। अनामिका अँगुलीके नीचे बाँयें क्रमसे तर्जनी अँगुलीके मूलपर्यन्त हाथमें जप करनेका विधान है।'

करमाला

"अनामामध्यमारभ्य कनिष्ठादित एव च।
तर्जनीमूलपर्यन्तं दशपर्वसु सञ्जपेत्॥"
"अनामामूलमारभ्य कनिष्ठादित एव च।
तर्जनीमध्यपर्यन्तमष्टपर्वसु सञ्जपेत्॥"
"अनामिकात्रयं पर्व कनिष्ठा च त्रिपर्विका।
मध्यमायाश्च त्रितयं तर्जनीमूलपर्वणि।
तर्जन्यग्रे तथा मध्ये यो जपेत्स तु पापकृत्॥"
"अनामामूलमारभ्य प्रादक्षिण्यक्रमेण च।
मध्यमा मूलपर्यन्ते जपेदष्टसु पर्वसु॥"
"पर्वद्वयमनामायाः परिवर्तेन च वै क्रमात्।
पर्वत्रयं मध्यमास्तर्जन्येकं समाहरेत्॥
पर्वद्वयं तु तर्जन्या मेरुं तद्विद्धि पार्वति।
शक्तिमाला समाख्याता सर्वमन्त्रप्रदीपिका॥"
"अनामामूलमारभ्य प्रदक्षिण क्रमेण च।
मध्यमा मूलपर्यन्तं करमाला प्रकीर्तिता॥"

'अनामिका अँगुलीके मध्य पर्वसे आरम्भकर कनिष्ठा अंगुलीके आदि पर्व और तर्जनी अंगुलीके मूल पर्यन्त दशपर्वों में जप करना चाहिये। अनामिका अंगुलीके मूलसे आरम्भकर कनिष्ठा अंगुली के आदि पर्व और तर्जनी अंगुलीके मध्यम पर्वतक आठ पर्वोंमें जप करे (यह १०८ संख्याका विधान है)।

अनामिका कनिष्ठा और मध्यमाके तीनों पर्वोंमें और तर्जनीके मूलपर्व, अग्रिमपर्व तथा मध्यपर्वमें जो जप किया जाता है वह पाप-कारक या निकृष्ट माना गया है।

प्रदक्षिण क्रमसे अनामिका अंगुलीके मूलसे आरम्भ कर मध्यमाके मूलपर्यन्त आठ पर्वोंमें जप करे।

परिवर्तन क्रमसे अनामिकाके दो पर्वोंसे आरम्भकर मध्यमाके तीनों पर्व और तर्जनीके एक पर्वको लेना चाहिये। हे पार्वतीजो! तर्जनीके दोनों पर्वोंको मेरु समझो। इसे हो शक्तिमाला कही गयी है जो सभी मन्त्रोंकी प्रकाशिका है। अनामिका अंगुलीके मूलसे प्रदक्षिण क्रम से आरम्भ करके मध्यमाके मूलपर्यन्त ही करमाला कहलाती है।

पर्वभिस्तु जपेद्देवीं माला काम्यजपे स्मृता।
गायत्र्या वेदमूल्याद्विदः पर्वसु गीयते॥
आरभ्यानामिकामध्यं पर्वदेवी मनुक्रमात्।
तर्जनीमूलपर्यन्तं जपेद्देशसु पर्वसु॥
मध्यमाङ्गुलिमूले तु यत्पर्वद्वितयं भवेत्।
तं वै मेरुं विजानीया ज्जपेन्नं नाभि लङ्घयेत्॥

'अंगुलीके पोरोंसे गायत्री मन्त्रका जप करना चाहिये क्योंकि काम्यजपमें करमाला ही श्रेष्ठ कही गयी है। गायत्रीका वेदमूलक होनेसे पर्वोंमें ही वेदका ज्ञान होता है। अनामिका अंगुलीके बीचवाले पर्वसे क्रमशः आरम्भ करके तर्जनी अंगुली के मूलपर्यन्त दशपर्वोंसे गायत्री देवीका जप करे। मध्यमा अंगुलीके मूलमें जो दो पर्व है उसे ही मेरु समझना चाहिये इसलिये ऐसा जप करे जिससे उसका उल्लंघन न हो।'

दशभिश्च शतं प्रोक्तमनुलोमविलोमतः।
आद्यन्तं परित्यज्य अष्टपर्वसु संजपेत्॥

'अनामिकाके द्वितीय पर्वसे तर्जनीके अन्तिम पर्वतक अनुलोम-विलोम अर्थात् सीधा और उल्टा दशबार जपनेसे सौकी संख्या पूर्ण होती है, १०८ संख्या पूर्ण करनेके लिए अनामिका तथा तर्जनोके आदि और अन्त पर्वको छोड़कर शेष आठ पर्वोंमें जप करना चाहिये।'

तर्जन्या न स्पृशेन्मालां नखैश्च न कदाचन।
मध्यमायां समासज्य ह्यङ्गुष्ठेन विवर्तयेत्॥

'तर्जनी अंगुली और नखसे मालाका स्पर्श नहीं करना चाहिये। अनामिका और मध्यमासे आसक्त कर अंगुष्ठसे माला घुमाना चाहिये।

जपके समय हाथसे माला गिर जानेपर कर्तव्य

प्रमादात्पतिता हस्ताच्छतमष्टोत्तरं जपेत्।
जपेन्निषिद्धसंस्पर्शे क्षालयित्वा यथोदितम्॥
(वैशम्पायनसंहिता)

'प्रमादवश यदि माला हाथसे छूटकर गिर जाय तो १०८ बार जप करे तथा निषिद्ध अङ्गको स्पर्श कर लेने पर हाथको धोकर जप करे।'

जपादिमें प्रशस्त माला

रुद्राक्षः श्वेतपद्माक्षमाले तु अखिले जपेत्।
अतिस्थूलोऽतिसूक्ष्मश्च स्फुटितो भं गरिर्लघुः॥
भिन्नः पुरा धृतो जीर्णो रुद्राक्षो वरदः स्मृतः।
अष्टोत्तरशतैर्माला प्रशस्ता सर्वकर्मसु॥
(शारदातिलक)

'रुद्राक्षकी माला, श्वेत पद्मकी माला तथा स्फटिकमणि की माला से समस्त मन्त्रोंका जप प्रशस्त माना गया है। रुद्राक्ष यदि बड़ा हो, छोटा हो, फूटा हो, वैवर्ण हो लघु हो, पृथक् हो, पहलेसे रखा हुआ हो, पुराना हो तो भी वह वरदायक माना गया है। सभी कार्यों में एक सौ आठ दानोंकी माला प्रशस्त मानी गयी है।'

स्फटिकेन्द्राक्षरुद्राक्षैः पुत्रजीवसमुद्भवैः।
अक्षमाला प्रकर्तव्या प्रशस्ता चोत्तरोत्तरा॥
अभावे त्वक्षमालायाः कुशग्रन्थ्याऽथ पाणिना।
यथाकथञ्चिद् गणयेत् ससंख्यं तद्भवेद् यथा॥
(पाराशरस्मृति ४।४१-४२)

'स्फटिकमणि, इन्द्राक्ष (गटारन) रुद्राक्ष और पुत्र जीव (वन्धूक का फल) से निर्मित मालाको ही अक्षमाला कहते हैं और उपर्युक्त वस्तुओं से निर्मित माला उत्तरोत्तर प्रशस्त मानी गयी है। यदि अक्षमालाका अभाव हो तो कुशग्रन्थि या हस्तरेखासे संख्यापूर्वक जप येन केन प्रकारेण करना चाहिये।'

स्फटिकेन्द्राक्षकैर्मालातथैवाङ्गुलिपर्वभिः ।
शङ्खरूप्यमयीमाला काञ्चनीनिम्बजोत्पलैः ।
पद्माक्षकैश्चरुद्राक्षैर्विद्रुमैर्मणिमौक्तिकैः ॥

(हारीतः)

'स्फटिक, इन्द्राक्ष अंगुलियोंके पोर, शंख, चाँदी, सोना, नीम, कमलगट्टा, पद्माक्ष, रुद्राक्ष, मूँगा मणि और मोतियोंसे माला बनानी चाहिये।'

सौवर्णं राजतं ताम्रं स्फाटिकं रत्नजन्तथा ।
अरिष्टं पुत्रजीवं च शङ्खं पद्मं तथा मणिम् ॥
कुशग्रन्थि च रुद्राक्षमुत्तमं चोत्तरोत्तरम् ॥

(स्कन्दपुराण)

'सोना, चाँदी, ताँबा, स्फटिक, रत्न, नीम, पुत्रजीव (जियापोता), शंखपद्म, मणि, कुशग्रन्थि और रुद्राक्ष की माला उत्तरोत्तर उत्तम होती हैं।

प्रवालहेममुक्ताभिर्मणिरुद्राक्षपुष्करैः ।
दर्भारिष्टकबीजैश्च शङ्खैर्वा जीवकैर्जपेत् ॥

(साम्बपुराण)

'मूँगा, सोना, मोती, मणि, रुद्राक्ष, कमलगट्टा, कुशग्रन्थि, नीम, शङ्ख अथवा पुत्रजीवसे बनी मालासे जप करे।'

तुलसीकाष्ठघटितैर्मणिभिर्जपमालिका ।
सर्वकर्मसुसर्वेषामीप्सितार्थ फलप्रदा ॥

(रामार्चनचन्द्रिका)

'तुलसी काष्ठ निर्मित या मणिनिर्मित माला सभी लोगोंके लिये सर्वफलप्रदायिनी कही गयी है।'

इन्द्राक्षशङ्खपद्माक्षपुत्रजीवकमौक्तिकैः ।
स्फटिकैर्मणिरत्नैश्च स्वर्णैश्च विद्रुमैस्तथा ॥

राजितैः कुशमूलैश्च गृहस्थस्याक्षमालिकाः।
अङ्गुलीगणनादेकं पर्वपर्यन्तमुच्यते ॥
पुत्रजीवैर्दशगुणं शतसंख्यैः सहस्रकम्।
प्रवालैर्मणिरत्नैश्च दशसाहस्रकं फलम् ॥
तदेव स्फटिकैः प्रोक्तं मौक्तिकैर्लक्षमुच्यते।
पद्माक्षैर्दश लक्षं स्यात् सौवर्णैः कोटिरुच्यते ॥
कुशग्रन्थ्याकोटिशतं रुद्राक्षैः स्यादनन्तकम्।
सर्वैर्विरचिता माला नृणां मुक्तिफलप्रदा ॥

(सौरसंहिता)

'इन्द्राक्ष (गटारन), शङ्ख, पद्माक्ष, पुत्रजीव (जियापोता) के बीजोंका फल, मोती, स्फटिकमणि, रत्न, सुवर्ण, मूँगा, चांदी तथा कुशमूलसे निर्मित मालायें गृहस्थोंके लिये प्रशस्त मानी गयी हैं, अँगुलीके पर्वसे एक की संख्या मानी जाती है। पुत्रजीव (जियापोता) पुष्पके फलसे निर्मित मालासे जप करनेपर दश, सौ और हजारगुणा फल अधिक मिलता है, मूँगा-मणि और रत्नोंकी मालासे दश हजार गुणा फल मिलता है स्फटिक मणिसे भी दश हजार गुणा फल मिलता है, मोतीकी मालासे लक्षगुणा फल अधिक मिलता है, कमलगट्टाकी मालासे दशलक्षगुणा फल तथा सुवर्णकी मालासे कोटिगुणा फल और कुशग्रन्थि निर्मित मालासे सौ कोटिगुणा फल प्राप्त होता है, रुद्राक्षकी मालासे जप करने पर अनन्तफ़लकी प्राप्ति होती है। उपर्युक्त इन सभी वस्तुओंसे निर्मित मालायें मनुष्यों को मुक्तिफल देनेवाली होती हैं।'

जपादिमें निष्फल माला

मध्यमादिद्वयं पूर्वं जपकाले तु वर्जयेत्।
तं वै मेरुं विजानीयात् कथितं ब्रह्मणा पुरा ॥
मेरुहीना च या माला मेरुलङ्घा च या भवेत्।
अशुद्धप्रतिकाशा च सा माला निष्फला भवेत् ॥

(आह्निककारिका)

'जप के समय मध्यमा और तर्जनी का परित्याग करना चाहिये क्योंकि प्राचीन कालमें ब्रह्माजीने उसे मेरु, ऐसा कहा है।

सुमेरुसे हीन माला या जिस मालाके मेरुका उल्लंघन कर दिया गया हो, ऐसी माला अशुद्ध मानी जाती है। इसलिये वह माला निष्फल होती है।'

कामना-भेदसे मालाका विचार

रुद्राक्षमालिका सूते जपेन स्वमनोरथान्।
पद्माक्षैर्विहिता माला शत्रूणां नाशिनी मता॥
कुशग्रन्थिमयी माला सर्वपापप्रणाशिनी।
पुत्रजीवफलैः क्लृप्ता कुरुते पुत्रसम्पदम्॥
निर्मिता रूप्यमणिभिर्जपमालेप्सितप्रदा।
प्रवालैर्विहिता माला प्रयच्छेद् विपुलं धनम्॥
हिरण्मयी विरचिता माला कामान् प्रयच्छति।
सर्वैरेभिर्विरचिता माला स्यान्मुक्तये नृणाम्॥

(कालिकापुराण)

रुद्राक्षकी मालामें जप करनेसे मनोरथोंको पूर्ण करती है, कमल-गट्टाकी माला शत्रुनाशिनी कही गयी है। कुशकी गाँठसे बनायी गई माला समस्त पापोंको नष्ट करती है, पुत्रजीव (जियापोता) के बीजों से बनी माला सन्तान-सम्पत्तिको देती है। चाँदी और मणियों से बनी माला अभीष्ट सिद्धि तथा मूंगा की माला प्रचुर धन प्रदान करती है। सोनेसे बनी माला कामनाओंको प्रदान करती है तथा उपर्युक्त सभीसे बनी माला मनुष्योंको मुक्ति प्रदान करनेके लिये प्रशस्त मानी गई है।

करमाला आदिसे जप करनेका विविध फल

अङ्गुल्या जपसंख्यानमेकमेकमुदाहृतम्।
रेखयाष्टगुणं विद्यात् पुत्रजीवैर्दशाधिकम्॥
शतं स्याच्छङ्खमणिभिः प्रवालैस्तु सहस्रकम्।
स्फाटिकैर्दशसाहस्रं मौक्तिकैर्लक्ष्यमुच्यते॥

पद्माक्षैर्दश लक्षं तु सौवर्णैः कोटिरुच्यते।
कुशग्रन्थ्या च रुद्राक्षैरनन्तगुणितं भवेत्॥

(गौतमः)

'अंगुलीसे जप करनेसे एक गुना फल होता है रेखासे आठ गुना फल होता है। पुत्रजीव (जियापोता) के बीजों की माला से दस गुना, शंखमणिसे सौ गुना, प्रवाल (मूँगा) से हजार गुना, स्फटिकसे दस हजार गुना, मोतीसे लाख गुना, कमलगट्टासे दस लाख गुना, सुवर्णसे करोड़ गुना और कुशग्रन्थि और रुद्राक्षसे असंख्य गुना फल होता है।

विविध प्रकारकी मालाओंका विविध फल

स्फाटिकी मौक्तिकी वापि प्रोक्तथा सितसूत्रकैः।
सर्वकर्मसमृद्धयर्थं जपेद्रुद्राक्षमालया॥
धर्मार्थकाममोक्षार्थं जपेत्पद्माक्षमालया।
अरिष्टपुत्रजीवैश्च शङ्खपद्मौ मणिस्तथा॥
कुशग्रन्थिश्च रुद्राक्षमुत्तमं चोत्तरोत्तरम्।
शतं चन्दनशङ्खैश्च प्रवालैस्तु सहस्रकम्॥
स्फाटिकैर्लक्षसाहस्रं मौक्तिकैर्लक्षमेव च।
दशलक्षं राजताक्षैः सौवर्णैः कोटिरुच्यते॥
कुशग्रन्या च रुद्राक्षैरनन्तगुणितो भवेत्॥

(मन्त्रखण्ड)

स्फटिक और मोतीकी माला काले सूतसे गूँथना चाहिये, सम्पूर्ण कार्यकी सिद्धिके लिये रुद्राक्ष मालासे जप करना चाहिये। धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी सिद्धिके लिये पद्माक्ष की मालासे जप करना चाहिये। नीम, पुत्रजीव, शङ्ख, पद्म, मणि, कुशग्रन्थि और रुद्राक्षकी बनी माला उत्तरोत्तर उत्तम मानी गयी है। चन्दन और शङ्खसे बनी मालासे जप करने से सौ गुना, मूँगासे हजार गुना, स्फटिकसे हजारों लक्ष गुना, मोतीसे लक्षगुना, चाँदी तथा अक्षसे दस लक्ष गुना, सोने से कोटि गुना, कुशग्रथि तथा रुद्राक्ष से अनन्तगुणित फल मिलता है।

रुद्राक्षशङ्खपद्माक्ष पुत्रजीवकमौक्तिकैः।
स्फाटिकैर्मणिरत्नैश्च सौवर्णैर्विद्रुमैस्तथा॥

राजतैः कुशमूलैश्च गृहस्थस्याक्षमालिका।
अङ्गुलीगणनादेकं पर्वण्यष्टगुणं भवेत्॥
पुत्रजीवैर्दशगुणं शतं शङ्खैः सहस्रकम्।
प्रवालैर्मणिरत्नैश्च दशसाहस्रकं स्मृतम्॥
तदेव स्फाटिकैः प्रोक्तं मौक्तिकैर्लक्षमुच्यते।
पद्माक्षैर्दशलक्षं स्यात् सौवर्णैः कोटिरुच्यते॥
कुशग्रन्थ्या कोटिशतं रुद्राक्षैः स्यादनन्तकम्।
सर्वैर्विरचिता माला नृणां मुक्तिफलप्रदा॥

(तन्त्रसार)

'रुद्राक्ष, शङ्ख, पद्माक्ष, पुत्रजीव, मोती, स्फटिक, मणि, रत्न, सोना, मूँगा, चाँदी, कुशग्रन्थि इन सबसे बनी माला गृहस्थके लिये प्रशस्त मानी गयी है। अंगुलीके पोरमें जपनेसे आठ गुणा फल होता है। पुत्रजीव (जियापोता) से बनी मालासे सौ गुना, शङ्खसे हजार गुना, मूँगा और मणि रत्नोंसे दस हजार गुना वैसे ही स्फटिकसे भी दस हजार गुना और मोतियोंसे बनी हुई मालासे लक्षगुणित फल होता है। पद्माक्ष से दसलक्षगुना, सोनेसे कोटिगुना, कुशग्रन्थिसे सौ कोटिगुना तथा रुद्राक्षसे अनन्त फल मिलता है। उपर्युक्त सभीसे बनी माला मनुष्यों को मोक्षफलदायिनी होती है।'

चित्रिणी बिसतन्वाभा ब्रह्मनाडीगतान्तरा।
तया सङ्ग्रथिता माला सर्वकामफलप्रदा॥

(आह्निककारिका)

'रङ्ग-बिरङ्गे सूतसे या कमलके तन्तुके समान सूक्ष्म और श्वेत तन्तुसे अथवा जिसके मध्यमें ब्रह्म नाड़ी हो ऐसे सूतसे गूँथी हुई माला सम्पूर्ण मनोवांछित फलको देनेवाली होती है।'

अरिष्टपत्रं बीजं च शङ्खपद्मौ मणिस्तथा।
कुशग्रन्थिश्च रुद्राक्ष उत्तमं चोत्तरोत्तरम्॥
प्रबालमुक्तास्फटिकैर्जपः कोटिफलप्रदः।
तुलसीमणिभिर्येन मणितं चाक्षयं फलम्॥

(नागदेवः)

'नीमके पत्ते, नीमके बीज, शङ्ख, कमलगट्टा, मणि, कुशकी गांठ और रुद्राक्षसे बनी माला उत्तरोत्तर श्रेष्ठ मानी गयी है।

मूँगा, मोती तथा स्फटिकसे बनी मालासे किया हुआ जप कोटि-

गुणित फल देनेवाला होता है। तुलसी तथा मणिनिर्मित मालासे जिसने जप किया तो वह अक्षयफलवाला होता है।'

शतं स्याच्छङ्खमणिभिः प्रवालैश्च सहस्रकम्।
स्फाटिकैर्दशसाहस्रं मौक्तिकैर्लक्षमुच्यते॥
पद्माक्षैर्दशलक्षं तु सौवर्णैः कोटिरुच्यते।
कुशग्रन्थ्या च रुद्राक्षैरनन्तं फलमुच्यते॥
(गौतमः)

'शङ्ख और मणियोंसे सौ गुना, मूँगासे हजार गुना, स्फटिकसे दस हजार गुना, मोतीसे लक्ष गुना, पद्माक्षसे दसलक्ष गुना, सोनासे कोटि गुना, कुशग्रन्थि और रुद्राक्षसे अनन्तगुणित फल कहा गया है।'

हिरण्यगर्भमणिभिर्जप्तं शतगुणं भवेत्।
सहस्रगुणमिन्द्राक्षै रुद्राक्षैर्नियुतं भवेत्॥
नियुतं प्रयुतं वा स्यात् पद्माक्षैस्तु न संशयः।
अष्टोत्तरशतं कुर्याच्चतुः पञ्चाशिकापि वा॥
सप्तविंशतिका वापि ततो नैवाधमा हिता।
अक्षुद्रा समरन्ध्रा च परिपूर्णा दृढापि च॥
सशब्दा च चला था तु त्रुटिता ग्रथिता तथा।
छिन्ना सूत्रेषु ग्रथिता पाषाणस्यापुरातना॥
निश्चला ग्रथितान्योन्यं सङ्घर्षणविवर्जिता।
मालादुःखप्रदायिन्यो ग्रथिता निन्द्यतन्तुषु॥
तर्जन्या न स्पृशेदक्षं जपयेन्न विधूनयेत्।
अङ्गुष्ठस्य तु मध्यस्य परिवर्तं समाचरेत्॥
मध्यमाकर्षणं त्वस्याः सर्वसिद्धिप्रदायकम्।
(व्यासः)

सुवर्णग्रथित मणियोंसे किया हुआ जप सौ गुना फलदायक होता है, इन्द्राक्षसे किया हुआ जप सहस्रगुण तथा रुद्राक्षसे किया हुआ जप कोटिगुणित फलदायक होता है। कमलगट्टासे किया हुआ जप नियुत या प्रयुत संख्यामें फल देनेवाला होता है, इसमें कोई सन्देह नहीं। १०८ मनियोंकी अथवा ५४ मनियोंकी अथवा सत्ताइस मनियोंकी माला होनी चाहिये। इससे कम या अधिक मनियोंकी माला अधम होनेके कारण हितप्रद नहीं होती। बहुत बड़ी, समान छिद्रवाली, खूब कसकर गूँथी हुई, शब्द करनेवाली, हिलनेवाली, टूट जानेपर गाँठ

दो हुई, टूटे हुए सूतसे गूँथी हुई, पत्थरके समान कठोर नयी गूँथी हुई, जो चलायमान न हो तथा एक दूसरे से सघन गूँथी हुई, विरल गूँथी हुई, या कुत्सित सूत से गूँथी हुई मालायें दुःख प्रदायिनी होती हैं। अक्षमालाका स्पर्श तर्जनो अँगुली से न करें, जप करते समय मालाको हिलाना नहीं चाहिए अंगुष्ठके, मध्यभागका परिवर्तन करना:चाहिये, मध्यमा अँगुलीसे अक्षमालाका खिचना सम्पूर्ण सिद्धिको देनेवाली होती है।

शङ्खरूप्यमयी माला काञ्चिनी बलजोत्पलैः।
पद्माक्षकैश्च रुद्राक्षै विंद्रुमैर्मणिमौक्तिकैः॥
रजतैर्द्राक्षकैर्माला तथैवाङ्गुलिपर्वभिः।

(हारीतः)

शङ्ख, चाँदी, सोना, वलज, कमल, पद्माक्ष, रुद्राक्ष, मूँगा, मणि, मोती, दार तथा अंगुलीके पोरोंकी माला बनानी चाहिये।

अक्षमालाके अभावमें करमाला

अलाभे जपमालायाः करशाखासु पर्वभिः।
अनामिकाया यो मध्यस्तस्मादधः क्रमेण तु॥
मध्याङ्गुल्यग्रपर्वादि प्रादक्षिण्यक्रमेण तु।
तर्जन्यादौ जपान्तश्च अक्षमाला करे स्थिता॥

(पुरश्चरणदीपिका)

'जपमालाका अभाव होने पर अंगुलियोंमें पर्वोंसे माला बनायी जाती है। जैसे—अनामिकाके मध्यपोरसे क्रमशः नीचे तथा प्रदक्षिण क्रमसे मध्यमा अंगुली आदि पोर और तर्जनीके आदिसे अन्त पोरतक हाथमें ही अक्षमाला विराजती है।'

अक्षमाला

'अक्षाणां रुद्राक्षादीनां माला अक्षमाला।'

'पद्माक्ष और रुद्राक्षसे निर्मित मालाको अक्षमाला कहते हैं।'

[1]करमाला

पर्वद्वयमनामिक्याः कनिष्ठादिक्रमेण तु।
तर्जनी मूलपर्यन्तं करमाला प्रकीर्त्तिता ॥

(देवीभागवत ११।१६।१६)

'अनामिका अंगुलीके दूसरे पोरसे अर्थात् मध्यमसे आरम्भ करके कनिष्ठिकाके आदि क्रमसे तर्जनीके मूलपर्यन्त 'करमाला' कही गयी है।

आरभ्यानामिकामध्यं दक्षिणावर्त्तयोगतः।
तर्जनीमूलपर्यन्तं करमाला प्रकीर्त्तिता ॥

'अनामिका अंगुलीके मध्यभागसे दक्षिणावर्त आरम्भकर तर्जनी अंगुलीके मूलपर्यन्त तक ही करमाला कही गयी है।'

[2]गोमुखी (गोमुखम्)

चतुर्विंशाङ्गुलमितं पट्टवस्त्रादिसम्भवम्।
निर्मायाष्टाङ्गुलिमुखं ग्रीवायां षड् दशाङ्गुलम् ॥
ज्ञेयं गोमुखयन्त्रं च सर्वतन्त्रेषु गोपितम्।
तन्मुखे स्थापयेन्मालां ग्रीवामध्यगते करे ॥
प्रजपेद् विधिना गुह्यं वर्णमालाधिकं प्रिये।
निधाय गोमुखे मालां गोपयेन्मातृजारवत् ॥

'चौबीस अंगुल परिमाणके रेशमी वस्त्रसे गोमुखीका निर्माण करना चाहिये उसका मुख भाग आठ अंगुलका हो ग्रीवा भाग सोलह अंगुलका हो इस प्रकार माला रक्षणार्थ समस्त तन्त्रोंमें गोमुखयन्त्र अर्थात् गोमुखी बनाने की विधि जाननी चाहिये। गोमुखीके ग्रीवा

---

१ अनामिकाद्वयं पर्व कनिष्ठादि क्रमेण तु।
तर्जनीमूलपर्यन्तं करमाला प्रकीर्तिता ॥ (मालातन्त्र)

२. गोमुंखमिव मुखं यस्य तद् गोमुखम्।
जपमालासंरक्षणाय पट्टवस्त्रादिनिर्मितं गोमुखम् ॥

'गोमुखके सदृश जिसका मुख हो उसे 'गोमुख' कहते हैं। यह जपमालाकी रक्षार्थ रेशमी वस्त्रसे निर्मित गोमुख होता है।'

भागमें हाथ रखकर और हाथके अग्रभागमें माला को रखे, हे प्रिये ! इस विधिसे मालाको गुप्त रखकर अधिकाधिक जप करना चाहिये । गोमुखीके अन्दर मालाको रखकर उसका गोपन मातृजारके समान करे ।'

जपमालाकी मणियोंकी संख्याका विधान

अष्टोत्तरशतं कुर्याच्चतुः पञ्चाशिकापि वा ।
सप्तविंशतिका वापि ततो नैवाधमा हिता ॥
(व्यासः)

'एक सौ आठ मनियोंकी माला या चौवन मनियोंकी माला अथवा सत्ताइस मनियोंकी माला श्रेष्ठ मानी गई है । उससे कम मनियोंकी माला अधम होनेके कारण हितकारिणी नहीं होती ।'

अष्टोत्तरशता कुर्यात् चतुष्पञ्चाशिकां तथा ।
सप्तविंशतिकां वापि ततो नैवाधिका मता ॥
(प्रजापतिः)

एक सौ आठ मनियोंसे या चौवन मनियोंसे अथवा सत्ताइस मनियोंसे माला बनानी चाहिये । उपर्युक्त संख्याओंसे अधिक मनियों की माला नहीं बनानी चाहिये ।'

कामनाभेदसे जपमालाकी मणिसंख्याका विधान

पञ्चविंशतिभिर्मोक्षं त्रिंशद्भिर्धनसिद्धये ।
सर्वार्थाः सप्तविंशत्या पञ्चदश्यभिचारिके ॥
पञ्चाशद्भिः काम्यसिद्धिः स्यात्तथा चतुरुत्तरैः ।
अष्टोत्तरशतैः सर्वा सिद्धिरुक्ता मनीषिभिः ॥
(गौतमीये)

'विद्वानोंका मत है कि पचीस मनियोंसे मोक्षकी सिद्धि, तीस मनियोंसे धन-सिद्धि, सत्ताइस मनियोंसे सर्वार्थ सिद्धि, पन्द्रह मनियोंसे मारणादिकी सिद्धि, चौवन मनियोंसे अभीष्ट सिद्धि तथा एक सौ आठ मनियोंसे सम्पूर्ण सिद्धि होती है ।'

अन्यत्र भी लिखा है—

'पचीस दानेकी माला मुक्ति, तीस दानेकी माला धन, और सत्ताईस दानेकी माला सर्वकार्यों एवं समस्त मनोरथोंको देनेवाली है। पन्द्रह दानेकी माला शुभको नष्ट करनेवाली है। चौवन दानेकी माला समस्त कार्योंको सिद्ध करती है और एक सौ आठ दानेकी माला सबसे श्रेष्ठ कही गई है।'

विविध प्रकारकी मालाके धारणका विविध फल

समासेनाक्षसूत्रस्य विधानमिह कथ्यते।
पञ्चविंशतिभिर्मोक्षं त्रिंशता धनसिद्धये॥
सर्वथा सप्तविंशत्या पञ्चदश्याऽभिचारके।
पञ्चशता काम्यसिद्धिः स्यात्तथा चतुरुत्तरैः॥
अष्टोत्तरशतैः सर्वा सिद्धिरुक्ता मनीषिभिः॥

संक्षेपतः यहाँ अक्षसूत्रका विधान कहा जाता है—पचीस मनियों की मालासे मोक्ष, तीससे धनलाभ, सैंतीससे सर्वथा धनलाभ, पन्द्रहसे मारण कार्यमें सिद्धि, चौवनसे मनोवांछित सिद्धि तथा एक सौ आठसे सब कार्योंकी सिद्धि होती है ऐसा विद्वानोंका कथन है।

विष्णु आदि देवताओंकी विभिन्न मालाएँ

वैष्णवे तुलसीमाला गजदन्तैर्गणेश्वरे।
त्रिपुराया जपे शस्ता रुद्राक्षै रक्तचन्दनम्॥

(तन्त्रराज)

'विष्णुजीके लिये तुलसीकी माला, गणेशजीके लिए गजदन्त-निर्मित माला, त्रिपुरा देवीके जपमें रुद्राक्ष निर्मित माला तथा रक्त-चन्दन निर्मित माला प्रशस्त मानी गयी है।'

पुरश्चरणमें जपमाला का विधान

नित्यकर्मको करके करमाला अथवा अक्षमालासे जप करना चाहिये। पुरश्चरणमें अक्षमालासे ही जप करना चाहिये।

'नित्यं जपं करे कुर्यान्न तु काम्यं कदाचन।'

(वसिष्ठ)

'नित्यका जप हाथमें करे किन्तु काम्यजपको कभी हाथमें न करे।'

अङ्गुल्यैव जपं कुर्यान्न काम्यं कदाचन।
रुद्राक्षाद्यैः सर्वसिद्धि रतो मालां प्रकल्पयेत् ॥

'अंगुलियोंके पोरोंसे ही जप करे किन्तु काम्यजप अंगुलियोंसे न करे। रुद्राक्षादिकी मालासे जप करनेसे सर्वसिद्धि होती है, अतः जपादिमें माला अवश्य बनानी चाहिये।'

रुद्राक्षकी मालामें सभी प्रकारके मन्त्रोंका जप हो सकता है

'सर्वमन्त्रं जपं कुर्याद्विजो रुद्राक्षमालया ॥'

(लिङ्गपुराण)

'द्विजको चाहिये कि वह सभी मन्त्रोंका जप रुद्राक्षकी मालासे करे।'

जपमें अँगुलिका नियम

अङ्गुष्ठमध्यमाभ्यां च चालयेन्मध्यमध्यतः।
तर्जन्या न स्पृशेदेनां मुक्तिदो गणनक्रमः ॥

(वैशम्पायनसंहिता)

'अंगुष्ठ और मध्यमा अंगुलीके बीचसे मालाको घुमावे और तर्जनीसे स्पर्श न करे। इस प्रकारके गणना क्रमको मुक्तिदायक कहा गया है।'

कामनाभेदसे जपमें अँगुलिका नियम

अङ्गुष्ठं मोक्षदं विद्यात्तर्जनी शत्रुनाशिनी।
मध्यमा धनदा शान्तिकरा ह्येवा ह्यनामिका॥
कनिष्ठाऽऽकर्षणे शस्ता जपकर्मणि शोभने।
अङ्गुष्ठेन जपं जप्यमन्यैरङ्गुलिभिः सह॥
अङ्गुष्ठेन विना कर्म कृतं तदफलं यतः।
जप्त्वाक्षमालां सकलां भ्रामयेदाशिखामणिम्॥
प्रदक्षिणं पुनर्वक्के प्रारभ्यैवं समाचरेत्।
स्वयं वामहस्तेन जपमालां न संस्पृशेत्॥
अदीक्षितो द्विजो वापि स्पृष्टश्चेच्छुद्धिमाप्नुयात्।
न धारयेत् करे मूर्ध्नि कण्ठे च जपमालिकाम्॥
जपकाले जपं कृत्वा सदा शुद्धस्थले न्यसेत्।
गुरुं प्रकाशयेद्धीमान् मन्त्रं नैव प्रकाशयेत्॥

(पुरश्चरणदीपिका)

अंगुष्ठ मोक्षदायक, तर्जनी शत्रुविनाशिनी, मध्यमा धनदात्री, अनामिका शान्तिप्रदा होती है। हे शोभने! जपकार्यमें कनिष्ठा माला को खींचनेमें श्रेष्ठ मानी गयी है। अन्य अंगुलियोंके साथ अंगुष्ठसे जप करना चाहिये। अंगुष्ठके बिना समस्त जपकार्य निष्फल माना गया है, जप करते समय समस्त अक्षमालाको सुमेरु तक घुमाना चाहिये, आरम्भमें पुनः प्रदक्षिण क्रमसे प्रारम्भ करके जप करना चाहिये। जपमालाको स्वयं बाँयें हाथसे स्पर्श न करे, अदीक्षित द्विजसे स्पर्श होने पर शुद्ध कर लेना चाहिये। जपमालाको हाथ, सिर तथा कण्ठमें धारण न करे, जपके समय जपकर मालाको हमेशा शुद्ध स्थलमें रखना चाहिये। बुद्धिमानोंको चाहिये कि वे गुरुको तो प्रकाशित करें, किन्तु मन्त्रको प्रकाशित न करे।

मालामें सूत्रका विधान

कार्पाससम्भवं सूत्रं धर्मकामार्थमोक्षदम्।
तच्च विप्रेन्द्रकन्याभिर्निर्मितं च सुशोभितम्॥
शुक्लं रक्तं तथा कृष्णं पट्टसूत्रमथापि वा।
शान्तिवश्याभिचारेषु मोक्षैश्वर्यजपेषु च॥

शुक्लं रक्तं तथा पीतं कृष्णं वर्णेषु च क्रमात् ।
सर्वेषामेव वर्णानां रक्तं सर्वेप्सितप्रदम् ॥
त्रिगुणं त्रिगुणीकृत्य ग्रन्थयेच्छिल्पशास्त्रतः ।
एकैकं मातृकावर्णं सतारं प्रजपन् सुधीः ॥
मणिमादाय सूत्रेण ग्रन्थयेन्मध्यमध्यतः ।
ब्रह्मग्रन्थिं विधायेत्थं मेरुं च ग्रन्थिसंयुतम् ॥
ग्रथयित्वा पुरो मालां ततः संस्कारमाचरेत् ।

(सनत्कुमारसंहिता)

'रूईकी सूतमें श्रेष्ठ ब्राह्मणोंकी कन्या द्वारा यदि माला गूँथी गई हो तो वह धर्म-अर्थ-काम और मोक्षको देनेवाली होती है। वह माला क्रमशः सफेद, लाल, काला और पट्टसूत्रसे गूँथी हुई हो। सफेद, लाल, पीला, कालादि वर्णोंके सूत्रोंमें गूँथी हुई माला क्रमशः शान्ति, वशीकरण, अभिचार, मोक्ष तथा ऐश्वर्यादि कार्योंमें प्रशस्त मानी गई है। सभी वर्णोंमें लाल सूत सभी कार्योंको पूर्ण करनेवाला होता है। तीन सूतको तीन वार बाँटकर शिल्पशास्त्रके अनुसार माला गूँथनी चाहिये। तारके सहित एक-एक मातृका वर्णको जपता हुआ विद्वान् सूत्रसे मणिको लेकर मध्यभागसे गूँथे। इस प्रकार ब्रह्मग्रन्थि तथा ग्रन्थियुक्त मेरुको बनाकर पहले मालाको गूँथकर तब उसका संस्कार करे।'

देवताभेदसे मालामें सूत्रका निर्णय

पट्टसूत्रकृता माला देव्याः प्रीतिकरा मता ।
कार्पासैर्वैष्णवी माला पट्टसूत्रैस्थापि वा ॥
ऊर्णाभिर्वल्कलैर्वापि शैवीमाला प्रकीर्तिता ।
कार्पाससूत्रैरन्येषां विदध्याद् जपमालिकाम् ॥

'रेशमी सूतसे गुँथी हुई माला गायत्री देवीके लिये अतिशय प्रीतिकर मानी गयी है, रूईकी सूत तथा रेशमी सूतसे गुँथी हुई माला का नाम वैष्णवी है। उर्णा तथा (सनादि) को छालसे गुँथी माला का नाम शैवी है, अन्य मन्त्रोंके लिए रूईकी सूतसे माला बनानी चाहिये।'

जपमें प्रतिष्ठित माला ग्राह्य है

अप्रतिष्ठितमालाया सा जपे निष्फला स्मृता।
तस्मात्प्रतिष्ठा कर्तव्या जपस्य फलमिच्छता॥

'जपमें बिना प्रतिष्ठाकी हुई माला निष्फल कही गयी है। अतः जपके फलकी कामनावालेको मालाकी प्रतिष्ठा करनी चाहिये।'

मालाके संस्कारकी आवश्यकता

अप्रतिष्ठितमालाभिर्मन्त्रं जपति यो नरः।
सर्वं तद् विफलं विद्यात् क्रुद्धा भवति देवता॥

'बिना प्राण-प्रतिष्ठाकी हुई मालासे जो मनुष्य जप करता है उसका सभी जप निष्फल होता है और साथ ही देवता उस पर कुपित हो जाता है।'

मालाके संस्कारकी विधि

अश्वत्थपत्रनवकैः पद्माकारं तु कल्पयेत्।
तन्मध्ये स्थापयेतन्मालां मातृकामूलमुच्चरन्॥
क्षालयेत्पञ्चगव्येन सद्योजातेन तज्जलैः।
चन्दनागुरुकर्पूरै वामदेवेन वर्षयेत्॥
धूपयेत्तामघोरेण लेपयेत्पुरुषेण तु।
मन्त्रयेत्पञ्चमेनैव प्रत्येकं तु सकृत् सकृत्॥
मेरुं च पञ्चमेनैव ततोमन्त्रेण मन्त्रयेत्।
येन प्रतिष्ठिता माल्या तमेव तु मनुं जपेत्॥
तत्रावाह्ययजेद्देवं यथा विभवविस्तरैः।
संस्कृत्यैवबुधो मालां तत्प्राणांस्तत्र स्थापयेत्।
मूलमन्त्रेणतां मालां पूजयेद्द्विजसत्तम॥
एवं या संस्कृता माला जपकर्मणि सर्वदा।
अभीष्टफलदात्यर्थं सा सर्वार्धनिवाशिनी॥
मध्यमानामिकाङ्गुष्ठै रक्षमालामणी शनैः।
एवं जपस्य चैकस्य क्रमोऽयं चालयेज्जपेत्॥

(शारदातिलक)

'पीपलके नवीन पल्लवोंसे कमलका आकार बना ले पश्चात् मातृकाके मूलका उच्चारण करते हुए उस कमलके मध्यमें मालाको स्थापित करे। सद्यः बनाये हुए जलमिश्रित पञ्चगव्यसे उस मालाको धोना चाहिये। चन्दन-अगर तथा कर्पूरसे "वामदेव" इस मन्त्रसे मालाको घिसकर "अघोर" मन्त्रसे धूप दें पश्चात् "तत्पुरुष" मन्त्रसे लेप करें। पञ्चमें मन्त्रसे प्रत्येक मनियोंको एक-एक बार अभिमन्त्रित कर फिर उसी मन्त्रसे मेरुको भी अभिमन्त्रित करना चाहिये, जिस मन्त्रसे मालाकी प्रतिष्ठा की गई हो उसी मन्त्रका जप करे। विद्वान् को चाहिये कि वह उस मालामें देवका आवाहन कर यथाशक्ति उसकी पूजाकर तत्पश्चात् उसमें प्राण-प्रतिष्ठा करे। हे द्विजश्रेष्ठ! मूलमन्त्रसे उस माला कि पूजा करे, इस प्रकार सत्कृत माला हमेशा जपकार्यमें अभीष्टदायिनी तथा पाप-विनाशिनी मानी गयी है। सौ मनियोंसे बनी मालाको मध्यमा, अनामिका और अंगुष्ठ पर रखकर घुमाते हुए जप करना चाहिये क्योंकि एक प्रकारके जपका ऐसा भी क्रम बताया गया है।'

मालाकी प्रार्थना

गन्ध-पुष्पादिसे मालाका पूजन कर मालाकी प्राथना करनी चाहिये। मालाकी पूजा और प्रार्थना कर माला फेरनेसे विशेष फल होता है।'

ॐ महामाये महामाले सर्वशक्तिस्वरूपिणि।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव॥
अविघ्नं कुरु माले त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे।
जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये॥

'हे महामाये! हे महामाले! हे सभी शक्तियोंके रूपवाली! आपके अन्दर धर्म-अर्थ-काम तथा मोक्ष ये सभी स्थापित है अतः आप मेरे लिये सिद्धिप्रदायिनी हों। हे माले! आप मेरे लिए विघ्नोंको दूर करनेवाली हों, आपको मैं दाहिने हाथमें ग्रहणकर रहा हूँ। जपके समय मेरे मन्त्रकी सिद्धिके लिये आप प्रसन्न हों।'

जपादिके लिये श्रेष्ठ आसन

कौशेयं कम्बलं चैव अजिनं पट्टमेव च।
दारुजं कुशजातं वा आसनं परिकल्पयेत्॥

(योगियाज्ञवल्क्यः)

'रेशम, कंबल; मृगचर्म, काष्ठका पीढ़ा तथा कुश इनका आसन निर्माण करना चाहिये।'

कौशेयं कम्बलं चैव अजिनं पट्टमेव च।
दारुजं तालपत्रञ्च आसनं परिकल्पयेत्॥

(व्यासः)

'जप करनेके लिये रेशम, कंबल, मृगचर्म, वस्त्र, काष्ठ तथा ताल पत्र इनका आसन निर्माण करना चाहिये।'

कौशेयं वाऽथ चैलं वा चार्मं तौलमथापि वा।
वेत्रजं तालपत्रं वा कम्बलं दर्भमासनम्॥

'रेशमी वस्त्र, चर्म, रुई, बेंत, तालपत्र कम्वल तथा कुश इनका आसन श्रेष्ठ माना गया है।'

जपादिके लिये त्याज्य आसन

वंशाश्मदारुधरणी तृणपल्लव निर्मितम्।
वर्जयेदासनं मन्त्री दारिद्र्य व्याधिदुःखदम्॥
गोशकृन्मृन्मयं भिन्नं तथा पालाशपिप्पलम्।
लोहबद्धं सदैवार्कं वर्जयेदासनं बुधः॥

'मन्त्रजापकको चाहिये कि वह बाँस, पत्थर, लकड़ी, पृथ्वी, घास, पत्ते आदिसे बने आसनोंको प्रयोगमें न लावें क्योंकि ये सभी दरिद्रता, व्याधि और दुःखदायक होते हैं। पंडितोंको चाहिये कि गोबर और गोमूत्रसे सने पलाश, पिप्पल, लोहा तथा आकसे बने आसनको छोड़ दे।'

'आयसं वर्जयित्वा तु कांस्यसीसकमेव च।'

(देवीभागवत)

'जपादिमें लोहा, कांसा तथा शीशेके आसनोंको छोड़कर काष्ठ, वस्त्र आदिके आसन ग्रहण करने योग्य हैं।'

लोम्नि चैव यदासीनस्तदा सर्वं विनश्यति।
लोमसंस्पर्शमात्रेण सिद्धिहानिः प्रजायते॥

'लोमयुक्त आसनपर बैठनेसे समस्त अनुष्ठान नष्ट हो जाता है; क्योंकि लोमके स्पर्शमात्रसे सिद्धिकी हानि होती है।'

विभिन्न आसनोंके विभिन्न फल

कृष्णाजिने ज्ञानसिद्धिर्मोक्षं श्रीर्व्याघ्रचर्मणि।
वंशाजिने व्याधिनाशः [1]कम्बले दुःखमोचनम्॥
अभिचारे नीलवर्णं रक्तं वश्यादि कर्मणि।
शान्तिके कम्बलः प्रोक्तः सर्वेष्टं चित्रकम्बलम्॥
वंशासने तु दारिद्र्यं पाषाणे व्याधिसम्भवः।
धरण्यां दुःखसम्भूतिर्दौर्भाग्यं छिद्रदारुजे।
तृणे धन-यशोहानिः पल्लवे चित्तविभ्रमः॥
(व्यासः)

'काले मृगचर्मके आसनमें ज्ञानकी सिद्धि, व्याघ्र चर्ममें मोक्षलाभ, बाँसके बल्कल आदिकी चटाईपर व्याधिनाश और कंबलमें दुःख दूर होता है। अभिचार कर्ममें (मारण, मोहन, उच्चाटन आदिमें) नीला आसन, किसीको वशमें करनेके लिये किये जा रहे कर्ममें लाल आसन होना चाहिये। ग्रहपीड़ा, महामारी, आदिकी शान्तिके निमित्त किये जा रहे कर्ममें कंबलका आसन कहा गया है। चित्र कंबल समस्त कार्योंके लिये कहा गया है। बाँसके आसनपर जपनेसे दरिद्रता, पत्थरपर व्याधि, भूमिपर दुःख, छिद्रवाले काठपर दौर्भाग्य, तृणासनपर धन और यशका नाश और पल्लवासन पर चित्त-भ्रम होता है।

कृष्णाजिने ज्ञानसिद्धिर्मोक्षश्रीर्व्याघ्रचर्मणि।
स्यात्पौष्टिकं च कौशेयं शान्तिकं वेत्रविष्टरम्॥

---

१. सर्वं वै चित्रकम्बले।

वंशाशने व्याधिनाशः कम्बले दुःखमोचनम् ।
सर्वाभावे ज्वासनार्थं कुशविष्टरमिष्यते ॥

(शारदातिलक)

'कृष्ण मृगचर्मके आसनमें ज्ञानसिद्धि तथा व्याघ्रचर्मके आसनमें मोक्षकी प्राप्ति होती है। कौशेय आसनसे पुष्टि तथा वेत्र निर्मित आसनसे शान्तिकी प्राप्ति होती है। वंशनिर्मित आसनपर व्याधिनाश, कम्बलके आसनपर दुःखनाश होता है, यदि उपर्युक्त आसनोंका अभाव हो तो कुशका आसन श्रेष्ठ माना गया है।'

कामनाभेदसे आसनका विधान

अभिचारे नीलवर्णं रक्तं वश्यादिकर्मणि ।
शान्तिके कम्बलः प्रोक्तः सर्वेष्टं चित्रकम्बलम् ॥

(व्यासः)

'अभिचार कर्ममें (मारण, मोहन, उच्चाटन आदिमें) नीला आसन, किसीको वशमें करनेके लिये किये जा रहे कर्ममें लाल आसन होना चाहिये। ग्रहपीड़ा, महामारी आदिकी शान्तिके निमित्त किये जा रहे कर्ममें कंबलका आसन कहा गया है। चित्र कंबल समस्त कार्योंके लिये कहा गया है।'

लाल आसन सकाम मनुष्योंके लिये श्रेष्ठ है। काला आसन ज्ञान और मुक्तिके चाहनेवालेके लिए श्रेष्ठ है। बाघम्बरका आसन माया चाहनेवालेके लिये ठीक है।

कुशके आसनपर जप करनेसे मन्त्र सिद्ध होता है।

गृहस्थ (बिना दीक्षा लिये हुए) को मृगचर्मपर बैठकर जप नहीं करना चाहिये। मृगचर्मका आसन ब्रह्मचारी और यतिके लिये ही कहा गया है अथवा उद्यमी व्यक्ति भी मृगचर्म पर बैठकर जप कर सकता है।

भेड़, हाथी, सिंह, ऊँट, भालू और सर्पकी खालपर मारण, मोहन आदि मन्त्रोंके जप करनेवाले ही बैठकर जप कर सकते हैं।

आसनका परिमाण

चतुर्विंशत्यङ्गुलैस्तु दीर्घं काष्ठासनं मतम्।
षोडशाङ्गुलविस्तीर्णमुत्सेधे चतुरङ्गुलम्॥
पञ्चाङ्गुलं वा कुर्यात्तु नोच्छ्रितं चात्र कारयेत्।
वस्त्रं द्विहस्तान्नो दीर्घं सार्द्धहस्तान्न विस्तृतम्॥
त्र्यङ्गुलं तु तथोच्छ्रायं पूजाकर्मणि संश्रयेत्।
सर्वेषां तैजसानां च आसनं श्रेष्ठमुच्यते॥
(कालीपुराण)

'काष्ठका आसन २४ अंगुल लम्बा, १६ अंगुल चोड़ा और ४ अंगुल ऊँचा होना चाहिये अथवा ५ अंगुल ऊँचा होना चाहिये। इससे अधिक ऊँचा न करे। वस्त्रका आसन दो हाथसे अधिक लम्बा और डेढ़ हाथसे अधिक चौड़ा नहीं होना चाहिये। पूजा आदि कार्यमें तीन अंगुल ऊँचा आसनका प्रयोग करे। लोहा, कांसा और सीसेको छोड़कर सभी धातुओंका आसन श्रेष्ठ कहलाता है।'

पुरश्चरणका लक्षण

पञ्चाङ्गानि महादेवि जपो होमश्च तर्पणम्।
अभिषेकश्च विप्राणामाराधनमपीश्वरि॥
पूर्व-पूर्वदशांशेन पुरश्चरणमुच्यते॥
(कुलार्णव)

'हे महादेवि! जप–होम–तर्पण–अभिषेक और विप्रोंका आराधन ये सभी पञ्चाङ्गके नामसे प्रशस्त हैं, इन सभीमें पुरश्चरण विधि उत्तरोत्तरकी अपेक्षा पूर्व-पूर्वमें दशांश होना चाहिये।'

जपोहोमस्तर्पणं च सैकब्राह्मणभोजनम्।
पञ्चाङ्गोपासनं लोके पुरश्चरणमुच्यते॥

'एक ब्राह्मणके भोजनके साथ, जप, होम, तर्पण तथा पञ्चाङ्गोपासना ये सभी लोकमें पुरश्चरणका लक्षण माने गये हैं।'

पूजा त्रैकालिकी नित्यं जपस्तर्पणमेव च।
होमं ब्राह्मणभुक्तिश्च पुरश्चरणमुच्यते॥

'प्रातः, मध्याह्न और सायं इन तीनों समयमें पूजा तथा नित्य जप, तर्पण, होम एवं ब्राह्मण भोजन ये सभी पुरश्चरण कहे जाते हैं।'

संसारदुःखभूमेश्च दिदीच्छेत् सद्धिमात्मनः।
पञ्चाङ्गोपासनैनैव मन्त्रजापी व्रजेत् सुखम्॥
पूजा त्रैकालिकी नित्यं जपस्तर्पणमेव च।
होमो ब्राह्मणभुक्तिश्च पुरश्चरणमुच्यते॥
यद् यदङ्गं विहीयेत तत्संख्या द्विगुणो जपः।
ज्ञानाज्ञानकृतं सर्वं प्रणश्यति जपात् प्रिये॥

(कुलार्णव १५ उल्लास)

'यदि कोई मन्त्रजापक इस संसारकी दुःखरूपी भूमिसे अपनी सिद्धिकी कामना करे तो वह पञ्चाङ्गोंपासनासे ही सुख प्राप्त कर सकता है। नित्य त्रैकालिक पूजा, जप, तर्पण, होम, ब्राह्मणभोजन ये सब पुरश्चरणके लक्षण कहे जाते हैं। जिस-जिस अङ्गोंकी कमी हो तो उसकी दुगनी संख्यामें जप करे। हे प्रिये! जानकर या अनजानमें किये हुए सभी पाप जपसे नष्ठ हो जाते हैं।'

पुरश्चरणके दस प्रकार

जपो होमस्तर्पणं च स्वाभिषेकोऽघमर्षणम्।
सूर्यार्घ्यं जलदानं स्यात् प्रणामं देवपूजनम्॥
ब्राह्मणानां भोजनं च पूर्वं पूर्वं दशांशतः॥

(शारदातिलक ११ पटल)

'पूर्व-पूर्वकी अपेक्षा दशांश भागसे जप, होम, तर्पण स्वयं अभिषेक, अघमर्षण मन्त्र, सूर्यार्घ्य, जलका दान, श्रेष्ठ लोगोंको प्रणाम; देवपूजन तथा ब्राह्मणोंका भोजन ये दस प्रकार पुरश्चरणके माने गये हैं।'

पुरश्चरणकी आवश्यकता

जीवहीनो यथा देहः सर्वकर्मसु न क्षमः।
पुरश्चरणहीनस्तु तथा मन्त्रः प्रकीर्तितः॥

(देवीभागवत ११।२१।२४-२५)

'जैसे प्राणसे हीन शरीर समस्त कार्योंमें असमर्थ होता है, वैसे ही पुरश्चरणहीन मन्त्र भी निष्फल कहा गया है।'

जीवहीनो यथा देही सर्वकर्मसु न क्षमः।
पुरश्चरणहीनोऽपि तथा मन्त्रोऽफलप्रदः॥
जपो होमस्तर्पणञ्च सैकब्राह्मणभोजनम्।
पञ्चाङ्गोपासनं लोके पुरश्चरणमुच्यते॥
एवं कृत्वा हविष्याशी जपेल्लक्षं प्रकीर्तितम्।
ततः प्रयोगं सर्वेषां वश्यादीनां च कारयेत्॥
स्वेच्छाचार परो मन्त्री पुरश्चरणसिद्धये।
रहस्य मालामादाय लक्षमेकं सदा जपेत्॥
शठोऽपि यदि मूढः स्याद् भावस्य वशतत्परः।
लभते श्रीमतीं वाणीं मन्त्रलक्षस्य जापतः॥
भावनारहितानां तु क्षुद्राणां क्षुद्रचेतसाम्।
चतुर्गुणो जपः प्रोक्तः सिद्धये देवि सुन्दरि॥
एवं कृत्वा हविष्याशी जपेल्लक्षचतुष्टयम्।
विशेषतः कलियुगे मत्प्रसादाद् भविष्यति॥

(नीलतन्त्र, सप्तमपटल)

प्राणसे हीन शरीर जैसे सभी कार्योंमें असमर्थ होता है, ठीक वैसे ही पुरश्चरणसे हीन मन्त्र भी निष्फल माना गया है। एक ब्राह्मण भोजनके साथ ही जप, होम, तर्पण तथा पञ्चाङ्गोपासना लोकमें पुरश्चरण माना गया है। उपर्युक्त सभी कार्योंको करके हविष्यान्न-भोजी एक लक्ष जप करे, उसके बाद सभी वशीकरणादिका प्रयोग करना चाहिये। स्वेच्छाचारी मन्त्रजापक पुरश्चरणकी सिद्धिके लिये रहस्यमालाको हाथमें लेकर सदा एक लक्ष जप करे। शठके साथ ही साथ यदि मूढ़ भी कोई क्यों न हो यदि वह भावनाके वशीभूत है तो उसे एक लक्ष जप करनेसे श्रीप्रदान करनेवाली वाणी मिलती है। हे सुन्दरी ! भावनासे रहित ओछे मनवाले क्षुद्रजनोंकी सिद्धिके लिये चतुर्गुणित जप कहा गया है। इस प्रकार नियमोंका पालन करके हविष्यान्नभोजी मन्त्रजापक चार लाख जप करता है तो वह मेरी कृपासे विशेषकर कलियुगमें सिद्ध होगा।'

गायत्री पुरश्चरणका महत्त्व

गायत्रीके पुरश्चरण करनेसे वह मन्त्रसिद्धि प्राप्त होती है, जिसके अनुष्ठान-मात्रसे दुःख-दारिद्रय दूर हो जाता है।

(देवीभागवत ११।२१।५६)

गायत्रीके पुरश्चरण करनेसे सम्पूर्ण कामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं।

(देवीभागवत ११।२४।६१)

लभतेऽभिमतां सिद्धिं चतुर्विंशति लक्षतः।
जपतोऽयुतसंख्याकैरथवा च सहस्रकैः॥

'चौबीस लाख गायत्री मन्त्रका जप करनेसे सर्वाभीष्टसिद्धि प्राप्त होती है। अयुत संख्या (दस हजार) अथवा हजार बार जप करनेसे भी सिद्धि प्राप्त होती है।'

—

सभी प्रकारके मन्त्रोंके पुरश्चरणमें सर्वप्रथम गायत्री-जप आवश्यक है

यस्य कस्यापि मन्त्रस्य पुरश्चरणमारभेत्।
व्याहृतित्रयसंयुक्तां गायत्रीं चाऽऽयुतं जपेत्॥
नृसिंहार्कवराहाणां तान्त्रिकं वैदिकं तथा।
विना जप्त्वा तु गायत्रीं तत्सर्वं निष्फलं भवेत्॥

(देवीभागवत ११।२१।४-५)

'चाहे जिस किसी भी मन्त्रका पुरश्चरण करना हो, उसके पूर्व तीनों व्याहृतियोंसे युक्त गायत्रीका दस हजार जप करना चाहिये। नृसिंह, सूर्य और वराह इन देवताओंके तान्त्रिक एवं वैदिक कर्म भी गायत्रीमन्त्रके जप किये बिना सब निष्फल हो जाते हैं।'

—

ज्ञाताज्ञात पापके क्षयके लिये सर्वप्रथम गायत्रीका जप आवश्यक है

हविष्येणैव भोक्तव्यं कृत्वा देहविशोधनम्।
प्रातः स्नात्वाथ सावित्र्या जपेत्पञ्चसहस्रकम्॥

त्रिसहस्रं सहस्रं वा जपेदष्टोत्तरं शुचिः।
ज्ञाताज्ञातस्य पापस्य क्षयार्थं प्रथमं जपः॥

'कृच्छ्र, चान्द्रायण आदिसे देह शोधनकर हविष्य अन्नसे ही भोजन करना चाहिये। प्रातःकाल स्नान कर तदनन्तर पवित्र होकर ज्ञाताज्ञात पापके क्षयके लिये पहले पाँच हजार, तीन हजार या एक हजार आठ अधिक गायत्रीका जप करना चाहिये।'

गायत्रीपुरश्चरणार्थ प्रथम कृच्छ्र, चान्द्रायण आदि व्रत द्वारा शरीर शुद्धिकर तब गायत्रीका जप करना चाहिये।

गायत्रीपुरश्चरणकर्ताके लिये देहशुद्धिके प्रकार

गायत्री पुरश्चरण कर्ताके लिये योग्यता सिद्ध्यर्थ देहशुद्धिका प्रकार यों कहा गया है—

आत्मतत्त्वशोधनाय त्रिलक्षं प्रजपेद् बुधः।
अथवा चैकलक्षं तु श्रुतिप्रोक्तेन कर्मणा॥

(देवीभागवत ११।२१।८)

'आत्मशुद्धिके लिये विद्वान्को तो तीन लाख अथवा एक लाख गायत्रीका जप करना चाहिये।'

आत्मनः शोधनार्थाय लक्षत्रयं जपेद् बुधः।
अथवाप्यष्टलक्षं तु गायत्रीं श्रुतिचोदिताम्॥
चतुर्विंशतिलक्षं वा याज्ञवल्क्यमतं यथा॥

(विश्वामित्र)

गायत्रीपुरश्चरणकर्ताके लिये आत्मशुद्धिकी आवश्यकता

आत्मशुद्धिं विना कर्तुर्जपहोमादिकाः क्रियाः।
निष्फलास्तास्तु विज्ञेयाः कारणं श्रुतिचोदितम्॥
तपसा तापयेद्देहं पितॄन् देवांश्च तर्पयेत्।
तपसा स्वर्गमाप्नोति तपसा विन्दते महत्॥
क्षत्रियो बाहुवीर्येण तरेदापद आत्मनः।
धनेनन वैश्यः शूद्रस्तु जपोहोमैर्द्विजोत्तमः॥

अतएव तु विप्रेन्द्र ! तपः कुर्यात् प्रयत्नतः ।
शरीरशोषणं प्राहुस्तापसा तप उत्तमम् ॥
शोधयेद्विधिमार्गेण कृच्छ्रचान्द्रायणादिभिः ॥
(देवीभागवत ११।२१।९–१३)

'आत्म-शुद्धि किये बिना जपकर्ताके समस्त हवनादिकर्म व्यर्थ हो जाते हैं। तपस्याके द्वारा शरीरको तपाना और देवता-पितरोंका तर्पण करना मनुष्यमात्रका कर्तव्य है। तपस्यासे स्वर्गकी प्राप्ति और महान् फलकी प्राप्ति होती है। क्षत्रिय बाहु-बलसे, वैश्य धन-बलसे, शूद्र द्विजातिमात्रकी सेवासे एवं ब्राह्मण भी जप-हवन आदिके द्वारा अपना आत्मोद्धार कर सकता है। इसीलिये हे द्विजेन्द्र मुने ! प्रयत्न-पूर्वक तप करना चाहिये। तपस्याके द्वारा शरीरको सुखा देना ही उत्तम शारीरिक तप है। अथवा कृच्छ्र, चान्द्रायण आदि व्रतोंके द्वारा भी शरीर-शुद्धि करना चाहिये।'

पुरश्चरणकर्ताके लिये अन्नका शुद्धिप्रकार

अयाचितोञ्छशुक्लाख्य भिक्षावृत्तिचतुष्टयम् ।
तान्त्रिकैर्वैदिकैश्चैवं प्रोक्ताऽन्नस्य विशुद्धता ॥
भिक्षान्नं शुद्धमानीय कृत्वा भागचतुष्टयम् ।
एकं भागं द्विजेभ्यस्तु गोग्रासस्तु द्वितीयकः ॥
अतिथिभ्यस्तृतीयस्तु तदूर्ध्वं तु स्वभार्ययोः ।
(देवीभागवत ११।२१।१४–१६)

'तान्त्रिकोंने एवं वैदिकोंने चार प्रकारकी अन्नकी जीविका बतलायी है—अयाचित वृत्ति, उञ्छ वृत्ति, शुक्ल वृत्ति और भिक्षा-वृत्ति। इस प्रकारके पवित्र अन्नको भिक्षाके द्वारा प्राप्त कर उस विशुद्ध अन्नको पुनः चार भागोंमें बाँटें। उनमें एक भाग तो ब्राह्मणों को, दूसरा भाग गौको, तीसरा भाग अतिथिको और चौथे भागको स्वयं और अपनी पत्नी दोनों स्वयं अन्नग्रहण करें।'

अयाचितोञ्छशुक्लश्च भिक्षावृत्तिचतुष्टयम् ।
तान्त्रिकैर्वैदिकैश्चैव अन्नशुद्धिः प्रकीर्तिता ॥
अन्नानुसारकर्माणि बुद्धिः कर्मानुसारतः ॥

पललस्पर्शमात्रेण तपो दहति निश्चितम् ।
भिक्षान्नं शुद्धमानीय कृत्वा भागचतुष्टयम् ॥
एकभागो द्विजार्थाय गोग्रासाय द्वितीयकः ।
आतिथ्याय तृतीयश्च तुरीयस्तु स्वकीयकः ॥
(विश्वामित्रकल्प)

अयाचित-उञ्छसे प्राप्त (स्वामीके द्वारा धान्यादिको काटकर ले आनेपर खेतमें पड़े हुए बालियोंका नाम उञ्छ है "उञ्छ: कणश आदानं कणशाद्यर्जनं शीलम्") सात्विक गृहस्थके यहाँसे प्राप्त अन्न शुक्लके नामसे प्रसिद्ध है तथा भिक्षावृत्तिसे प्राप्त अन्न, ये सभी चारों प्रकारसे प्राप्त अन्न तान्त्रिक तथा वैदिक दोनों विधियोंसे शुद्ध माने गये हैं ।

अन्नके अनुसार कर्मशुद्ध होते हैं और कर्मके अनुसार बुद्धि शुद्ध होती है ।

मांसके स्पर्शमात्रसे निश्चित ही तपस्या नष्ट हो जाती हैं अतः भिक्षान्न लाकर उसका चार भाग करे एक भाग ब्राह्मणके लिये दूसरा भाग गौके लिये तीसरा भाग अतिथिके लिये और चौथा भाग अपने लिये श्रेष्ठ होता है ।

गायत्रीपुरश्चरणकर्ताके लिये भोजनार्थ ग्रासका प्रमाण और उसकी संख्या

आश्रमस्य यथा यस्य कृत्वा ग्रासविधिं क्रमात् ॥
आदौ क्षिप्त्वा तु गोमूत्रं यथाशक्ति यथाक्रमम् ।
तदूर्ध्वं ग्राससंख्या स्याद्वानप्रस्थगृहस्थयोः ॥
कुक्कुटाण्डप्रमाणं तु ग्रासमानं विधीयते ।
अष्टौ ग्रासा गृहस्थस्य वनस्थस्य तदर्धकम् ॥
ब्रह्मचारी यथेष्टञ्च गोमूत्रविधिपूर्वकम् ।
प्रोक्षणं नववारं च षड्वारं च त्रिवारकम् ॥
निश्छिद्रं च करं कृत्वा सावित्रीं च तदित्यृचम् ।
मन्त्रमुच्चार्य मनसा प्रोक्षणे विधिरुच्यते ॥
(देवीभागवत ११।२१।१६–२०)

'जिस आश्रममें ग्रास (कवर) की जो विधि निश्चित हो तदनुसार ग्रास-क्रमका विभाजन करके स्वयं भोजन करे। सर्वप्रथम यथाशक्ति उसी अन्नपर गोमूत्र छिड़के, पश्चात् गृहस्थ और वानप्रस्थी के ग्रासकी संख्या निश्चित करनी चाहिये। प्रत्येक ग्रासका परिमाण मुर्गाके अण्डाके सदृश कहा गया है। गृहस्थके लिये आठ ग्रास और वानप्रस्थीके लिये चार ग्रास भक्षण करनेका विधान है। ब्रह्मचारी यथेष्ट ग्रास भक्षण कर सकता है। ब्रह्मचारी सर्वप्रथम गोमूत्रकी विधि सम्पन्न करे, पश्चात् वह नव, छः अथवा तीन बार गायत्री मन्त्र द्वारा अन्नका प्रोक्षण करे। गायत्री-मन्त्र पढ़ते समय अँगुलियाँ अस्त-व्यस्त न होने पावें। मन्त्रोंका उच्चारण करके मनसे प्रोक्षण करने की यह विधि कही गयी है।'

कुक्कुटाण्डप्रमाणं तु ग्रासमानं विधीयते।
द्व्यष्टौ ग्रासा गृहस्थस्य वाप्रस्थस्तदर्धकम्॥
ब्रह्मचारी यथेष्टं च गोमूत्रविधिपूर्वकम्।
प्रोक्षणं नववारं स्यात् षड्वारं च त्रिवारकम्॥
अच्छिद्रं च करं कृत्वा सावित्रीं च तदित्यृचम्।
मन्त्रमुच्चार्यमनसा उक्तमार्गेण प्रोक्षयेत्॥

(विश्वामित्रकल्प)

गायत्रीपुरश्चरणकर्ताके लिये आहारका नियम

अशक्तो वापि शक्तो वा आहारे नियते कृते।
षण्मासे तस्य सिद्धिः स्याद् गुरुभक्तिरतः सदा॥
एकाहं पञ्चगव्याशी ह्येकाहं मारुताशनः।
एकाहं ब्राह्मणान्नाशी गायत्रीजपकर्मणि॥

(विश्वामित्रकल्प)

जपकर्ता समर्थ हो या असमर्थ किन्तु आहार के नियत होनेपर छः महीनेमें उसकी गायत्रीकी सिद्धि निश्चित है साथ ही उसे अविरल गुरुभक्ति भी मिलती है।

गायत्री जप कार्यमें एक दिन पञ्चगव्य पान एक दिन वायु पान तथा एक दिन ब्राह्मणान्न भोजन प्रशस्त माना गया है।

गायत्रीपुरश्चरणकर्ताके लिये वर्ज्य आहार

लवणं क्षारमाम्लं च गृञ्जनादि निषेधितम्।
तांबूलं च द्विभुक्तिश्च दुष्टवासं प्रमत्तताम्॥
श्रुतिस्मृतिविरोधं च जपं रात्रौ विवर्जयेत्॥
श्राद्धादेरनुरोधेन जपं यदि त्यजेन्नरः।
स भवेद्देवताद्रोही पितॄन् सप्त नयेदथ॥
(विश्वामित्रकल्प)

'गायत्री पुरश्चरणकर्ताके लिये नमक, क्षार, खट्टा-तीता, गाजर आदि आहार निषिद्ध हैं। ताम्बूल, दो बार भोजन, दुर्जनोंका सहवास, पागलपन, श्रुति और स्मृतिका विरोध और रात्रिमें जप निषिद्ध हैं। जो पुरश्चरणकर्ता श्राद्धादिके कारण जपका त्याग करता है, वह देवद्रोही होता है और अपनी सात पीढ़ीको नरकमें ले जाता है।'

पुरश्चरणकर्ताके लिये निकृष्ट अन्न

चौरो वा यदि चाण्डालो वैश्यः क्षत्रस्तथैव च।
अन्नं दद्यात्तु यः कश्चिदधमो विधिरुच्यते॥
(देवीभागवत ११।२१।२१)

'चोरीका अन्न, चाण्डालका अन्न, वैश्यका अन्न और क्षत्रियका अन्न निकृष्ट कहा गया है।'

गायत्रीपुरश्चरणकर्ताको शूद्रके अन्नभक्षण आदिसे नरककी प्राप्ति

शूद्रान्नं शूद्रसम्पर्कं शूद्रेण सहाशनम्।
ते यान्ति नरकं घोरं यावच्चन्द्रदिवाकरौ॥
(देवीभागवत ११।२१।२२)

'जो पुरश्चरणकर्ता शूद्रोंके घर भोजन करते हैं, उनके साथ उठते-

बैठते हैं अथवा उनकी पङ्क्तिमें बैठकर भोजन करते हैं, वे तबतक नरकमें स्थित रहते हैं, जबतक सूर्य और चन्द्रमाका अस्तित्व है।'

गायत्रीपुरश्चरणकर्ताके लिये नित्य अनुष्ठेय धर्म

क्षीराहारी फलाशी वा शाकाशी वा हविष्यभुक्।
भिक्षाशी वा जपेद् विद्वान् कृच्छ्रचान्द्रायणादिकृत्॥
लवणं क्षारमम्लञ्च गृञ्जनं कांस्यभोजनम्।
ताम्बूलं च द्विभुक्तञ्च दुष्टवासः प्रमत्तनम्॥
श्रुति-स्मृतिविरोधं च जपं रात्रौ विवर्जयेत्।
वृथा न कालं गमयेद् द्यूतस्त्री स्वापवादतः॥
गमयेद्देवतापूजा स्तोत्रागमविलोकनैः।
भूशय्या ब्रह्मचारित्वं मौनचर्या तथैव च॥
नित्यं त्रिषवणस्नानं शूद्रकर्म विवर्जनम्।
नित्यपूजा नित्यदानमानन्दस्तुति कीर्तनम्॥
नैमित्तिकार्चनं चैव विश्वासो गुरुदेवयोः।
जपनिष्ठस्य धर्मा ये द्वादशैते सुसुद्धिदाः॥
नित्यं सूर्यमुपस्थाय तस्य वाभिमुखो जपेत्।
देवता प्रतिमादौ वा वह्नौ वाऽभ्यर्च्य तन्मुखः॥
स्नानपूजाजपध्यान होमतर्पणतत्परः।
निष्कामो देवतायाश्च सर्वकर्मनिवेदकः॥
एवमादींश्च नियमान् पुरश्चरणकृच्चरेत्।
(देवीभागवत ११।२३।२१।२९)

दुग्धपायी, फलाहारी, शाकाहारी, हविष्यभोजी, भिक्षान्नभोजी, कृच्छ्रचान्द्रायणादिव्रत करनेवाले विद्वान्‌को जप करना चाहिए। नमक, क्षार तथा खट्टा पदार्थ, गाजर, कांस्यपात्रमें भोजन, ताम्बूल, दो बार खाकर, कुत्सित वस्त्र पहनकर तथा प्रमत्त होकर, श्रुति और स्मृतिसे विरुद्ध जप रात्रिमें नहीं करना चाहिए। द्यूत, स्त्रीसम्भोग तथा निद्रादिसे व्यर्थमें समय नहीं बिताना चाहिए, अपितु काल-थापन, देव-पूजन, स्तोत्र-पाठ तथा शास्त्रादि चर्चासे करना चाहिए। भू-शयन, ब्रह्मचर्य-व्रत, मौन, नित्यप्रति त्रैकालिक स्नान, शूद्र-कर्मका त्याग, नित्यपूजा, नित्यदान, आनन्द, स्तुति, कीर्तन, नैमित्तिक पूजन

तथा गुरु और देवतामें विश्वास ये बारह नियम—धर्मजपनिष्ठके लिए सिद्धिप्रद कहे गये हैं। नित्य सूर्योपस्थान करके या सूर्याभिमुख होकर जप करना चाहिए, देव-प्रतिमा तथा अग्निका पूजन कर या तन्मुख होकर, स्नान-पूजा-जप-ध्यान-होम-तर्पणादिमें तत्पर, निष्कामभावसे सभी कर्मोंको देवार्पण करना इत्यादि नियमोंको पुरश्चरणकर्ता अवश्य करे।

क्षीराहारी फलाशी वा शाकाशी वा हविष्यभुक्।
भिक्षाश्नी वा जपेद् यद्वा कृच्छ्रचान्द्रायणादिकृत्॥
भूशय्या ब्रह्मचारित्वं मौनचर्या तथैव च।
नित्यं त्रिषवणं स्नानं क्षुद्रकर्मविवर्जनम्॥
नित्यपूजा नित्यदानमानन्दस्तुतिकीर्तनम्।
नैमित्तिकार्चनं चैव विश्वासो गुरुदेवयोः॥
जपो निष्ठा द्वादशैते धर्माः स्युर्मन्त्रसिद्धिदाः॥

(वैशम्पायनसंहिता)

'क्षीरका आहार करनेवाला, फलाहारी, हविष्यभोजी, भिक्षान्न-भोजी या कृच्छ्रचान्द्रायणादिव्रत करनेवाला गायत्री-मन्त्रका जप करे।

पृथ्वी पर शयन करना, ब्रह्मचर्य धारण करना, मौन रहना, नित्य प्रति प्रातः-मध्याह्न तथा सायंकाल तीनों समयमें स्नान करना, करना, नीचकर्मका परित्याग करना, नित्य पूजा करना, नित्य दान करना, आनन्दपूर्वक स्तुति और कीर्तन करना, नैमित्तिक पूजा करना, गुरु तथा देवतामें विश्वास करना और जपमें विश्वास करना इन बारह गुणोंसे सम्पन्न व्यक्तिके मन्त्र सिद्धिदायक होते हैं।

भूशय्या ब्रह्मचारित्वं मौनचर्यास्तथैव च।
नित्यं त्रिषवणं स्नानं क्षुद्रकर्म विवर्जनम्॥
नित्यपूजा नित्यदानमानन्दस्तुतिकीर्तनम्।
नैमित्तिकार्चनं चैव विश्वासो गुरुदेवयोः॥
जपनिष्ठा द्वादशैते धर्माः स्युर्मन्त्रसिद्धिदाः।
नित्यं सूर्यमुपस्थाय तस्य चाभिमुखो जपेत्॥
देवताप्रतिमादौ वा बह्नौ वाऽभ्यर्च्य तन्मुखः।
स्नान-पूजा-जपध्यान होमतर्पणतत्परः॥

पृथिवीशयन, ब्रह्मचर्य-पालन, मौनधारण, नित्य त्रिकाल स्नान, निन्दित कर्मोंका त्याग, नित्य पूजा, नित्य दान, आनन्दपूर्वक भगव-

स्तुति और भगवत्कीर्तन, नैमित्तिक पूजन, गुरु तथा देवतामें विश्वास एवं जपमें निष्ठा ये उपर्युक्त बारह धर्म गायत्री-मन्त्रमें सिद्धिदायक माने गये हैं।

नित्य सूर्योपस्थान करके सूर्याभिमुख होकर गायत्रीका जप करना चाहिये।

देवप्रतिमाके आगे अग्निकी पूजा करके अग्निके सम्मुख स्नान-पूजन-जप-ध्यान-होम तथा तर्पणादि कार्यमें संलग्न होना चाहिये।

निष्कामो देवतानां च सर्वकर्मनिवेदकः।
एवमादींश्च नियमान् पुरश्चरण कृच्चरेत्॥

(विश्वामित्रकल्प)

'भूशय्या, ब्रह्मचर्यपालन, मौनव्रतधारण, प्रतिदिन त्रिकाल स्नान और क्षुद्र कर्मोंका त्याग करना चाहिये। नित्य पूजा, नित्य दान, आनन्दमग्न होकर देवी-देवताओंका स्तवन और कीर्तन, नैमित्तिक देवार्चन, गुरु एवं देवतामें विश्वास तथा जपमें निष्ठा—ये बारह नियम पुरश्चरणकर्ताको निष्कामभावसे अपने समस्त कर्मका समर्पण देवताओंको करना चाहिये और ऐसे ही नियमोंका पालन करना चाहिये।

गायत्रीपुरश्चरणकर्ताके नियम

आमध्याह्नं जपं कुर्यादुपांशुं वाथ मानसम्।
हविष्यं निशि भुञ्जीत त्रिःस्नाय्यभ्यङ्गवर्जितः॥
व्यग्रताऽलस्यनिष्ठीवक्रोधपादप्रसारणम्।
अन्यभाषां त्यजेच्चे च जपकाले त्यजेत्सुधीः॥
स्त्रीशूद्रभाषणं निन्दां ताम्बूलं शयनं दिवा।
प्रतिग्रहं नृत्यगीते कौटिल्यं वर्जयेत् सदा॥
भूशय्या ब्रह्मचर्यं च त्रिकालं देवतार्चनम्।
नैमित्तिकार्चनं देवस्तुतिं विश्वासमाश्रयेत्॥
प्रत्यहं प्रत्यहं तावन्नैव न्यूनाधिकं क्वचित्।
एवं जपं समाप्यन्ते दशांशं होममाचरेत्॥

(मन्त्रमहोदधि)

'मध्याह्न पर्यन्त उपांशु जप करे अथवा मानसिक जप करे, रात्रिमें हविष्यान्न भोजन करे, विना तेल लगाये तीन वार स्नान करे। विद्वान्‌को चाहिये कि वह विशेषकर जपके समय व्यग्रता, आलस्य, थूकना, क्रोध करना, पैर फैलाना तथा अन्य भाषाका परित्याग कर दे। स्त्री-शूद्रादिकोंसे भाषण, परनिन्दा, ताम्बूल भक्षण, दिनका शयन, दान लेना, नृत्य, गीत तथा कुटिलताका त्याग करे। भूमिमें शयन, ब्रह्मचर्यका पालन, तीनों समय देवपूजन, नैमित्तिक पूजन, देवस्तुति तथा विश्वासका आश्रयण करे। प्रतिदिन बराबर जप करे, कभी भी कम या अधिक न करे, इस प्रकार जप की समाप्तिमें दशांश हवन करे।

मैथुनं तत्कथालापं तद्गोष्ठीः परिवर्जयेत्।
ऋतुकालं विना मन्त्री स्वस्त्रियं नैव गच्छति॥
कौटिल्यं क्षौरमभ्यङ्गमनिवेदितभोजनम्।
असङ्कल्पितकृत्यं च वर्जयेन्मर्द्दनादिकम्॥
स्नायाच्च पञ्चगव्येन केवलामलकेन वा।
श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तैर्मन्त्रैः स्नायान्निरन्तरम्॥
मन्त्रजप्तान्नपानीयैः स्नानाचमनभोजनम्।
स्नानं त्रिषवणं प्रोक्तमशक्तो द्विः सकृत्तथा॥
उत्तस्नातस्य फलं नास्ति न चातर्पयतः पितॄन्।
अपवित्रकरो नग्नः शिरसि प्रावृतोऽपि वा॥
प्रलपन् प्रजपेद्यावत्तावन्निष्फलमुच्यते।

(रामार्चनचन्द्रिका)

मन्त्रजापकको चाहिये कि वह मैथुन, मैथुनसम्बन्धी बातें, मैथुनसम्बन्धी गोष्ठीका परित्याग करे साथ ही ऋतुकालके बिना अपनी स्त्रीका गमन भी न करे। कुटिलता, क्षौरकर्म, तैलादिमर्दन, विना निवेदन किया हुआ भोजन, बिना बिचारा हुआ कार्य तथा उबटनादिका भी परित्याग करे। पञ्चगव्य तथा आमलकसे स्नान करे, श्रुति-स्मृति पुराणोक्तमन्त्रोंसे निरन्तर स्नान करे: मन्त्रजापक तीन बार स्नान करे। असमर्थ हो तो दो बार नहीं तो एक ही बार स्नान करे। बिना स्नान किये, बिना पितरोंको तर्पण किये, अपवित्र हाथसे, नंगा या शिर ढककर, बोलते हुए जो जप किया जाता है तब वह जप निष्फल कहा गया है।'

क्षारं च लवणं मांसं गृञ्जनं कांस्यभोजनम्।
माषाढकी मसूरांश्च कोद्रवांश्चणकानपि॥

अन्नं पर्युषितं चैव निःस्नेहं कीटदूषितम् ।
असद्भाषणमन्यायं वर्जयेदन्यपूजनम् ॥
विना श्रमोचितं किञ्चिन्नित्यनैमित्तिकं चरेत् ।
स्त्रीशूद्रपतितव्रात्य नास्तिकोच्छिष्टभाषणम् ॥
असत्यभाषणं चैव कौटिल्यं च परित्यजेत् ।
सद्भिरपि न भाषेत जपहोमार्चनादिषु ॥
वाग्यतः कर्म निर्वर्त्य निःस्पृहो वर्त्तितादिषु ।
वर्जयेद् गीतकाव्यादिश्रवणं नृत्यदर्शनम् ॥
परान्नं च परद्रव्यं तथैव तु प्रतिग्रहः ।
परस्त्रीं परनिन्दां च मनसापि विवर्जयेत् ॥
जिह्वा दग्धा परान्नेन करौ दग्धौ प्रतिग्रहात् ।
परस्त्रीभिर्मनो दग्धं मन्त्रसिद्धिः कथं भवेत् ॥
(पुरश्चरणदीपिका)

जप-होम और पूजनादि कार्योंमें क्षारपदार्थ, नमक, मांस, गाजर, कांस्यपात्रमें भोजन, उड़द, आढक, मसूर, कोदो, चना, बासी अन्न, घृतादिसे रहित अन्न, कीटादिसे दूषित अन्न, असत्यभाषण, अन्याय-कार्य तथा दूसरेका पूजन नहीं करना चाहिए। बिना परिश्रमके उचित नित्यनैमित्तिक कार्यको करना चाहिए। स्त्री, शूद्र, पतित, व्रात्य, नास्तिकादिसे भाषण न करे तथा जूठे मुंहसे न बोले। असत्यभाषण तथा कुटिलताका परित्याग करे। सज्जनोंसे भी न बोले, वाणीको नियन्त्रित कर, कर्मको समाप्त कर सभी कार्योंमें निस्पृह रहे। गीत, काव्यादिका श्रवण न करे। नृत्य न देखे। परान्न, परद्रव्य, दूसरेका दान, परायी स्त्री, परनिन्दा आदिको मनसे ही परित्याग करे। परान्नभोजनसे जीभ जल जाती है, दान लेनेसे हाथ दग्ध हो जाते हैं, परस्त्री चिन्तनसे मन दग्ध हो जाता है। ऐसी स्थितिमें मन्त्रकी सिद्धि कैसे सम्भव है?

उष्णीषी कञ्चुकी नग्नो मुक्तकेशो गलावृतः ।
अशुचिरपवित्रकरः प्रलपन्न जपेत् क्वचित् ॥
एकवस्त्रो न भुञ्जीत न कुर्याद्देवतार्चनम् ।
न कुर्यात् पितृकार्याणि दानं होमं जपं तथा ॥
(रामार्चनचन्द्रिका)

'शिर बांधे हुए, बंडी पहने हुए, नग्न, शिखा खोले हुए, कण्ठमें

वस्त्र लगाये हुए, अपवित्र शरीरसे, अपवित्र हाथसे और बोलते हुए जप नहीं करना चाहिये। एक वस्त्र पहनकर भोजन, देवपूजन, पितृ-कर्म, दान, होम और जप नहीं करना चाहिये।'

उष्णीषी कञ्चुकी नग्नो मुक्तकेशो गलावृतः।
अपवित्रकरोऽशुद्धो विलपन्न जपेत् क्वचित्॥
क्रोधं मदं क्षुतं त्रीणि निष्ठीवन विजृम्भणे।
दर्शनं च श्व नीचानां वर्जयेत् जपकर्मणि॥
आचामेत् सम्भवे तेषां स्मरेद्वा मां त्वया सह।
ज्योतींषि च प्रपश्येद्वा कुर्याद्वा प्राणसंयमम्॥

'पगड़ी पहनकर, कुर्ता पहनकर, नग्न होकर, शिखा खोलकर, कण्ठको वस्त्रसे लपेटकर, अपवित्र हाथकर, अशुद्ध होकर और रुदन करते हुए कभी जप न करे। क्रोध करना, मद करना, छींकना, थूकना, जँभाई लेना, कुत्ताका स्पर्श करना और नीच मनुष्योंको देखना—ये सब जपमें त्याज्य हैं। यदि इन कार्योंमें त्रुटि हो जाय, तो पुरुष आचमन करे अथवा तुम्हारे सहित मेरा स्मरण करे अथवा तारागणोंको देखे अथवा प्राणायाम करे।'

पतितानामन्त्यजानां दर्शने भाषणे श्रुते।
क्षुतेऽधोवायुगमने जृम्भणे जपमुत्सृजेत्॥
तथा तस्य च तत्प्राप्तौ प्राणायामं षडङ्गकम्।
कृत्वा सम्यग्जपेच्छेषं यद्वा सूर्यादिदर्शनम्॥
उष्णीषी कञ्चुकी नग्नो मुक्तकेशो गणावृतः।
अपवित्रकरोऽशुद्धः प्रलपन्न जपेत् क्वचित्॥
(वैशम्पायनसंहिता)

'पतित तथा अन्त्यजोंके दर्शन होने पर तथा उनके वचन सुनने पर, छींक आने पर, अपानवायु निकलने पर और जँभाई आने पर जप न करे। जपके फललाभार्थ षडङ्ग प्राणायाम करके या सूर्यादिका दर्शन करके अच्छी तरहसे शेष जप करे। पगड़ी बाँधकर, कुर्ता पहनकर, नंगा, केश बिखराकर, लोगोंसे घिरा हुआ, अपवित्र हाथ या अशुद्धावस्थामें और बोलते हुए कहीं भी जप न करे।'

आलस्यं जृम्भणं निद्रां क्षुतं निष्ठीवनं भयम्।
नीचाङ्गस्पर्शनं कोपं जपकाले विवर्जयेत्॥

व्यग्रताऽऽलस्यनिष्ठीव क्रोधपाद प्रसारणम् ।
अन्यभाषां मृषा चैव जपकाले त्यजेत्सुधीः ॥

'विद्वान्‌को चाहिये कि वह जपकालमें आलस्य, जँभाई, निद्रा, छींकना, थूकना, भय, गुप्ताङ्गका स्पर्श करना, और क्रोध करना त्याग दे। व्यग्रता, आलस्य, थूकना, क्रोध, पाँव फैलाना, दूसरोंसे बात करना और मिथ्या भाषण करना आदिका परित्याग कर दे।'

अनासनः शयानो वा गच्छन् भुञ्जान एव वा।
अप्रावृतौ करौ कृत्वा शिरसा प्रावृतोऽपि वा ॥
चिन्ताव्याकुलचित्तो वा क्षुब्धो भ्रान्तः क्षुधान्वितः।
रथ्यायामशिवस्थाने न जपेत्तिमिरालये ॥
उपानद् गूढपादो वा यानशय्यागतोऽपि वा।
प्रसार्य न जपेत्पादावुत्कटासन एव च ॥
न यज्ञकाष्ठे पाषाणे न भूमौ नासने स्थितः।
(तन्त्रसार)

'बिना आसन; सोये हुए, चलते हुए, खाते हुए, हाथोंको बिना ढके, या शिर ढककर, चिन्तासे व्यग्र चित्त हो, क्षुब्धावस्थामें, भ्रान्तावस्थामें, भूखसे व्याकुल अवस्थामें, मार्गमें अपवित्र स्थानमें, अन्धकार गृहमें, जूता पहना हुआ, यान या शय्या पर बैठकर, पैरको फैलाकर, वीभत्स आसन पर, यज्ञकाष्ठ पर, पत्थर पर, भूमि पर, बिना आसन पर बैठे जप नहीं करना चाहिये।'

अनासनः शयानो वा गच्छनुत्थित एव वा।
रथ्यायामशिवे स्थाने न जपेत् तिमिरान्तरे ॥
प्रसार्य न जपेत् पादौ कुकुटासन एव वा।
यानशय्याधिरूढो वा चिन्ता व्याकुलितोऽथवा।
शक्तश्चेत् सर्वमेवैतदशक्तः शक्तितो जपेत् ॥

'बिना आसन, शयन करते, चलते, उठते, मार्गमें, अमङ्गल स्थानमें और अन्धकारमें जप न करे। पैरोंको फैलाकर अथवा मुर्गाके आसनसे जप न करे। सवारी पर अथवा खाट (पलंग) पर बैठकर, चिन्तासे व्याकुल होकर, समर्थ हो तो—इन सबसे बचकर जप करे। असमर्थ हो तो शक्तिके अनुसार जप करे।'

वदन्न गच्छन्न स्वपन्नान्यत् किमपि संस्मरन् ।
न क्षुज्जम्भणहिक्कादिविकली कृतमानसः ॥
मन्त्रसिद्धिमवाप्नोति तस्माद्यत्नपरो भव ।
(नारदपञ्चरात्र)

'बातें करते, मार्गमें चलते, निद्रा लेते, दूसरी बातका स्मरण करते अथवा चींक, जँभाई और हिचकी आदिके द्वारा चञ्चलचित्त होकर जप करनेसे मन्त्रसिद्धि नहीं होती। अतः जप करते समय सावधान रहना चाहिये।'

न च क्रमन्न विहसन्न पार्श्वमवलोकयन् ।
ना(नो)पाश्रितो न जल्पंश्च न प्रावृत्य शिरस्तथा ॥
न पदा पदमाक्रम्य न चैव हि यथा करौ ।
न चासमाहितमना न च संश्रावयन् जपेत् ॥
प्रच्छन्नानि च दानानि ज्ञानं च निरहङ्कृतम् ।
जप्यानि च सुगुप्तानि तेषां फलमनन्तकम् ॥
(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ७।१३१।१३३)

'चलते हुए, हँसते हुए, अपने समीप अगल-बगलमें देखते हुए, झुककर बोलते हुए, शिरको ढककर, पैरको पैर पर रखकर और हाथको हाथ पर चढ़ाकर जप नहीं करना चाहिये। न किसीको सुनाते हुए जप करना चाहिये।'

तिष्ठंश्चेद्वीक्ष्यमाणोऽर्कमासीनः प्राङ्मुखो जपेत् ।
प्रागग्रेषु कुशेष्वेवमासीनश्चासने शुभे ॥
नात्युच्छ्रिते नातिनीचे दर्भपाणिः सुसंयतः ।
जप एव हि कर्त्तव्य एकाग्रमनसा तथा ॥
(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ७।१३५।१३६)

'यदि बैठा हुआ हो तो पूर्वाभिमुख बैठकर सूर्यको देखता हुआ जप करे। जिनका अग्रभाग पूर्वकी ओर हो ऐसे कुशोंके शुभासन पर बैठे।'

[1]ध्यायेच्च मनसा मन्त्रं जिह्वोष्ठौ न विचालयेत् ।

---

१. ध्यायेत्तु मनसा देवीं मन्त्रमुच्चारयेच्छनैः ।
न कम्पयेच्छिरो ग्रीवां दन्तान्नैव प्रकाशयेत् ॥
(देवीभागवत ११।१७।१५)

'मनसे गायत्रीदेवीका ध्यान करते हुए मुखसे मन्त्रका धीरे-धीरे उच्चारण करे। सिर और ग्रीवाको न कंपाये तथा दाँतोंको न दिखाये।'

न कम्पयेच्छिरो ग्रीवं दन्तान्नैव प्रकाशयेत् ॥
यक्षराक्षसभूतानि सिद्धविद्याधरोरगाः ।
हरन्ति प्रसभं यस्मात्तस्माद् गुप्तं समाचरेत् ॥
(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ७।१४०-१४१)

'मन्त्रका मनसे ध्यान करे और जिह्वा तथा ओष्ठको नहीं चलावे। शिर और गर्दनको न कँपाये (हिलाये) और दाँतोंको न दिखाये। उपर्युक्त दोषोंके रहने पर यक्ष, राक्षस, भूत, सिद्ध, विद्याधर तथा सर्प—ये सभी हठात् जपके फलको अपहरण कर लेते हैं। अतः गायत्री-मन्त्रको गुप्त रखना चाहिये।'

जपकाले न भाषेत व्रतहोमादिकेषु च।
एतेष्वेवावशक्तं तु यद्यागच्छेद् द्विजोत्तमः ॥
अभिवाद्य ततो विप्रं योगक्षेमं च कीर्तयेत्।
स्त्रीशूद्रपतितांश्चैव पाषण्डिनं रजस्वलाम् ॥
जपकाले न भाषेत व्रतहोमादिकेषु च ।
यदि वाग्यमलोपः स्याज्जपादिषु कथञ्चन ॥
व्याहरेद्वैष्णवं मन्त्रं स्मरेद्वा विष्णुमव्ययम्।
तूष्णीमासीत तु जपंश्चाण्डालपतितादिकान् ॥
दृष्ट्वा तीर्थमुपस्पृश्य भाष्य स्नात्वा पुनर्जपेत्।
आचम्य प्रयतो भूत्वा जपेदशुचिदर्शने ॥
सौरान् मन्त्रान् यथोत्साहं पावमानीश्च शक्तितः।
रौद्रपित्र्यासुरान् मन्त्रान् राक्षसानभिचारिकान् ॥
व्याहृत्यालभ्य चात्मानमपः स्पृष्ट्वान्यदाचरेत्।
ऊर्ध्वं यत्कुरुते कर्म तद्भवत्ययथायथम् ॥
(बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ७।१४६-१५२)

'जपके समयमें, व्रत और हवन आदिके समय नहीं बोलना चाहिये। जप आदि कार्योंमें संलग्न होनेके समय यदि उत्तम द्विज आ जाय, तो उस विप्रको नमस्कारकर उससे योगक्षेम पूछे। स्त्री, शूद्र, पतित, पाखण्डी और रजस्वला स्त्रीसे जप, व्रत एवं हवनादिके समय नहीं बोलना चाहिये। कदाचित् जप-कालमें मौन भङ्ग हो जाय तो विष्णु-सम्बन्धी मन्त्रोंका उच्चारण अथवा भगवान् विष्णुका स्मरण करना चाहिये। चाण्डाल-पतितादिकोंको जप करते समय देखकर मौन हो जाना चाहिये, स्पर्श हो जाने पर पवित्र जलका स्पर्श करे तथा उनसे

भाषणकर लेने पर स्नान करके जप करना चाहिये। अपवित्र वस्तुके दृष्टिगोचर होने पर आचमन करे और सावधान होकर पुनः जप करें। पश्चात् यथाशक्ति सौर मन्त्र और पवमानसूक्तका पाठ करना चाहिये। गायत्री-मन्त्रके जपके समय यदि रुद्र-पितर-असुर-राक्षस तथा अभिचारक मन्त्रोंके उच्चारण कर लेने पर हृदयस्थ परमात्माका स्मरण करे और पवित्र जलका स्पर्श करे पश्चात् पुनः जप करें। यदि उपर्युक्त नियमोंका उल्लङ्घन कर जप किया जायगा तो वह निष्फल ही होगा।

सकृदुच्चरिते शब्दे प्रणवं समुदीरयेत्।
प्रोक्ते पारशवे शब्दे प्राणायामं सकृच्चरेत्॥
बहुप्रलापी आचम्य न्यस्याङ्गानि ततो जपेत्।
क्षुतोऽप्येवं तथाऽऽस्पृश्य स्थानानां स्पर्शनेन च॥
पवमादींश्च नियमान् पुरश्चरणकृच्चरेत्।
विण्मूत्रोत्सर्गशङ्कादियुक्तः कर्म करोति यत्॥
जपार्चनादिकं सर्वमपवित्रं भवेत् प्रिये।
मालिनाम्बर केशादि मुखदौर्गन्ध्य संयुतः॥
यो जपेत्तं दहत्याशु देवता गुप्तिसंस्थिता।
आलस्यं जृम्भणं निद्रां क्षुतं निष्ठीवनं भयम्॥
नीचाङ्गस्पर्शनं कोपं जपकाले विवर्जयेत्।
एवमुक्तविधानेन विलम्बत्वरितं विना॥
उक्तसंख्यं जपं कुर्यात्पुरश्चरण सिद्धये।
देवतागुरुमन्त्राणामैक्यं सम्भावयन् धिया॥
जपेदेकमनाः प्रातःकालं मध्यन्दिनावधि।
यत्संख्यया समारब्धं तज्जप्यं दिनेदिने॥
यदि न्यूनाधिकं कुर्याद् व्रतभ्रष्टो भवेन्नरः।
कृते जपस्तु कल्पोक्तस्त्रेतायां द्विगुणो मतः॥
द्वापरे त्रिगुणः प्रोक्तश्चतुर्गुण जपः कलौ।

(तन्त्रसार)

पुरश्चरणकर्ताको चाहिये कि वह इन नियमोंका पालन करे यथा एक शब्द बोलने पर ॐकारका उच्चारण करे, अपशब्द भाषण करने पर एक बार प्राणायाम करे, बहुत बोलने पर आचमन कर तथा अङ्गन्यास कर तब जप करे, छींक आने पर तथा अस्पृश्य अङ्गोंको

स्पर्श कर आचमन करके तथा अङ्गन्यास करके जप करे।

भगवान् शंकरजी कहते हैं कि हे प्रिये ! जो शौच तथा मूत्रोत्सर्ग-से युक्त होकर जप तथा पूजनादि कार्य करता है वे सभी कार्य अपवित्र हो जाते हैं। मलिन वस्त्र, मलिन केश, मुखदुर्गन्धिसे युक्त होकर जो जप करता है तो इस जपको गुप्तरूपसे निवास करनेवाले देवगण शीघ्र ही जला देते हैं। जपके समय आलस्य, जँभाई, निद्रा, छींक, थूकना, भय, निम्नाङ्गका स्पर्श तथा क्रोधादिका परित्याग करना चाहिये। इस प्रकार कथित विधानसे शीघ्रता तथा विलम्बके बिना पुरश्चरणकी सिद्धिके लिये संकलित जप करना चाहिए। बुद्धिसे देवता-गुरु और मन्त्रमें एकताकी भावना रखते हुए मनको एकाग्रकर प्रातःकालसे लेकर मध्याह्न पर्यन्त जप करना चाहिए। जितनी संख्या-से जप प्रारम्भ किया गया हो उतनी संख्या तक प्रतिदिन जप करे, यदि कम या अधिक जप किया जाय तो वह मनुष्य व्रतसे भ्रष्ट हो जाता है। कृतयुगमें जपका फल कल्पोक्तानुसार ही मिलता है, त्रेतामें द्विगुणित हो जाता है, द्वापरमें तिगुना और कलियुगमें चारगुणा फल मिलता है।

पुरश्चरणकर्ताके भक्ष्याभक्ष्यका विचार

भैक्ष्यं हविष्यं शाकानि विहितानि फलं पयः।
मूलं शुक्तुर्यवोत्पन्नो भक्ष्याण्येतानि मन्त्रिणाम् ॥

(शारदातिलक)

'भिक्षासे प्राप्त अन्न, हविष्यान्न, शाक, फल, दूध, कन्दमूल तथा जवसे बना हुआ सक्तु मन्त्रजापकोंके लिये श्रेष्ठ भक्ष्यपदार्थ माना गया है।

चरुमूलफलक्षीरदधिभिक्षान्नसक्तवः ।
शाकश्चाष्टविधं चान्नं साधकस्योच्यते बुधैः ॥

(पुरश्चरणदीपिका)

'विद्वानोंने साधकोंके लिये पायस, कन्द-मूल, दूध, दही, भिक्षासे प्राप्त अन्न, सक्तु (सतुआ) और शाक इन आठोंको श्रेष्ठ भक्ष्य माना है।

मृदु सोष्णं सुपक्वं च कुर्याद्वै लघुभोजनम् ।
नेन्द्रियाणां विकारः स्यात्तथा भुञ्जीत साधकः ॥
यद्वा तद्वा परित्याज्यं दुष्टान्नं कुत्सितं फलम् ।
प्रशस्तान्नं समश्नीयान्मन्त्रसिद्धिसमीहया ॥
पयोव्रतस्य सिद्धिः स्याल्लक्ष्मणैव न संशयः ॥

(नारदीये)

'साधको चाहिये कि वह स्निग्ध, गरम, सुन्दर पका हुआ स्वल्प भोजन करे, साथ ही ऐसा भोजन करे जिससे इन्द्रियमें कोई विकार उत्पन्न न हो ।

मन्त्रसिद्धिकी इच्छासे साधकको जैसे-तैसे भी कुत्सित अन्न और सड़ा-गला फल अवश्य त्याग देना चाहिये, पवित्र और स्वच्छ अन्न ही खाना चाहिये । दूध पीनेवाले साधकका सिद्धि ही चिह्न है इसमें कोई सन्देह नहीं अर्थात् दूध पीकर साधन करनेवालेको सिद्धि अवश्य मिलती है ।'

पुरश्चरण प्रारम्भके लिये शुभ मुहूर्त

चन्द्रतारानुकूले च शुक्लपक्षे विशेषतः ।
पुरश्चरणकं कुर्यान्मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥

(देवीभागवत ११।२१।२८)

'चन्द्रमा और तारा अनुकूल हों तब विशेषकर शुक्ल पक्षमें पुरश्चरणका प्रारम्भ करनेसे मन्त्रसिद्धि प्राप्त होती है ।'

गुरुशुक्रोदये शुद्धे लग्ने सद्वारशोधिते ।
चन्द्रतारानुकूल्ये च शुक्लपक्षेविशेषतः ॥
पुरश्चरणकं कुर्यान्मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥

(रुद्रयामल)

'गुरु और शुक्रके उदय होने पर शुद्ध लग्न और श्रेष्ठ वार प्राप्त होने पर चन्द्रमा एवं तारा अनुकूल हों, तब विशेषकर शुक्ल पक्षमें पुरश्चरणका प्रारम्भ करनेसे मन्त्रसिद्धि होती है ।'

चन्द्रतारानुकूले च शुक्लपक्षे शुभे दिने ।
आरम्भे तु पुरश्चर्यां हरौ सुप्ते न चाचरेत् ॥

(तन्त्रसार)

'चन्द्रमा और तारा अनुकूल हों तथा शुक्ल पक्ष एवं शुभ दिन हो तो पुरश्चरण प्रारम्भ करे, किन्तु देवशयनमें न करे।'

गायत्रीपुरश्चरणके लिये शुभ मास

वैशाखे श्रावणे वापि आश्विने कार्तिके तथा।
फाल्गुने मार्गशीर्षे वा मन्त्री कुर्यात् पुरस्क्रियाम्॥

'जपकर्ताके लिये वैशाख, श्रावण, आश्विन, कार्तिक, फाल्गुन अथवा मार्गशीर्ष मास पुरश्चरणके लिये शुभ है।'

गायत्रीपुरश्चरणादिके लिये प्रशस्त तिथि

पूर्णिमा पञ्चमी चैव द्वितीया सप्तमी तथा।
त्रयोदशी च दशमी प्रशस्ता सर्वकर्मसु॥

(रामार्चनचन्द्रिका)

'पूर्णिमा, पञ्चमी, द्वितीया, सप्तमी, त्रयोदशी और दशमी ये तिथियाँ समस्त कर्मोंमें प्रशस्त कही गयी हैं।'

गायत्रीपुरश्चरणके लिये त्याज्य मास, तिथि, वार आदि

ज्येष्ठाषाढौ भाद्रपदं पौषं तु मलमासकम्।
अङ्गारं शनिवारं च व्यतीपातं च वैधृतिम्॥
अष्टमीं नवमीं षष्ठीं चतुर्थीं च त्रयोदशीम्।
चतुर्दशीममावस्यां प्रदोषं च तथा निशाम्॥
यमाग्निरुद्रसर्पेन्द्रवसुश्रवणजन्मभम्।
मेषकर्कतुलाकुम्भान् मकरश्चैव वर्जयेत्॥
सर्वाण्येतानि वर्ज्यानि पुरश्चरणकर्मणि।

(देवीभागवत ११।२१।२५-२८)

'ज्येष्ठ, आषाढ़, भाद्रपद, पौष और अधिक मास, मङ्गलवार, शनिवार, व्यतीपात, वैधृति, अष्टमी, नवमी, षष्ठी, चतुर्थी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, अमावास्या, प्रदोष, रात्रि, भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, श्रवण, जन्मनक्षत्र, मेष, वृष, कर्क, तुला, कुम्भ और मकर—ये सभी महीने, दिन, योग, तिथियाँ, समय, नक्षत्र और लग्न पुरश्चरणकर्ममें वर्जित हैं।'

ज्येष्ठाऽऽषाढौ भाद्रपदं पौषं तु मलमासकम्।
गुरुभार्गवमौढ्यादि वर्जयेच्च प्रयत्नतः॥
अङ्गारशनिवारौ च व्यतीपातं च वैधृतिम्॥
अष्टमीं नवमीं षष्ठीं चतुर्थीं च त्रयोदशीम्।
चतुर्दशीममावस्यां प्रदोषं च तथा निशाम्॥
यमाग्निरुद्रसार्पेन्द्रवसु श्रवणजन्मभम्।
मेषकर्कतुलाकुम्भमकरालिकलग्नकम् ॥
सर्वाण्येतानि वर्ज्यानि पुरश्चरणकर्मणि।

(वशिष्ठसंहिता)

'ज्येष्ठ, आषाढ़, भाद्रपद, पौष, मलमास तथा गुरु और शुक्रका अस्त इन सबका परित्याग पुरश्चरणकार्यमें प्रयासपूर्वक करना चहिये।

मङ्गलवार, शनिवार, व्यतीपात, वैधृति लग्न, अष्टमी, नवमी, षष्ठी, चतुर्थी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, अमावास्या, प्रदोष, रात्रि, भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, श्रवण, जन्मनक्षत्र, मेष, कर्क, तुला, कुम्भ, मकर और अलिक लग्नादिका परित्याग पुरश्चरणकर्ममें अवश्य करे।'

गायत्रीपुरश्चरणके प्रारम्भमें त्याज्य तिथि, वार, मास आदि

ज्येष्ठाऽऽषाढौ भाद्रपदं पौषं तु मलमासकम्।
अङ्गारशनितारौ तु व्यतीपातं च वैधृतिम्॥
अष्टमीं नवमीं षष्ठीं चतुर्थीं चं त्रयोदशीम्।
चतुर्दशीममावास्यां प्रदोषं च तथा निशि॥

यमाग्निरुद्रसर्पेन्द्रवसुः श्रवणजन्मभम् ।
मेषकर्कतुलाकुम्भमकरालिकलग्नकम् ॥
सर्वाण्येतानि वर्ज्याणि पुरश्चरणकर्मणि ।
सन्ध्यागर्जितनिर्घोषभूकम्पोल्कानिपातने ।
एतानन्यांश्च दिवसान् स्मृत्युक्तांश्च परित्यजेत् ॥

(विश्वामित्रकल्प)

'ज्येष्ठ, आषाढ़, भाद्रपद, पौष और मलमास—ये महीने पुरश्चरणकर्ममें त्याज्य हैं । मङ्गल और शनिवार, व्यतीपात और वैधृति-योग, अष्टमी, नवमी, षष्ठी, चतुर्थी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, अमावास्या, प्रदोष और रात्रि, भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, श्रवणा तथा जन्म-नक्षत्र, मेष, कर्क, तुला, कुम्भ, मकर एवं वृश्चिक-लग्न—ये सभी पुरश्चरणकर्ममें वर्ज्य हैं । सायङ्काल, कुसमयमें बादलोंका गर्जन, भूकम्प, उल्कापात और स्मृतियोंमें भी कथित जो अन्य वर्ज्य दिन हैं, उन्हें भी पुरश्चरणकर्ममें त्याग दें ।'

गायत्रीपुरश्चरणके लिये श्रेष्ठ स्थान

पर्वताग्रे नदीतीरे बिल्वमूले जलाशये ।
गोष्ठे देवालयेऽश्वत्थे उद्याने तुलसीवने ॥
पुण्यक्षेत्रे गुरोः पार्श्वे चित्तैकायस्थलेपि च ।
पुरश्चरणकृन्मन्त्री सिद्ध्यत्येव न संशयः ॥

(देवीभागवत ११।२१।२-३)

'पर्वतोंके शिखर, नदीतट, बिल्ववृक्षके नीचे, जलाशय, गोशाला, देवमन्दिर, पीपलके नीचे, उद्यान, तुलसीवन, किसी पुण्यक्षेत्र अथवा गुरुके समीप तथा जहाँ भी चित्त एकाग्र रह सके, उस स्थान पर भी पुरश्चरण करनेवाला पुरुष सिद्धि प्राप्त कर लेता है, इसमें संशय नहीं है ।'

काशीपुरी च केदारो महाकालोऽथ नासिकम् ।
त्र्यम्बकं च महाक्षेत्रं पञ्चदीपा इमे भुवि ॥

(देवीभागवत ११।२१।३२)

'काशी, केदार, महाकाल (उज्जैन), नासिक और महान् क्षेत्र त्र्यम्बक—ये भूमण्डलपर पाँच सिद्ध स्थान कहे गये हैं ।'

पर्वताग्रे नदीतीरे बिल्वमूले जलाशये।
गोष्ठे देवालयेऽश्वत्थ उद्याने तुलसीवने॥
पुण्यक्षेत्रे गुरोः पार्श्वे चित्तैकाग्रस्थलेपि च।
पुरश्चरणकृन्मत्री सिद्ध्यते च न संशयः॥
काशीपुरी च केदारो महाकालोऽथ नास्तिकम्।
त्र्यम्बकं च महाक्षेत्रं पञ्च द्वीपा इमे भुवि॥
(वसिष्ठसंहिता)

'पर्वतके अग्रभागमें, नदीतटपर, बेलके जड़में, जलाशयमें, गोष्ठमें, देवालयमें, पीपलके नीचे, बगीचामें, तुलसीवनमें, पवित्र क्षेत्रमें, गुरुके सन्निकट, जहाँ चित्त एकाग्र हो ऐसे स्थलमें भी पुरश्चरण करनेवाला मन्त्रजापक सिद्ध होता है इसमें कोई सन्देह नहीं।

काशीपुरी, केदारक्षेत्र, उज्जैन, नासिक तथा महाक्षेत्र त्र्यम्बक ये पाँच स्थान पृथ्वीपर द्वीप माने गये हैं।'

स्थान-विशेषमें गायत्री-जपका महत्व

शिवस्य सन्निधाने च सूर्याग्न्योर्वा गुरोरपि।
दीपस्य ज्वलितस्यापि जपकर्म प्रशस्यते॥
गृहे जपं समं विद्याद् गोष्ठे शतगुणं भवेत्।
नद्यां शतसहस्रं स्यादनन्तं शिवसन्निधौ॥
समुद्रतीरे च ह्रदे गिरौ देवालयेषु च।
पुण्याश्रमेषु सर्वेषु जपं कोटिगुणं भवेत्॥
तत्पूर्वाभिमुखो वश्ये दक्षिणे चाभिचारिकम्।
पश्चिमे धनदं विद्यादुत्तरे शान्तिदं भवेत्॥
अग्रे पृष्ठे तथा वामे समीपे गर्भमन्दिरे।
जपं प्रदक्षिणं होमं न कुर्याद्धि शिवालये॥
(पुरश्चरणदीपिका, नारदपुराण)

'शिव, सूर्य, अग्नि गुरु तथा प्रज्वलित दीपके समीप किया गया जप प्रशस्त माना गया है।

घरपर किया गया जप समान फलदायक, गोष्ठमें सौ गुना फलदायक, नदीमें हजार गुना फलदायक तथा शिवके समीपमें अनन्त गुना फलदायक माना गया है।

समुद्र तट, सरोवर, पर्वत, देवालय तथा पवित्र आश्रमोंमें किया गया जप कोटिगुना फलदायक माना गया है।

वशीकरणके लिए पूर्वाभिमुख होकर जप करे, मारण मोहनादि कार्यों के लिए दक्षिणाभिमुख होकर जप करे। पश्चिमाभिमुख होकर तथा उत्तराभिमुख होकर किया गया जप शान्तिदायक माना गया है।

मन्दिरके ठीक आगे पीछे बायें मूर्तिके अत्यन्त समीप गर्भगृहमें और शिवालयमें उपर्युक्त प्रकारसे जप, प्रदक्षिणा और होम नहीं करना चाहिये।

गृहे जपः समः प्रोक्तो गोष्ठे शतगुणः स्मृतः।
आरामे च तथाऽरण्ये सहस्रगुण उच्यते॥
अयुतः पर्वते पुण्ये नद्यां लक्षगुणस्तु सः।
कोटिर्देवालये प्राहुरनन्तः शिवसन्निधौ॥
(वाचस्पतौ)

गृहे चैकगुणः प्रोक्तो गोष्ठे शतगुणः स्मृतः।
पुण्यारण्ये तथा तीर्थे सहस्रगुणमुच्यते॥
अयुतं पर्वते पुण्यं नद्यां लक्षगुणो जपः।
कोटिर्देवालये प्राप्ते अनन्तं शिवसन्निधौ॥

'घरमें जप करनेसे एक गुना, गोशालामें सौ गुना, पवित्र जङ्गलमें और तीर्थमें हजार गुना फल होता है। पर्वतमें दस हजार गुना, नदीके किनारे लाख गुना, देवमन्दिरमें करोड़ गुना और शिवके समीपमें अनन्त गुना फल होता है।'

गृहे जपः समः प्रोक्तो गोष्ठे शतगुणः स्मृतः।
आरामे च तथाऽरण्ये सहस्रगुण उच्यते॥
अयुतः पर्वते पुण्ये नद्यां लक्षगुणस्तु सः।
कोटिर्देवालये प्राहुरनन्तः शिवसन्निधौ॥
पुण्यक्षेत्रं नदीतीरं गुहापर्वतमस्तकम्।
तीर्थप्रदेशाः सिन्धूनां सङ्गमः पावनः सरः॥
उद्यानानि विविक्तानि बिल्वमूलं तटं गिरेः।
देवाद्यायतनं कूलं समुद्रस्य निजं गृहम्॥
(शारदातन्त्र)

'गृहमें जप करनेपर समान फल की प्राप्ति होती है, गोष्ठमें सौ गुना फल होता है, बगीचा तथा वनमें हजार गुना फल होता है।

पवित्र पर्वतपर दश हजार गुना फल होता है, नदीमें लक्ष गुना फल होता है, देवालयमें करोड़ गुना फल तथा शिवजीके समीप अनन्त फलकी प्राप्ति होती है।

पवित्र क्षेत्र, पवित्र गुफा, पर्वत-शिखर, तीर्थ प्रदेश, नदियोंका सङ्गमस्थल, पवित्र सरोवर, एकान्त तथा पवित्र उद्यान, विल्क वृक्षके मूल प्रदेश, पर्वतका किनारा, देवालय, समुद्रका तट तथा अपना घर ये सभी स्थल जपके लिये प्रशस्त माने गये हैं।'

गृहेजपः समः प्रोक्तो गोष्ठे शतगुणः स्मृतः।
आरामे च तथाऽरण्ये सहस्रगुण उच्यते॥
अयुतः पर्वते पुण्ये नद्यां लक्षणगुणस्तु सः।
कोटिर्देवालये प्राहुरनन्तः शिवसन्निधौ॥

(वाचस्पतौ)

'घरमें जपनेसे समान, गोशालामें सौ गुना, बगीचा तथा अरण्यमें हजार गुना, पवित्र पर्वत पर अयुत गुना, नदीमें लाख गुना, देवालयों में करोड़ गुना तथा श्रीशिवके समीपमें अनन्त फल प्राप्त होता है।'

गृहे जपं समं विद्याद् गोष्ठे शतगुणं भवेत्।
नद्यां शतसहस्रं स्यादनन्तं शिवसन्निधौ॥
समुद्रतीरे च ह्रदे गिरौ देवालयेषु च।
पुण्याश्रमेषु सर्वेषु जपः कोटिगुणो भवेत्॥

(नारदपुराण)

'घरमें जप करनेसे समान, गोशालामें सौ गुना, नदीमें एक लाख, शिवजीके समीपमें अनन्त फल, समुद्रके तीरमें, तालाबमें, पर्वतमें, देवालयोंमें और पुष्पाश्रमोंमें करोड़ गुना फल होता है।'

गृहे जपं समं विद्याद् गोष्ठे शतगुणं विदः।
पुण्यारण्ये तथा रामे सहस्रगुणमुच्यते॥
अयुतं पर्वते पुण्ये नद्यां लक्षमुदाहृतम्।
कोटिर्देवालये प्राहुरनन्तं मम सन्निधौ॥
सूर्यस्याग्नेर्गुरोरिन्दोर्दीपकस्य च जलस्य च।
विप्राणां च गवां चैव सन्निधौ शस्यते जपः॥

(लिङ्गपुराण ८५।१०६-१०८)

'घरमें जपका फल समान होता है, गोष्ठमें (गोशालामें) सौ गुना, पुष्प वनमें तथा बगीचेमें हजार गुना फल कहा है। पुण्य पर्वतमें दस हजार गुना फल और नदीके तटमें लक्ष गुना फल कहा है। देवालयमें करोड़ गुना फल और मेरे निकट (शिवके समीप) अनन्त फल कहा है। सूर्य, अग्नि, गुरु, चन्द्रमा, दीपक, जल, ब्राह्मण और गौके समीप जप करना श्रेष्ठ है।'

गृहेषु तत्समं जप्यं गोष्ठे शतगुणं स्मृतम्।
नद्यां शतसहस्रं तु अनन्तं शिवसन्निधौ॥
(गोभिल)

'घरमें गायत्रीका जप करनेसे सम फल होता है, गोष्ठमें जप करनेसे सौ गुना फल होता है, नदीके किनारे जप करनेसे लक्ष गुणा फल होता है और शिवजीके समीप जप करनेसे अनन्त गुणा फल होता है।'

जलान्ते वाग्न्यगारे वा जपेद्देवालये तथा।
पुण्यतीर्थे गवां गोष्ठे सिद्धक्षेत्रेऽथवा गृहे॥
गृहे ह्येकगुणं प्रोक्तं नद्यां तु द्विगुणं स्मृतम्।
गवां गोष्ठे दशगुणमग्न्यगारे दशाधिकम्॥
सिद्धक्षेत्रेषु तीर्थेषु देवतायाश्च सन्निधौ।
सहस्रं शतकोटीनामनन्तं विष्णुसन्निधौ॥
(योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ७।१४२-१४४)

'जलके समीप, अग्निशाला, देवालय, पुण्यतीर्थ, गोशाला, सिद्ध-क्षेत्र तथा घरपर जप करना चाहिये।

घरमें जपनेसे एक गुना, नदीमें दुगुना, गोशालामें दस गुना, अग्निशालामें सौ गुना, सिद्धक्षेत्र तथा तीर्थोंमें हजार गुना, देवताओंके समीपमें कोटिगुना और श्रीशिवजीके समीप अनन्त फल मिलता है।'

पुण्यक्षेत्रं नदीतीरं गुहापर्वतमस्तकम्।
तीर्थप्रदेशाः सिन्धूनां सङ्गमः पावनं वनम्॥
उद्यानानि विविक्तानि बिल्वमूलं तटं गिरेः।
देवतायतनं कूलं समुद्रस्य निजं गृहम्॥
साधनेषु प्रशस्यन्ते स्थानान्येतानि मन्त्रिणाम्॥
(शारदातिलक)

'पवित्र क्षेत्र, गुफा, पर्वतका ऊपर भाग, तीर्थस्थल, नदियोंका सङ्गम, पवित्र सरोवर या वन, एकान्त अथवा पवित्र उद्यान, बेलका मूल प्रदेश, पर्वतका तटभाग, देवालय, समुद्रका किनारा तथा अपना घर ये सभी स्थान मन्त्र जपके लिये श्रेष्ठ माने गये हैं।'

तुलसीकाननं गोष्ठं वृषसद्म शिवालयः।
अश्वत्थामलकीमूलं गोशाला जलमध्यतः॥
गृहे शतगुणं विद्याद् गोष्ठे लक्षगुणं भवेत्।
कोटिर्देवालये पुण्यमनन्तं शिवसन्निधौ॥
म्लेच्छ-दुष्ट-मृग-व्याल-शङ्का-तङ्कादिवर्जिते।
एकान्ते पावते निन्दारहिते भक्तिसंयुते॥
सुदेशे धार्मिके राष्ट्रे सुभिक्षे निरुपद्रवे।
रम्ये भक्तिजनस्थाने निवसेत्तापसप्रिये॥
गुरूणां सन्निधाने च चित्तैकाग्र्यस्थले तथा।
एषामन्यतमं स्थानमाश्रित्य जपमाचरेत्॥
(तन्त्रसार)

'तुलसीवन, गोष्ठ, शिवालय, पीपल तथा आँवलाके जड़, गोशाला और जलके भीतर जप करना प्रशस्त माना गया है। घरपर किया गया जप सौ गुना फलदायक गोष्ठमें लक्ष गुना, देवालयमें कोटि गुना तथा शिवके समीपमें अनन्त फलदायक माना गया है।

म्लेच्छ, हिंसक पशु तथा सर्पादिकी शङ्कासे उत्पन्न भयसे रहित स्थलमें, एकान्त, पावन, निन्दारहित एवं भक्तिपूर्ण स्थलमें, सुन्दर देश, धार्मिक राष्ट्र, सुलभ भिक्षास्थल, निरुपद्रवस्थल, रमणीकस्थल, भक्तिपूर्ण जनवाले स्थल, तपस्वियोंके प्रियस्थल, गुरुके समीप और जहाँ पर चित्तकी एकाग्रता हो ऐसे स्थलोंमेंसे किसी एक स्थलपर निवास करे और उसीका आश्रयण कर जप करें।'

पुरश्चरणके लिये गायत्री-मन्त्र-जप संख्या

गायत्रीच्छन्दोमन्त्रस्य यथा संख्याक्षराणि च।
तावल्लक्षाणि कर्तव्यं पुरश्चरणकं तथा॥
(देवीभागवत ११।२१।२३)

'गायत्री छन्दके मन्त्रमें अक्षरोंकी जितनी संख्या है, उतने लाख (चौबीस लाख) गायत्रीका जप करना चाहिये, तभी एक पुरश्चरण पूर्ण होता है।'

गायत्रीच्छन्दो मन्त्रस्य यथा संख्याक्षराणि च ।
तावल्लक्षाणि कर्तव्यं पुरश्चरणकं तथा ॥

(नारदपुराण)

'गायत्री छन्दके मन्त्रमें अक्षरोंकी जितनी संख्या है, उतने लाख जप करने चाहिये, तभी एक पुरश्चरणकी पूर्ति होती है।'

पर्वत आदिमें पुरश्चरणार्थ कूर्मका विचार अनावश्यक है

पर्वते सिन्धुतीरे वा पुण्यारण्ये नदीतटे ।
यदि कुर्यात्पुरश्चर्यां तत्र कूर्म न चिन्तयेत् ॥
यत्र ग्रामे भवेन्मन्त्री तत्र कूर्मं विचिन्तयेत् ॥

(गौतमीये)

'पर्वतमें, समुद्रके तटमें, पुण्यारण्यमें और नदीके तटमें यदि पुरश्चरण करे तो इन स्थानोंमें कूर्मका विचार न करे। जिस ग्राममें मन्त्र जप हो, उसमें कूर्मका विचार करे।'

ग्राम एवं गृह आदिमें पुरश्चरणार्थ कूर्मका विचार आवश्यक है

'ग्रामे वा यदि वास्तौ वा गृहे तं च विचिन्तयेत् ।'

(गौतमीये)

'ग्राममें बस्तीमें अथवा घरमें पुरश्चरणार्थ कूर्मका विचार आवश्यक है।'

गायत्रीं ब्राह्मणायानुब्रूयात् । त्रिष्टुभं राजन्यस्य जगतीं वैश्यस्य । सर्वेषां वा गायत्रीम् ।

(पारस्करगृह्यसूत्र २।२।७–१०)

'ब्रह्मतेजोऽभिलाषी ब्राह्मणको ब्रह्म-गायत्री छन्दवाली गायत्री-मन्त्रका, प्रतापोदयाभिलाषी क्षत्रियको त्रिष्टुभ् छन्दवाली गायत्री-मन्त्रका और ऐश्वर्य, धनभोगाभिलाषी वैश्यको जगतीछन्दवाली गायत्री-मन्त्रका उपदेश गृह्याणार्थ कहा है। किन्तु ब्रह्मवर्चस कामनावाले ब्रह्मतेजोयुक्त तीनों वर्णके लिए केवल ब्रह्म गायत्रीका उपदेश गृहणार्थ कहा है।'

द्वात्रिंशल्लक्षात्मकं, चतुर्विंशतिलक्षात्मकं पुरश्चरणमुक्तम्।
ऋग्विधाने तु त्रिलक्षात्मकं पुरश्चरणमुक्तम्।

'बत्तीस लाख अथवा चौबीस लाख संख्याका पुरश्चरण कहा गया है। ऋग्विधानमें तो तीन लाखका पुरश्चरण कहा गया है।'

कलियुग आदि युगोंमें पुरश्चरणके लिये गायत्री-मन्त्रकी जपसंख्या

'कलौ चतुर्गुणं प्रोक्तम्'के अनुसार कलियुगमें विहित गायत्री जप संख्यासे चतुर्गुणित जपका विधान है।'

षण्णवतिलक्षसंख्याजपं कलौ पुरश्चरणम्। अथवा तावत्संख्यमयुतानि सहस्राणि वेत्यवगम्यते।

'कलियुगमें गायत्री पुरश्चरणके लिये ९६ लाख गायत्री-मन्त्रका जप कहा गया है अथवा ९६ अयुत अथवा ९६ हजार भी गायत्री-मन्त्रका जप किया जा सकता है।'

तत्र सर्वत्र मन्त्राणां संख्यावृद्धिर्युगक्रमात्।
कल्पोक्तैव कृते संख्या त्रेतायां द्विगुणा भवेत्॥
द्वापरे त्रिगुणा प्रोक्ता कलौ संख्या चतुर्गुणा।

(वैशम्पायनसंहिता)

'युगके अनुसार सर्वत्र मन्त्रोंकी संख्याकी वृद्धि कही गयी है। जैसे—कृतयुगमें कल्पोक्तानुसार संख्या त्रेतामें द्विगुण संख्या, द्वापरमें त्रिगुण तथा कलियुगमें चतुर्गुणित संख्या जपका विधान है।'

जापकके लिये हवन, तर्पण आदिका विशेष विधान

ततो जपदशांशेन होमं कुर्याद्दिने दिने।
अथवा लक्षसंख्यायां पूर्णायां होममाचरेत् ॥
(पुरश्चरणचन्द्रिका)

'प्रतिदिन जितना जप किया जाय उतना दशांश हवन प्रतिदिन करे अथवा लक्षसंख्या पूर्ण होनेपर दशांश हवन करे।'

जपान्ते प्रत्यहं मन्त्री होमयेत्तद्दशांशतः।
तर्पणं चाभिषेकं च तत्तद्दशांशतो मुने ॥
प्रत्यहं भोजयेद् विप्रान्न्यूनाधिक प्रशान्तये।
अथवा सर्वपूर्त्तौ च होमादिकमथाचरेत् ॥
सम्पूर्णायां प्रतिज्ञायां तर्पणादिकमाचरेत् ॥
(तन्त्रसार)

'मन्त्रजापकको चाहिये कि वह प्रतिदिन दशांश होम करे और उसका दशांश तर्पण तथा अभिषेक करे। न्यूनाधिककी शान्तिके लिए प्रतिदिन ब्राह्मण भोजन करावे अथवा सम्पूर्ण जप हो जानेपर हवन आदि करावे। प्रतिज्ञापूर्तिकी समाप्तिमें तर्पण आदि करे।'

जापकके लिये दशांश हवनकी आवश्यकता

जुहुयात्तद्दशांशेन सघृतेन पयोऽन्धसा।
तिलैः पत्रैः प्रसूनैश्च यवैश्च मधुरान्वितैः ॥
कुर्याद्दशांशतो होमं ततः सिद्धो भवेन्मनुः ॥
(देवीभागवत ११।२१।३७-३८)

'घृत, खीर, तिल, बिल्वपत्र, पुष्प, यव और मधु आदि हवनानीय द्रव्योंसे गायत्रीका दशांश हवन करना चाहिये। दशांश हवन करनेसे ही मन्त्र सिद्ध होता है।'

दशांश हवन न करने पर विधान

होमाशक्तौ जपं कुर्याद्धोमसंख्या चतुर्गुणम्।
षड्गुणं चाष्टगुणितं यथासंख्यं द्विजातयः॥

(रुद्रयामल)

'यदि ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य होम करनेमें असमर्थ हो तो क्रमशः ब्राह्मणको होम संख्या चतुर्गुणित, क्षत्रियको षड्गुणित जप तथा वैश्यको अष्टगुणित जप करना चाहिये।'

'अशक्तावुक्तहोमस्य जपस्तद् द्विगुणो भवेत्।'

(ब्रह्मसंहिता)

'हवन करनेमें असमर्थ होनेपर हवनकी संख्यासे द्विगुणित जप करना चाहिये।'

दशांश हवनकी अशक्तिमें त्रैवर्णिक तथा स्त्रीका कर्तव्य

यद्यदङ्गं भवेद् भग्नं तत्संख्या द्विगुणो जपः।
होमाभावे जपः कार्यो होमसंख्या चतुर्गुणः॥
विप्राणां क्षत्रियाणां च रससंख्यागुणः स्मृतः।
वैश्यानां वसुसंख्याकमेषां स्त्रीणामयं विधिः॥

(सनत्कुमारसंहिता)

'जपमें यदि कोई अङ्ग भग्न हो जाय तो द्विगुणित जप करे, होम के अभावमें होमसंख्यासे चार गुना जप करे, विप्र और क्षत्रियोंके लिए छः गुना तथा वैश्य और स्त्रियोंके लिये आठ गुना जप करनेकी विधि बतायी गई है।'

होमकर्मण्यशक्तानां विप्राणां द्विगुणो जपः।
इतरेषां तु वर्णानां त्रिगुणादिः समीरितः॥

(योगिनीहृदय)

'होम करनेमें असमर्थ ब्राह्मणोंके लिये होमका दुगुना तथा क्षत्रिय-वैश्यादिकोंके लिये तिगुना जप करनेका विधान है।'

गायत्रीपुरश्चरणार्थ हवनीय द्रव्य

क्षीरोदनं तिला दूर्वाः क्षीरद्रुमसमिद् वरान् ।
पृथक् सहस्रत्रितयं जुहुयान्मन्त्रसिद्धये ॥

(शारदातिलक)

'मन्त्रकी सिद्धिके लिये खीर, तिल, दूर्वा, क्षीरवाले वृक्षके काष्ठ तथा अन्य श्रेष्ठ काष्ठोंको पृथक्-पृथक् तीन हजारकी संख्या में हवन करना चाहिये ।'

तिलैः पत्रैः प्रसूनैश्च यवैश्च मधुनाप्लुतैः ।
कुर्याद्दशांशतो होमं ततः सिद्धो भवेन्मनुः ॥

(विश्वामित्रकल्प)

'तिल-पत्र-फूल तथा यव ये सभी यदि मधु से सिक्त हो तो इनसे दशांश संख्यामें होम करनेपर जपकर्ताको मन्त्रकी सिद्धि होती है ।'

गायत्री-यज्ञमें हवनार्थ गायत्री-मन्त्रका निर्णय

'गायत्री यज्ञादिके हवनमें व्याहृतिरहित गायत्री-मन्त्रसे हवन करना चाहिये, यह धर्मसिन्धुमें लिखा है। यह प्रथा प्रायः सर्वत्र गायत्री यज्ञादिके हवनमें प्रचलित है ।'

पुरश्चरणके मध्यमें सूतक होनेपर विचार

पुरश्चरणमध्ये तु यदिस्यान्मृतसूतकम् ।
तथापि कृतसङ्कल्पो व्रतं नैव परित्यजेत् ॥
सङ्कल्पोक्त क्रमेणैव जपं कुर्याद्यथाविधि ॥

'पुरश्चरणके मध्यमें यदि मरणाशौच हो जाय तो भी संकल्पित व्यक्तिको व्रतका त्याग नहीं करना चाहिये अर्थात् सङ्कल्पानुसार उसे क्रमशः जप करना ही चाहिये ।'

गायत्रीके ऋषि, छन्द, देवता आदिको जानने और न जाननेसे हानि-लाभ

'जो गायत्री-मन्त्र ऋषि, छन्द, देवता विनियोग एवं गायत्रीके वर्ण, देवता स्वरूप आदिको जानकर गायत्रीका जप अथवा पुरश्चरण करता है, उसको पुरश्चरणके मध्यमें होनेवाला जनन और मरण-सम्बन्धी सूतक नहीं लगता।'

एतद् ज्ञात्वा तु मेधावी जपं होमं करोति यः।
न भवेत्सूतकं तस्य मृतकं च न विद्यते॥
साक्षाद् भवत्यसौ ब्रह्मा स्वयम्भूः परमेश्वरः।
यस्त्वेवं न विजानाति गायत्रीं तु यथाविधि॥
कथितं सूतकं तस्य मृतकं च मया नघ।
नैव दानफलं तस्य नैव यज्ञफलं भवेत्॥
न च तीर्थफलं प्रोक्तं तस्यैवं सूतके सति॥

(अथर्ववेदपरिशिष्टसन्ध्यासूत्रव्याख्या ६)

'जो बुद्धिमान् गायत्री-मन्त्रके छन्द देवतादिको जानकर जप या होम करता है तो उसे मृतक सूतक नहीं लगता क्योंकि वह जापक साक्षात् स्वयम्भू ब्रह्मा तथा परमेश्वर स्वरूप हो जाता है, किन्तु गायत्रीके ऋषि, छन्द, देवतादिको जो विधिपूर्वक नहीं जानता उसके लिये ही मैं मृतक सूतकका विधान किया और ऐसे व्यक्तियोंको सूतकावस्थामें किये गये दान-यज्ञ और तीर्थादिका फल नहीं मिलता।'

गायत्री-रहस्य

द्वितीय भाग

गायत्री-पञ्जर-स्तोत्रम्

भगवन्तं देवदेवं ब्रह्मांण परमेष्ठिनम् ।
विधातारं विश्वसृजं पद्मयोनिं प्रजापतिम् ॥ १ ॥
शुद्ध-स्फटिक सङ्काशं महेन्द्रशिखरोपमम् ।
बद्ध-पिंग जटाजूटं तडित्-कनक-कुण्डलम् ॥ २ ॥
शरच्चन्द्राभवदनं स्फुरदिन्दीवरेक्षणम् ।
हिरण्मयं विश्वरूपमुपवीताजिना वृतम् ॥ ३ ॥
मौक्तिकाभाक्ष-वलय-स्तन्यी-लय-समन्वितः ।
कर्पूरोद्धूलिततनुः स्रष्टुर्नयन-वर्द्धनम् ॥ ४ ॥
विनयेनोपसंगम्य शिरसा प्रणिपत्य च ।
नारदः परिपप्रच्छ देवर्षिगण-मध्यगः ॥ ५ ॥

शुद्ध स्फटिकके समान महेन्द्र पर्वतके तुल्य उत्तुङ्ग पिङ्गल जटाजूटको धारण किये हुए विद्युतके समान चमत्कृत सुवर्ण कुण्डल धारण किये हुए, शरतकालीन चन्द्रमाके समान दिव्य आभासे युक्त मुखवाले, देदीप्यमान नीलकमलके समान नेत्रवाले, समस्त संसारको भगवद्रूप देखनेवाले, सुवर्णमय यज्ञोपवीत तथा मृगचर्म धारण किये हुए, ब्रह्माजीके नेत्रोंको आनन्दित करनेवाले कर्पूरचर्चित शरीरवाले, ऋषिगणोंके मध्यमें स्थित देवर्षि नारदने भगवान् देवदेव, ब्रह्मा, परमेष्ठी-विधाता-विश्वस्रष्टा-पद्मयोनि आदि जिनके अनेक नाम हैं ऐसे प्रजापतिके पास विनयपूर्वक जाकर तथा शिरसे प्रणामकर उनसे पूँछा॥१–५॥

नारद उवाच—

भगवान्! देवदेवेश! सर्वज्ञ! करुणानिधे!
श्रोतुमिच्छामि प्रश्नेन भोग-मोक्षैक-साधनम् ॥ ६ ॥
ऐश्वर्यस्य समग्रस्य फलदं द्वन्द्ववर्जितम् ।
ब्रह्महत्यादि-पापघ्नं पापाद्यरिभयापहम् ॥ ७ ॥
यदेकं निष्कलं सूक्ष्मं निरञ्जनमनामयम् ।
यत्ते प्रियतमं लोके तन्मे ब्रूहि पितर्मम् ॥ ८ ॥

नारद ने कहा—हे भगवान्! हे देवदेवेश! हे सर्वज्ञ! हे करुणानिधि! जो भोग और मोक्षका एकमात्र साधन हो, समस्त ऐश्वर्यके

फलको देनेवाला हो, राग-द्वेषादि द्वन्द्वरहित हो, ब्रह्महत्यादि पापोंका नाशक हो, पापादि शत्रु-भयको हरण करनेवाला हो, एक हो, (प्रधान हो) समस्त कलाओंसे युक्त हो, सूक्ष्म हो, निरञ्जन हो, सांसारिक रोगोंसे रहित हो तथा लोकमें आपको अतिशय प्रिय हो ऐसे विषयको प्रश्नके माध्यमसे आपसे मैं सुनना चाहता हूँ। हे पिताजी ! आप उस विषयको मुझसे कहें ॥ ६–८ ॥

ब्रह्मोवाच—

शृणु नारद ! वक्ष्यामि ब्रह्ममूलं सनातनम् ।
सृष्ट्यादौ मन्मुखे क्षिप्तं देवदेवेन विष्णुना ॥ ९ ॥

ब्रह्माजीने कहा—हे नारद ! सृष्टिके पूर्व देवाधिदेव भगवान् श्रीविष्णुजीने मेरे मुखमें मूलभूत परब्रह्म सनातन गायत्री-पञ्जर-स्तोत्रको प्रक्षिप्त किया था उसे कहूँगा— सुनो ॥ ९ ॥

प्रपञ्चबीजमित्याहुरुत्पत्ति-स्थिति हेतुकम् ।
पुरामाया तु कथितं कश्यपाय सुधीमते ॥ १० ॥

यह स्तोत्र संसारके उत्पत्ति-पालन संहारादि प्रपञ्च का आदि कारण है, इसे मैंने बुद्धिमान् कश्यपको सुनाया था ॥ १० ॥

सावित्रीपञ्जरं नाम रहस्यं निगमत्रये ।
ऋष्यादिकं च दिग्वर्णं साङ्गावरणकं क्रमात् ॥ ११ ॥
वाहना-ऽऽयुध-मन्त्रास्त्रं मूर्ति-ध्यान-समन्वितम् ।
स्तोत्रं शृणु प्रवक्ष्यामि तव स्नेहाच्च नारद ! ॥ १२ ॥

इस स्तोत्रके ऋषि-दिक्-वर्ण-अङ्ग-आवरणादिके क्रमसे वाहन आयुध मन्त्र-अस्त्र तथा मूर्ति-ध्यान सम्मिलित है, जो वेदत्रयीके रहस्य-भूत है ऐसे सावित्री-पञ्जर-स्तोत्रको तुम्हारे स्नेहाधिक्यसे प्रेरित होकर मैं कहूँगा, तुम सुनो ॥ ११–१२ ॥

ब्रह्मनिष्ठाय देयं स्याददेयं यस्यकस्यचित् ।
आचम्य नियतः पश्चादात्म-ध्यान-पुरःसरम् ॥ १३ ॥
ओमित्यादौ विचिन्त्याथ व्योम-हेमाब्ज संस्थितम् ।
धर्मकन्द-गतज्ञानमैश्वर्याष्ट-दलान्वितम् ॥ १४ ॥

इस स्तोत्रका उपदेश ब्रह्मज्ञ व्यक्तिको देना चाहिये, जिस-किसी-को इसका उपदेश न करें, आचमन करके सावधान हो स्वस्वरूपके ध्यानसे युक्त होकर जिस कमलका मूल धर्म है, जिस धर्मसे ज्ञान प्रकटित होता है तथा अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्तिः—

आकाम्य ईशित्व और वशित्व ये आठ ऐश्वर्य ही अष्टदल हैं ऐसे आकाशसरोवरमें विकसित सुवर्णकमलके ऊपर विराजमान प्रणव स्वरूप देवीका सर्वप्रथम चिन्तन कर इस गायत्रीपञ्जर स्तोत्रका पाठ करना चाहिए ॥ १३–१४ ॥

वैराग्य-कर्णिकासीनां प्रणव-ग्रह-मध्यगाम् ।
ब्रह्मवेदिसमायुक्तां चैतन्यपुरमध्यगाम् ॥ १५ ॥

इस स्वर्ण कमल की वैराग्य ही कर्णिका है जिसपर देवी आसीन है प्रणव रूपी ग्रहों के मध्य में विराजमान है ब्रह्मरूपी वेदीपर अधिष्ठित हैं, चैतन्यरूपी पुरीके मध्यमें सुशोभित हो रहीं हैं ॥ १५ ॥

तत्त्व-हंस-समाकीर्णां शब्दपीठे सुसंस्थिताम् ।
नाद-बिन्दु-कलातीतां, गोपुरैरुपशोभिताम् ॥ १६ ॥

जो देवी तत्त्वरूपी हंसोंसे घिरी हुई है, शब्द पीठपर बैठी हुई है, नाद-बिन्दु-कलासे परे अनेक गोपुरोंसे अलङ्कृत वाटिकामें बैठी हुई है ॥ १६ ॥

विद्याऽविद्यामृततत्त्वादि-प्रकारैरभि संवृताम् ।
निगमार्गलसञ्छन्नां निर्गुणद्वारवाटिकाम् ॥ १७ ॥

जो वाटिका विद्या-अविद्या अथवा अमृत तत्त्वादि रूपी चहार दिवारी से आवृत है वेद रूपी शृङ्खलासे बद्ध है, जिसका निर्गुण ही द्वार है ॥ १७ ॥

चतुर्वर्गफलोपेतां महाकल्पवनैर्वृताम् ।
सान्द्रानन्द-सुधासिन्धु-निगमद्वार-वाटिकाम् ॥ १८ ॥

धर्म-अर्थ-काम तथा मोक्षादि फलोंसे परिपूर्ण है, महाकल्प वृक्षोंके वनों से संकुल है, परमानन्द रूपी अमृत समुद्रसे निस्सृत निगम ही जिसका द्वार है ॥ १८ ॥

ध्यान-धारण-योगादि-तृण-गुल्म-लतावृताम् ।
सदसच्चित्स्वरूपाख्य-मृग-पक्षि-समाकुलाम् ॥ १९ ॥

जिस वाटिकामें ध्यान-धारणादि सम्वलित योगादि ही तृण-गुल्म तथा लतादिक है, तथा-सद-असत-और चित स्वरूप ही मृग तथा पक्षीगण हैं ॥ १६ ॥

विद्याऽविद्या-विचारस्त्वाल्लोकाऽलोका चलावृताम् ।
अविकार-समाश्लिष्ट-निजध्यान-गुणावृताम् ।
पञ्चीकरण-पञ्चोत्थ-भूत-तत्व-निवेदिताम् ॥ २० ॥

विद्या अविद्या तथा विचार रूपी लोकालोक नामक पर्वतसे वेष्टित है, शुद्ध स्वरूपसे संसिष्ट होने से आत्म-ध्यान रूपी गुणों (रज्जु) से आबद्ध है, वेदान्त-पद्धति के अनुसार पञ्चीकरण किये जानेपर वाक्-चक्षु-श्रोत्र-घ्राण-जिह्वेन्द्रियादि पञ्चज्ञानेन्द्रियोंसे उद्भूत क्षिति-जल-पावक-गगन समीरादि पञ्चमहाभूतोंके तत्त्वोंसे जिस देवी का पूर्ण ज्ञान होता है ॥ २० ॥

वेदोपनिषदर्थाख्य-देवर्षिगणसेविताम् ।
इतिहासग्रहगणैः सदारैरभिवन्दिताम् ॥ २१ ॥

जो वेदोपनिषद के अर्थस्वरूप देवर्षिगणोंसे उपासित है, सस्त्रीक इतिहासरूपी ग्रहगणों से अभिवन्दित हैं ॥ २१ ॥

गाथाप्सरोभिर्यक्षैश्च गण-किन्नर-सेविताम् ।
नाग-सिद्ध-पुराणाख्यैः पुरुषैः कल्पचारणैः ॥ २२ ॥

वेदोंके एक भाग का नाम गाथा है उस गाथा रूपी अप्सराओंसे तथा यक्षगण और किन्नरगणोंसे जो सेवित है साथ ही कल्पपर्यन्त विचरण करनेवाले नाग और सिंहके समान वलिष्ठ पुराण रूपी पुरुषोंसे भी सेवित है ॥ २२ ॥

[1]कृतगान-विनोदादि-कथालापन-तत्पराम् ।
तदित्यवाङ्-मनोगम्य-तेजोरूपधरां पराम् ॥ २३ ॥

पवित्रगानसे उत्पन्न विनोदादि की जो दिव्य कथाएँ उनके कथन में जो निपुणहै, "तत्सवितुर्व" इत्यादि मन्त्र में जो तत् पद है वह वाणी और मनसे परे है, अर्थात् उसका वर्णन वाणी तथा मन नहीं कर सकता ऐसे दिव्य तेजसे जो देवी नित्य सम्पन्न है ॥ २३ ॥

जगतः प्रसवित्रीं तां सवितुः सृष्टिकारिणीम् ।
वरेण्यमित्यन्नमयीं पुरुषार्थफलप्रदाम् ॥ २४ ॥

संसारको उत्पन्न करनेवाले सूर्यको भी उत्पन्न करनेवाली और संसारको जो उत्पन्न करनेवाली है, उक्त मन्त्र में वरेण्य पद ही जिस देवीकी प्राणदानी अन्नमय शक्ति है, धर्म-अर्थ-काम-तथा मोक्षादि पुरुषार्थचतुष्टय फलको जो देने वाली है ॥ २४ ॥

---

१. श्लोक संख्या २३ से २६ तक "तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि-धियोयोनः प्रचोदयात्" इस गायत्री मन्त्र की रहस्यात्मक व्याख्या की गई है ।

अविद्यावर्णवर्ज्यां च तेजोवद्गर्भसंज्ञिकाम् ।
देवस्य सच्चिदानन्द-परब्रह्म रसात्मिकाम् ॥ २५ ॥

अविद्याके वर्णसे जो सदा वर्जित है, उक्त मन्त्रमें गर्भ की जगह यहाँ तेज शब्दको लिया गया है अर्थात् वे देवी दिव्य आन्तरिक आभा से परिपूर्ण हैं और मोदन शील देवके सत्-चित्-आनन्दसे परिपूर्ण श्रेष्ठ ब्रह्मानन्द स्वरूपा हैं ॥ २५ ॥

धीमह्य हंस वै तद्वद् ब्रह्माद्वैत-स्वरूपिणीम् ।
धियो यो नस्तु सविता प्रचोदयादुपासिताम् ॥ २६ ॥

योगियोंको "हंसः" मैं वह इस प्रकार अद्वैत ज्ञान होता है ठीक उसी प्रकार ब्रह्माभिन्न देवीका स्वरूप है जिस सूर्यके तेजको ध्यान करने से भगवान सूर्य ध्याता की बुद्धिको परिमार्जित करते हैं उस सूर्यके द्वारा भी जो देवी उपासित हैं ॥ २६ ॥

परोऽसौ सविता साक्षादेनो निर्हरणाय च ।
परो रजस इत्यादि परं ब्रह्मसनातनम् ॥ २७ ॥

पापोंको दूर करने के लिए रजोगुणसे परे परब्रह्मसनातनस्वरूप साक्षात् जो देवी सर्वश्रेष्ठ सविता स्वरूपा है ॥ २७ ॥

आपो ज्योतिरिति द्वाभ्यां पाञ्चभौतिक संज्ञकम् ।
रसोऽमृतं ब्रह्मपदैस्तां नित्यां तपिनीं पराम् ॥ २८ ॥

उक्त मन्त्र में आपो और ज्योति ये जो दो पद हैं इन दोनों पदोंसे जो देवी साक्षात् पाञ्चभौतिक स्वरूपमें धारण करती हैं रसो-अमृतं ब्रह्म इन तीन पदोंसे जो नित्य दर्वश्रेष्ठ देदीप्यमान स्वरूपा है ॥ २८ ॥

भूर्भुवः सुवरित्येतैर्निगमत्व-प्रकाशिकाम् ।
महर्जनस्तपः सत्य-लोकोपरि-सुसंस्थिताम् ॥ २९ ॥

भूर्भुवः स्वः इन तीन पदों से जो वेदके तत्त्वको प्रष्काशित करने वाली है, महः-जनः तपः-सत्य आदि लोकोंके ऊपर समधिष्ठित है ॥ २९ ॥

तादृगस्या विराड्रूप-किरीट-वरराजिताम् ।
व्योमकेशालकाकाश-रहस्यं प्रवदाम्यहम् ॥ ३० ॥

उपर्युक्त लोकों की जो विराट् कल्पना की गई है, वे विराट् लोक ही जिस देवीके शिरपर किरीटके समान सुशोभित हो रहे हैं, आकाश ही जिनके कुञ्चितकेश हैं ऐसी व्योमकेशा देवीके रहस्यको मैं व्यक्त करने जा रहा हूँ ॥ ३० ॥

मेघ-भ्रुकुटिकाकान्त-विधि-विष्णु-शिवार्चिताम् ।
गुरु-भार्गव-कर्णान्तां सोम-सूर्या-ऽग्नि-लोचनाम् ॥ ३१ ॥

जिस देवी की मेघ रूपी भृकुटिसे आक्रान्त होकर ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश ये त्रिदेव जिनका अर्चना करते हैं, वृहस्पति और भृगु जिस देवीके कर्णप्रान्त हैं अर्थात् कर्णफूल हैं, चन्द्र-सूर्य और अग्नि जिनके नेत्र है ॥ ३१ ॥

इला-पिङ्गल-सूक्ष्मास्यां वायु-नासापुटान्विताम् ।
सन्ध्या-द्विरोष्ठ-पुटितां लसद्-वाग्-भूप-जिह्विकाम् ॥ ३२ ॥

इडा और पिङ्गला रूपी सूक्ष्म वायु रन्ध्रोसे जिनके नासापुट समन्वित हैं, प्रातः और सायं दोनों सन्ध्यायें ही जिनके अधरोष्ठ और ऊपरोष्ठ हैं साथ ही जिनकी जिह्वा वैख री वाणसे सुशोभित है ॥३२॥

सन्ध्यांसौ द्युमणे कण्ठ-लसद्-बाहु-समन्विताम् ।
पर्जन्य-हृदयासक्त-वसु-सुस्तन-मण्डलाम् ॥ ३३ ॥

सन्ध्या रूपी स्कन्धोंपर सूर्य रूपी ग्रैवेयक हारसे जिनके कण्ठ और बाहु सुशोभित हो रहे हैं, मेघ रूपी हृदयोंमें संसक्त अष्टवसु ही जिनके स्तन मण्डल है ॥ ३३ ॥

आकाशोदर-वित्रस्त-नाभ्यवान्तर-देशकाम् ।
प्राजापत्याख्य-जघनां कटीन्द्राणीति-संज्ञिकाम् ॥ ३४ ॥

आकाशरूपी उदरसे त्रस्त होने के कारण नाभि ही जिनका अवान्तर देश है प्रजापति जिनके जघनस्थल और इन्द्राणी देवी कटि प्रदेश है ॥ ३४ ॥

ऊरू-मलय-मेरुभ्यां शोभमाना-ऽसुरद्विषाम् ।
जानुनी जह्नु-कुशिक-वैश्वदेव-सदाभुजाम् ॥ ३५ ॥

जो देवी मलय और मेरुरूपी ऊरूद्वयसे सुशोभित है, देव-असुर ही जिनके जानु प्रदेश हैं, जह्नु-कुशिक और वैश्वदेव ही जिनकी भुजायें हैं ॥ ३५ ॥

अयनद्वय-जङ्घाद्य-खुराद्य-पितृ-संज्ञिकाम् ।
पदांघ्रि-नख-रोमाद्य-भूतल-द्रुमलाञ्छिताम् ॥ ३६ ॥

उत्तरायण और दक्षिणायन ही जिनके जङ्घा युगल हैं देवता और पितृगण चरण हैं द्रुमाच्छन्न भूतल ही नख तथा रोमराजि हैं ॥ ३६ ॥

ग्रह-राश्यृक्ष-देवर्षि-मूर्तिं च पर संज्ञिकाम्।
तिथि-मासर्तु-वर्षाख्य-सुकेतु-निमिषात्मिकाम् ॥ ३७ ॥

परब्रह्मस्वरूपिणी भगवतीकी ग्रहराशियाँ-नक्षत्र एवं देवर्षि आदि अनेक मूर्तियाँ हैं, तिथि-मास-ऋतु तथा वर्षारूपी सुन्दर केतुसे विभूषित निमेषात्मकस्वरूपा है ॥ ३७ ॥

अहो रात्रार्द्ध-मासाख्यां सूर्याचन्द्रमसात्मिकाम्।
माया-कल्पित-वैचित्र्य सन्ध्याच्छादन-संवृताम् ॥ ३८ ॥

उस देवीकी दिन-रात-पक्ष-सूर्य तथा चन्द्रादि अनेक आत्माएँ हैं, मायारचित वैचित्र्यपूर्ण सन्ध्या ही जिनकी ओढ़नी है ॥ ३८ ॥

ज्वलत्-कालानल-प्रख्यां तडित्कोटि-समप्रभाम्।
कोटि सूर्य-प्रतीकाशां चन्द्रकोटि-सुशीतलाम् ॥ ३९ ॥

जाज्वल्यमान कालाग्नि तथा करोड़ों विद्युत्के समान जिनकी दिव्य आभा है, करोड़ों सूर्यके समान जिनका प्रखर तेज है और करोड़ों चन्द्रमाके समान जो दिव्य शीतलतासे युक्त है ॥ ३९ ॥

सुधामण्डल-मध्यस्थां सान्द्रानन्दाऽमृतात्मिकाम्।
प्रागतीतां मनोरम्यां वरदां वेदमातरम् ॥ ४० ॥

सुधामण्डलके मध्यमें स्थित होनेके कारण अतिशय आनन्दामृत ही जिनका स्वरूप है, पूर्वकालसे भी जो परे हैं, मनोह्लादिनी, वर-देनेवाली तथा वेदों की जननी हैं ॥ ४० ॥

चराऽचरमयीं नित्यां ब्रह्माक्षर-समन्विताम्।
ध्यात्वा स्वात्मनि भेदेन ब्रह्मपञ्जरमारभेत् ॥ ४१ ॥

चराचर समस्त जगत् ही जिनका स्वरूप है और नित्य अक्षर-ब्रह्मके समन्वित है ऐसे विश्वात्मक तथा कालात्मक देवीके दिव्य स्वरूपको अपने हृदयमें अनन्य भावसे ध्यान करके ब्रह्म-पञ्जर-स्तोत्र-का पाठ करना चाहिए ॥ ४१ ॥

पञ्जरस्य ऋषिश्चाऽहं छन्दो विकृतिरुच्यते।
देवता च परो हंसः परब्रह्माऽधि देवता ॥ ४२ ॥

इस ब्रह्म-पञ्जर-स्तोत्रका ऋषि मैं अर्थात् ब्रह्माजी हैं, विकृति छन्द है, परमात्मा हंसदेवता है, परब्रह्म अधिदेवता है ॥ ४२ ॥

प्रणवो बीजशक्तिः स्यादों कीलकमुदाहृतम्।
तत्तत्त्वं धीमहि क्षेत्रं धियोऽस्त्रं यः परं पदम् ॥ ४३ ॥

प्रणव ही बीजशक्ति है तथा ॐकार कीलक है, गायत्री मन्त्रका तत्पद ही इस स्तोत्र का तत्त्व है, धीमहि पदक्षेत्र है, "धियः" अस्त्र है तथा यः यह पद श्रेष्ठस्थान है ॥ ४३ ॥

मन्त्रमापो ज्योतिरिति योनिर्हंसः सबन्धकम् ।
विनियोगस्तु सिद्ध्यर्थं पुरुषार्थ चतुष्टये ॥ ४४ ॥

आपो ज्योतिः यह पद मन्त्र है, हंस ही बन्धनयुक्त योनि है, धर्म-अर्थ-काम तथा मोक्ष इन पुरुषार्थ चतुष्टय की सिद्धिके लिये इस ब्रह्म-पञ्जर-स्तोत्रका विनियोग है ॥ ४४ ॥

ततस्तैरङ्गषट्कं स्यात्तैरेव व्यापकत्रयम् ।
पूर्वोक्तदेवतां ध्यायेत् साकारगुणसंयुताम् ॥ ४५ ॥

तत्तत्त्वं हृदयाय नमः, धीमहि क्षेत्रं शिरसे स्वाहा, धियोऽस्त्रं शिखायैवषट्, यः परं पदम् कवचाय हुम्, मन्त्रमापो ज्योतिः नेत्र-त्रयाय वौषट्, योनिर्हंसः सम्बन्धकम् अस्त्राय फट् इन छः मन्त्रोंसे अङ्गन्यास तथा करन्यास करके इन्हीं मन्त्रोंसे तीन बार व्यापक मुद्रा प्रदर्शित करें, पश्चात् आकार और गुण से युक्त पूर्वोक्तविश्वात्मक तथा कालात्मक देवीका ध्यान करना चाहिये ॥ ४५ ॥

पञ्चवक्त्रां दशभुजां त्रिपञ्च नयनैर्युताम् ।
मुक्ता-विद्रुम-सौवर्णां सित-शुभ्र-समाननाम् ॥ ४६ ॥

देवीके पाँच मुख हैं, दश भुजाएँ हैं, पन्द्रह नेत्र हैं, मोती और मूंगाके समान दिव्य कान्ति है तथा उज्ज्वल दिव्य प्रकाशसे परिपूर्ण जिनका आनन है ॥ ४६ ॥

वाणीं परां रमां मायां चामरैर्दर्पणैर्युताम् ।
षडङ्गदेवतामन्त्रै रूपाद्यवयवात्मिकाम् ॥ ४७ ॥

वाणी परा माया रमा आदि जिनके अनेक नाम हैं दिव्य चँवर और दर्पणोंसे विभूषित हैं षडङ्ग देवता और मन्त्रोंसे जिनके रूप एवं अवयवों की रचना हुई है ॥ ४७ ॥

मृगेन्द्र- वृषपक्षीन्द्र-मृगहंसासने स्थिताम् ।
अर्द्धेन्दुबद्ध-मुकुट-किरीट-मणि-कुण्डलाम् ॥ ४८ ॥

जो देवी दुर्गारूपसे सिंह पर, माहेश्वरीरूपसे ऋषभपर, वैष्णवी-रूपसे गरुड़पर, इन्द्राणीरूपसे हाथीपर, ब्रह्माणीरूपसे हंसपर विराज-मान है, अर्द्धचन्द्रसे जिनका किरीट और मुकुट बना है और मणि-निर्मित कुण्डल है ॥ ४८ ॥

रत्नताटङ्क-माङ्गल्य-परग्रैवेय-नूपुराम् ।
अङ्गुलीयक-केयूर-कङ्कणाद्यैरलङ्कृताम् ॥ ४९ ॥

दिव्य रत्नसे कर्णाभूषण, माङ्गल्यप्रद श्रेष्ठ हसुली तथा पायजेबका निर्माण हुआ है, अंगूठा, बाजूबन्द कङ्कण आदि दिव्य अलङ्कारोंसे जो अलङ्कृत हैं ॥ ४६ ॥

दिव्यस्रग्-वस्त्र-संछन्न रविमण्डल मध्यगाम् ।
वरा-ऽभया-ऽब्ज-युगलां शङ्ख-चक्र-गदाऽङ्कुशान् ॥ ५० ॥
शुभ्रं कपालं दधतीं वहन्तीमक्षमालिकाम् ।
गायत्रीं वरदां देवीं सावित्रीं वेदमातरम् ॥ ५१ ॥

दिव्य माला और वस्त्रोंसे आच्छन्न होकर जो सूर्यमण्डलपर विराजमान हैं वर-अभय-कमलयुगल-शङ्ख-चपु-गदा-अंकुश-शुभ्र-कपाल तथा अक्षमालादि धारण की हुई हैं ऐसी वरदायिनी वेद-जननी संसारप्रसविनी देवी गायत्रीका ध्यान करना चाहिए ॥ ५०-५१ ॥

आदित्यपथगामिन्यां स्मरेद् ब्रह्मस्वरूपिणीम् ।
विचित्र-मन्त्रजननीं स्मरेद् विद्यां सरस्वतीम् ॥ ५२ ॥

आदित्य मार्गसे चलनेवाली देवीमें ब्रह्मस्वरूपिणी देवीका स्मरण करना चाहिये, वैचित्र्यपूर्ण मन्त्रोंको जन्म देनेवाली विद्या रूपिणी भगवती सरस्वतीका स्मरण करना चाहिये ॥ ५२ ॥

त्रिपदा ऋङ्मयी पूर्वामुखी ब्रह्मास्त्रसंज्ञिका ।
चतुर्विंशतितत्त्वाख्या पातु प्राचीं दिशं मम ॥ ५३ ॥

त्रिपदा गायत्री मन्त्रसे परिपूर्ण, पूर्वाभिमुखी चौबीस तत्त्वोंसे विभूषित ब्रह्मास्त्र नाम वाली देवी प्राचीदिशामें मेरी रक्षा करें ॥ ५३ ॥

चतुष्पाद-यजुर्ब्रह्मदण्डाख्या पात दक्षिणाम् ।
षट्त्रिंशत्तत्त्वयुक्ता सा पातु मे दक्षिणां दिशम् ॥ ५४ ॥

चार पादोंसे युक्त यजुर्वेद सम्पन्न तथा छत्तीस तत्त्वोंसे परिपूर्ण ब्रह्मदण्डानाम धारिणी देवी दक्षिण दिशामें मेरी रक्षा करें ॥ ५४ ॥

प्रत्यङ्मुखी पञ्चपदी पञ्चाशत्तत्त्वरूपिणी ।
पातु प्रतीचीमनिशं सामब्रह्मशिरोऽङ्किता ॥ ५५ ॥

पश्चिमाभिमुखी, पाँच पाद वाली, पचास तत्त्वोंसे परिपूर्ण तथा सामवेद जिनका शिरोलङ्कार है ऐसी देवी पश्चिम दिशामें निरन्तर मेरी रक्षा करें ॥ ५५ ॥

सौम्या ब्रह्मस्वरूपाख्या साथर्वाङ्गिरसात्मिकाम् ।
उदीचीं षट्पदा पातु चतुष्षष्टि-कलात्मिका ॥ ५६ ॥

छः पादोंसे युक्त, चौसठकलाओंसे सम्पन्न, जिसका ऋषि अङ्गिराजी हैं ऐसी अथर्ववेद स्वरूपासौम्य स्वभाववाली-ब्रह्मस्वरूपा नामधेयी देवी उत्तर दिशामें मेरी रक्षा करें ॥ ५६ ॥

पञ्चाशत्तत्त्व रचिता भवपादा शताक्षरी ।
व्योमाख्या पातु मे चोर्ध्वा दिशं वेदाङ्गसंस्थिता ॥ ५७ ॥

जिनका निर्माण पचास तत्वोंसे हुआ है और जो सौ अक्षरोंसे सम्पन्न है एवं जो वेदाङ्गोंपर विराजमान है ऐसी व्योमा नामधेयी देवी ऊद्ध्र्व दिशामें मेरी रक्षा करें ॥ ५७ ॥

विद्युन्निभा ब्रह्मसंज्ञा मृगारूढा चतुर्भुजा ।
चापेषु-चर्मा-ऽसिधरा पातु मे पावकीं दिशम् ॥ ५८ ॥

सिंहारूढ़ दिव्य बिजलीके समान कान्तिवाली चारभुजाओंसे युक्त तथा चारों हाथोंमें क्रमशः धनुष-वाण-ढाल और तलवार धारण करनेवाली ब्रह्मनाम धेयी देवी अग्निकोणमें मेरी रक्षा करें ॥ ५८ ॥

ब्राह्मी-कुमारी गायत्री रक्ताङ्गी हंसवाहिनी ।
बिभ्रत्कमऽलवक्ष-स्रक्स्रुवान् मे पातु नैर्ऋतीम् ॥ ५९ ॥

हंसारूढ़ रक्तवर्ण ब्राह्मी कुमारी गायत्री आदि नामोंसे युक्त कमण्डलु, अक्षमाला-स्रुक और स्रुवा धारण करनेवाली देवी नैर्ऋत्य दिशामें मेरी रक्षा करें ॥ ५९ ॥

चतुर्भुजा वेदमाता शुक्लाङ्गी वृषवाहिनी ।
वराभय-कपालाक्ष-स्रग्विणी पातु वारुणीम् ॥ ६० ॥

वृषारुढ़, शुक्लवर्ण, चार भुजाओंमें वर-अभय-कपाल और अक्षमाला धारण करनेवाली वेदजननी देवी वायव्य दिशामें मेरी रक्षा करें ॥ ६० ॥

श्यामा सरस्वती वृद्धा वैष्णवी गरुडासना ।
शङ्खाराब्जाभयकरा पातु शैवीं दिशं मम ॥ ६१ ॥

गरुड़ारूढ़, वृद्धावस्थासे सम्पन्न हाथोंमें शङ्ख-चपु-वर तथा अभय मुद्रा धारण करनेवाली वैष्णवी श्यामवर्णा सरस्वती देवी ईशान दिशामें मेरी रक्षा करें ॥ ६१ ॥

चातुर्भुजा वेदमाता गौराङ्गी सिंहवाहना ।
वरा-भया-ऽब्ज-युगलैर्भुजैः पात्वधरां दिशम् ॥ ६२ ॥

सिंहारूढ़ चार भुजाओंमें वर-अभय और दो कमल धारण करने वाली गौरवर्णा वेद जननी देवी अग्नेभागमें मेरी रक्षा करें ॥ ६२ ॥

तत्तत्पार्श्वस्थिताः स्व-स्ववाहनायुध भूषणाः ।
स्व-स्वदिक्षु स्थिताः पान्तु ग्रहशक्त्यङ्गदेवता ॥ ६३ ॥

उन-उन पार्श्व भागोंसे स्थित अपने-अपने वाहन-आयुध और आभूषणोंसे अलङ्कृत अङ्गदेवताओंसे युक्त ग्रहशक्तियाँ अपनी-अपनी दिशाओंमें स्थित होकर मेरी रक्षा करें ॥ ६३ ॥

मन्त्राधिदेवतारूपा मुद्राधिष्ठान देवताः ।
व्यापकत्वेन पात्वस्मानापदृत्तलमस्तकम् ॥ ६४ ॥

मन्त्रोंके अधिष्ठातृ देवता स्वरूप मुद्राओंके स्थानोंके देवता जो अपने पादतलको मस्तकपर चढ़ाये हुए हैं वे सभी व्यापक रूपसे हमारी रक्षा करें ॥ ६४ ॥

तत्पदं मे शिरः पातु भालं मे सवितुः पदम् ।
वरेण्यं मे दृशौ पातु श्रुती भर्गः सदा मम ॥ ६५ ॥

गायत्री मन्त्रमें जो "तत्" पद है वह मेरे शिर की, "सवितुः" पद भालस्थानकी, "वरेण्य" पद दोनों नेत्रों की तथा "भर्गः" पद मेरे दोनों कानों की सदा रक्षा करें ॥ ६५ ॥

घ्राणं देवस्य मे पातु पातु धीमहि मे मुखम् ।
जिह्वां मम धियः पातु कण्ठं मे पातु यः पदम् ॥ ६६ ॥

"देवस्य" पद नाक की, "धीमहि" पद मुख की, "धियः" पद जिह्वा की, और "यः" पद मेरे कण्ठ की रक्षा करें ॥ ६६ ॥

नः पदं मे पातु स्कन्धौ भुजौ पातु प्रचोदयात् ।
करौ मे च परः पातु पादौ मे रजसाऽवतु ॥ ६७ ॥

"नः" पद स्कन्ध देशोंकी, "प्रचोदयात्" पद दोनों भुजाओंकी, "परः" पद दोनों हाथों की, "रजसे" पद मेरे दोनो पैरों की रक्षा करें ॥ ६७ ॥

असौ मे हृदयं पातु मम मध्यावदाऽवतु ।
ओं मे नाभिं सदा पातु कटिं मे पातु मे सदा ॥
ओमापः सक्थिनी पातु गुह्यं ज्योतिः सदा मम ॥ ६८ ॥

"असौ" पद हृदय की, "अदा" पद मध्य भाग की, "ॐ" पद नाभिकी, तथा "मे" पद मेरे कटि प्रदेश की, "ॐ आपः[1]" पद घुटनों की "ज्योतिः" पद मेरे गुह्य स्थानों की सदा रक्षा करें ॥ ६८ ॥

ऊरू मम :रसः पातु जानुनी अमृतं मम।
जंघे ब्रह्म पदं पातु गुल्फौ भूः पातु मे सदा ॥ ६९ ॥

"रस:" पद ऊरुद्वय की, "अमृतं" पद दोनों जानुओंकी, "ब्रह्म" पद दोनों जङ्घाओं की, और "भू:" पद सदा मेरी गुल्फोंकी रक्षा करें॥ ६९ ॥

पादौ मम भुवः पातु सुवः पात्वखिलं वपुः।
रोमाणि मे महः पातु रोमकं पातु मे जनः ॥ ७० ॥

"भुवः" पद दोनों पैरोंकी, "सुवः" पद समस्त शरीर की "महः" पद रोमराजि की और "जनः" पद छोटे-छोटे बालों की रक्षा करें॥ ७० ॥

प्राणांश्च धातुतत्वानि तदीशः पातु मे तपः।
सत्यं पातु मयायूंषि हंसो बुद्धिं च पातु मे ॥ ७१ ॥

सर्व समर्थ वह "तपः" पद पञ्चप्राण तथा सप्त धातुतत्वों की "सत्यं" पद अणु की और "हंसः" पद मेरी बुद्धि की रक्षा करें॥ ७१ ॥

शुचिषत् पातु मेशुक्रं वसुः पातु श्रियं मम।
मतिं पात्वन्तरिक्षसद्धोता दानं च पातु मे ॥ ७२ ॥

"शुचिषत्" पद मेरे शुक्र की "वसु" पद मेरी श्री की "अन्तरिक्ष-सत्" पद मेरी मति की तथा "होता" पद मेरे दान की रक्षा करें॥ ७२ ॥

वेदिषत् पातु मे विद्यामतिथिः पातु मे गृहम्।
धर्मं दुरोणसत्पातु नृषापातु सुतान् मम ॥ ७३ ॥

"वेदिषत्" पद विद्या की "अतिथिः" पद गृह की "दुरोणसत्" पद धर्म की तथा "नृषत्" पद मेरे पुत्रों की रक्षा करें॥ ७३ ॥

वरसत्पातु मे भार्यामृतसत्पातु मे सुतान्।
व्योमसत् पातु मे बन्धून् भ्रातृनब्जाश्च पातु मे ॥ ७४ ॥

"वरसत" पद भार्याकी "अमृत सत्" पद पुत्रों की "व्योमसत्" पद बन्धुओं की तथा "अब्जा" पद मेरे भाइयों की रक्षा करें॥ ७४ ॥

पशून् मे पातु गोजाश्च ऋतजाः पातु मे भवम्।
सर्वं मे अद्रिजाः पातु यानं मे पात्वृतं सदा ॥ ७५ ॥

"गोजाः" पद वस्तुओं की "ऋतजाः" पद जन्म की "अद्रिजाः" पद समस्त स्थानों की तथा "ऋत" पद मेरे समस्त यानों की रक्षा करें॥ ७५ ॥

अनुक्रमथ यत् स्थानं शरीरेऽन्तर्बहिश्च यत्।
तत्सर्वं पातु मे नित्यं हंसः सोऽहमहर्निशम् ॥ ७६ ॥

शरीरके बाहर और भीतर जिन स्थानोंका ग्रहण नहीं किया गया उन समस्त स्थानोंकी "हंसः" और "सोऽहम्" पद रात दिन सदा-सर्वदा मेरी रक्षा करें ॥ ७६ ॥[1]

इदं तु कथितं सम्यङ् मया ते ब्रह्मपञ्जरम्।
सन्ध्ययोः प्रत्यहं भक्त्या जपकाले विशेषतः ॥ ७७ ॥

इस ब्रह्म पञ्जर स्तोत्रका सम्पूर्ण विधान मैंने तुमसे कह सुनाया प्रायः इस स्तोत्रका पाठ प्रातः तथा सायं सन्ध्याके समय और विशेषकर जपके समय भक्तिपूर्वक करना चाहिये ॥ ७७ ॥

धारयेद् द्विजवर्यो यः श्रावयेद् वा समाहित।
स विष्णु स शिवः सोऽहं सोऽक्षरः स विराट् स्वराट् ॥ ७८ ॥

जो द्विज श्रेष्ठ इस ब्रह्म-पञ्जर-स्तोत्रको धारण करता या समाहित होकर सुनता है वह साक्षात्—ब्रह्मा-विष्णु-महेश-अक्षर-विराट् और स्वतः देदीप्यमान हो जाता है ॥ ७८ ॥

शताक्षरात्मकं देव्या नामाऽष्टाविंशतिः शतम्।
शृणु वक्ष्यामि तत्सर्वमतिगुह्यं सनातनम् ॥ ७९ ॥

शताक्षरस्वरूपा देवी की १२८ नामावली है जो सनातन और अति रहस्यात्मक हैं उन सब नामावलीको मैं कहूँगा तुम सुनो ॥७९॥

भूतिदा भुवना वाण वसुधा सुमना मही।
हरिणी जननी नन्दा सविसर्गा तपस्विनी ॥ ८० ॥

देवी की एक सौ अट्ठाइस नामावली निम्नाङ्कित है—

१ भूतिदा २ भुवना ३ वाण ४ वसुधा ५ सुमना ६ मही ८ हरिणी ८ जननी ९ नन्दा १० सविसर्गा ११ तपस्विनी ॥ ८० ॥

पयस्विनी सती त्यागा चैन्दवी सत्यवीरसा।
विश्वा तुर्या परा रेच्या निर्घृणी यामिनी भवा ॥ ८१ ॥

---

१. हंसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत्। नृषद्वरसदृतसद्व्योम सदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतं बृहत्॥ शुक्लयजुर्वेद-संहिता, अध्याय १०, मण्डल २४ में यह मन्त्र है। इस मन्त्रके "हंसः" पद-से लेकर "ऋत" पदों तकका प्रयोग श्लोक संख्या ७१ से ७६ तक रक्षण-कार्यके लिए किया गया है।

१२ पयस्विनी १३ सती १४ त्यागा, १५ ऐन्दवी १६ सत्यवीरसा १७ विश्वा १८ तुर्या १९ परा २० रेच्या २१ निर्घृणी २२ यामिनी तथा २३ भवा ॥ ८१ ॥

गोवेद्या च जरिष्ठा च स्कन्दिनी धीर्मतिर्हिमा ।
भीषणा योगिनी पक्षी नदी प्रज्ञा च चोदिनी ॥ ८२ ॥

२४ गो २५ विद्या २६ जरिष्ठा २७ स्कन्दिनी २८ धी: २९ मति: ३० हिमा ३१ भीषणा ३२ योगिनी ३३ पक्षी ३४ नदी ३५ प्रज्ञा ३६ चोदिनी ॥ ८२ ॥

धनिनी यामिनी पद्मा रोहिणी रमणी ऋषिः ।
सेनामुखी सामयी च वकुला दोषवर्जिता ॥ ८३ ॥

३७ धनिनी ३८ यामिनी ३९ पद्मा ४० रोहिणी ४१ रमणी ४२ ऋषि: ४३ सेनामुखी ४४ सामयी ४५ वकुला ४६ दोषवर्जिता ॥८३॥

सर्वकामदुघा सोमोद्भवा-ऽहङ्कार-वर्जिता ।
द्विपदा च चतुष्पादा त्रिपदा चैव षट्पदा ॥ ८४ ॥

४७ सर्वकामदुघा ४८ सोमोद्भवा ४९ अहंकारवर्जिता ५० त्रिपदा ५१ चतुष्पादा ५२ त्रिपदा ५३ षट्पदा ॥ ८४ ॥

अष्टापदी नवपदी सा सहस्राक्षरात्मिका ।
इदं यः परमं गुह्यं सावित्रीमन्त्रपञ्जरम् ॥ ८५ ॥
नामाष्टविंशतिशतं शृणुयाच्छ्रावयेत् पठेत् ।
मर्त्यानाममृतत्वाय भीतानाम भयाय च ॥ ८६ ॥

५४ अष्टापदी ५५ नवपदी ५६ सहस्राक्षरात्मिका आदि—

यह सावित्री मन्त्र पञ्जर-स्तोत्र जो परम रहस्यात्मक तथा १२८ देवी की नामावलीसे विभूषित है इस मरणधर्माको अमृतत्व प्राप्तिके लिये तथा भयभीतको निर्भय करनेके लिये सुनना चाहिये, सुनाना चाहिये तथा पाठ करना चाहिये ॥ ८५–८६ ॥

मोक्षाय च मुमुक्षूणां श्रीकामानां श्रिये सदा ।
विजयाय युयुत्सूनां व्याधितानामरोगकृत ॥ ८७ ॥

मुमुक्षुओंको मोक्षप्राप्तिके लिये, धनार्थियोंकी धनलाभार्थ, योद्धाओंको विजयके लिये, तथा रोगियोंको आरोग्यप्राप्तिके लिए इसका पाठ करना चाहिये ॥ ८७ ॥

वश्याय वश्यकामानां विद्यायै वेदकामिनाम् ।
द्रविणाय दरिद्राणां पापिनां पाप शान्तये ॥ ८८ ॥

वशीकरणार्थीको वशीकरणके लिये, वेदकामार्थीको विद्याप्राप्तिके लिये, दरिद्रोंको धनके लिये, पापियोंको पापशान्तिके लिये इसका पाठ करना चाहिये। ८८॥

वादिनां वादिविजये कवीनां कविताप्रदम्।
अन्नाय क्षुधितानां च स्वर्गाय नाकमिच्छताम् ॥ ८९ ॥

वाद-विवादमें विजय प्राप्तिके लिये, कवियोंको कवित्वशक्तिके लिये, भूखोंको अन्नके लिये तथा स्वर्गेच्छुको स्वर्ग प्राप्तिके लिये इसका पाठ करना चाहिये ॥ ८९ ॥

पशुभ्यः पशुकामानां पुत्रेभ्यः पुत्रकांक्षिणाम्।
क्लेशिनां शोकशान्त्यर्थं नृणां शत्रुभयाय च ॥ ९० ॥

पशुकामार्थियोंको पशुप्राप्तिके लिये, पुत्रार्थियोंको पुत्रप्राप्तिके लिए, दुःखियोंको शोकशान्त्यर्थ तथा मनुष्योंको शत्रुभयार्थ इसका पाठ करना चाहिये ॥ ९० ॥

राजवश्याय द्रष्टव्यं पञ्जर नृप सेविनाम्।
भक्त्यर्थं विष्णुभक्तानां विष्णौ सर्वान्तरात्मनि ॥ ९१ ॥

राजसेवकोंको राजाको अपने वशमें करनेके लिये, वैष्णवोंको सर्वात्मा भगवान् विष्णुके प्रति भक्ति-लाभार्थ इसका पाठ करना चाहिये ॥ ९१ ॥

नायकं विधिसृष्टानां शान्तये भवति ध्रुवम्।
निःस्पृहाणां नृणां मुक्तिः शाश्वती भवति ध्रुवम् ॥ ९२ ॥

विधिरचित समस्त स्तोत्रोंमें प्रधान यह गायत्री-पञ्जर-स्तोत्र मनुष्योंके समस्त क्लेशशान्तिके लिये ध्रुवसत्य है साथ ही इससे निस्पृह मनुष्यों की शाश्वती मुक्ति अवश्य हो जाती है ॥ ९२ ॥

जप्यं त्रिवर्गसंयुक्तं गृहस्थेन विशेषतः।
मुनीनां ज्ञानसिद्ध्यर्थं यतीनां मोक्ष सिद्धये ॥ ९३ ॥

धर्मार्थकाम इन तीनों की कामनावाले मनुष्यको इस स्तोत्रका पाठ अवश्य करना चाहिये- मुनियोंको ज्ञान-सिद्धिके लिये तथा यतियों-को मोक्षप्राप्तिके लिये इसका पाठ करना चाहिये ॥ ९३ ॥

उद्यन्तं चन्द्रकिरणमुपस्थाय कृताञ्जलिः।
कानने वा स्वभवने तिष्ठञ्छुद्धो जपेदिदम् ॥ ९४ ॥

हाथ जोड़कर उगते हुए चन्द्रमाका उपस्थान करके अरण्यमें,

या अपने घरमें शुद्ध भावसे खड़े होकर इस स्तोत्रका पाठ करना चाहिये ॥ ९४ ॥

सर्वान् कामानवाप्नोति तथैव शिवसन्निधौ ।
मम प्रीतिकरं दिव्यं विष्णुभक्ति-विवर्द्धनम् ॥ ९५ ॥

भगवान् शिवके समीप यदि गायत्री-पञ्जर-स्तोत्रका पाठ किया जाय तो पाठकको समस्त कामनाओंकी प्राप्ति होती है, साथ ही वह पाठ मेरे अर्थात् ब्रह्माजीके प्रीतिकर और दिव्य विष्णुभक्तिको बढ़ानेवाला होता है ॥ ९५ ॥

ज्वरार्तानां कुशाग्रेण मार्जयेत् कुष्ठरोगिणाम् ।
अङ्गमङ्गयथा लिङ्गं कवचेन तु साधकः ॥ ९६ ॥

ज्वरसे पीड़ित तथा कुष्ठरोगियोंके अङ्गप्रत्यङ्गको कवचके द्वारा कुशाके अग्रभागके जलसे साधक मार्जन करे ॥ ९६ ॥

मण्डलेन विशुद्ध्येत् सर्वरोगैर्नसंशयः ।
मृतप्रजा च या नारी जन्म बन्ध्या तथैव च ॥ ९७ ॥
कन्यादि-वन्ध्या या नारी तासामङ्गं प्रमार्जयेत् ।
पुत्रा न रोगिणस्तास्तु लभन्ते दीर्घजीविनः ॥ ९८ ॥

यदि कवचके द्वारा कुशाग्रभागके जलसे मण्डल अर्थात् गोलाकार वृत्त खींच दिया जाय तो रोगी समस्त रोगोंसे मुक्त हो जाता है, इसमें कोई सन्देह नहीं; जिस स्त्रीका बच्चा जन्मते ही मर जाता हो वा मरा हुआ ही जन्म लेता हो, या जो जन्मसे ही वन्ध्या हो तो उन सभी स्त्रियोंके अङ्गोंको कवचके द्वारा कुशाग्रजलसे मार्जन करना चाहिये, मार्जन करनेसे वे स्त्रियाँ निरोगी तथा दीर्घजीवी पुत्रको प्राप्त करती हैं ॥ ९७–९८ ॥

तास्ताः संवत्सरादर्वाग गर्भं तु दधिरे पुनः ।
पति-विद्वेषिणी या स्त्री अङ्गं तस्याः प्रमार्जयेत् ॥ ९९ ॥
तमेव भजते सा स्त्री पतिं कामवशं नयेत् ।
अश्वत्थे राजवश्यार्थं बिल्वमूले स्वरूपभाक् ॥ १०० ॥

उक्त सभी स्त्रियाँ मार्जन करनेके बाद एक वर्षके पूर्व ही गर्भ धारण पुनः कर लेती हैं, जो स्त्री पतिसे द्वेष करनेवाली हो तो उसके भी अङ्गोंका कवचके द्वारा कुशाग्रजलसे मार्जन करना चाहिये, मार्जन करनेसे वही स्त्री अपने पति की सेवा करने लगती है और पतिको कामाभिभूत कर लेती है। राजाको वशमें करनेके लिये

पीपल को जड़में इस स्तोत्रका पाठ करे और दिव्यरूपके लिये बिल्व-वृक्ष की जड़में पाठ करे ॥ ९९–१०० ॥

पलाशमूले विद्यार्थी तेजसाभिमुखो रवौ ।
कन्यार्थी चण्डिकागेहे जपेच्छत्रुभयाय च ॥ १०१ ॥

विद्यार्थी सूर्याभिमुख होकर पलाश की जड़में इस स्तोत्रका पाठ करे तो वह दिव्य तेजसे सम्पन्न हो जाता है, कन्यार्थीको दुर्गामन्दिरमें तथा शत्रुको भयभीत करनेके लिये भी इस स्तोत्रका पाठ करना आवश्यक है ॥ १०१ ॥

श्रीकामो विष्णुगेहे च उद्याने श्रीर्वशी भवेत् ।
आरोग्यार्थे स्वगेहे च मोक्षार्थी शैलमस्तके ॥ १०२ ॥

श्रीकी कामनावाले विष्णुमन्दिरमें या उद्यानमें इस स्तोत्रका पाठ करें तो लक्ष्मी उनके वशमें हो जाती है, आरोग्यप्राप्तिके लिये अपने घर पर तथा मोक्षके लिये पर्वतशिखरपर इस स्तोत्रका पाठ करना चाहिये ॥ १०२ ॥

सर्वकामो विष्णुगेहे च मोक्षार्थी यत्र कुत्रचित् ।
जपारम्भे तु हृदयं जपान्ते कवचं पठेत् ॥ १०३ ॥

सभी कामनाओं की सिद्धिके लिये विष्णुमन्दिरमें तथा मोक्षार्थी-को जिस किसी भी स्थानमें इस स्तोत्रका पाठ करना चाहिये, स्तोत्र-पाठके पूर्व गायत्री-हृदय-स्तोत्र और अन्तमें गायत्री-कवचका पाठ करना चाहिये ॥ १०३ ॥

किमत्र बहुनोक्तेन शृणु नारद ! तत्त्वतः ।
यं यं चिन्तयते नित्यं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ॥ १०४ ॥

ब्रह्माजी कहते हैं :—हे नारद ! इस स्तोत्रके विषयमें अधिक कहनेसे क्या प्रयोजन ? तात्त्विकरूपसे सुनो, मनुष्य जिस-जिस वस्तु-की कामना करेगा वह-वह वस्तु इस स्तोत्रके पाठ करनेसे उसे अवश्य मिलेगी ॥ १०४ ॥

इति गायत्री-पञ्जर-स्तोत्रम् ।

अथ गायत्रीपटलम्

ब्रह्मशाप विमोचनका विनियोग—

ॐ अस्य श्रीब्रह्मशाप विमोचन-मन्त्रस्य निग्रहाऽनुकर्त्ता प्रजापतिऋषिः, कामदुघा गायत्रीच्छन्दः, ॐ ब्रह्मशापविमोचनी-गायत्री-शक्तिर्देवता, ब्रह्मशापविमोचनार्थे जपे विनियोगः।

ब्रह्मशाप विमोचन विनियोगका अर्थ :—

ॐ इस ब्रह्मशाप विमोचन मन्त्रके निग्रह और अनुग्रह करनेवाले प्रजापति ऋषि हैं, कामनाओंको पूर्ण करनेवाला गायत्री छन्द है। ब्रह्मशाप विमोचनार्थ गायत्री शक्ति ही देवता है अतः ब्रह्मशापविमोचनार्थ इस विनियोग को पढ़कर भूमिपर जल छोड़े।

मन्त्रः— सवितुः ब्रह्मोमेत्युपासनात् तत्तद्ब्रह्मविदो विदुस्तां प्रयतन्ति धीराः। सुमनसा वाचा ममाऽग्रतः। ॐ देवी गायत्रि !, त्वं ब्रह्मशापाद् विमुक्ता भव।

मन्त्रका अर्थ :—

सूर्यकी ब्रह्मरूपसे ॐ की उपासनासे तत्तद् ब्रह्मज्ञानी धीरजन ब्रह्मके तत्तद् स्वरूपको जाननेके लिए प्रयत्न करते हैं। सौमनस्य वाणीसे हे देवी गायत्री ! तुम मेरे आगे ब्रह्मशापसे मुक्त हो जाओ।

विश्वामित्र शापविमोचनका विनियोग—

ॐ विश्वामित्र-शापविमोचन-मन्त्रस्य नूतनसृष्टिकर्ताविश्वामित्र-ऋषिः, वाग्दोहा गायत्रीछन्दः, भुक्ति-मुक्तिप्रदा विश्वामित्रानुग्रहीता-गायत्रीशक्तिः, सविता देवता, विश्वामित्रशापविमोचनार्थे जपे विनियोगः।

विश्वामित्र शापविमोचन विनियोगका अर्थ :—

ॐ विश्वामित्र शापविमोचन मन्त्रके नवीन सृष्टिकर्ता विश्वामित्र ऋषि हैं, वाणीको पूर्ण करनेवाला गायत्री छन्द है, भुक्ति—मुक्ति प्रदान करनेवाली विश्वामित्रसे अनुग्रहीत गायत्री ही शक्ति है, सविता देवता है, विश्वामित्र शापविमोचनार्थ इस विनियोगको पढ़कर भूमिपर जल छोड़े।

मन्त्रः—तत्त्वानि चाङ्गेऽग्निचितोधियांसः त्रिगर्भां यदुद्भवां देवाश्चोचिरे विश्वसृष्टिं तां कल्याणीमिष्टकरीं प्रपद्ये यन्मुखान्निःसृतो वेदगर्भः। ॐ गायत्रि ! त्वं विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव।

मन्त्र का अर्थ :—

अग्निके समान चमत्कृत बुद्धिमानजन देवीके अङ्गोंमें तत्त्वोंका ध्यान करते हैं, जिससे उत्पन्न सत्त्व-रज-तमोगुणसे परिपूर्ण इस विश्व-सृष्टिको देवगण भी कहते हैं, ऐसे सबके कल्याण करनेवाली तथा समस्त अभीष्टोंको पूर्ण करनेवाली देवीका मैं शरण ग्रहण करता हूँ, जिस देवीके मुखसे वेदोंका रहस्य उत्पन्न हुआ है। हे देवी गायत्री! तुम विश्वामित्र के शाप से मुक्त होओ।

वशिष्ठ शाप विमोचनका विनियोग।

ॐ वशिष्ठशापविमोचनमन्त्रस्य वशिष्ठऋषिः, विश्वोद्भवो गायत्रीच्छन्दः, वाशिष्ठानुग्रहीता, गायत्रीशक्तिर्देवता, वशिष्ठशाप-विमोचनार्थे जपे विनियोगः।

वशिष्ठ शापविमोचनविनियोगका अर्थ :—

ॐ वशिष्ठशापविमोचन मन्त्रके वशिष्ठजी ऋषि हैं, विश्वको उत्पन्न करनेवाला गायत्री छन्द है, वशिष्ठके द्वारा अनुग्रहीत गायत्री शक्ति ही देवता है। वशिष्ठशापविमोचनार्थ इस विनियोगको पढ़कर भूमि-पर जल छोड़े।

मन्त्रः—तत्त्वानि चाङ्गेष्वग्निचितो धियांसः ध्यायन्ति विष्णो-रायुधानि विभ्रमत्। जनानता सोपरमं च शाश्वत्। गायत्रीमासा-च्छुरनुत्तमं च धाम। ॐ गायत्रि त्वं वशिष्ठशापाद् विमुक्ता भव।

मन्त्र का अर्थ :—

अग्निके समान चमत्कृत बुद्धिमानजन देवी गायत्रीके अङ्गोंमें तत्त्वोंका ध्यान करते हैं, विष्णुके आयुधोंको धारण करती हुई लक्ष्मीके साथ निरन्तर जनोंको प्राप्त करती हुई गायत्रीको तथा परमधामको किया। हे गायत्री देवी! तुम वशिष्ठके शापसे मुक्त हो जाओ।

प्रार्थना—सोऽहमर्कमयं ज्योतिरर्कः ज्योतिरहं शिवः।
आत्मज्योतिरहं शुक्लं शुक्लं ज्योतिरसोऽहमाम्॥

देवी गायत्री अपनी विभूतिका वर्णन करती हुई कहती हैं कि मैं ही सूर्यमय ज्योति हूँ, मैं ही कल्याणप्रद सूर्य ज्योति हूँ, मैं ही शुद्ध-आत्मज्योति हूँ, शुद्ध ज्योति **"रसोवैसः"** के अनुसार रसस्वरूप ॐकारात्मक ब्रह्म मैं ही हूँ।

अहो विष्णुमहेशेशे! दिव्ये सिद्धिसरस्वति?। अजरे अमरे चैव दिव्ययोने? नमोस्तुते॥

ब्रह्मा तथा विष्णुका सञ्चालन करनेवाली, हे दिव्य सिद्धसरस्वती! हे अजर अमर दिव्ययोनिवाली देवी! आपको बार-बार नमस्कार है।

शुद्ध गायत्रीका ध्यान :—

यद्देवाऽसुरपूजितं परतरं सामर्थ्यतारात्मकं
पुन्नागाऽम्बुजपुष्प-नाग-वकुलैः केशैः शुकैरर्चितम्।
नित्यं ध्यानसमस्तदीप्तिकरणं कालाग्निरुद्दीपनं
तत्संहारकरं नमामि सततं पातालसंस्थं मुखम्॥

शुद्ध गायत्री ध्यानका अर्थ :—

जिसकी देवता तथा असुरगण पूजा करते हैं, जो श्रेष्ठसे भी श्रेष्ठतर है, जो सामर्थ्य तारानामक विद्याके साक्षात् स्वरूप है, जिनका ब्रह्मा-शिव तथा शुकादि मुनिगण पुन्नाग, कमलनाग, चम्पा तथा वकुल आदि पुष्पोंसे आर्चन करते है, जो नित्य ध्यान करनेवालोंको समुद्भासित करता है, कालाग्निके समान जिनका तेज प्रचण्ड है, ऐसे पातालमें स्थित तथा संहार करनेवाली देवी गायत्रीके मुखका मैं सतत नमन करता हूँ।

वर्णोंके द्वारा न्यास विधि :—

"ॐ **तत्पादाङ्गुलि पर्वभ्यां नमः**" इस मन्त्रभागको पढ़कर चरणस्थ सभी अङ्गुलियोंके पोरोंका स्पर्श करें।

"ॐ **सपादाङ्गुलिभ्यो नमः**" इस मन्त्रभागको पढ़कर सभी अङ्गुलियोंका स्पर्श करें।

"ॐ **विजङ्घाभ्यां नमः**" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों जङ्घाओंका स्पर्श करें।

"ॐ **तर्जानुभ्यां नमः**" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों जानुओंका स्पर्श करें।

"ॐ **व असभ्यां नमः**" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों ऊरुवोंका अर्थात् गोदका स्पर्श करें।

"ॐ **रे शिश्नाय नमः**" इस मन्त्रभागको पढ़कर लिङ्गका स्पर्श करें।

"ॐ **णि वृषणाभ्यां नमः**" इस मन्त्रभागको पढ़कर अण्डकोषोंका स्पर्श करें।

"ॐ **यं कट्यै नमः**" इस मन्त्रभागको पढ़कर कमरका स्पर्श करें।

"ॐ **भर्नाभ्यै नमः**" इस मन्त्रभागको पढ़कर नाभिका स्पर्श करें।

"ॐ गो उदराय नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर पेटका स्पर्श करें।

"ॐ दे स्तनाभ्यां नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों स्तनोंका स्पर्श करें।

"ॐ व उरसे नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर हृदयका स्पर्श करें।

"ॐ स्य कण्ठाय नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर कण्ठका स्पर्श करें।

"ॐ धी दन्तेभ्यो नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दाँतोंका स्पर्श करें।

"ॐ म तालुने नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर तालुका स्पर्श करें।

"ॐ धि नेत्राभ्यां नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों नेत्रोंका स्पर्श करें।

"ॐ यो भ्रूभ्यां नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों भौंहोंका स्पर्श करें।

"ॐ यो ललाटाय नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर मस्तकका स्पर्श करें।

"ॐ नः पूर्वामुखाय नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर पूर्वमुखका स्पर्श करें।

"ॐ प्र दक्षिणमुखाय नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दक्षिण मुख-का स्पर्श करें।

"ॐ चो पश्चिममुखाय नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर पश्चिम मुखका स्पर्श करें।

"ॐ द उत्तरमुखाय नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर उत्तरमुख-का स्पर्श करें।

"ॐ दयात् मूर्ध्ने नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर शिरका स्पर्श करें।

करन्यासः—

"ॐ तत्सवितुरङ्गुष्ठाभ्यां नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों हाथोंके अँगूठोंका स्पर्श करें।

"ॐ वरेण्यं तर्जनीभ्यां नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों हाथोंके तर्जनी अङ्गुलियोंका स्पर्श करें।

'ॐ भर्गो देवस्य मध्यमाभ्यां नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों हाथोंके मध्यमा अङ्गुलियोंका स्पर्श करें।

"ॐ धीमहि अनामिकाभ्यां नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों हाथोंको अनामिका अङ्गुलियोंका स्पर्श करें।

"ॐ धियो योनः कनिष्ठिकाभ्यां नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों हाथोंके कनिष्ठिका अङ्गुलियों का स्पर्श करें।

ॐ "प्रचोदयात् करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों हाथोंकी हथेलियों और पृष्ठ भागोंका स्पर्श करें।

देहन्यास :—

"ॐ भूः पादयोः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों पैरोंका स्पर्श करें।

"ॐ भुवः जान्वोः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों जानुवोंका स्पर्श करें।

"ॐ स्वः नाभौ" इस मन्त्रभागको पढ़कर नाभिका स्पर्श करें।

"ॐ महः हृदये" इस मन्त्रभागको पढ़कर हृदयका स्पर्श करें।

"ॐ जनः कण्ठे" इस मन्त्रभागको पढ़कर कण्ठभागका स्पर्श करें।

"ॐ तपः ललाटे" इस मन्त्रभागको पढ़कर मस्तकका स्पर्श करें।

"ॐ सत्यं मूर्ध्नि" इस मन्त्रभागको पढ़कर शिरका स्पर्श करें।

"ॐ तत पादयोः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों पैरोंका स्पर्श करें।

"ॐ सवितुर्जान्वोः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों जानुवोंका स्पर्श करें।

"ॐ वरेण्यं स्कन्धयोः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों स्कन्धोंका स्पर्श करें।

"ॐ भर्गो हृदये" इस मन्त्रभागको पढ़कर हृदयका स्पर्श करें।

"ॐ देवस्य कण्ठे" इस मन्त्रभागको पढ़कर कण्ठका स्पर्श करें।

"ॐ धीमहि वक्त्रे" इस मन्त्रभागको पढ़कर मुखका स्पर्श करें।

"ॐ धियो यो नेत्रे" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों नेत्रों का स्पर्श करें।

"ॐ नः मुखे" इस मन्त्रभागको पढ़कर मुखका स्पर्श करें।

"ॐ अस्त्राय फट्" इस मन्त्रभागको पढ़कर ताली बजा दें।

करन्यासः

"ॐ आपः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों हाथों के अंगूठों का स्पर्श करें।

"ॐ ज्योति रत्तर्जनीभ्यां नमः" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों हाथोंकी तर्जनी अङ्गुलियोंका स्पर्श करें।

"ॐ **रसो मध्यमाभ्यां नमः**" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों हाथों के मध्यमा अङ्गुलियोंका स्पर्श करें।

"ॐ **अमृतम् अनामिकाभ्यां नमः**" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों हाथोंके अनामिका अङ्गुलियों का स्पर्श करें।

"ॐ **ब्रह्म कनिष्ठिकाभ्यां नमः**" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों हाथों के कनिष्ठिका अङ्गुलियों का स्पर्श करें।

"ॐ **भूर्भुवः स्वरोम् करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः**" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों हाथोंकी हथेलियों और पृष्ठ भागोंका स्पर्श करें।

हृदयन्यासः—

"ॐ **अग्नये हृदयाय नमः**" इस मन्त्रभागको पढ़कर हृदय का स्पर्श करें।

"ॐ **वायवे शिरसे स्वाहा**" इस मन्त्रभागको पढ़कर शिरका स्पर्श करें।

"ॐ **सूर्याय शिखायै वषट्**" इस मन्त्रभागको पढ़कर शिखाका स्पर्श करें।

"ॐ **ब्रह्मणे कवचायहुम्**" इस मन्त्रभागको पढ़कर दोनों भुजाओं-का स्पर्श करें।

"ॐ **विष्णवे नेत्रत्रयाय वौषट्**" इस मन्त्रभागको पढ़कर नेत्रों-का स्पर्श करें।

"ॐ **रुद्राय अस्त्राय फट्**" इस मन्त्रभागको पढ़कर ताली बजावें।

ब्रह्मगायत्री मन्त्रः—

"ॐ **भूः** ॐ **भुवः** ॐ **स्वः** ॐ **महः** ॐ **जनः** ॐ **तपः** ॐ **सत्यं** ॐ **तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।** ॐ आपो ज्योति रसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम्।"

ब्रह्मगायत्रीमन्त्रका अर्थः—

"ॐ **भूः** ॐ **भुवः** ॐ **स्वः** ॐ **महः** ॐ **जनः**" ॐ तपः ॐ सत्यं ये सातों व्याहृतिके नामसे प्रसिद्ध हैं। हम उस सूर्यदेवके श्रेष्ठ तेज-का ध्यान करते हैं जो देव हमारी बुद्धिको परिमार्जित या प्रेरित करें। उस ब्रह्मगायत्रीके जल-तेज-रस-अमृत-ब्रह्म-भूः-भुवः-स्वः तथा ॐ ये नाम हैं।

गायत्री-जप विधिः

अथ वेदादिगीतायाः प्रसादजननं विधिम् ।
गायत्र्याः सम्प्रवक्ष्यामि धर्मा-ऽर्थ-काम-मोक्षदम् ॥ १ ॥

जिन गायत्री देवीका वेदादि शास्त्रोंमें गान किया गया है उस गायत्री देवीके धर्म-अर्थ-काम तथा मोक्षप्रद एवं प्रसन्नताजनक विधिका मैं वर्णन करता हूँ ॥ १ ॥

नित्य-नैमित्तिके काम्ये तृतीये तपवर्द्धने ।
गायत्र्यास्तु परं नास्ति इह लोके परत्र च ॥ २ ॥

नित्य-नैमित्तिक-काम्यकर्मोंमें तथा तपस्याके बढ़ानेमें इस लोक तथा परलोकमें गायत्रीमन्त्रसे बढ़कर कोई दूसरा श्रेष्ठ मन्त्र नहीं है ॥ २ ॥

मध्याह्ने मितभुङ् त्रिस्थानार्चनतत्परः ।
जपेल्लक्षत्रयं धीमान् नाऽन्यमानसकस्तु यः ॥ ३ ॥

मध्याह्नमें अल्पाहारी हो, मौन रहकर तीन बार स्नान करके पूजाकार्यमें तत्पर हो अनन्य मनसे बुद्धिमानको गायत्रीका तीन लक्ष जप करना चाहिये ॥ ३ ॥

कर्मभिर्यो जपेत् पश्चात् क्रमशः स्वेच्छयाऽपि वा ।
यावत्कार्यं न कुर्वीत न लोपेत् तावता व्रतम् ॥ ४ ॥

कर्मोंसे निवृत्त होकर जप करना चाहिये अथवा अपनी इच्छानुसार जप करना चाहिये, किन्तु ऐसा कार्य न करें कि जिससे गायत्रीजप-व्रतका लोप हो जाय ॥ ४ ॥

आदित्यस्योदये स्नात्वा सहस्रं प्रत्यहं जपेत् ।
आयुरारोग्यमैश्वर्यं धनं च लभते ध्रुवम् ॥ ५ ॥

सूर्योदय होनेपर स्नान करके प्रतिदिन गायत्रीमन्त्रका एक हजार जप करना चाहिये, इस प्रकार जप करनेसे निश्चित ही दीर्घायु-आरोग्यता-ऐश्वर्य और धनकी प्राप्ति होती है ॥ ५ ॥

त्रिरात्रोपोषितः सम्यग् घृतं हुत्वा सहस्रशः ।
सहस्रं लाभमाप्नोति हुत्वाऽग्नौ खदिरेन्धनम् ॥ ६ ॥

तीन रात्रि तक उपवासे रहकर विधि-विधानसे यदि गायत्रीमन्त्रके द्वारा घीसे एक हजार आहुति दी जाय अथवा खैरकी लकड़ीसे एक हजार आहुति करे तो आहुतिकर्त्ताको परमलाभ की प्राप्ति होती है ॥ ६ ॥

पालाशैः समिधैश्चैव घृताक्तानां हुताशने ।
सहस्रं लाभमाप्नोति राहु-सूर्य-समागमो ॥ ७ ॥

सूर्यग्रहणपर घीसे डूबे हुए पलाशकी लकड़ीसे अग्निमें गायत्री-मन्त्रने एक हजार आहुति दे तो आहुतिदाताको लाभ होता है ॥ ७ ॥

हुत्वा तु खदिरं वह्नौ घृताक्तं रक्तचन्दनम् ।
सहस्रहेममाप्नोति राहु-चन्द्रसमागमे ॥ ८ ॥

चन्द्रग्रहणके समय घीसे डूबे हुए खैरकी लकड़ी या लालचन्दनसे गायत्रीमन्त्र द्वारा अग्निमें एक हजार आहुति दे तो हवनकर्ताको सुवर्णकी प्राप्ति होती है ॥ ८ ॥

रक्तचन्दनमिश्रं तु सघृतं हव्यवाहने ।
हुत्वा गोमयमाप्नोति सहस्रं गोमयं द्विजः ॥ ९ ॥

रक्तचन्दन और घीसेयुक्तकण्डासे अग्निमें गायत्रीमन्त्रके द्वारा जो भी द्विज आहुति देता है तो उस द्विजको गोमय रत्नकी प्राप्ति होती है ॥ ९ ॥

जाती-चम्पक-राजार्क-कुसुमानां सहस्रशः ।
हुत्वावस्त्रमवाप्नोति घृताक्तानां हुताशने ॥ १० ॥

घृताक्त चमेली, चम्पा और मदारके पुष्पोंसे अग्निमें गायत्री-मन्त्रके द्वारा एक हजार आहुति करनेपर दिव्य वस्त्रकी प्राप्ति होती है ॥ १० ॥

सूर्यमण्डलविम्बे च हुत्वा तोयं सहस्रशः ।
सहस्रं प्राप्नुयाद्धेमं रौप्यमिन्दुभये हुते ॥ ११ ॥

गायत्रीमन्त्रके द्वारा भगवान् सूर्यको एक हजार अर्घ्य देनेपर सुवर्णकी प्राप्ति होती है। तथा चन्द्रमाको भी गायत्रीमन्त्रसे एक हजार अर्घ्य देनेपर रजत (चाँदी) की प्राप्ति होती है ॥ ११ ॥

अलक्ष्मीपापसंयुक्ते मलव्याधिविनाशके ।
मुच्येत सहस्रजाप्येन स्नायाद् यस्तु जलेन वै ॥ १२ ॥

दारिद्रय और पाप एक साथ होनेपर तथा पाप और व्याधिके द्वारा विनाश उत्पन्न होनेपर यदि एक हजार गायत्रीमन्त्रसे पवित्र जलमें स्नान करे तो स्नान करनेवाला उपर्युक्त दोषोंसे मुक्त हो सकता है ॥ १२ ॥

गोघृतेन सहस्रेण लोध्रेण जुहुयाद् यदि ।
चौरा-ऽग्नि मारुतोत्थानि भयानि न भवन्ति वै ॥ १३ ॥

गायत्रीमन्त्रके द्वारा घृतयुक्त लोध्र (एक प्रकारका लाल पुष्प) पुष्पोंसे यदि अग्निमें आहुति दी जाय तो होताकी चोर-अग्नि तथा बवण्डर आदिसे उत्पन्न होनेवाले भय नहीं होते ॥ १३ ॥

क्षीराहारो जपेल्लक्षमपमृत्युमपोहति ।
घृताशी प्राप्नुयान्मेधां बहुविज्ञान-सञ्चयाम् ॥ १४ ॥

दूध पीकर एक लाख गायत्रीमन्त्रके जापककी अपमृत्यु (अकाल मृत्यु) नहीं होती अर्थात् उसकी अकालमृत्यु टल जाती है तथा घृत-पान करनेवाले जापक यदि एक लाख गायत्रीमन्त्रका जप करे तो, उसको ज्ञान-विज्ञानसे पूर्ण मेधाकी प्राप्ति होती है ॥ १४ ॥

हुत्वा वेतस पत्राणि घृताक्तानि हुताशने ।
लक्षाधिपस्य पदवीं सार्वभौमं न संशयः ॥ १५ ॥

यदि घृतचूर्ण वेतसके पत्तोंको गायत्रीमन्त्रद्वारा अग्निमें एक लक्ष आहुति दी जाय तो सार्वभौमाधिपत्य पदकी प्राप्तिमें कोई सन्देह नहीं अर्थात् होताको सार्वभौमाधिपत्य पदकी प्राप्ति अवश्य होती है ॥१५॥

लक्षेण भस्महोमस्य हुत्वा ह्युत्तिष्ठते जलात् ।
आदित्याभिमुखं स्थित्वा नाभिमात्रजलेशुचौ ॥ १६ ॥
गर्भपातादि-प्रदराश्चऽन्ये स्त्रीणां महारुजः ।
नाशमेष्यन्ति ते सर्वे मृतवत्सादि-दुःखदाः ॥ १७ ॥

नाभिमात्र पवित्र जलमें सूर्याभिमुख होकर गायत्रीमन्त्र द्वारा एक लाख भस्मकी आहुति दी जाय तथा उतने ही बार सूर्योपस्थान किये जायँ तो स्त्रियोंके गर्भपात-प्रदर तथा दुःखदायी मृतवत्सादि महारोग नष्ट हो जाते हैं । जिसके मृत सन्तान उत्पन्न हो उस स्त्रीको मृतवत्सा कहा जाता है ॥ १६–१७ ॥

तिलानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने ।
सर्वकामसमृद्धात्मा परं स्थानमवाप्नुयात् ॥ १८ ॥

घृतसे परिपूर्ण तिलोंकी एक लक्ष आहुति गायत्रीमन्त्रके द्वारा अग्निमें करने से होता सभी कामनाओंसे परिपूर्ण होकर श्रेष्ठ स्थान-को प्राप्त करता है ॥ १८ ॥

यवानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने ।
सर्वकामसमृद्धात्मा परां सिद्धिमवाप्नुयात् ॥ १९ ॥

घृतसे परिपूर्ण यवोंकी एक लाख आहुति गायत्रीमन्त्रद्वारा अग्नि-में करनेसे होता समस्त कामनाओंसे पूर्ण होकर श्रेष्ठ सिद्धिको प्राप्त करता है ॥ १९ ॥

घृतस्याहुति लक्षेण सर्वान् कामानवाप्नुयात् ।
पञ्चगव्याशनो लक्षं जपेज्जातिस्मृतिर्भवेत् ॥ २० ॥

गायत्रीमन्त्रद्वारा घृतसे एक लक्ष आहुति देनेसे समस्त कामनाओं-की प्राप्ति होती है तथा पञ्चगव्य पान करके एक लक्ष गायत्रीजप करनेसे जातिस्मरणकी प्राप्ति होती है। गोघृत-गोदुग्ध-गोदधि-गोमूत्र तथा गोमय इन पाँचोंके सम्मिश्रणको पञ्चगव्य कहते हैं ॥ २० ॥

तदेव ह्यनले हुत्वा प्राप्नोति बहुसाधनम् ।
अन्नादि-हवनान्नित्यमन्नाद्यं च भवेत् सदा ॥ २१ ॥

गायत्रीमन्त्रद्वारा अग्निमें पञ्चगव्यसे एक लक्ष आहुति देनेसे बहुसाधनताकी प्राप्ति होती है तथा अन्नादिसे एक लक्ष आहुति करने-से होताका घर धान्यादिसे हमेशा पूर्ण रहता है ॥ २१ ॥

जुहुयात् सर्वसाध्यानामाहुत्यायुतसंख्यया ।
रक्तसिद्धार्थकान् हुत्वा सर्वान् साधयते रिपून ॥ २२ ॥

यदि लाल सरसोंसे गायत्रीमन्त्रके द्वारा दस हजार आहुति दी जाय तो उसे समस्त साध्य वस्तुओंकी प्राप्ति होती है साथ ही सभी शत्रु उसके वशवर्ती हो जाते हैं ॥ २२ ॥

लवणं मधुसंयुक्तं हुत्वा सर्ववशी भवेत् ।
हुत्वा तु करवीराणि रक्तानि ज्वालयेज्ज्वरम् ॥ २३ ॥

मधुसिक्त लवणोंसे गायत्रीमन्त्रद्वारा यदि दस हजार आहुति दी जाय तो होताके सभी वशवर्ती हो जाते हैं तथा लाल कनेलके पुष्पोंसे उक्त संख्यामें आहुति दिये जानेपर समस्त ज्वर जलकर भस्म हो जाते हैं ॥ २३ ॥

हुत्वा भिल्लातकं तैलं देशादेव प्रचालयेत् ।
हुत्वा तु निम्बपत्राणि विद्वेषशान्तयेनृणाम् ॥ २४ ॥

बहेड़ाके तेलसे गायत्रीमन्त्रद्वारा दस हजार आहुति देनेसे शत्रुको देशान्तर गमन हो जाता है तथा निम्बपत्रोंसे उतनी ही आहुति दिये जानेपर मनुष्योंके समस्त कलह शान्त हो जाते हैं ॥ २४ ॥

रक्तानां तण्डुलानां च घृताक्तानां हुताशने ।
हुत्वा बलमवाप्नोति शत्रुभिर्न स जायते ॥ २५ ॥

घृतसे परिपूर्ण लाल रंगके साठीधानके चावलोंकी आहुति गायत्री-मन्त्रद्वारा अग्निमें करने पर बल की प्राप्ति होती है तथा होताको शत्रु जीत नहीं सकते ॥ २५ ॥

प्रत्यानयनसिद्धयर्थं मधु-सर्पिः-समन्वितम्।
गवां क्षीरं प्रदीप्तेऽग्नौजुह्वतस्तत्प्रशाम्यति ॥ २६ ॥

घी और मधुमिश्रित गौके दुग्धकी आहुति प्रज्ज्वलित अग्निमें गायत्रीमन्त्रद्वारा दिये जानेपर खोया हुआ व्यक्ति शीघ्र घर चला आता है ॥ २६ ॥

ब्रह्मचारी जिताहारो यः सहस्रत्रयं जपेत्।
संवत्सरेणलभते धनैश्वर्यं न संशयः ॥ २७ ॥

जो व्यक्ति ब्रह्मचर्यके साथ संयत आहार करके एक वर्ष तक प्रतिदिन तीन हजार गायत्रीका जप करता है तो उसको धन और ऐश्वर्यको प्राप्ति होती है इसमें कोई सन्देह नहीं ॥ २७ ॥

शमी-बिल्व-पलाशानामर्कस्य तु विशेषतः।
पुष्पाणां समिधश्चैव हुत्वा हेममवाप्नुयात् ॥ २८ ॥

शमी-बेल-पलाश तथा मदारके फूलों एवं लकड़ियोंसे गायत्रीमन्त्र-द्वारा आहुति करनेपर सुवर्णकी प्राप्ति होती है ॥ २८ ॥

आब्रह्मत्र्यम्बकादी यस्यायतनमाश्रितः।
जपेल्लक्षंनिराहारः स तस्य वरदो भवेत् ॥ २९ ॥

ब्रह्मा-विष्णु तथा महेश जिस किसीके मन्दिरमें निराहारपूर्वक यदि कोई एक लाख गायत्रीका जप करता है तो वह जापक वर देने-वाला हो जाता है ॥ २९ ॥

बिल्वानां लक्षहोमेनघृताक्तानां हुताशने।
परां श्रियमवाप्नोति यदि न भ्रूणहा भवेत् ॥ ३० ॥

भ्रूणहत्या करनेवाला न होकर यदि वह घृतसे परिपूर्ण बिल्वोंकी आहुति अग्निमें गायत्रीमन्त्रके द्वारा एक लाखकी संख्यामें करता है तो उत्कृष्ट लक्ष्मीको प्राप्त करता है ॥ ३० ॥

पद्मानांलक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने।
प्राप्नोति राज्यमखिलं सुसम्पन्नमकण्टकम् ॥ ३१ ॥

घृताक्त कमलपुष्पोंके द्वारा अग्निमें एक लाख आहुति करनेपर होताको निष्कण्टक तथा धन-धान्यादिसे पूर्ण राज्यकी प्राप्ति होती है ॥ ३१ ॥

पञ्चविंशतिलक्षेण दधि-क्षीरं हुताशने।
स्वदेहे सिद्धयते जन्तुः कौशिकस्य मतं तथा ॥ ३२ ॥

दधिमिश्रित दूबकी पचीस लाख आहुति अग्निमें गायत्रीमन्त्रके द्वारा करनेपर विश्वामित्रजीके मतसे व्यक्ति अपने इसी शरीरमें सिद्धिको प्राप्त कर लेता है ॥ ३२ ॥

एकाहं पञ्चगव्याशी एकाहं मारुताशनः ।
एकाहं च द्विजोन्नाशी गायत्रीजप उच्यते ॥ ३३ ॥

एक दिन पञ्चगव्य पीकरके एक दिन वायुभक्षण करके तथा एक दिन द्विजान्नका भक्षणकर यदि जप किया जाय तो उसे ही गायत्रीजप कहा जाता है ॥ ३३ ॥

महारोगा विनश्यन्ति लक्षजप्यानुभावतः ।
शतेन गायत्र्याः स्नात्वाशतमर्न्तर्जले जपेत् ॥ ३४ ॥

सावधनीपूर्वक एक लक्ष गायत्रीमन्त्रके जपसे महान् रोग भी नष्ट हो जाते हैं, एकसौ गायत्रीके मन्त्रसे अभिमन्त्रित जलमें स्नान करके जलके भीतर गायत्रीमन्त्रका एक सौ बार जप करना चाहिये साथ ही गायत्रीके एकसौसे अभिमन्त्रित जलको पीकर समस्त पापोंसे छूट जाता है अर्थात् उपर्युक्त कार्य करनेवालोंको कोई पाप प्रभावित नहीं कर सकते ॥ ३४ ॥

गोघ्नः पितृघ्न-मातृघ्नौ ब्रह्मवगुरुतल्पगः ।
स्वर्णहारी तैलहारी यस्तु विप्रः क्षुरां पिवेत् ॥ ३५ ॥
चन्दनःद्वयसंयुक्तं कर्पूरं तण्डुलं यवम् ।
लवङ्गं सुफलं चाज्यं सिता चाम्रस्य दारुकौ ॥ ३६ ॥

यदि विप्र, गौ-पिता-माता तथा ब्राह्मणकी हत्या करनेवाला हो, गुरुपत्नीगामी हो, सोना तथा तेलका अपहरण करनेवाला हो साथ ही मद्यपान करनेवाला भी हो तो भी वह यदि श्वेत तथा रक्तचन्दनसे युक्त कपूर-चावल-यव-लवङ्ग-जायफल-मिश्री-घी तथा आमकी लकड़ियोंसे गायत्रीमन्त्रद्वारा एक लक्ष आहुति प्रदान करता है तो उपर्युक्त सभी दोषोंसे मुक्त हो जाता है ॥ ३५–३६ ॥

अन्यं न्यूनविधिः प्रोक्तो गायत्र्याः प्रीतिकारकः ।
एवं कृते महासौख्यं प्राप्नोति साधको ध्रुवम् ॥ ३७ ॥

उपर्युक्त विधानोंके अतिरिक्त गायत्रीके प्रीतिकारक अन्य छोटे-छोटे विधान कहे गये हैं; साधक इन साधनों को करनेसे निश्चितही महासौख्यको प्राप्त करता है ॥ ३७ ॥

अन्नाज्यनोजनं हुत्वा कृत्वा वा कर्मगर्हितम् ।
न सीदेत् प्रतिगृह्णानो महीमपि स-सागराम् ॥ ३८ ॥

कुत्सित कर्म करनेके बाद प्रायश्चित्तार्थ यदि घृतयुक्त भातकी एक लक्ष आहुति गायत्रीमन्त्रके द्वारा करता है तो वह सागरपर्यन्त समस्त पृथ्वीको दान लेकर भी प्रायश्चित्ती नहीं होता ॥ ३८ ॥

ये चाऽस्य उत्थिता लोके ग्रहाः सूर्योदयो भुवि ।
ते यान्ति सौम्यतां सर्वे शिवे इति न संशयः ॥ ३९ ॥

हे देवी पार्वती ! गायत्रीजापकके भूमिपर यदि सूर्यादिग्रह विपरीत भी हों तो भी वे ग्रह गायत्रीजपके प्रभावसे सौम्यत्त्वको प्राप्त होते हैं इसमें सन्देह की कोई बात नहीं ॥ ३९ ॥

इति गायत्री पटलम् ।

गायत्री-सहस्रनाम-स्तोत्रम्

कैलासे सुखमासीनं तुषारकर-शेखरम् ।
बद्धाञ्जलिर्नमस्कृत्याऽभ्यर्च्य पृच्छति पार्वती ॥ १ ॥

कैलास पर्वत पर सुखपूर्वक बैठे हुए चन्द्रशेखर भगवान् श्रीशंकर-को नमस्कारकर और उनकी पूजाकर करबद्ध हो देवी पार्वती उनसे प्रश्न करती हैं कि :— ॥ १ ॥

किं विन्यस्तं त्वया देव ! स्वशरीरे निरन्तरम् ।
कथमेतादृशी कान्तिः कथं तेऽष्टौ समृद्धयः ॥ २ ॥

हे देव ! आप अपने शरीरपर निरन्तर क्या स्थापित किये हुए हैं, आपकी इस प्रकार दिव्य कान्ति क्यों है तथा आपके पास अष्ट-समृद्धियाँ क्यों विराजमान रहती हैं ? ॥ २ ॥

सर्वतत्त्व प्रभुत्वं च कथं कथमाश्रयेत् ।
कृपया ब्रूहि देवेश ! प्रसन्नोऽसि यदि प्रभो ॥ ३ ॥

सर्व तत्त्वोंका प्रभुत्व आपको कैसे प्राप्त हुआ ? हे देवेश ! हे प्रभो ! यदि आप प्रसन्न हों तो कृपाकर मुझसे कहें ॥ ३ ॥

भगवन् ! विविधा विद्याः श्रोतुमिच्छामि ते प्रभो ।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि गायत्र्याश्च महोत्सवम् ॥ ४ ॥

हे भगवन् ! हे प्रभो ! मैं आपसे विविध विद्याओंको सुनना चाहती हूँ, सम्प्रति गायत्री देवीका महोत्सव सुनना चाहती हूँ ॥ ४ ॥

नाम्ना सहस्रं देवेश ! कृपया वक्तुमर्हसि ।
यद्यहं प्रेयसी भार्या यद्यहं प्राणवल्लभा ॥ ५ ॥

हे देवेश ! यदि आप मुझे अपनी प्रेयसी भार्या और प्राणवल्लभा मानते हैं तो आप गायत्री देवीकी सहस्रनामावलीका कृपाकर कथन करें ॥ ५ ॥

इति श्रुत्वा वचो देव्याः प्रसन्नः प्रभुरीश्वरः ।
श्रूयतामिति चाभाष्य जगाद जगदम्बिका ॥ ६ ॥

इस प्रकार देवी पार्वतीके प्रश्नात्मक वचनको सुनकर प्रसन्न हो भगवान् श्रीशंकरने :—पार्वतीजीसे सुनो, ऐसा कहा ॥ ६ ॥

शृणु देवि ! रहस्य मे कस्याप्यग्रे न चोदितम् ।
गोपितं सर्वतन्त्रेषु सिद्धानां स्तोत्रमुत्तमम् ॥ ७ ॥

इस रहस्यात्मक सहस्रनामावलीको मैंने आजतक किसीसे नहीं कहा, हे देवि ! सुनो :—इस उत्तम स्तोत्रको सिद्धोंने सभी तन्त्रोंमें गुप्त रखा है ॥ ७ ॥

सर्वसौभाग्यजनकं सर्व-सम्पत्ति-दायकम् ।
सर्ववश्यकरं लोके सर्वप्रत्यूह-नाशनम् ॥ ८ ॥
सर्ववादि-मुखस्तम्भि निग्रहा-ऽनुग्रह-क्षमम् ।
त्वत्प्रीत्या कथयिष्यामि सुगोप्यमपि दुर्लभम् ॥ ९ ॥

यह स्तोत्र सभी सौभाग्योंका जनक, समस्त सम्पत्तिको देनेंवाला लोकमें सभीको अपने वशमें करनेवाला तथा अनेक विघ्न-बाधाओंका नाशक है। सभी वादियोंके मुखको मुद्रग करनेवाला निग्रह तथा अनुग्रह करनेमें समर्थ है तुमपर अतिशय प्रीति होनेके कारण दुर्लभ और अत्यन्त गोपनीय होनेपर भी इस स्तोत्रको मैं तुमसे कहूँगा ॥ ८–९ ॥

सर्वपापक्षयकरं सर्वज्ञानमयं शिवम् ।
परायणानां परमा परब्रह्मस्वरूपिणी ॥ १० ॥
परा च परमेशानी परब्रह्मात्मिका मता ।
सा देवी च वरारोहा चेतसा चिन्तयाम्यहम् ॥ ११ ॥

यह स्तोत्र समस्त पापोंका नाशक, सर्वज्ञानमय तथा कल्याण-कारक है, देवी गायत्री शरणागतोंकी रक्षिका, परब्रह्मस्वरूपिणी, परा, परमा, ईशानी, परब्रह्मात्मिका, वरारोहा आदि अनेक नामोंसे अभिहित होती है, मैं उनका चितसे चिन्तन करता हूँ ॥ १०–११ ॥

ऐश्वर्यं च दशाप्राप्तिर्वरदादित्वमेव च ।
गायत्र्या दिव्यसाहस्रं स्वप्ने चाप्तं मयाऽपि यत् ॥ १२ ॥

ऐश्वर्यप्रद, श्रेष्ठदशाको करनेवाला, वरदान देनेके गुणोंसे सम्पन्न गायत्री देवीकी इस दिव्य सहस्रनामावलीको मैंने स्वप्नमें प्राप्त किया था ॥ १२ ॥

ऋषिरस्य समाख्यातो महादेवो महेश्वरः ।
देवता देवजननी छन्दः सामादि कीर्तितम् ॥ १३ ॥

इस स्तोत्रके महेश्वर महादेव ऋषि हैं वेद जननी गायत्री देवता हैं, सामादि छन्द हैं ॥ १३ ॥

धर्माऽर्थ-काम-मोक्षार्थे विनियोग उदाहृतः ।
सर्वभूतान्तरीं ध्यात्वा पद्मासनगतां शुचि ॥ १४ ॥

ततः सहस्रनामेदं पठितव्यं मुमुक्षुभिः ।
सर्वकार्यकरं पुण्यं महापातकनाशकम् ॥ १५ ॥

धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष इन पुरुषार्थ चतुष्टयकी प्राप्तिके लिये इसका विनियोग कहा गया है समस्त प्राणियोंके हृदयमें विराजमान पद्मासना देवीका पवित्रताके साथ ध्यान करके समस्त कार्योंको पूर्ण करनेवाली पवित्र तथा समस्त पापोंकी नाशक गायत्री देवीकी सहस्रनामावलीका पाठ मुमुक्षुओंको करना चाहिए ॥ १४–१५ ॥

गायत्री-सहस्रनामावलि प्रारम्भः

ॐ तत्काररूपा तद्रूपा तत्पदार्थस्वरूपिणी ।
तपः स्वाध्याय-निरता तपस्वी वाग्विदांवरा ॥ १ ॥

१ ॐ २ तत्काररूपा ३ तद्रूपा ४ तत्पदार्थस्वरूपिणी ५ तपःस्वाध्याय-निरता ६ तपस्वी ७ वाग्विदांवरा ॥ १ ॥

तत्कीर्तिगुणसम्पन्ना तथ्यवादी तपोनिधिः ।
तत्पदेशानुसम्बन्धा तपोलोकनिवासिनी ॥ २ ॥

८ तत्कीर्तिगुण सम्पन्ना ९ तथ्यवादी १० तपोनिधि ११ तत्पदेशानु-सम्बन्धा १२ तपोलोकनिवासिनी ॥ २ ॥

तरुणादित्यसङ्काशा तप्तकाञ्चनभूषणा ।
तमोपहारिणी तन्त्री तन्निपात निवारिणी ॥ ३ ॥

१३ तरुणादित्यसङ्काशा १४ तप्तकाञ्चनभूषणा १५ तमोपहारिणी १६ तन्त्री १७ तन्निपात निवारिणी ॥ ३ ॥

तलादि भुवनान्तःस्था तारिणीताररूपिणी ।
तर्करूपित-कोषादि-तर्कशास्त्र-विदारिणी ॥ ४ ॥

१८ तलादि भुवनान्तः स्था १९ तारिणी २० ताररूपिणी २१ तर्क-रुपितकोषादि-तर्कशास्त्रविदारिणी ॥ ४ ॥

तर्कवादिमुखास्तम्भा राज्ञां च परिपालिनी ।
तन्त्रसारा तन्त्रमाता तन्त्रमार्ग-प्रदर्शिनी ॥ ५ ॥

२२ तर्कवादिमुखास्तम्भा २३ राज्ञांपरिपालिनी २४ तन्त्रसारा २५ तन्त्रमाता २६ तन्त्रमार्गप्रदर्शिनी ॥ ५ ॥

तन्त्रीतन्त्रविधानज्ञा तन्त्रस्था तन्त्रसाक्षिणी ।
तदेकध्यान-निरता तत्त्वज्ञान-प्रबोधिनी ॥ ६ ॥

२७ तन्त्री २८ तन्त्रविधानज्ञा २९ तन्त्रस्था ३० तन्त्रसाक्षिणी ३१ तदेकध्याननिरता ३२ तत्त्वज्ञानप्रबोधिनी ॥ ६ ॥

तन्नाममन्त्रसुप्रीता तपस्विजन सेविता।
ॐकाररूपा सावित्री सर्वरूपा सनातनी ॥ ७ ॥

३३ तन्नाममन्त्रसुप्रीता ३४ तपस्विजनसेविता ३५ ओंकाररूपा ३६ सावित्री ३७ सर्वरूपा ३८ सनातनी ॥ ७ ॥

संसारदुःख-शमनी सर्वयागफलप्रदा ॥ ८ ॥

३९ संसारदु:खशमनी ४० सर्वयागफलप्रदा ॥ ८ ॥

सफला सत्यसङ्कल्पा सत्या सत्यप्रदायिनी।
सन्तोषजननी सारा सत्यलोकनिवासिनी ॥ ९ ॥

४१ सफला ४२ सत्यसङ्कल्पा ४३ सत्या ४४ सत्यप्रदायिनी ४५ सन्तोषजननी ४६ सारा ४७ सत्यलोकनिवासिनी ॥ ९ ॥

समुद्रतनया-ऽऽराध्या सामगानप्रिया सती।
समाना सामिधेनी च समस्त-सुरसेविता ॥ १० ॥

४८ समुद्रतनया ४९ आराध्या ५० सामगानप्रिया ५१ सती ५२ समाना ५३ सामिधेनी ५४ समस्तसुरसेविता ॥ १० ॥

सर्वसम्पत्तिजननी सम्पदा सिन्धुसेविता।
सर्वोत्तुङ्गा तुङ्गहीना सद्गुणा सकलेष्टदा ॥ ११ ॥

५५ सर्वसम्पत्तिजननी ५६ सम्पदा ५७ सिन्धुसेविता ५८ सर्वोतुङ्गा ५९ तुङ्गहीना ६० सद्गुणा ६१ सकलेष्टदा ॥ ११ ॥

सनकादिमुनिर्ध्येया समानाधिकवर्जिता ।
साध्या सिद्धा सुधा वासा सिद्धिः साध्यप्रदायिनी ॥ १२ ॥

६२ सनकादिमुनिर्ध्येया ६३ समानाधिकवर्जिता ६४ साध्या ६५ सिद्धा ६६ सुधा ६७ वासा ६८ सिद्धिः ६९ साध्यप्रदायिनी ॥ १२ ॥

सम्यगाराध्यनिलया समुत्तीर्णा सदाशिवा।
सर्ववेदान्तनिलया सर्वशास्त्रार्थवादिनी ॥ १३ ॥

७० सम्यगाराध्यनिलया ७१ समुत्तीर्णा ७२ सदाशिवा ७३ सर्ववेदान्तनिलया ७४ सर्वशास्त्रार्थवादिनी ॥ १३ ॥

सहस्रदलपद्मस्था सर्वज्ञासर्वतोमुखी ।
समया समयाचारा सत्या षड्ग्रन्थिभेदिनी ॥ १४ ॥

७५ सहस्रदलपद्मस्था ७६ सर्वज्ञा ७७ सर्वतोमुखी ७८ समया ७९ समयाचारा ८० सत्या ८१ षड्ग्रन्थिभेदिनी ॥ १४ ॥

सप्तकोटि-महामन्त्र-माता सर्वप्रदायिनी ।
सगुणा सम्भ्रमा साक्षी सर्वचैतन्यरूपिणी ॥ १५ ॥

८२ सप्तकोटिमहामन्त्रमाता ८३ सर्वप्रदायिनी ८४ सगुणा ८५ सम्भ्रमा ८६ साक्षी ८७ सर्वचैतन्यरूपिणी ॥ १५ ॥

सत्कीर्तिः सात्त्विकी साध्वी सच्चिदानन्दरूपिणी।
सङ्कल्परूपिणी सन्ध्या शालग्रामनिवासिनी ॥ १६ ॥

८८ सत्कीर्तिः ८९ सात्त्विकी ९० साध्वी ९१ सच्चिदानन्दरूपिणी ९२ सङ्कल्परूपिणी ९३ सन्ध्या ९४ शालग्रामनिवासिनी ॥ १६ ॥

सर्वोपाधिविनिर्मुक्ता सत्यज्ञान-प्रबोधिनी।
विकाररूपा विप्रश्री-र्विप्राराधन-तत्परा ॥ १७ ॥

९५ सर्वोपाधिविनिर्मुक्ता ९६ सत्यज्ञानप्रबोधिनी ९७ विकाररूपा ९८ विप्रश्रीः ९९ विप्राराधनतत्परा ॥ १७ ॥

विप्रिणी विप्रकल्याणी विप्रवाक्यस्वरूपिणी।
विप्रकैवल्यशयनी विप्री विप्रप्रसादिनी ॥ १८ ॥

१०० विप्रिणी १०१ विप्रकल्याणी १०२ विप्रवाक्यस्वरूपिणी १०३ विप्रकैवल्यशयनी १०४ विप्री १०५ विप्रप्रसादिनी ॥ १८ ॥

विप्रमन्दिरमध्यस्था विप्रवादविनोदिनी।
विप्रोपाधिविनिर्मुक्ता विप्रहत्याविमोचिनी ॥ १९ ॥

१०६ विप्रमन्दिरमध्यस्था १०७ विप्रवादविनोदिनी १०८ विप्रोपाधिविनिर्मुक्ता १०९ विप्रहत्याविमोचिनी ॥ १९ ॥

विप्रत्राता विप्रगोत्रा विप्रगोत्रविवर्धिनी।
विप्रभोजनसन्तुष्टा विष्णुरूपा विनोदिनी ॥ २० ॥

११० विप्रत्राता १११ विप्रगोत्रा ११२ विप्रगोत्रविवर्धिनी ११३ विप्रभोजनसन्तुष्टा ११४ विष्णुरूपा ११५ विनोदिनी ॥ २० ॥

विष्णुमाया विष्णुवन्द्या विष्णुगर्भा विचित्रिणी।
वैष्णवी विष्णुभगिनी विष्णुमाया-विलासिनी ॥ २१ ॥

११६ विष्णुमाया ११७ विष्णुवन्द्या ११८ विष्णुगर्भा ११९ विचित्रिणी १२० वैष्णवी १२१ विष्णुभगिनी १२२ विष्णुमाया-विलासिनी ॥ २१ ॥

विकाररहिता वन्द्या विज्ञानघनरूपिणी।
विश्वसाक्षी विश्वयोनि-र्विश्वामित्र-प्रसादिनी ॥ २२ ॥

१२३ विकाररहिता १२४ वन्द्या १२५ विज्ञानघनरूपिणी १२६ विश्वसाक्षी १२७ विश्वयोनिः १२८ विश्वामित्रप्रसादिनी ॥ २२ ॥

विबुधा विष्णुसङ्कल्पा विकल्पा विश्वसाक्षिणी।
विष्णुचैतन्य-निलया विष्णुस्था विश्ववादिनी ॥ २३ ॥

१२९ विबुधा १३० विष्णुसङ्कल्पा १३१ विकल्पा १३२ विश्व-साक्षिणी १३३ विष्णुचैतन्यनिलया १३४ विष्णुस्था १३५ विश्व-वादिनी ॥ २३ ॥

विवेकी विविधानन्दी विजया विश्वमोहिनी ।
विद्याधरी विद्यानज्ञा विबुधार्थ-स्वरूपिणी ॥ २४ ॥

१३६ विवेकी १३७ विविधानन्दी १३८ विजया १३९ विश्वमोहिनी १४० विद्याधरी १४१ विधानज्ञा १४२ विबुधार्थ-स्वरूपिणी ॥ २४ ॥

विरूपाक्षी विराड्रूपा विक्रमा विश्वमङ्गला ।
विश्वम्भरा समाराध्या विश्वभ्रमणकारिणी ॥ २५ ॥

१४३ विरूपाक्षी १४४ विराड्रूपा १४५ विक्रमा १४६ विश्व-मङ्गला १४७ विश्वम्भरा १४८ समाराध्या १४९ विश्वभ्रमण-कारिणी ॥ २५ ॥

विनायकी विनोदस्था वीरगोष्ठीविवर्द्धिनी ।
विवाहरहिता वन्द्या विन्ध्याचलनिवासिनी ।
विद्या विद्याकरी वेद्या वैद्यविद्याप्रबोधिनी ॥ २६ ॥

१५० विनायकी १५१ विनोदस्था १५२ वीरगोष्ठीविवर्द्धिनी १५३ विवाहरहिता १५४ वन्द्या १५५ विन्ध्याचलनिवासिनी १५६ विद्या १५७ विद्याकरी १५८ वेद्या १५९ वैद्यविद्याप्रबोधिनी ॥ २६ ॥

विमला विभवा विद्या किङ्कस्था किङ्कसाक्षिणी ॥ २७ ॥

१६० विमला १६१ विभवा १६२ विद्या १६३ किङ्कस्था १६४ किङ्कसाक्षिणी ॥ २७ ॥

वीरमध्या वरारोहा वितन्त्रा विश्वनायिका ।
वीरहत्याप्रशमिनी विनम्रजनपावनी ॥ २८ ॥

१६५ वीरमध्या १६६ वरारोहा १६७ वितन्त्रा १६८ विश्वनायिका १६९ वीरहत्याप्रशमिनी १७० विनम्रजनपावनी ॥ २८ ॥

वीरधा विविधाकारा विरोधजनवादिनी ।
तुकारूपा तुतुर्यश्रीः तुलसीवन-वासिनी ॥ २९ ॥

१७१ वीरधा १७२ विविधाकारा १७३ विरोधजनवादिनी १७४ तुकारूपा १७५ तुतुर्यश्रीः १७६ तुलसीवनवासिनी ॥ २९ ॥

तुलस्या मातुला तुल्या तुल्यगोत्रा तुलेश्वरी ।
तुरङ्गी तुरगारूढा तुरङ्गरथमोदिनी ॥ ३० ॥

१७७ तुलस्या १७८ मातुला १७९ तुल्या १८० तुल्यगोत्रा १८१ तुलेश्वरी १८२ तुरङ्गी १८३ तुरगारूढा १८४ तुरङ्गरथमोदिनी ॥ ३० ॥

तुरङ्गरदना मोहा तुलादानफलप्रदा।
तुलामाघस्नानतुष्टा तुष्टि-पुष्टि-प्रदायिनी ॥ ३१ ॥

१८५ तुरङ्गरदना १८६ मोहा १८७ तुलादानफलप्रदा १८८ तुला-माघस्नानतुष्टा १८९ तुष्टि-पुष्टि-प्रदायिनी ॥ ३१ ॥

तुरङ्गमप्रसन्तुष्टा तुलिता तुल्यमध्यगा।
तुङ्गोत्तुङ्ग तुङ्गकुचा तुहिनाचलसंस्थिता ॥ ३२ ॥

१९० तुरङ्गमप्रसन्तुष्टा १९१ तुलिता १९२ तुल्यमध्यगा १९३ तुङ्गोतुङ्गा १९४ तुङ्गकुचा १९५ तुहिनाचलसंस्थिता ॥ ३२ ॥

तुम्बरादि-स्तुतिप्रीता तुषारवपुषेश्वरी।
तुष्टा च तुष्टजननी तुष्टलोकनिवासिनी ॥ ३३ ॥

१९६ तुम्बरादि-स्तुतिप्रीता १९७ तुषारवपुषेश्वरी १९८ तुष्टा १९९ तुष्टजननी २०० तुष्टलोकनिवासिनी ॥ ३३ ॥

तुलाधारा तुलामध्या तुलस्था तुलरूपिणी।
तुरीयगुणगम्भीरा तुर्यनामस्वरूपिणी ॥ ३४ ॥

२०१ तुलाधारा २०२ तुलामध्या २०३ तुलस्था २०४ तुलरूपिणी २०५ तुरीयगुणगम्भीरा २०६ तुर्यनामस्वरूपिणी ॥ ३४ ॥

तुर्यविद्वल्लास्यसंस्थातुर्यशास्त्रार्थवादिनी।
तुर्यशास्त्रार्थतत्त्वज्ञा तुर्यवादविनोदिनी ॥ ३५ ॥

२०७ तुर्यविद्वल्लास्यसंस्था २०८ तुर्यशास्त्रार्थवादिनी २०९ तुर्य-शास्त्रार्थतत्त्वज्ञा २१० तुर्यवादविनोदिनी ॥ ३५ ॥

तुर्यनादान्तनिलया तुर्यानन्दस्वरूपिणी।
तुरीयभक्तिजननी तुर्यमार्गप्रदर्शिनी ॥ ३६ ॥

२११ तुर्यनादान्तनिलया २१२ तुर्यानन्दस्वरूपिणी २१३ तुरीय-भक्तिजननी २१४ तुर्यमार्गप्रदर्शिनी ॥ ३६ ॥

वकाररूपा वागीशा वरेण्या वरसंस्थिता।
वरा वरिष्ठा वैदेही वेदशास्त्रप्रदर्शिनी ॥ ३७ ॥

२१५ वकाररूपा २१६ वागीशा २१७ वरेण्या २१८ वरसंस्थिता २१९ वरा २२० वरिष्ठा २२१ वैदेही २२२ वेदशास्त्रप्रदर्शिनी ॥ ३७ ॥

वैकल्पश्रमणी वाणी वाञ्छितार्थफलप्रदा।
वयस्था वयमध्यस्था वयोऽवस्थाविवर्जिता ॥ ३८ ॥

२२३ वैकल्पश्रमणी २२४ वाणी २२५ वाञ्छितार्थफलप्रदा २२६ वयस्था २२७ वयमध्यस्था २२८ वयोऽवस्थाविवर्जिता ॥ ३८ ॥

वन्दिनी वादिनी वार्य्या वाङ्मयी वीरवन्दिनी ।
वानप्रस्थाश्रमस्थायी वनदुर्गा वनालया ॥ ३९ ॥

२२९ वन्दिनी २३० वादिनी २३१ वार्या २३२ वाङ्मयी २३३ वीर-वन्दिनी २३४ वानप्रस्थाश्रमस्थायी २३५ वनदुर्गा २३६ वनालया ॥३९॥

वनजाक्षी वनचरी वनिता, वनमोदिनी ।
वसिष्ठा वामदेवादि-वन्द्या वन्द्यस्वरूपिणी ॥ ४० ॥

२३७ वनजाक्षी २३८ वनचरी २३९ वनिता २४० वनमोदिनी २४१ वसिष्ठा २४२ वामदेवादिवन्द्या २४३ वन्द्यस्वरूपिणी ॥ ४० ॥

वाल्मीकी वाक्करी वाचा वारुणी वारुणप्रिया ।
वैद्या वैद्यचिकित्सा च वषट्कारी वसुन्धरा ॥ ४१ ॥

२४४ वाल्मीकी २४५ वाक्करी २४६ वाचा २४७ वारुणी २४८ वारुणप्रिया २४९ वैद्या २५० वैद्यचिकित्सा २५१ वषट्कारी २५२ वसुन्धरा ॥ ४१ ॥

वसुमाता वसुत्राता वसुजन्मविमोचिनी ।
वसुप्रदा वासुदेवी वासुदेवमनोहरी ॥ ४२ ॥

२५३ वसुमाता २५४ वसुत्राता २५५ वसुजन्मविमोचिनी २५६ वसुप्रदा २५७ वासुदेवी २५८ वासुदेवमनोहरी ॥ ४२ ॥

वासवार्चित-पादश्री-र्वासवारि-विनाशिनी ।
वागीशवाङ्मनः-स्थायी वनवासवशा वशी ॥ ४३ ॥

२५९ वासवार्चितपादश्रीः २६० वासवारिविनाशिनी २६१ वागीश-वाङ्मनःस्थायी २६२ वनवासवशा २६३ वशी ॥ ४३ ॥

वामदेवी वरारोहा वाद्यघोषणतत्परा ।
वाचस्पति—सामाराध्या वागीशी वाचकीरवाक् ॥ ४४ ॥

२६४ वामदेवी २६५ वरारोहा २६६ वाद्यघोषणतत्परा २६७ वाच-स्पतिसमाराध्या २६८ वागीशी २६९ वाचकीः २७० अवाक् ॥ ४४ ॥

रेकाररूपा रेवा च रेवातीरनिवासिनी ।
रेकिणी रेवती रक्षा रुद्रजन्मा रजस्वला ॥ ४५ ॥

२७१ रेकाररूपा २७२ रेवा २७३ रेवातीरनिवासिनी २७४ रेकिणी २७५ रेवती २७६ रक्षा २७७ रुद्रजन्मा २७८ रजस्वला ॥ ४५ ॥

रेणुका रमणी रम्या रतिवृद्धा रतारती ।
रावणादित्यदानन्दा राजश्री राजशेखरा ॥ ४६ ॥

२७९ रेणुका २८० रमणी २८१ रम्या २८२ रतिवृद्धा २८३ रता-रती २८४ रावणादित्यदा २८५ आनन्दा २८६ राजश्री: २८७ राज-शेखरा ॥ ४६ ॥

रणमध्यारथारूढा रविकोटिसमप्रभा ।
रविमण्डलमध्यस्था रजनीरविलोचना ॥ ४७ ॥

२८८ रणमध्या २८९ रथारूढा २९० रविकोटिसमप्रभा २९१रवि-मण्डलमध्यस्था २९२ रजनी २९३ रविलोचना ॥ ४७ ॥

रथारङ्गपाणी रक्षोघ्नी रागिणी रावणार्चिता ।
रम्भादि-कन्यका-ऽऽराध्या राज्यदाराज्यवर्द्धिनी ॥ ४८ ॥

२९४ रथारङ्गपाणी २९५ रक्षोघ्नी २९६ रागिणी २९७ रावणा-र्चिता २९८ रम्भादिकन्यकाऽऽराध्या २९९ राज्यदा ३०० राज्य-वर्द्धिनी ॥ ४८ ॥

रजताद्रीश्वरोरुस्था रम्या राजीवलोचना ।
रमा वाणी रमाराध्या राज्यदात्री रथोत्सवा ॥ ४९ ॥

३०१ रजताद्रीश्वरोरुस्था ३०२ रम्या ३०३ राजीवलोचना ३०४ रमा ३०५ वाणी ३०६ रमाराध्या ३०७ राज्यदात्री ३०८ रथो-त्सवा ॥ ४९ ॥

रेतोवती रथोत्साहा राजहृद्रोगहारिणी ।
रङ्गप्रवृद्धमधुरा रङ्गमण्डपमध्यगा ॥ ५० ॥

३०९ रेतोवती ३१० रथोत्साहा ३११ राजहृद ३१२ रोगहारिणी ३१३ रङ्गप्रवृद्धमधुरा ३१४ रङ्गमण्डपमध्यगा ॥ ५० ॥

रञ्जिता राजजननी रमा रेवा रती रणा ।
राविणी रागिणी राज्या राजराजेश्वरार्चिता ॥ ५१ ॥

३१५ रञ्जिता ३१६ राजजननी ३१७ रमा ३१८ रेवा ३१९ रती ३२० रणा ३२१ राविणी ३२२ रागिणी ३२३ राज्या ३२४ राजराजे-श्वरार्चिता ॥ ५१ ॥

राजन्वती राजनीतिस्तथा रजतवासिनी ।
राघवार्चितपादा श्रीराघवाराधनप्रिया ॥ ५२ ॥

३२५ राजन्वती ३२६ राजनीति: ३२७ रजतवासिनी ३२८ राघ-वार्चितपादा ३२९ श्रीराघवाराधनप्रिया ॥ ५२ ॥

रत्नसागरमध्यस्था रत्नद्वीपनिवासिनी ।
रत्नप्राकारमध्यस्था रत्नमण्डपमध्यगा ॥ ५३ ॥

३३० रत्नसागरमध्यस्था ३३१ रत्नद्वीपनिवासिनी ३३२ रत्न-प्राकारमध्यस्था ३३३ रत्नमण्डपमध्यगा ॥ ५३ ॥

रत्नाभिषेकसन्तुष्टा रत्नाङ्गी रत्नदायिनी।
निकाररूपिणी रत्ना नित्यतृप्ता निरञ्जना ॥ ५४ ॥

३३४ रत्नाभिषेकसन्तुष्टा ३३५ रत्नाङ्गी ३३६ रत्नदायिनी ३३७ निकाररूपिणी ३३८ रत्ना ३३९ नित्यतृप्ता ३४० निरञ्जना ॥ ५४ ॥

निद्रात्ययविशेषज्ञा नीलजीमूतसन्निभा।
नीवारशूकवत्तन्वी नित्यकल्याणरूपिणी ॥ ५५ ॥

३४१ निद्रात्ययविशेषज्ञा ३४२ नीलजीमूतसन्निभा ३४३ नीवार-सूकवत्तन्वी ३४४ नित्यकल्याणरूपिणी ॥ ५५ ॥

नित्योत्सवा नित्यनित्या नित्यानन्दस्वरूपिणी।
निर्विकल्पा निर्गुणस्था निश्चिन्ता निरुपद्रवा ॥ ५६ ॥

३४५ नित्योत्सवा ३४६ नित्यनित्या ३४७ नित्यानन्दस्वरूपिणी ३४८ निर्विकल्पा ३४९ निर्गुणस्था ३५० निश्चिन्ता ३५१ निरुपद्रवा ॥५६॥

निःसंशया संशयघ्नी निर्लोभा लोभनाशिनी।
निर्भवा भवपाशघ्नी नीतिशास्त्रविचारिणी ॥ ५७ ॥

३५२ निःसंशया ३५३ संशयघ्नी ३५४ निर्लोभा ३५५ लोभनाशिनी ३५६ निर्भवा ३५७ भवपाशघ्नी ३५८ नीतिशास्त्रविचारिणी ॥ ५७ ॥

निखिलागम-मध्यस्था निखिलागम-संस्थिता।
नित्योपाधिविनिर्मुक्ता नित्यकर्मफलप्रदा ॥ ५८ ॥

३५९ निखिलागमध्यस्था ३६० निखिलागमसंस्थिता ३६१ नित्यो-पाधिविनिर्मुक्ता ३६२ नित्यकर्मफलप्रदा ॥ ५८ ॥

नीलग्रीवा निरीहा च निरञ्जनवरप्रदा।
नवनीतप्रिया नारी नरकार्णवतारिणी ॥ ५९ ॥

३६३ नीलग्रीवा ३६४ निरीहा ३६५ निरञ्जनवरप्रदा ३६६ नव-नीतप्रिया ३६७ नारी ३६८ नरकार्णवतारिणी ॥ ५९ ॥

नारायणी निराहारा निर्मला निर्गुणप्रिया।
निर्मला निर्गमाचारा निखिलागमवेदिनी ॥ ६० ॥

३६९ नारायणी ३७० निराहारा ३७१ निर्मला ३७२ निर्गुणप्रिया ३७३ निर्मला ३७४ निर्गमाचारा ३७५ निखिलागमवेदिनी ॥ ६० ॥

निमिषा निमिषोत्पन्ना निमेषाण्डविधायिनी।
निवात-दीपमध्यस्था निश्चिन्ता चिन्तनाशिनी ॥ ६१ ॥

३७६ निमिषा ३७७ निमिषोत्पन्ना ३७८ निमेषाण्डविधायिनी ३७९ निवातदीपमध्यस्था ३८० निश्चिन्ता ३८१ चिन्तनाशिनी ॥ ६१ ॥

नीलवेणी नीलखण्डा निर्विषा विषनाशिनी ।
नीलांशुकपरीधाना निन्दिता निर्निरीश्वरी ॥ ६२ ॥

३८२ नीलवेणी ३८३ नीलखण्डा ३८४ निर्विषा ३८५ विषनाशिनी ३८६ नीलांशुकपरीधाना ३८७ निन्दिता ३८८ निर्निरीश्वरी ॥ ६२ ॥

निश्वासा-श्वासमध्यस्था मिथोयाननिवासिनी ।
यङ्कारररूपा यन्त्रेशी यन्त्रयन्त्रा यशस्विनी ॥ ६३ ॥

३८९ निश्वासा ३९० श्वासमध्यस्था ३९१ मिथोयाननिवासिनी ३९२ यङ्कारूपा ३९३ यन्त्रेशी ३९४ यन्त्रयन्त्रा ३९५ यशस्विनी ॥ ६३ ॥

यन्त्राराधन-सन्तुष्टा यजमानस्वरूपिणी ।
यशस्विनी यकारस्था यूपस्तम्भनिवासिनी ॥ ६४ ॥

३९६ यन्त्राराधन सन्तुष्टा ३९७ यजमानस्वरूपिणी ३९८ यशस्विनी ३९९ यकारस्था ४०० यूपस्तम्भनिवासिनी ॥ ६४ ॥

यमघ्नी यमकल्पा च यशःकामा यतीश्वरी ।
यमादियोगनिरता यतिनिद्रापहारिणी ॥ ६५ ॥

४०१ यमघ्नी ४०२ यमकल्पा ४०३ यशःकामा ४०४ यतीश्वरी ४०५ यमादियोगनिरता ४०६ यतिनिद्रापहारिणी ॥ ६५ ॥

याता यज्ञा यज्ञिया च यज्ञेश्वरपतिव्रता ।
यज्ञयज्ञा यजुर्यज्वा यज्ञीनिकरकारिणी ॥ ६६ ॥

४०७ याता ४०८ यज्ञा ४०९ यज्ञिया ४१० यज्ञेश्वरपतिव्रता ४११ यज्ञयज्ञा ४१२ यजुः ४१३ यज्वा ४१४ यज्ञीनिकरकारिणी ॥ ६६ ॥

यज्ञसूत्रप्रदा ज्येष्ठा यज्ञकर्मफलप्रदा ।
यवाङ्कुर-प्रिया यामा यवनी यवनाधिपा ॥ ६७ ॥

४१५ यज्ञसूत्रप्रदा ४१६ ज्येष्ठा ४१७ यज्ञकर्मफलप्रदा ४१८ यवाङ्कुरप्रिया ४१९ यामा ४२० यवनी ४२१ यवनाधिपा ॥ ६७ ॥

यज्ञकर्त्री यज्ञभोक्त्री यज्ञाङ्गी यज्ञवाहिनी ।
यज्ञसाक्षी यज्ञमुखी यजुषी यज्ञरक्षकी ॥ ६८ ॥

४२२ यज्ञकर्त्री ४२३ यज्ञभोक्त्री ४२४ यज्ञाङ्गी ४२५ यज्ञवाहिनी ४२६ यज्ञसाक्षी ४२७ यज्ञमुखी ४२८ यजुषी ४२९ यज्ञरक्षकी ॥ ६८ ॥

भकाररूपा भद्रेशी भद्रकल्याणदायिनी ।
भक्तप्रिया भक्तसखी भक्ताऽभीष्टस्वरूपिणी ॥ ६९ ॥

३४० भकाररूपा ४३१ भद्रेशी ४३२ भद्रकल्याणदायिनी ४३३ भक्त-प्रिया ४३४ भक्तसखी ४३५ भक्ताऽभीष्टस्वरूपिणी ॥ ६९ ॥

भक्तिनी भक्तिसुलभा भक्तिदा भक्तवत्सला ।
भक्तचैतन्यनिलया भक्तबन्धविमोचिनी ॥ ७० ॥

४३६ भक्तिनी ०३७ भक्तिसुलभा ४३८ भक्तिदा ४३९ भक्तवत्सला ४४० भक्तचैतन्यनिलया ४४१ भक्तबन्धविमोचिनी ॥ ७० ॥

भक्तस्वरूपिणी भर्ग्या भाग्यारोग्यप्रदायिनी ।
भक्तमाता भक्तगम्या भक्ताभीष्टप्रदायिनी ॥ ७१ ॥

४४२ भक्तस्वरूपिणी ४४३ भर्ग्या ४४४ भाग्यारोग्यप्रदायिनी ४४५ भक्तमाता ४४६ भक्तगम्या ४४७ भक्ताभीष्टप्रदायिनी ॥ ७१ ॥

भास्वरी भैरवी भोगी भवानी भयनाशिनी ।
भद्रात्मिका भद्रदायी भद्रकाली भयङ्करी ॥ ७२ ॥

४४८ भास्वरी ४४९ भैरवी ४५० भोगी ४५१ भवानी ४५२ भय-नाशिनी ४५३ भद्रात्मिका ४५४ भद्रदायी ४५५ भद्रकाली ४५६ भयङ्करी ॥ ७२ ॥

भगनिष्यन्दिनी भाग्या भवबन्धविमोचिनी ।
भीमा भीमनभा भङ्गी भङ्गुरा भीमदर्शिनी ॥ ७३ ॥

४५७ भगनिष्यन्दिनी ४५८ भाग्या ५४९ भवबन्धविमोचिनी ४६० भीमा, ४६१ भीमनभा ४६२ भङ्गी ४६३ भङ्गुरा ४६४ भीम-दर्शिनी ॥ ७३ ॥

भल्ली भल्लीधरा भेरुर्भेरुण्डा भीमपापहा ।
भावज्ञा भोग्यदात्री च भवघ्नी भूतिभूषणा ॥ ७४ ॥

४६५ भल्ली ४६६ भल्लीधरा ४६७ भेरु: ४६८ भेरुण्डा ४६९ भीम-पापहा ४७० भावज्ञा ४७१ भोग्यदात्री ४७२ भवघ्नी ४७३ भूति-भूषणा ॥ ७४ ॥

भूतिदा भूतिदात्री च भूपतित्वप्रदायिनी ।
भ्रामरी भ्रमरी भारी भवसंसारतारिणी ॥ ७५ ॥

४७४ भूतिदा ४७५ भूतिदात्री ४७६ भूपतित्वप्रदायिनी ४७७ भ्रामरी ४७८ भ्रमरी ४७९ भारी ४८० भवसंसारतारिणी ॥ ७५ ॥

भण्डासुरवधोत्साहा भाण्डवा भाविनोदिनी ।
गोकाररूपा गोमाता गुरुपत्नी गुरुर्गिरा ॥ ७६ ॥

४८१ भण्डासुरवधोत्साहा ४८२ भाण्डवा ४८३ भाविनोदिनी ४८४ गोकाररूपा ४८५ गोमाता ४८६ गुरुपत्नी ४८७ गुरुर्गिरा ॥ ७६ ॥

गोरोचनप्रिया गौरी गोविन्दगुणवर्द्धिनी ।
गोपालचेष्टा सन्तुष्टा गोवर्द्धनविवर्द्धिनी ॥ ७७ ॥

४८८ गोरोचनप्रिया ४८९ गौरी ४९० गोविन्दगुणवर्द्धिनी ४९१ गोपालचेष्टा ४९२ सन्तुष्टा ४९३ गोवर्द्धनविवर्द्धिनी ॥ ७७ ॥

गोविन्दरूपिणी गोप्ता गोप्तागोत्रविवर्द्धिनी ।
गीता गीतप्रिया गेया गोका गोकुलवर्द्धिनी ॥ ७८ ॥

४९४ गोविन्दरूपिणी ४९५ गोप्ता ४९६ गोप्तागोत्रविवर्द्धिनी ४९७ गीता ४९८ गीतप्रिया ४९९ गेया ५०० गोका ५०१ गोकुल-वर्द्धिनी ॥ ७८ ॥

गोपी गोहत्यशमनी गुणा च गुणविग्रहा ।
गोविन्दजननी गोष्ठा गोपदा गोकुलोत्सवा ॥ ७९ ॥

५०२ गोपी ५०३ गोहत्यशमनी ५०४ गुणा ५०५ गुणविग्रहा ५०६ गोविन्दजननी ५०७ गोष्ठा ५०८ गोपदा ५०९ गोकुलोत्सवा ॥ ७९ ॥

गोचरी गौतमी गोप्त्री गोमुखी गुरुवासिनी ।
गोपाली गोमयी गुण्ठा गोष्ठी गोपुरवासिनी ॥ ८० ॥

५१० गोचरी ५११ गौतमी ५१२ गोप्त्री ५१३ गोमुखी ५१४ गुरु-वासिनी ५१५ गोपाली ५१६ गोमयी ५१७ गुण्ठा ५१८ गोष्ठी ५१९ गोपुरवासिनी ॥ ८० ॥

गरुडी गरुडश्रेष्ठा गारुडी गरुडध्वजा ।
गम्भीरा गण्डकी गंगा गरुडध्वजवल्लभा ॥ ८१ ॥

५२० गरुडी ५२१ गरुडश्रेष्ठा ५२२ गारुडी ५२३ गरुडध्वजा ५२४ गम्भीरा ५२५ गण्डकी ५२६ गंगा ५२७ गरुडध्वजवल्लभा ॥ ८१ ॥

गगनस्थागयावासा गुणवृत्तिर्गुडोद्भवा ।
देकाररूपा देवेशी दृशिनी देवतार्चिता ॥ ८२ ॥

५२८ गगनस्था ५२९ गयावासा ५३० गुणवृत्तिः ५३१ गुडोद्भवा ५३२ देकाररूपा ५३३ देवेशी ५३४ दृशिनी ५३५ देवतार्चिता ॥ ८२ ॥

देवराजेश्वरार्द्धाङ्गी दीन-दैन्य-विमोचिनी ।
देश-काल-परिज्ञाना देशोपद्रवनाशिनी ॥ ८३ ॥

५३६ देवराजेश्वरार्द्धाङ्गी ५३७ दीनदैन्यविमोचिनी ५३८ देशकाल-परिज्ञाना ५३९ देशोपद्रवनाशिनी ॥ ८३ ॥

देवमाता देवमोहा देव-दानव-मोहिनी ।
देवेन्द्रार्चित-पादश्री-देवदेवप्रसादिनी ॥ ८४ ॥

५४० देवमाता ५४१ देवमोहा ५४२ देवदानवमोहिनी ५४३ देवेन्द्रार्चितपादश्रीः ५४४ देवदेवप्रसादिनी ॥ ८४ ॥

देशान्तरी देवरूपा देवालयनिवासिनी ।
देशभ्रमणकृद्देवी देशस्वास्थ्यप्रदायिनी ॥ ८५ ॥

५४५ देशान्तरी ५४६ देवरूपा ५४७ देवालयनिवासिनी ५४८ देशभ्रमणकृद्देवी ५४९ देशस्वास्थ्यप्रदायिनी ॥ ८५ ॥

देवयाना देवता च देवसैन्यप्रपालिनी ।
वकाररूपा वाग्देवी वाचामानसगोचरी ॥ ८६ ॥

५५० देवयाना ५५१ देवता ५५२ देवसैन्यप्रपालिनी ५५३ वकाररूपा ५५४ वाग्देवी ५५५ वाचामानसगोचरी ॥ ८६ ॥

वैकुण्ठदेशिनी वेद्या वायुरूपा वरप्रदा ।
वक्रतुण्डार्चितपदा वक्रतुण्डप्रदायिनी ॥ ८७ ॥

५५६ वैकुण्ठदेशिनी ५५७ वेद्या ५५८ वायुरूपा ५५९ वरप्रदा ५६० वक्रतुण्डार्चितपदा ५६१ वक्रतुण्डप्रदायिनी ॥ ८७ ॥

वैचित्री च वसुमतिर्वसुस्थाना वसुप्रिया ।
वषट्कारा च चामुण्डा वरारोहा वरावरी ॥ ८८ ॥

५६२ वैचित्री ५६३ वसुमति ५६४ वसुस्थाना ५६५ वसुप्रिया ५६६ वषट्कारा ५६७ चामुण्डा ५६८ वरारोहा ५६९ वरावरी ॥ ८८ ॥

वैदेही-जननी वैद्या वैदेही-शोकनाशिनी ।
वेदमाता वेदकन्या वेदरूपा विनोदिनी ॥ ८९ ॥

५७० वैदेही-जननी ५७१ वैद्या ५७२ वैदेहीं शोकनाशिनी ५७३ वेदमाता ५७४ वेदकन्या ५७५ वेदरूपा ५७६ विनोदिनी ॥ ८९ ॥

वेदान्तवादिनी वेदा वेदान्तनिलयामरा ।
वेदश्रवा वेदघोषा वेदगानी विनोदिनी ॥ ९० ॥

५७७ वेदान्तवादिनी ५७८ वेदा ५७९ वेदान्तनिलया ५८० अमरा ५८१ वेदश्रवा ५८२ वेदघोषा ५८३ वेदगानी ५८४ विनोदिनी ॥ ९० ॥

वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञा वेदमार्गप्रदर्शिनी ।
वैदिककर्मफलदा वेदसागर-तारिणी ॥ ९१ ॥

५८५ वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञा ५८६ वेदमार्गप्रदर्शिनी ५८७ वैदिककर्मफलदा ५८८ वेदसागरतारिणी ॥ ९१ ॥

वेदवादी वेदगुह्या वेदाश्वरथवाहिनी ।
वेदचक्रा वेदवन्द्या वेदाङ्गी वेदवित्कविः ॥ ९२ ॥

५८९ वेदवादी ५९० वेदगुह्या ५९१ वेदाश्वरथवाहिनी ५९२ वेद-चक्रा ५९३ वेदवन्द्या ५९४ वेदाङ्गी ५९५ वेदवित् ५९६ कविः ॥ ९२ ॥

श्यकाररूपा श्यामाङ्गी श्यामा श्यामासरोरुहा ।
श्यामाका श्यालवृक्षा च शतपत्र निकेतना ॥ ९३ ॥

५९७ श्यकाररूपा ५९८ श्यामाङ्गी ५९९ श्यामा ६०० श्यामा-सरोरुहा ६०१ श्यामाका ६०२ श्यालवृक्षा ६०३ शतपत्रनिकेतना ॥९३॥

सर्वदृक्सन्निविष्टा च सर्वसम्प्रेमणी सदा ।
सव्याऽपसव्यदा सव्या सध्रीची च सहायिनी ॥ ९४ ॥

६०४ सर्वदृक्-सन्निविष्टा ६०५ सर्वसम्प्रेमणी ६०६ सव्याऽपसव्यदा ६०७ सव्या ६०८ सध्रीची ६०९ सहायिनी ॥ ९४ ॥

भूकला सागरा सारा सार्वभौमस्वभाविनी ।
सन्तोषजननी सेव्या सर्वेशी सर्वरञ्जनी ॥ ९५ ॥

६१० भूकला ६११ सागरा ६१२ सारा ६१३ सार्वभौमस्वभाविनी ६१४ सन्तोषजननी ६१५ सेव्या ६१६ सर्वेशी ६१७ सर्वरञ्जनी ॥ ९५ ॥

सरस्वती समाराध्या समदासिन्धुसेविनी ।
सन्मोहिनी सदामोहा सर्वमाङ्गल्यदायिनी ॥ ९६ ॥

६१८ सरस्वती ६१९ समाराध्या ६२० समदा ६२१ सिन्धुसेविनी ६२२ सन्मोहिनी ६२३ सदामोहा ६२४ सर्वमाङ्गल्यदायिनी ॥ ९६ ॥

समस्तभुवनेशानी सर्वकाम फलप्रदा ।
सर्वसिद्धिप्रदा साध्वी सर्वज्ञान-प्रदायिनी ॥ ९७ ॥

६२५ समस्तभुवनेशानी ६२६ सर्वकामफलप्रदा ६२७ सर्वसिद्धिप्रदा ६२८ साध्वी ६२९ सर्वज्ञानप्रदायिनी ॥ ९७ ॥

सर्वदारिद्र्यशमनी सर्वदुःख विमोचिनी ।
सर्वरोगप्रशमनी सर्वपापविमोचिनी ॥ ९८ ॥

६३० सर्वदारिद्रचशमनी ६३१ सर्वदुःखविमोचिनी ६३२ सर्वरोग-प्रशमनी ६३३ सर्वपापविमोचिनी ॥ ९८ ॥

समदृष्टिः समगुणा सर्वसाक्षी सहायिनी ।
सामर्थ्यवाहिनी संख्या सान्द्रानन्दपयोधरी ॥ ९९ ॥

६३४ समदृष्टिः ६३५ समगुणा ६३६ सर्वसाक्षी ६३७ सहायिनी ६३८ सामर्थ्यवाहिनी ६३९ संख्या ६४० सान्द्रानन्दपयोधरी ॥ ९९ ॥

सङ्कीर्णमन्दिरस्थायी साकेत कुलपालिनी ।
संहारी शङ्करी गौरी साकेतपुरवासिनी ॥ १०० ॥

६४१ सङ्कीर्णमन्दिरस्थायी ६४२ साकेतकुलपालिनी ६४३ संहारी ६४४ शङ्करी ६४५ गौरी ६४६ साकेतपुरवासिनी ॥ १०० ॥

सम्बोधनी समुत्तिष्ठा सम्यग्ज्ञानस्वरूपिणी ॥ १०१ ॥

६४७ सम्बोधनी ६४८ समुत्तिष्ठा ६४९ सम्यग्ज्ञानस्वरूपिणी ॥१०१॥

सम्पत्करी समानाङ्गी सर्वभावसुसंस्थिता ।
सम्बोधिनी समानन्दा सन्मार्ग कुलपालिनी ॥ १०२ ॥

६५० सम्पत्करी ६५१ समानाङ्गी ६५२ सर्वभावसुसंस्थिता ६५३ सम्बोधिनी ६५४ समानन्दा ६५५ सन्मार्गकुलपालिनी ॥ १०२ ॥

सञ्जीवनी सर्वमेधा सभ्या सम्पत्प्रदायिनी ।
समिद्धा समिधासीना सामान्यासामवेदिनी ॥ १०३ ॥

६५६ सञ्जीवनी ६५७ सर्वमेधा ६५८ सभ्या ६५९ सम्पत्प्रदायिनी ६६० समिद्धा ६६१ समिधासीना ६६२ सामान्या ६६३ सामवेदिनी ॥ १०३ ॥

समुत्तीर्णा सदाचारा संहारा सर्वपावनी ।
सर्पिणी सर्पमाता च सर्पदष्टविमोचनी ॥ १०४ ॥

६६४ समुत्तीर्णा ६६५ सदाचारा ६६६ संहारा ६६७ सर्वपावनी ६६८ सर्पिणी ६६९ सर्पमाता ६७० सर्पदंष्टविमोचनी ॥ १०४ ॥

सर्पयागप्रशमनी सर्वज्ञत्वफलप्रदा ।
सङ्क्रमाऽसङ्क्रमा सिन्धुः सर्गासंग्रामपूजिता ॥ १०५ ॥

६७१ सर्पयागप्रशमनी ६७२ सर्वज्ञत्वफलप्रदा ६७३ सङ्कुमाऽसङ्पुमा ६७४ सिन्धुः ६७५ सर्गा ६७६ संग्रामपूजिता ॥ १०५ ॥

सङ्कटा सङ्कटाहारी स-कुङ्कुमविलेपना ।
सुमुखा सुमुखस्थायी साङ्गोपाङ्गार्चनप्रिया ॥ १०६ ॥

६७७ सङ्कटा ६७८ सङ्कटाहारी ६७९ सकुङ्कुमविलेपना ६८० सुमुखा ६८१ सुमुखस्थायी ६८२ साङ्गोपाङ्गार्चनप्रिया ॥ १०६ ॥

संस्तुता संस्तुतिःप्रीतिः सत्यवादी सदासुखी ।
धीकाररूपा धीमाता धीराधीरप्रसादिनी ॥ १०७ ॥

६८३ संस्तुता ६८४ संस्तुतिः ६८५ प्रीतिः ६८६ सत्यवादी ६८७ सदासुखी ६८८ धीकाररूपा ६८९ धीमाता ६९० धीरा ६९१ धीरप्रसादिनी ॥ १०७ ॥

धीरोत्तमा धीरधीरा धीरस्था धीरशेखरा ।
स्थितिधैर्या स्थविष्ठा च स्थपतिः स्थलविग्रहा ॥ १०८ ॥

६९२ धीरोत्तमा ६९३ धीरवीरा ६९४ धीरस्था ६९५ धीरशेखरा ६९६ स्थितिः ६९७ वैर्दा ६९८ स्थविष्ठा ६९९ स्थपतिः ७०० स्थलविग्रहा ॥ १०८ ॥

धीरा धारा धीरवन्द्या धीपतिर्धीरमानसा ।
धीपदा धीपदस्थायी धीशाना धीप्रदा सुखी ॥ १०९ ॥

७०१ धीरा ७०२ धारा ७०३ धीरवन्द्या ७०४ धीपतिः ७०५ धीरमानसा ७०६ धीपदा ७०७ धीपदस्थायी ७०८ धीशाना ७०९ धीप्रदा ७१० सुखी ॥ १०९ ॥

मकाररूपी मैत्रेयी महामङ्गलदेवता ।
मनोवैकल्यशमनी मलयाचलवासिनी ॥ ११० ॥

७११ मकाररूपी ७१२ मैत्रेयी ७१३ महामङ्गलदेवता ७१४ मनोवैकल्पशमनी ७१५ मलयाचलवासनी ॥ ११० ॥

मलयध्वजराजश्रीमीनाक्षी मधुरालया ।
महादेवी महारूपा महाभैरवपूजिता ॥ १११ ॥

७१६ मलयध्वजराजश्रीः ७१७ मीनाक्षी ७१८ मधुरालया ७१९ महादेवी ७२० महारूपा ७२१ महाभैरवपूजिता ॥ १११ ॥

मनुविद्या मन्त्रमाता मन्त्रवश्या महेश्वरी ।
मत्तमातङ्गगमना मधुरा मेरुमण्डपा ॥ ११२ ॥

७२२ मनुविद्या ७२३ मन्त्रमाता ७२४ मन्त्रवश्या ७२५ महेश्वरी ७२६ मत्तमातङ्गगमना ७२७ मधुरा ७२८ मेरुमण्डपा ॥ ११२ ॥

महागुप्ता महाभूता महाभयविनाशिनी ।
महागौरी महामन्त्री महावैरिविनाशिनी ॥ ११३ ॥

७२९ महागुप्ता ७३० महाभूता ७३१ महाभयविनाशिनी ७३२ महागौरी ७३३ महामन्त्री ७३४ महावैरिविनाशिनी ॥ ३११ ॥

महालक्ष्मीर्महागौरी महिषासुरमर्दिनी ।
महेशमण्डलस्था च मधुरागमवर्जिता ॥ ११४ ॥

७३५ महालक्ष्मीः ७३६ महागौरी ७३७ महिषासुरमर्दिनी ७३८ महेशमण्डलस्था ७३९ मधुरागमवर्जिता ॥ ११४ ॥

मेधा मेधाकरी मेध्या माधवी मधुमर्दिनी ।
मन्त्रा मन्त्रमयी मान्या माया महिषमन्त्रिणी ॥ ११५ ॥

७४० मेधा ७४१ मेधाकरी ७४२ मेध्या ७४३ माधवी ७४४ मधुमर्दिनी ७४५ मन्त्रा ७४६ मन्त्रमयी ७४७ मान्या ७४८ माया ७४९ महिममन्त्रिणी ॥ ११५ ॥

मायारूपी मायधारि मायस्था मायवादिनी ।
माया सङ्कल्पजननी माया माय-विनोदिनी ॥ ११६ ॥

७५० मायारूपी ७५१ मायधारी ७५२ मायस्था ७५३ मायवादिनी ७५४ मायासङ्कल्पजननी ७५५ माया ७५६ मायविनोदिनी ॥ ११६ ॥

मायाप्तपञ्चजननी मायासंहाररूपिणी ।
मायामन्त्रप्रसादा च मायाजनविमोहिनी ॥ ११७ ॥

७५७ मायाप्तपञ्चजननी ७५८ मायासंहाररूपिणी ७५९ मायामन्त्रप्रसादा ७६० मायाजनविमोहिनी ॥ ११७ ॥

महापरा महारूपा महाविघ्न विनाशिनी ।
महानुभावा मन्त्रेशी महामङ्गलदेवता ॥ ११८ ॥

७६१ महापरा ७६२ महारूपा ७६३ महाविघ्नविनाशिनी ७६४ महानुभावा ७६५ मन्त्रेशी ७६६ महामङ्गलदेवता ॥ ११८ ॥

हिकारस्था हृषीकेशी हितकार्यप्रवर्द्धिनी ।
हीनोपाधि-विनिर्मुक्ता हीनलोकविमोचनी ॥ ११९ ॥

७६७ हिकारस्था ७६८ हृषीकेशी ७६९ हितकार्यप्रवर्द्धिनी ७७० हीनोपाधिविनिर्मुक्ता ७७१ हीनलोकविमोचनी ॥ ११९ ॥

ह्रीङ्कारा ह्रीमती ह्रीं-ह्रीं-ह्रीं देवी ह्रीं स्वभाविनी ।
ह्रीमती ह्रींवती हृत्स्वा ह्रीं शिवा ह्रीं कुलोद्भवा ॥ १२० ॥

७७२ ह्रीङ्कारा ७७३ ह्रीमती ७७४ ह्रीं ह्रीं ह्रीं देवी ७७५ ह्रीं स्वभाविनी ७७६ ह्रींमती ७७७ ह्रींवती ७७८ हृत्स्वा ७७९ ह्रींशिवा ७८० ह्रीं कुलोद्भवा ॥ १२० ॥

हितवादी हितप्रीता हितकारुण्यवर्द्धिनी ।
हिताशनी हितक्रोधा हितकर्मफलप्रदा ॥ १२१ ॥

७८१ हितवादी ७८२ हितप्रीता ७८३ हितकारुण्यवर्द्धिनी ७८४ हिताशनी ७८५ हितक्रोधा ७८६ हितकर्मफलप्रदा ॥ १२१ ॥

हिमा हिमसुता हेमा हेमाचलनिवासिनी ।
हेती हिमप्रदा हारा होत्रा होतृहुतप्रदा ॥ १२२ ॥

७८७ हिमा ७८८ हिमसुता ७८९ हेमा ७९० हेमाचलनिवासिनी ७९१ हेती ७९२ हिमप्रदा ७९३ हारा ७९४ होत्रा ७९५ होतृहुतप्रदा ॥ १२२ ॥

हिमस्था हिमजा हेमा हितकर्मस्वभाविनी ॥ १२३ ॥

७९६ हिमस्था ७९७ हिमजा ७९८ हेमा ७९९ हितकर्मस्वभाविनी ॥ १२३ ॥

धीकाररूपा धिषणा धर्मरूपा धनेश्वरी ।
धनुर्द्धरा धराधारा धर्म कर्म-फलप्रदा ॥ १२४ ॥

८०० धीकाररूपा ८०१ धिषणा ८०२ धर्मरूपा ८०३ धनेश्वरी ८०४ धनुर्द्धरा ८०५ धराधारा ८०६ धर्मकर्मफलप्रदा ॥ १२४ ॥

धर्माचारा धर्मसारा धर्ममध्यनिवासिनी ।
धनुर्वेदी धनुर्वादी धन्या धूर्त विनाशिनी ॥ १२५ ॥

८०७ धर्माचारा ८०८ धर्मसारा ८०९ धर्ममध्यनिवासिनी ८१० धनुर्वेदी ८११ धनुर्वादी ८१२ धन्या ८१३ धूर्तविनाशिनी ॥ १२५ ॥

धनधान्या धेनुरूपा धनाढ्या धनदायिनी ।
धनेशी धर्मनिरता धर्मराजप्रसादिनी ॥ १२६ ॥

८१४ धनधान्या ८१५ धेनुरूपा ८१६ धनाढ्या ८१७ धनदायिनी ८१८ धनेशी ८१९ धर्मनिरता ८२० धर्मराजप्रसादिनी ॥ १२६ ॥

धर्मस्वरूपा धर्मेशी धर्माऽधर्मविचारिणी ।
धर्मसूक्ष्मा धर्मसाक्षी धर्मिष्ठा धर्मगोचरा ॥ १२७ ॥

८२१ धर्मस्वरूपा ८२२ धर्मेशी ८२३ धर्माऽधर्मविचारिणी ८२४ धर्मसूक्ष्मा ८२५ धर्मसाक्षी ८२६ धर्मिष्ठा ८२७ धर्मगोचरा ॥ १२७ ॥

योकाररूपा योगेशी योगस्था योगरूपिणी ।
योगा योगोपमाराध्या योगमार्गनिवासिनी ॥ १२८ ॥

८२८ योकाररूपा ८२९ योगेशी ८३० योगस्था ८३१ योगरूपिणी ८३२ योगा ८३३ योगोपमाराध्या ८३४ योगमार्गनिवासिनी ॥ १२८ ॥

योगासनस्था योगेशी योगमाया विनासिनी ।
योगाऽयोगोपमाराध्या योगाङ्गी योगविग्रहा ॥ १२९ ॥

८३५ योगासनस्था ८३६ योगेशी ८३७ योगमाया ८३८ विलासिनी ८३९ योगाऽयोगोपमाराध्या ८४० योगाङ्गी ८४१ योगविग्रहा ॥१२९॥

योगवासी योगभोगी योगमार्गप्रदर्शिनी ॥ १३० ॥

८४२ योगवासी ८४३ योगभोगी ८४४ योगमार्गप्रदर्शिनी ॥ १३० ॥

योधा योधवती योग्याऽयोग्या योधनतत्परा ।
योधिनी योधिनीसेव्या योधज्ञानप्रबोधिनी ॥ १३१ ॥

८४५ योधा ८४६ योधवती ८४७ योग्या ८४८ अयोग्या ८४९ योधनतत्परा ८५० योधिनी ८५१ योधिनीसेव्या ८५२ योधज्ञान-प्रबोधिनी ॥ १३१ ॥

योगेश्वर-प्राणनाथा योगेश्वर-हृदि-स्थिता ।
योगाऽयोगक्षेमकर्त्री योगक्षेम विधारिणी ॥ १३२ ॥

८५३ योगेश्वर-प्राणनाथा ८५४ योगेश्वर-हृदि-स्थिता ८५५ योगाऽ-योगक्षेमकर्त्री ८५६ योगक्षेमविहारिणी ॥ १३२ ॥

योगराजेश्वराराध्या योगानन्दस्वरूपिणी ॥ १३३ ॥

८५७ योगराजेश्वराराध्या ८५८ योगानन्दस्वरूपिणी ॥ १३३ ॥

नवसिद्धिसमाराध्या नारायणमनोहरी ।
नारायणी नवाधारा नवब्रह्मार्चिता सदा ॥ १३४ ॥

८५९ नवसिद्धिसमाराध्या ८६० नारायणमनोहरी ८६१ नारायणी ८६२ नवाधारा ८६३ नवब्रह्मार्चिता ॥ १३४ ॥

नगेन्द्रतनयाराध्या नामरूपविवर्जिता ।
नारसिंहार्चितपदा नवबन्धविमोचनी ॥ १३५ ॥

८६४ नगेन्द्रतनयाराध्या ८६५ नामरूपविवर्जिता ८६६ नारसिंहार्चितपदा ८६७ नवबन्धविमोचनी ॥ १३५ ॥

नवग्रहार्चितपदा नवबन्धविमोचनी ।
नैमित्तिकार्थनप्रदा-नन्दितारि-विनाशनी ॥ १३६ ॥

८६८ नवग्रहार्चितपदा ८६९ नवबन्धविमोचनी ८७० नन्दितारि-विनाशिनी ॥ १३६ ॥

नवसूत्रविधानज्ञा नैमिषारण्यवासिनी ।
नवपीठस्थिता देवी नवर्षिगणसेविता ॥ १३७ ॥

८७१ नवसूत्रविधानज्ञा ८७२ नैमिषारण्यवासिनी ८७३ नवपीठ-स्थिता ८७४ देवी ८७५ नवर्षिगणसेविता ॥ १३७ ॥

नवचन्दनदिग्धाङ्गी नवकुङ्कुमधारिणी ।
नववस्त्रपरीधाना नवरत्नविभूषणा ॥ १३८ ॥

८७६ नवचन्दनदिग्धाङ्गी ८७७ नवकुङ्कुमधारिणी ८७८ नववस्त्र-परीधाना ८७९ नवरत्नविभूषणा ॥ १३८ ॥

नवभस्म-विदिग्धाङ्गी नवचन्द्रकलाधरा ।
प्रकाशरूपा प्राणेशी प्राणसंरक्षणीसदा ॥ १३९ ॥

८८० नवभस्मविदिग्धाङ्गी ८८१ नवचन्द्रकलाधरा ८८२ प्रकाश-रूपा ८८३ प्राणेशी ८८४ प्राणसंरक्षणी ॥ १३९ ॥

प्राणसञ्जीवनी प्राणा प्राणाऽप्राणप्रबोधिनी ।
प्रज्ञा प्रज्ञाप्रभा प्राच्या प्रतीची प्रबुधाप्रिया ॥ १४० ॥

८८५ प्राणसञ्जीवनी ८८६ प्राणा ८८७ प्राणाऽप्राणप्रबोधिनी ८८८ प्रज्ञा ८८९ प्रज्ञाप्रभा ८९० प्राच्या ८९१ प्रतीची ८९२ प्रबुधा-प्रिया ॥ १४० ॥

प्राचीरा प्रणयान्तस्था प्रभातज्ञानरूपिणी ।
प्रभातकर्मसन्तुष्टा प्राणायामपरायणा ॥ १४१ ॥

८९३ प्राचीरा ८९४ प्रणयान्तस्था ८९५ प्रभातज्ञानरूपिणी ८९६ प्रभातकर्मसन्तुष्टा ८९७ प्राणायामपरायणा ॥ १४१ ॥

प्रायज्ञा प्रणवा प्राप्ता प्रवृत्तिः प्रकृतः परा ॥ १४२ ॥

८९८ प्रायज्ञा ८९९ प्रणवा ९०० प्राप्ताप्रवृत्तिः ९०१ प्रकृतिः ९०२ परा ॥ १४२ ॥

प्रबन्धा प्रबुधा साक्षी प्राज्ञा प्रारब्धनाशिनी ।
प्रबोधनिरता प्रेक्षा प्रबन्धप्राणसाक्षिणी ॥ १४३ ॥

९०३ प्रबन्धा ९०४ प्रबुधा ९०५ साक्षी ९०६ प्राज्ञा ९०७ प्रारब्धनाशिनी ९०८ प्रबोधनिरता ९०९ प्रेक्षा ९१० प्रबन्धप्राणसाक्षिणी ॥१४३॥

प्रयागतीर्थनिलया प्रत्यक्षा परमेश्वरी ।
प्रणवाद्यन्तनिलया प्रणवादि-प्रचोदयात् ॥ १४४ ॥

९११ प्रयागतीर्थनिलया ९१२ प्रत्यक्षा ९१३ परमेश्वरी ९१४ प्रणवाद्यन्तनिलया ९१५ प्रणवादि-प्रचोदयात् ॥ १४४ ॥

चोकाररूपा चोरघ्नी चोरबाधाविनाशिनी ।
चेतनाऽचेतनाशीता चौराऽयौर्याचमत्कृतिः ॥ १४५ ॥

९१६ चोकाररूपा ९१७ चोरघ्नी ९१८ चोरबाधाविनाशिनी ९१९ चेतनाऽचेतनाशीता ९२० चौराऽयौर्याचमत्कृतिः ॥ १४५ ॥

चक्रवर्तित्वधारी च चक्रिणी चक्रधारिणी ।
चिरञ्जीवी चिदानन्दा चिद्रूपा चिद्विलासिनी ॥ १४६ ॥

९२१ चक्रवर्तित्वधारी ९२२ चक्रिणी ९२३ चक्रधारिणी ९२४ चिरञ्जीवी ९२५ चिदानन्दा ८२६ चिद्रूपा ९२७ चिद्विलासिनी ॥ १४६ ॥

चिन्ता चित्तप्रशमनी चिन्तितार्थफलप्रदा ।
चाम्पेयी चम्पकप्रीता चण्डी चण्डाट्टहासिनी ॥ १४७ ॥

९२८ चिन्ता ९२९ चित्तप्रशमनी ९३० चिन्तितार्थफलप्रदा ९३१ चाम्पेयी ९३२ चम्पकप्रीता ९३३ चण्डी ९३४ चण्डाट्टहासिनो ॥ १४७ ॥

चण्डेश्वरी चण्डमाता चण्ड-मुण्ड-विनाशिनी ।
चकोराक्षी चिरप्रीता चिकुरा चिकुरप्रिया ॥ १४८ ॥

९३५ चण्डेश्वरी ९३६ चण्डमाता ९३७ चण्ड-मुण्ड-विनाशिनी ९३८ चकोराक्षी ९३९ चिरप्रीता ९४० चिकुरा ९४१ चिकुरप्रिया ॥ १४८ ॥

चैतन्यरूपिणी चैत्री चेतना चित्तसाक्षिणी ।
चित्रा चित्र-विचित्राङ्गी चित्रगुप्तप्रसादिनी ॥ १४९ ॥
६४२ चैतन्यरूपिणी ६४३ चैत्री ६४४ चेतना ६४५ चित्तसाक्षिणी ६४६ चित्रा ६४७ चित्रविचित्राङ्गी ६४८ चित्रगुप्तप्रसादिनी ॥ १४९ ॥

चलना चलसंस्थायी चापिनी चलचित्रिणी ।
चन्द्रमण्डलमध्यस्था कोटिचन्द्रसुशीतला ॥ १५० ॥
६४९ चलना ६५० चलसंस्थायी ६५१ चापिनी ६५२ चलचित्रिणी ६५३ चन्द्रमण्डलमध्यस्था ६५४ कोटिचन्द्रसुशीतला ॥ १५० ॥

चन्द्रानुज-समाराध्या चन्द्रचन्द्रमहोदरी ।
चर्चितारिश्चन्द्रमाता चन्द्रकान्ता चलेश्वरी ॥ १५१ ॥
६५५ चन्द्रानुजसमाराध्या ६५६ चन्द्रचन्द्रमहोदरी ६५७ चर्चितारिः ६५८ चन्द्रमाता ६५९ चन्द्रकान्ता ६६० चलेश्वरी ॥ १५१ ॥

चराऽचरनिवासा च चक्रपाणिसहोदरी ।
दकाररूपा दत्तश्री-दारिद्र्य-च्छेदकारिणी ॥ १५२ ॥
६६१ चराऽचरनिवासा ६६२ चक्रपाणिसहोदरी ६६३ दकाररूपा ६६४ दत्तश्रीः ६६५ दारिद्र्यच्छेदकारिणी ॥ १५२ ॥

दन्तिनी दण्डिनी दीना दरिद्रा दीनवत्सला ।
दक्षाराध्या दक्षकन्या दक्षयज्ञविनाशिनी ॥ १५३ ॥
६६६ दन्तिनी ६६७ दण्डिनी ६६८ दीना ६६९ दरिद्रा ६७० दीनवत्सला ६७१ दक्षाराध्या ६७२ दक्षकन्या ६७३ दक्षयज्ञविनाशिनी ॥ १५३ ॥

दक्षा दाक्षायणी दाक्षा दीक्षादक्षवरप्रदा ।
दक्षिणा दक्षिणाराध्या दक्षिणामूर्तिरूपिणी ॥ १५४ ॥
६७४ दक्षा ६७५ दाक्षायणी ६७६ दाक्षा ६७७ दीक्षादक्षवरप्रदा ६७८ दक्षिणा ६७९ दक्षिणाराध्या ६८० दक्षिणामूर्तिरूपिणी ॥ १५४ ॥

दयावती दमवती दनुजादिर्दयानिधिः ।
दन्तशोभानिभा दैवदमना दाडिमस्तनी ॥ १५५ ॥
६८१ दयावती ६८२ दमवती ६८३ दनुजादिर्दयानिधिः ६८४ दन्तशोभानिभा ६८५ दैवदमना ६८६ दाडिमस्तनी ॥ १५५ ॥

दण्डा दमयता दण्डी दण्डाऽदण्डप्रसादिनी ।
दण्डकारण्यनिलया दण्डकारिविनाशिनी ॥ १५६ ॥
६८७ दण्डा ६८८ दमयता ६८९ दण्डी ६९० दण्डाऽदण्डप्रसादिनी ६९१ दण्डकारण्यनिलया ६९२ दण्डकारिविनाशिनी ॥ १५६ ॥

दंष्ट्राकरालप्रवृषी दण्डशोभादलादली ।
दरिद्रारिष्टशमनी दमादमनपूजिता ॥ १५७ ॥

९९३ दंष्ट्राकरालप्रवृषी ९९४ दण्डशोभादलादली ९९५ दरिद्रारिष्टशमनी ९९६ दमादमनपूजिता ॥ १५७ ॥

दानवार्चित-पादश्री द्रविणा द्रविणोदया ।
दामोदरी दानवारिर्दामोदरसहोदरी ॥ १५८ ॥

९९७ दानवार्चितपादश्रीः ९९८ द्रविणा ९९९ द्रविणोदया १००० दामोदरी १००१ दानवारिः १००२ दामोदरसहोदरी ॥ १५८ ॥

दातादानप्रिया दार्वी दानश्रीर्दानदण्डपा ।
दम्पतीदम्पती दूर्वा दधिदुग्धा दया दमा ॥ १५९ ॥

१००३ दाता १००४ दानप्रिया १००५ दार्वी १००६ दानश्रीः १००७ दानमण्डपा १००८ दम्पतीदम्पती १००९ दूर्वा १०१० दधिदुग्धा १०११ दया १०१२ दमा ॥ १५९ ॥

दाडिमीवीजसन्दोह-दन्तपंक्ति-विराजिता ।
दर्पणा दर्पणस्वच्छा द्रुममण्डलवासिनी ॥ १६० ॥

१०१३ दाडिमीवीजसन्दोह-दन्तपंक्तिविराजिता १०१४ दर्पणा १०१५ दर्पणस्वच्छा १०१६ द्रुममण्डलवासिनी ॥ १६० ॥

दशावतारजननी दशदिग्दीपपूजिता ।
दया दशदिशादृश्या दशदासी दयानिधिः ॥ १६१ ॥

१०१७ दशावतारजननी १०१८ दशदिग्दीपपूजिता १०१९ दया १०२० दशदिशादृश्या १०२१ दशदासी १०२२ दयानिधिः॥ १६१ ॥

देशकालपरिज्ञाना देशकालविशोधिनी ।
दशम्यादिकलाराध्या दशग्रीवप्रदर्पहा ॥ १६२ ॥

१०२३ देशकालपरिज्ञाना १०२४ देशकालविशोधिनी १०२५ दशम्यादिकलाराध्या १०२६ दशग्रीवप्रदर्पहा ॥ १६२ ॥

दशापराधशमनी दशवृत्तिफलप्रदा ।
यात्काररूपिणी याज्ञिकी यादवी यादवार्चिता ॥ १६३ ॥

१०२७ दशापराधशमनी १०२८ दशवृत्तिफलप्रदा १०२९ यात्काररूपिणी १०३० याज्ञिकी १०३१ यादवी १०३२ यादवार्चिता ॥ १६३ ॥

ययातिपूजनप्रीता याज्ञिकी याजकप्रिया ।
यादवीयातनातायी यामपूजाफलप्रदा ॥ १६४ ॥

१०३३ ययातिपूजनप्रीता १०३४ याज्ञिकी १०३५ याजकप्रिया १०३६ यादवीयातनायाता १०३७ यामपूजाफलप्रदा ॥ १६४ ॥

यशस्विनी यमाराध्या यमकन्या यतीश्वरी ।
यमादियोगसन्तुष्टा योगीन्द्रहृदिसङ्गमा ॥ १६५ ॥

१०३८ यशस्विनी १०३९ यमाराध्या १०४० यमकन्या १०४१ यतीश्वरी १०४२ यमादियोगसन्तुष्टा १०४३ योगीन्द्रहृदिसङ्गमा ॥ १६५ ॥

यमोपाधिविनिर्मुक्ता यशस्यविधिरच्युता ।
यातनाऽयातनादेहा यात्रापापादिवर्जिता ॥ १६६ ॥

१०४४ यमोपाधिविनिर्मुक्ता १०४५ यशस्यविधिः १०४६ अच्युता १०४७ यातनाऽयातनादेहा १०४८ यात्रापापादिवर्जिता[1] ॥ १६६ ॥[1]

इत्येतत् कथितं देवि ! रहस्यं सर्वकामदम् ।
सर्वपापप्रशमनं सर्वतीर्थ फलप्रदम् ॥ १६७ ॥

हे देवि ! समस्त कामनाओंको देनेवाले, समस्त पापोंको नाश करनेवाले तथा समस्त तीर्थोंके फलको देनेवाले इस रहस्यात्मक गायत्री-सहस्रनाम-स्तोत्रका कथन मैंने किया ॥ १६७ ॥

सर्वरोगहरं पुण्यं सर्वज्ञानमयं शिवम् ।
सर्वसिद्धिप्रदं देवि ! सर्वसौभाग्यवर्द्धनम् ॥ १६८ ॥

यह स्तोत्र समस्त रोगोंको हरण करनेवाला, अति पवित्र, सर्वज्ञानमय, कल्याणप्रद, सर्वसिद्धिप्रद तथा हे देवि ! समस्त सौभाग्यको बढ़ानेवाला है ॥ १६८ ॥

आयुष्यं वर्द्धते नित्यं लिखितं यत्र तिष्ठति ।
न चौराऽग्निभयं तस्य न च भूतभयं क्वचित् ॥ १६९ ॥

जहाँपर यह स्तोत्र लिखकर रखा होगा वहाँ रहनेवालोंकी आयु नित्यप्रति बढ़ती रहेगी, वहाँके निवासियोंको चोरसे, अग्निसे तथा भूतादिसे भय नहीं रहेगा ॥ १६९ ॥

किं पुनर्बहुणोक्तेन तथापि च वदाम्यहम् ।
सकृच्छ्रवणमात्रेण कोटिजन्माऽघनाशनम् ॥ १७० ॥

अधिक कहनेसे क्या प्रयोजन ? तथापि पुनः मैं कहता हूँ कि यदि इस स्तोत्रका एक बार भी श्रवण कर लिया जाय तो करोड़ों जन्मोंके पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ १७० ॥

महापातककोटीनां भञ्जनं स्मृतिमात्रतः ।
अपवादक-दौर्भाग्य-शमनं भुक्ति-मुक्तिदम् ॥ १७१ ॥

---

१. गायत्री-सहस्रनाम-स्तोत्र श्लोक संख्या १ से १६६ तक है ।

इस स्तोत्रके स्मरणमात्रसे करोड़ों महापातक नष्ट होते हैं, झूठी निन्दा और दुर्भाग्य भी शान्त हो जाते हैं, पश्चात् भोग और मुक्ति भी प्राप्त होती है ॥ १७१ ॥

विषरोगादि दारिद्र्य-मृत्यु-संहारकारणम् ।
सप्तकोटि-महामन्त्र-पारायण-फलप्रदम् ॥ १७२ ॥

इस स्तोत्रसे विष-रोग-दरिद्रता और मृत्यु टल जाती है, साथ ही सात करोड़ महामन्त्रोंके पाठ करनेका फल भी प्राप्त होता है ॥१७२॥

शतरुद्रीयकोटीनां जपं यज्ञफलप्रदम् ।
चतुः समुद्रपर्यन्तं-भूदानं तत्फलं शिवे ॥ १७३ ॥

यह स्तोत्र करोड़ों शतरुद्रीय जप और यज्ञके फलको देनेवाला है, हे पार्वती ! चारों समुद्रोंसे वेष्टित समस्त पृथ्वीके दान-फलको भी देनेवाला है ॥ १७३ ॥

सहस्रकोटि-गोदान-फलदं स्मृतिमात्रतः ।
कोट्यश्वमेधफलदं जरा-मृत्यु-निवारणम् ॥ १७४ ॥

इस स्तोत्रके स्मरणमात्रसे सहस्रकोटि गोदानका फल मिलता है, करोड़ों अश्वमेध यज्ञका फल भी मिलता है और बुढ़ापा तथा मृत्यु भी दूर हो जाती है ॥ १७४ ॥

कन्याकोटिप्रदानेन यत्फलं लभते नरः ।
तत्फलं लभते सम्यङ् नाम्नां दशशती जपात् ॥ १७५ ॥

गायत्रीसहस्रनामावली स्तोत्रके पाठसे एक करोड़ कन्यादानके समान अच्छी तरह फल प्राप्त होता है ॥ १७५ ॥

यः शृणोति महाविद्यां श्रावयेद् वा समाहितः ।
सोऽपि मुक्तिमवाप्नोति यत्रगत्वा न शोचति ॥ १७६ ॥

जो महाविद्यास्वरूप इस स्तोत्रको सावधान होकर सुनता या सुनाता है वह भी मुक्ति का भागी होता है और जिस मुक्तिको प्राप्त करके मनुष्यको पुनः सोचनेका प्रश्न ही नहीं उठता ॥ १७६ ॥

ब्रह्महत्यादि-पापानां नाशः स्याच्छ्रवणेन च ।
किं पुनः पठनादस्य मुक्तिः स्यादनपायिनी ॥ १७७ ॥

इस स्तोत्रके श्रवणसे ही ब्रह्महत्यादि महापाप नष्ट हो जाते हैं तो जो श्रद्धापूर्वक इसका पाठ करता है उसका कहना ही क्या ? उसे अनपायिनी मुक्ति मिलती है ॥ १७७ ॥

इदं रहस्यं परमं पुण्यं स्वस्त्ययनं महत्।
यः सकृद् वा पठेत् स्तोत्रं शृणुयाद् वा समाहितः ॥ १७८ ॥
लभते च ततः कामानन्ते ब्रह्मपदं व्रजेत्।
स च शत्रून् जयेत् सद्यो मातङ्गानिव केसरी ॥ १७९ ॥

परमपवित्र महान् कल्याणकारक रहस्यात्मक स्तोत्रको जो एक बार समाहित होकर पढ़ता है या सुनाता है वह समस्त कामनाओंको प्राप्त करता है। जिस प्रकार सिंह हाथियों पर विजय प्राप्त करता है वैसे ही वह व्यक्ति अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त करता है और अन्तमें ब्रह्मपदको प्राप्त करता है ॥ १७८–१७९ ॥

इति गायत्री-सहस्रनाम-स्तोत्रम् ॥

अथ गायत्री उपनिषद्

नमस्कृत्य भगवान् याज्ञवल्क्यः स्वयं परिपृच्छति त्वं ब्रूहि भगवन् ! गायत्र्या उत्पत्तिं श्रोतुमिच्छामि ?

भगवत् सत्ता सम्पन्न योगी याज्ञवल्क्यजीने ब्रह्माजीको नमस्कार करके स्वतः उनसे यह प्रश्न पूछा कि हे भगवन् ! आपसे गायत्रीकी उत्पत्तिके विषयमें सुनना चाहता हूँ, आप मुझसे कहें ।

ब्रह्मोवाच—प्रणवेन व्याहृतयः प्रवर्तन्ते, तमसस्तु परं ज्योतिष्कः पुरुषः स्वयम् । भूर्विष्णुरिति ह ताः स्वाङ्गुल्यामथेत् । मध्यमात् फेनो-भवति, फेनाद् बुद्बुदो भवति, बुद्बुदादण्डं भवति, अण्डवा-नात्मा भवति, आत्मन आकाशो भवति, आकाशाद् वायुर्भवति, वायोरग्निर्भवति, अग्नेरोङ्कारो भवति, ॐकाराद व्याहृतिर्भवति, व्याहृत्या गायत्री भवति, गायत्र्याः सावित्री भवति, सावित्र्याः सरस्वती भवति, सरस्वत्या वेदा भवन्ति, वेदेभ्यो ब्रह्मा भवति, ब्रह्मणो लोका भवन्ति, तस्माल्लोकाः प्रवर्तन्ते, चत्वारो वेदाः साङ्गाः सोपनिषदः सेतिहासास्ते सर्वेगायत्र्याः प्रवर्तन्ते ।

श्री ब्रह्माजीने कहा—प्रणवसे व्याहृतियाँ उत्पन्न होती हैं, तमोगुण-से परमप्रकाशवान् विराट् पुरुषकी उत्पत्ति होती है। भूरूपी विष्णुने अपनी अङ्गुलियोंसे उन व्याहृतियोंका मन्थन किया । मध्यमसे फेन हुआ, फेनसे बुदबुद हुआ, बुदबुदसे अण्डकी उत्पत्ति हुई, ब्रह्माण्ड ही आत्मा है, आत्मासे आकाश हुआ, आकाशसे वायु हुआ, वायुसे अग्नि हुई, अग्निसे ॐकार हुआ, ॐकार से व्याहृति हुई, व्याहृतिसे गायत्री हुई, गायत्रीसे सावित्री हुई, सावित्रीसे सरस्वती हुई, सरस्वतीसे वेद हुए, वेदसे ब्रह्मा हुए, ब्रह्मासे समस्त लोक हुए, साङ्गोपाङ्ग चारों वेद, उपनिषद और इतिहास आदि ये सभी गायत्री से उत्पन्न हुए ।

यथा—अग्निर्देवानां ब्राह्मणो मनुष्याणां मेरुः शिखरिणां गङ्गा नदीनां वसन्तऋतूनां ब्रह्मा प्रजापतीनामेवाऽसौ मुख्यः गायत्र्या गायत्रीछन्दो भवति ।

जैसे देवताओंमें अग्नि, मनुष्योंमें ब्राह्मण, पर्वतोंमें सुमेरु, नदियोंमें गङ्गा मुख्य हैं वैसे ही गायत्रीसे गायत्री छन्द मुख्य है ।

किं भूः किं भुवः किं स्वः किं महः किं जनः किं तपः किं सत्यं किं तत् किं सवितुः किं वरेण्यं किं भर्गः किं देवस्य किं धीमहि किं धियः किं यः किं नः किं प्रचोदयात् ?

प्रश्न किया गया कि—भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यं, तत् , सवितुः, वरेण्यं, भर्गः, देवस्य, धीमहि, धियः, यः, नः, प्रचोदयात् ये सब क्या हैं ?

भूरिति भूर्लोकः भुव इत्यन्तरिक्षलोकः, स्वरिति स्वर्लोकः, मह इति महर्लोकः, जन इति जनोलोकः, तप इति तपोलोकः, सत्यमिति सत्यलोकः। भूर्भुवः स्वरोमिति त्रैलोक्यम्। तदसौ तेजो यत्तेजसोऽग्निर्देवता सवितुरित्यादित्यस्य वरेण्यमित्यन्नम्। अन्नमेव प्रजापतिः। भर्गः इत्यापः। आपो वैभर्गः। एतावत् सर्वा देवताः। देवस्येन्द्रो वै देवयीद्देवं तदिन्द्रस्तस्मात् सर्वकृत् पुरुषो नाम विष्णुः। धीमहि किमध्यात्मं तत्परमं पदमित्यध्यात्मं यो न इति पृथिवी वै यो नः प्रचोदयात् काम इमाँल्लोकान् प्रत्यावयन् यो नृशंस्योऽस्तोष्यतत्परमो-धर्मः।

उपर्युक्त प्रश्नोंका उत्तर है, भूः भूलोकका नाम है, भुवःअन्तरिक्ष लोकका नाम है, स्वः स्वर्लोकका नाम है, महः महर्लोकका नाम है, जनः जनलोकका नाम है, तपः तपोलोकका नाम है, सत्यं सत्यलोकका नाम है। भूर्भुवःस्वः इन सबको त्रिलोकी कहते है। यह वही तेज है, जिस तेजसे अग्नि देवता हुए, सविता नाम आदित्यका है, वरेण्य नाम अन्न का है, अन्न ही प्रजापति है। भर्ग नाम जलका है इसीलिये "आपोवैभर्गः" ऐसा कहा गया है। ये ही देवताके नामसे प्रसिद्ध हैं। देवताओंका स्वामी इन्द्र है। जो देवताओंको क्रीडा करावे वही इन्द्र है, उस इन्द्रसे सर्वश्रष्टा पुरुष हुए जिनका नाम विष्णु है। हम किसका ध्यान करें ? अध्यात्मका, उस परम पदका नाम अध्यात्म है, यो नः यह पृथिवी तत्व है, वह तत्व हमारी कामनाओंको प्रेरित करे अर्थात् इन लोक सुखोंको अर्पित करता हुआ जो नृशंस्य है अर्थात् अपनी उत्कृष्टताके कारण अस्तोष्य है, स्तुतिसे परे है उस परमका नाम धर्म है।

इत्येषा गायत्री किं गोत्रा, कत्यक्षरा, कति पदा, कति कुक्षिः, कति शीर्षाणि ?

फिर प्रश्न किया गया कि उपर्युक्त विशेषण विशिष्टा गायत्रीका

गोत्र क्या है, कितने अक्षर हैं, कितने पाद हैं, कितनी कुक्षियां हैं तथा कितने शिर हैं ?

सांख्यायनसगोत्रा गायत्री, चतुर्विंशत्यक्षरा त्रिपदा षट् कुक्षिः सावित्री केशास्त्रयः पादा भवन्ति।

उपर्युक्त प्रश्नोंके उत्तरमें कहा गया कि:—गायत्रीका सांख्यायनस गोत्र है, चौबीस अक्षर हैं, तीन पाद है, छः कुक्षियाँ हैं, सावित्री ही केश है अर्थात् शिर है और तीन पाद हैं।

काऽस्याः कुक्षिः कानि पञ्चशीर्षाणि ?

पुनः प्रश्न किया गया कि—इस गायत्रीकी कौन-कौन कुक्षियाँ और कौन-कौन पाँच शिर हैं ?

ऋग्वेदोऽस्याः प्रथमः पादो भवति, यजुर्वेदो द्वितीयः, सामवेदऽस्तृतीया, पूर्वादिक्प्रथमा कुक्षिर्भवति, दक्षिणाद्वितीया, पश्चिमा तृतीया, उदीची चतुर्थी, ऊर्ध्वा पञ्चमी, अधरा षष्ठी कुक्षिः। व्याकरणमस्याः प्रथमं शीर्षं भवति, शिक्षा द्वितीयं, कल्पस्तृतीयं, निरुक्तं चतुर्थं, ज्योतिषामयनं पञ्चमम्।

उपर्युक्त प्रश्न के उत्तरमें कहा गया कि—इस गायत्रीका ऋग्वेद प्रथम पाद, यजुर्वेद द्वितीय पाद, तथा सामवेद तृतीय पाद है। पूर्व दिशा प्रथम कुक्षि, दक्षिण दिशा द्वितीय कुक्षि, पश्चिम दिशा तृतीय कुक्षि, उत्तर दिशा चतुर्थ कुक्षि, उद्र्ध्वदिशा पञ्चम कुक्षि तथा अधोदिशा षष्ठ कुक्षि है। इस देवीके व्याकरण प्रथम शिर, शिक्षा द्वितीय शिर, कल्प तृतीय शिर, निरुक्त चतुर्थ शिर तथा ज्योतिष पञ्चम शिर है।

किंलक्षणं किमुचेष्टितं किमुदाहृतं किमक्षरं दैवत्यम् ?

पुनः प्रश्न किया गया कि—इस देवी का लक्षण क्या है ? क्या चेष्टा है ? उदाहरण क्या है ? तथा किस देवताके अक्षर हैं ?

लक्षणं मीमांसां अथर्ववेदौ विचेष्टितम्, छन्दो विधिरित्युदाहृतम्।

उत्तर में कहा गया कि—इस देवीके मीमांसा शास्त्र ही लक्षण हैं, अथर्ववेद ही चेष्टा है, छन्दका विधान ही उदाहरण है।

को वर्णः, कः, स्वरः ?

पुनः प्रश्न किया गया कि—इनका वर्ण क्या है ? स्वर किसे कहते हैं ?

श्वेतोवर्णः, षट्स्वराणि।

उत्तरमें कहा गया कि—श्वेतवर्ण है, छः स्वर हैं, ये ही छः स्वराक्षर ही देवता हैं।

पूर्वा भवति गायत्री, मध्यमा सावित्री, पश्चिमा सन्ध्या सरस्वती।

पूर्वा सन्ध्याका नाम गायत्री, मध्याह्न सन्ध्याका नाम सावित्री तथा सायं सन्ध्याका नाम सरस्वती है।

प्रातः सन्ध्या रक्ता रक्तपद्मासनस्था रक्ताम्बरधरा रक्तवर्णा रक्त-गन्धानुलेपना चतुर्मुखा अष्टभुजा द्विनेत्रा दण्डाऽक्षमाला कमण्डलु-स्रु-क्स्रुवधारिणी सर्वाभरणभूषिता गायत्री कौमारी ब्राह्मी हंसवाहिनी ऋग्वेदसंहिता ब्रह्मदेवत्या त्रिपदा गायत्री षट्कुक्षिः पञ्चशीर्षा अग्नि-मुखा रुद्र-शिव-विष्णुहृदया ब्रह्मकवचा सांख्यायनसगोत्रा भूर्लोक-व्यापिनी अग्निस्तत्त्वम्, उदात्ताऽनुदात्त-स्वरितस्वर-मकारः, आत्म-ज्ञाने विनियोगः। इत्येषा गायत्री।

प्रातः सन्ध्यामें देवीका वर्ण लाल है, लाल कमलके आसनपर स्थित हैं, रक्त वस्त्रसे अलङ्कृत हैं, रक्त चन्दनसे चर्चित हैं, चार मुख हैं, आठ भुजाएँ हैं, दो नेत्र हैं, दण्ड–अक्षमाला–कमण्डलु–स्रुक तथा स्रुवा आदि धारणकी हुई हैं, समस्त आभूषणोंसे भूषित हैं, गायत्री–कौमारी ब्राह्मी आदि अनेक नाम हैं, हंसपर आरूढ़ हैं, ऋग्वेद संहितासे युक्त हैं, ब्रह्म देवता हैं, त्रिपदा गायत्री हैं, छः कुक्षियाँ हैं, पाँच शिर हैं, अग्नि ही मुख है, रुद्र–विष्णु तथा शिव हृदय हैं, ब्रह्म कवच है, सांख्यायनस गोत्र है, भूलोकमें व्याप्त है, अग्नि ही तत्त्व है, उदात्त–अनुदात्त–स्वरित स्वर मकार हैं, आत्मज्ञानार्थ इनका विनियोग होता है, इस प्रकार प्रातःकालीन गायत्री का रूप है।

मध्याह्नसन्ध्या श्वेता श्वेतपद्मासनस्था श्वेताम्बरधरा श्वेतगन्धानु-लेपना पञ्चमुखी दशभुजा त्रिनेत्रा शूलाऽक्षमाला-कमण्डलु-कपाल-धारिणी सर्वाभरणभूषिता सावित्री युवतीमाहेश्वरी वृषभवाहिनी यजुर्वेदसंहिता रुद्रदैवत्या त्रिपदा सावित्री षट्कुक्षिः पञ्चशीर्षा अग्निमुखा रुद्रशिखा ब्रह्मकवचा भारद्वाजसगोत्रा भुवर्लोकव्यापिनी वायुस्तत्त्वम्, उदात्ता-ऽनुदात्त स्वरितस्वरमकारः श्वेतवर्ण आत्म-ज्ञाने विनियोगः। इत्येषा सावित्री।

मध्याह्न सन्ध्यामें गायत्रीका श्वेत वर्ण है, श्वेत कमलके आसनपर स्थित हैं, श्वेत चन्दनसे चर्चित हैं, पाँच मुख हैं, दश दश भुजाएँ हैं, तीन नेत्र हैं, त्रिशूल-अक्षमाला–कमण्डलु और कपाल धारणकी हैं,

समस्त आभूषणोंसे आभूषित हैं, युवती हैं, वे माहेश्वरी स्वरूपा सावित्री वृषभ पर आरूढ़ हैं, संहिताका नाम यजुर्वेद है, देवता रुद्र हैं, त्रिपदा सावित्रीकी छः कुक्षियां हैं, पाँच शिर हैं, अग्नि मुख है, रुद्र-शिखा है, ब्रह्मकवच है, भारद्वाजस गोत्र है, अन्तरिक्षलोकमें व्याप्त है, वायु तत्व है, उदात्त–अनुदात्त स्वरित स्वर मकार हैं, श्वेतवर्णका है, इनका विनियोग आत्मज्ञानके लिए किया जाता है, उपर्युक्त रूपोंसे सम्पन्न मध्याह्न कालीन सावित्री हैं।

सायं सन्ध्या कृष्णा कृष्णपद्मासनस्था कृष्णाम्बरधरा कृष्णवर्णा कृष्णगन्धानुलेपना कृष्णमाल्याम्बरधरा एकमुखी चतुर्मुखो द्विनेत्रा शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधारिणी सर्वाभरणभूषिता सरस्वती वृद्धा वैष्णवी गरुडवाहिनी सामवेदसंहिता विष्णुदैवत्या त्रिपदा षट्कुक्षिः पञ्च-शीर्षा अग्निमुखा विष्णुहृदया ब्रह्मरुद्रशिखा ब्रह्मकवचा काश्यपसगोत्रा स्वर्लोकव्यापिनी सूर्यस्तत्त्वम् उदात्ताऽनुदात्त-स्वरितस्वरमकारः कृष्णवर्णो मोक्षज्ञाने विनियोगः। इत्येषा सरस्वती।

सायंकालीन सन्ध्यामें गायत्रीका वर्ण कृष्ण है, नीलकमलके आसनपर स्थित हैं, कृष्ण वस्त्र धारण की हुई हैं, वे कृष्णवर्णा देवी कृष्णवर्णके चन्दनसे चर्चित हैं, एक मुख है, चार भुंजाएँ हैं, दो नेत्र हैं, शङ्ख-चक्र-गदा तथा पद्म धारणकी हुई हैं, समस्त अलंकारोंसे अलङ्कृत हैं, वे वृद्धा वैष्णवी सरस्वतीदेवी गरुड़पर आरूढ़ हैं, विष्णु देवता हैं, तीन पाद हैं, छः कुक्षियाँ हैं, पाँच शिर हैं, अग्निमुख है, विष्णु हृदय है, ब्रह्मरुद्र शिखा है, ब्रह्म कवच है, काश्यपसगोत्र है, स्वर्लोक में व्याप्त हैं, सूर्यतत्त्व है, उदात्त-अनुदात्त-स्वरित स्वर वर्ण वाला मकार कृष्ण वर्ण का है। इनका विनियोग मोक्ष लाभार्थ किया जाता है, इस प्रकार सायंकालीन सरस्वती स्वरूपा गायत्रीका रूप है।

रक्ता गायत्री श्वेता सावित्री कृष्णवर्णा सरस्वती।
प्रणवो नित्ययुक्तश्च व्याहृतीषु च सप्तसु॥

गायत्रीका वर्ण लाल, सावित्री का वर्ण श्वेत और सरस्वतीका वर्ण काला है, सातों व्याहृतियों में प्रणव अर्थात् ॐकार नित्ययुक्त रहता है।

सर्वेषामेव पापानां सङ्करे समुपस्थिते।
दशशतं समभ्यर्च्य गायत्री पावनी महत्॥

समस्त पापों का समूह यदि एक साथ एकत्रित हो जाय तो एक हजार गायत्री मन्त्र का जप करें तो गायत्री उन पापों से जपकर्ताको पवित्र कर देती हैं।

प्रह्लादोऽत्रि-र्वशिष्ठश्च शक्रः कण्वः पराशरः।
विश्वामित्रो महातेजाः कपिलः शौनको महान्॥
याज्ञवल्क्यो भरद्वाजो जमदग्निस्तपोनिधिः।
गौतमो मुद्गलः श्रेष्ठो वेदव्यासश्च लोमशः॥
अगस्त्यः कौशिको वत्सः पुलस्त्यो माण्डुकस्तथा।
दुर्वासास्तपसा श्रेष्ठो नारदः कश्यपस्तथा॥

प्रह्लाद-अत्रि-शक्र-कण्व-पराशर-महातेजस्वी विश्वामित्र कपिल-महान् शौनक-याज्ञवल्क्य-भरद्वाज-तपोनिधि जमदग्नि-गौतम-मुद्गल-सर्वश्रेष्ठ वेदव्यास-लोमश-अगस्त्य-कौशिक-वत्स-पुलस्त्य माण्डूक-दुर्वासा सर्वश्रेष्ठ नारद तथा कश्यप ये सब ऋषिगण हैं।

उक्तात्युक्ता तथा मध्या प्रतिष्ठानासु पूर्विका।
गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च बृहतीपंक्तिरेव च॥
त्रिष्टुप् च जगती चैव तथाऽति जगती मता।
शक्वरी सातिपूर्वा स्यादष्ट्यत्यष्टी तथैव च॥
धृतिश्चाऽति धृतिश्चैव प्रकृतिः कृतिराकृतिः।
विकृतिः संकृतश्चैव तथातिकृतिरुत्कृतिः॥
इत्येताश्छन्दसां संज्ञाः क्रमशोवच्मि साम्प्रतम्।

उक्ता-अत्युक्ता-मध्या-पूर्वमध्या-गायत्री-उष्णिक्-अनुष्टुप-बृहती-पङ्क्ति-त्रिष्टुप्-जगती-अतिजगती-शक्वरी-अतिशक्वरी-अष्टि-अत्यष्टि-धृति-अतिधृति-प्रकृति-कृति-आकृति-विकृति-संकृति-अतिकृति-उत्कृति-ये सब छन्दों के नाम हैं—जिन्हें क्रमशः कहता हूँ।

भूरिति छन्दो भुव इति छन्दः स्वरिति छन्दो भूर्भुवः स्वरोमिति देवी गायत्री इत्येतानि छन्दांसि प्रथममाग्नेयं द्वितीयं प्राजापत्यं तृतीयं सौम्यं चतुर्थमैशानं पञ्चमादित्यं षष्ठं बार्हस्पत्यं सप्तमं पितृदेवत्यमष्टमं भगदेवत्यं नवममार्यमं दशमं सावित्रमेकादशं त्वाष्ट्रं द्वादशं पौष्णं त्रयोदश मैन्द्राग्न्यं चतुर्दशं वायव्यं पञ्चदशं वामदैवत्यं षोडशं मैत्रावरुणं सप्तदशमाङ्गिरं समष्टादशं वैश्वदेव्यकोनविंशं वैष्णवं विंशं वासवमेकविंशं रौद्रं द्वाविंशमाश्विनं त्रयोदशे ब्राह्मं चतुर्विंशं सावित्रम्।

भू छन्द, भुवः छन्द, स्वछन्द है, भूभुर्वः स्वरोम यह गायत्री देवी के सब छन्द हैं। प्रथम के अग्निदेवता हैं, द्वितीयका प्रजापति देवता हैं, तृतीयका सोम देवता है, चतुर्थका ईशान देवता हैं, पञ्चमका आदित्य देवता हैं, छठेका बृहस्पति देवता है, सातवेंका पितृ देवता हैं, आठवेंका भग देवता है, नवेंका आर्यमा देवता है, दशवेंका सविता देवता है ग्यारहवेंका त्वण्ट्रा देवता है, बारहवेंका पूषा देवता है, तेरहवेंका इन्द्राग्नि देवता है, चौदहवेंका वायु देवता है, पन्द्रहवेंका वामदेवता है, सोलहवें का मित्रावरुण देवता है, सत्रहवेंका अङ्गिरा देवता हैं, अठारहवें का विश्वेदेवदेवता है, उन्नीसवेंका विष्णु देवता है, बीसवेंका बसुगण देवता है, इक्कीसवें का रुद्रदेवता है, बाईसवेंका अश्विनी देवता है, तेइसवेंका ब्रह्मा देवता है तथा चौबीसवेंका सविता देवता है।

दीर्घान् स्वरेण संयुक्तान् बिन्दु-नाद समन्वितान्।
व्यापकान् विन्यसेत् पश्चाद् दशपंक्त्यक्षराणि च ॥

दीर्घ स्वरों से संयुक्त बिन्दु-नाद समन्वित व्यापकादि करने के पश्चात् पङ्क्ति छन्द के दशाक्षरों का विन्यास करे।

दुद्रवुपुंस इति प्रत्यक्षबीजानि।

दुद्रवुपुंस ये प्रत्यक्ष बीज है।

प्रह्लादिनी प्रभा सत्या विश्वा भद्रा विलासिनी।
प्रभावती जया कान्ता शान्ता पद्मा सरस्वती ॥
विद्रुम स्फटिकार्का पद्मरागसमप्रभम्।
इन्द्रनीलमणि प्रख्यं मौक्तिकं कुङ्कुमप्रभम् ॥
अञ्जनाभं च गाङ्गेयं वैडूर्य चनुसन्निभम्।
हारिद्रं कृष्णं दुग्धाभं रविकान्तिसमं भवम् ॥
शुकपिच्छ समाकारं क्रमेण परिकल्पयेत्।
पृथ्व्यापस्तथा तेजो वायुराकाश एव च ॥
गन्धो रसश्च रूपं च शब्दः स्पर्शस्तथैव च।
घ्राणं जिह्वा च चक्षुश्च त्वक् श्रोत्रं च तथापरम् ॥
उपस्थपायुपादादि पाणिर्वागपि च क्रमात्।
मनोबुद्धिरहङ्कारमव्यक्तं च यथा क्रमात् ॥

प्रह्लादिनी-प्रभा-सत्या-विश्वा-भद्रा-विलासिनी-प्रभावती-जया-कान्ता-शान्ता-पद्मा तथा सरस्वती आदि शक्तियाँ मूँगा और स्फटिक

पद्मराग-इन्द्रनीलमणि, मोती-कुङ्कुम-अञ्जन-सुवर्ण-चन्द्रके समान समुज्ज्वल चन्द्रकान्तमणि-पुखराज-कृष्णश्वेतमणि-सूर्यकान्तमणि और हरितमणियोंकी आभावाले बनावें, पश्चात् उन मूर्तियोंमें गन्ध ग्रहण करनेके लिए नाक-रसास्वादके लिए जिह्वा, शब्दश्रवणार्थ कान, स्पर्शानुभवके लिए त्वचा आदिका निर्माण क्रमशः पृथिवी-जल-तेज-आकाश और वायु तत्त्वोंसे करे। पश्चात् लिङ्ग-गुदा-हाथ-पैर-मुख-मन-बुद्धि-अव्यक्त-अहंकारादिका क्रमशः निर्माण करें।

सुमुखं सम्पुटं चैव विततं विस्तृतं तथा।
एकमुखं च द्विमुखं त्रिमुखं च चतुर्मुखम् ॥
पञ्चमुखं षण्मुखं चाऽधोमुखं चैव व्यापकम्।
अञ्जलीकं ततःप्रोक्तं मुद्रितं तु त्रयोदशम् ॥

पश्चात् सुमुख-सम्पुट-वितत-विस्तृत-एकमुख-द्विमुख-त्रिमुख-चतुर्मुख-पञ्चमुख-षण्मुख-अधोमुख-व्यापक और अञ्जलीकादि ये तेरह मुद्रायें कही गयी हैं।

शंकर यमपाशं च ग्रथितं सम्मुखोन्मुखम्।
प्रलम्बं मुष्टिकं चैव मत्स्यः कूर्मो वराहकम् ॥
सिंहाक्रान्तं महाक्रान्तं मुद्गरं पल्लवं तथा।
एता मुद्राश्चतुर्विंशद् गायत्र्याः सुप्रतिष्ठिताः ॥

इसके बाद शकट-यमपाश-सम्मुखोन्मुख नामक ग्रथित, प्रलम्ब-मुष्टिक, मत्स्य, कूर्म, वराह, सिंहाक्रान्त-महाक्रान्त तथा पल्लवाकार मुद्गरादि कुल मिलाकर गायत्रीकी प्रसिद्ध चौबीस मुद्रायें हैं।

ॐ मूर्ध्नि सङ्गते ब्रह्मा विष्णुर्ललाटे रुद्रो भ्रूमध्ये चक्षुश्चन्द्रादित्यौ कर्णयोः शुक्र-बृहस्पती नासिके वायुर्दैवत्यं प्रभातं दोषा उभे सन्ध्ये मुखमग्निर्जिह्वा सरस्वती ग्रीवा स्वाध्यायाः स्तनयोर्वसवो बाह्वोर्मरुतः हृदयं पर्जन्यमाकाशमपरं नाभिरन्तरिक्षं कटिरिन्द्रियाणि जघनं प्राजापत्यं कैलासमलयौ ऊरु विश्वेदेवा जानुभ्यां जान्वोः कुक्षिकौ जङ्घयो-रयनद्वयं सुराः पितरः पादौ पृथिवी वनस्पतिर्गुल्फौ रोमाणि मुहूर्तास्ते विग्रहाः केतुभासा ऋतवः सन्ध्याकालत्रयच्छादनं संवत्सरो निमिषः अहोरात्रावादित्य चन्द्रमसौ।

पश्चात् देवीके विराट् विग्रहकी कल्पना करें जैसे—शिरोभागमें ब्रह्मा, ललाटमें विष्णु, भ्रूमध्यमें रुद्र, नेत्रोंमें सूर्य-चन्द्र, कानोंमें शुक्र

तथा बृहस्पति, नासिकामें वायुदेव, प्रभात और सायं दोनों सन्ध्यायें मुख, अग्नि, जिह्वा, स्वाध्याययुक्त सरस्वती गला, स्तनद्वयमें वसुगण, बाहुओंमें देवगण, मेघयुक्त आकाश हृदय, नाभि अन्तरिक्ष, इन्द्रियाँ कटि, प्रजापति जघन, कैलाश और मलय ऊरु, विश्वेदेव जानु, जानुओंमें कुशिकद्वय, जङ्घाओंमें उत्तरायण और दक्षिणायण, देव और पितृगण चरण, वृक्षोंसे युक्त पृथ्वी घुटनें, समस्त मुहूर्त रोमराजि इस प्रकार हे देवि ! आप सबके विराट् विग्रह हैं। द्वादश मास आपके ध्वजा हैं, ऋतु दोनों सन्ध्यायें, भूत, भविष्य तथा वर्तमान तीनों काल शक और सम्वत्सर आपके ओढ़ना और बिछौना हैं, दिन और रात सम्पन्न सूर्य एवं चन्द्र आपके पलक हैं।

सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां दशापराम् ।
सहस्रनेत्रीं देवीं गायत्रीं शरणमहं प्रपद्ये ॥
तत्सवितुर्वरदाय नमः, तत्प्रातरादित्याय नमः।

हजारों संख्याओंसे परिपूर्ण तथा शतसंख्या जिनके मध्यभाग हैं, दशसंख्या अपरभाग हैं, हजारों जिनके नेत्र हैं ऐसी गायत्री देवीकी मैं शरण ग्रहण करता हूँ। उस वरदायक सविताको नमस्कार है तथा प्रभातसे सम्पन्न सूर्यदेवको नमस्कार है।

सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। तत्सायं प्रातः प्रयुञ्जानोऽपापो भवति। य इदं गायत्रीहृदयं ब्राह्मणः प्रयतः पठेत्। चत्वारो वेदा अधीता भवन्ति। सर्वेषु तीर्थेषु स्नातो भवति। सर्वैर्देवैर्ज्ञातो भवति। सर्वप्रत्यूहात् पूतो भवति। अपेयपानात् पूतो भवति। अभक्ष्यभक्षणात् पूतो भवति। अलेह्यलेहनात् पूतो भवति। अचोष्य चोष्यणात् पूतो भवति। सुरापानात् पूतो भवति। सुवर्णस्तेयात् पूतो भवति। पंक्तिभेदनात् पूतो भवति। पतितसम्भाषणात् पूतो भवति। अनृतवचनात् पूतो भवति। गुरुतल्पगमनात् पूतो भवति। अगम्यगमनात् पूतो भवति। वृषलीगमनात् पूतो भवति। ब्रह्महत्यायाः पूतो भवतिः। भ्रूणहत्यायाः पूतो भवति। वीरहत्यायाः पूतो भवति। अब्रह्मचारी सुब्रह्मचारी भवति। हृदयेनाऽधीतेन अनेन क्रतुशते नेष्टं भवति। षष्टिसहस्रं गायत्रीजप्यानि भवन्ति। अष्टौ ब्राह्मणान् ग्राहयेदर्थसिद्धिर्भवति।

यं इदं गायत्रीहृदयं ब्राह्मणः प्रयतः पठेत्।
स सर्वं पापैः प्रमुच्यते ब्रह्मलोके महीयते॥

सायंकाल इसके अध्ययन करनेसे दिनकृत पाप और प्रातःकाल अध्ययन करनेसे रात्रिकृत पाप नष्ट होते हैं। प्रातः सायं दोनों कालमें अध्येता निष्पाप होता है। जो ब्राह्मण सावधान होकर इस गायत्री-हृदयका पाठ करता है उसे चारों वेदोंका पारायण अपने आप हो जाता है। समस्त तीर्थोंमें वह कृतस्नान होता है। सभी देवगण उसे जान लेते हैं। समस्त पापोंसे पवित्र हो जाता है। अपेयपानसे पवित्र हो जाता है। अभक्ष्यभक्षणसे पवित्र हो जाता है। अलोह्य-लेहनसे पवित्र होता है। अचोष्य-चषणसे पवित्र होता है। सुरा-पानसे पवित्र होता है। सुवर्णस्तेयसे पवित्र होता है। पंक्तिभेदसे पवित्र होता है। पतित सम्भाषणसे पवित्र होता है। अनृतवचनसे पवित्र होता है। गुरु-तल्प-गमनसे पवित्र होता है। अगम्यगमनसे पवित्र होता है। शूद्रा-गमनसे पवित्र होता है। ब्रह्म-हत्यासे पवित्र होता है। भ्रूण-हत्यासे पवित्र होता है। वीरहत्यासे पवित्र होता है। ब्रह्मचर्यसे हीन ब्रह्मचारी होता है। यदि हृदयपूर्वक अर्थात् मनोयोगसे इसका अध्ययन किया जाय तो सैकड़ों यज्ञोंके फलोंका भागी होता है। यदि इसे लिखकर योग्य आठ ब्राह्मणोंको दिया जाये तो दाताको समस्त अर्थों-की सिद्धि होती है।

जो ब्राह्मण सावधानीपूर्वक इस गायत्रीहृदयका पाठ करता है तो वह समस्त पापोंसे मुक्त होकर ब्रह्मलोकमें निवास करता है।

इति गायत्री उपनिषदम्।

अथ गायत्रीतत्त्वम्

ॐ श्रीगायत्रीतत्त्वमालामन्त्रस्य विश्वामित्र ऋषिः, अनुष्टुप्छन्दः, परमात्मादेवता, हलोबीजानि, स्वराः शक्तयः, अव्यक्तं कीलकम्, मम समस्तपापक्षयार्थे गायत्रीतत्त्वपाठे विनियोगः।

ॐ श्रीगायत्रीतत्त्वमाला मन्त्रके विश्वामित्रजी ऋषि हैं, अनुष्टुप् छन्द है, परमात्मा देवता हैं, हल बीज है, स्वर शक्ति है, अव्यक्त कीलक है, मेरे समस्त पाप-क्षयके लिये गायत्रीतत्त्वके पाठमें इसी मन्त्र द्वारा विनियोग करे।

चतुर्विंशतितत्त्वानां यदेकं तत्त्वमुत्तमम्।
अनुपाधि परंब्रह्म तत्परं ज्योतिरोमिति॥ १॥

चौबीस तत्त्वोंके मध्यमें जो एक उत्तम तत्त्व है वह उपाधि-रहित परब्रह्मपरक ज्योतिस्वरूप ॐकार है॥ १॥

यो वेदादौ स्वरः प्रोक्तो वेदान्ते च प्रतिष्ठितः।
तस्य प्रकृतिलीनस्य तत्परं ज्योतिरोमिति॥ २॥

जिसे वेदादिमें स्वर कहा गया है और जो वेदान्तशास्त्रमें प्रतिष्ठित है, वह प्रकृतिलीन परक ज्योतिस्वरूप ॐकार है॥ २॥

तत्सदादिपदैर्वाच्यं परमं पदमव्ययम्।
अभेदत्वं पदार्थस्य तत्परं ज्योतिरोमिति॥ ३॥

जिसका कथन "तत्-सत्" आदि पदों द्वारा किया जाता है, ऐसे ऐसे परमपद अव्यक्त पदार्थके अभेदतत्त्वपरक ज्योतिस्वरूप ॐकार है॥ ३॥

यस्य मायांशभागेन जगदुत्पद्यतेऽखिलम्।
तस्य सर्वोत्तमं रूपमरूपस्याभिधीमहि॥ ४॥

जिसके मायांश भागसे समस्त जगत्की उत्पत्ति होती है, उस रूपरहित ब्रह्मके सर्वोत्तम रूपका हम ध्यान करते हैं॥ ४॥

यं न पश्यन्ति परमं पश्यन्तोऽपि दिवौकसः।
तं भूतानिलदेवं तु सुपर्णमुपधावताम्॥ ५॥

देखते हुए भी देवगण जिस परमतत्त्वको नहीं देखते हैं तथा ध्यान करनेवालोंके हृदयमें सुपर्णस्वरूप तथा समस्त प्राणियोंके हृदयमें अनिल अर्थात् वायुदेवके रूपमें व्याप्त परमतत्त्वका हम ध्यान करते हैं॥ ५॥

यदंशः प्रेरितो जन्तुः कर्मपाशनियन्त्रितः ।
आजन्मकृतपापानामपहन्तुं दिवौकसः ॥ ६ ॥

जिसके अंशसे प्रेरित होकर प्राणी कर्मके पाशमें आबद्ध हो जाता है, उस अंशको जानकर देवगण आजन्मकृत पापोंका नाश करनेमें समर्थ होते हैं ॥ ६ ॥

इदं महामुनिप्रोक्तं गायत्रीतत्त्वमुत्तमम् ।
यः पठेत् परया भक्त्या स याति परमां गतिम् ॥ ७ ॥

महामुनिके द्वारा कहे गये इस उत्तम गायत्रीतत्त्वको जो उत्तम भक्ति के साथ पढ़ता है वह परमगतिको प्राप्त करता है ॥ ७ ॥

सर्ववेदपुराणेषु साङ्गोपाङ्गेषु यत्फलम् ।
सकृदस्य जपादेव तत्फलं प्राप्नुयान्नरः ॥ ८ ॥

साङ्गोपाङ्ग समस्त वेद तथा पुराणोंके पाठ करनेसे जो फल मिलता है वही फल मनुष्यको इस गायत्रीतत्त्वके जपसे मिलता है ॥ ८ ॥

अभक्ष्य-भक्षणात् पूतो भवति । अगम्यगमनात् पूतो भवति । सर्वपापेभ्योः पूतो भवति । प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति । मध्यन्दिनमुपयुञ्जानोऽसत्प्रतिग्रहादिनां मुक्तो भवति । अनुप्लवं पुरुषाः पुरुषमभिनन्दन्ति । यं यं काममभिध्यायति त तमेवाप्नोति पुत्रपौत्रान् कीर्तिसौभाग्यांश्चोपलभते । सर्वभूतात्ममित्रोदेहान्ते तद्विशिष्टो गायत्रीपरमं पदमवाप्नोति ।

अभक्ष्य-भक्षणसे पवित्र होता है, अगम्य-गमनसे पवित्र होता है । समस्त पापोंसे पवित्र होता है । सायंकाल पाठ करनेसे दिनकृत पाप नष्ट होते है । प्रातःकाल पाठ करनेसे रात्रिकृत पाप नष्ट होते हैं । मध्याह्नमें पाठ करनेसे असद्दानादिसे मुक्त होता है । प्रत्येक समयमें मनुष्य गायत्रीतत्त्व पाठक मनुष्यको प्रणाम करते हैं । गायत्रीतत्त्व पाठक जिन-जिन कामनाओंका ध्यान करता है उन-उन समस्त कामनाओंको प्राप्त करता है । साथ ही साथ पुत्र-पौत्र-कीर्ति-सौभाग्यादिको भी प्राप्त करता है, समस्त प्राणियोंके आत्मस्वरूप होकर देह त्यागके बाद तत्स्वरूप होकर गायत्रीके परमपदको प्राप्त करता है ॥

इति गायत्रीतत्त्वम् ।

अथ गायत्रीहृदयम्

ॐ अस्य गायत्रीहृदयस्य नारायणऋषिः, गायत्रीछन्दः, परमेश्वरी गायत्रीदेवता, गायत्रीहृदयपाठे विनियोगः।

ॐ इस गायत्रीहृदयके नारायण ऋषि हैं, गायत्रीछन्द है, परमेश्वरी गायत्री देवता है, गायत्रीहृदयके पाठमें इस मन्त्र द्वारा विनियोग किया जाता है।

द्यौमूर्ध्निदैवतम्। दन्तपङ्क्तावश्विनौ। उभे सन्ध्ये चोष्ठौ। मुखमग्नि। जिह्वासरस्वती। ग्रीवायां तु बृहस्पतिः। स्तनयोर्वसवोऽष्टौ। बाहोर्मरुतः। हृदये पर्जन्यः। आकाशमुदरम्। नाभावन्तरिक्षम्। कट्योरिन्द्राग्नी। जघनेविज्ञानघनः प्रजापतिः। कैलाशमलयेऊरः। विश्वेदेवाजान्वोः। जङ्घायां कौशिकः। गुह्यमयने। ऊरुपितरः। पादौपृथ्वी। वनस्पतयोऽङ्गुलिषु। ऋषयोरोमाणि। नखानिमुहूर्त्तानि। अस्थिषुग्रहाः। असृङ्मांसम् ऋतः। संवत्सरा वै निमिषम्। अहोरात्रावादित्यश्चन्द्रमाःप्रवरां दिव्यां गायत्रीं सहस्रनेत्रां शरणमहं प्रपद्ये।

श्रीगायत्री देवीके विराट्स्वरूपका निरूपण किया जाता है कि:—देवीके शिरोभाग द्यौ है। दन्तपङ्क्तियोंमें अश्विनीकुमार हैं। प्रातः तथा सायं ये दोनों सन्ध्यायें ओष्ठ हैं। अग्नि मुख है। सरस्वती जिह्वा है। बृहस्पति गला है। [1]अष्टवसुगण स्तनद्वय हैं। देवगण बाहु हैं। पर्जन्य हृदय है। आकाश उदर है। अन्तरिक्ष नाभि है। इन्द्र और अग्नि कटिप्रदेश है। विज्ञानघन प्रजापति जघन है। कैलाश और मलय पर्वत उरुस्थल है। विश्वेदेव जानुद्वय है। कौशिक जङ्घा है। उत्तरायण तथा दक्षिणायन गुह्यप्रदेश हैं। पितृगण ऊरुप्रदेश हैं। पृथ्वी चरणद्वय है। वनस्पतियाँ अङ्गुलियाँ हैं। ऋषिगण रोम-राजि है। समस्त मुहूर्त्त नखसमूह है। ग्रहण हड्डियाँ हैं। ऋतुगण रुधिर तथा मांस हैं। सम्वत्सर चलक है। दिन और रातके विधायक सूर्य और चन्द्र हैं, इस प्रकार हम हजारों नेत्रोंवाली दिव्य एवं श्रेष्ठ गायत्री देवीका शरण ग्रहण करते हैं।

ॐ तत्सवितुर्वरेण्याय नमः। ॐ तत्पूर्वौ जयाय नमः। तत्प्रातरादित्याय नमः। तत्प्रातरादित्यप्रतिष्ठायै नमः।

---

१. आपोध्रुवश्च सोमश्च धरश्चैवानिलोऽनलः।
प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टौ प्रकीर्तिताः॥

(प. पु. सृ. स्थं. ६७।२१–२२)

'आप, ध्रुव, सोम, धर, अनिल, अनल, प्रत्यूष, तथा प्रभास ये आठ वसु कहे गये हैं।'

सूर्य भगवान्‌के उस श्रेष्ठ स्वरूपको नमस्कार ! तत्पूर्वक जपको नमस्कार। तत्पूर्वक प्रातःकालीन सूर्यको नमस्कार। तत्पूर्वक आदित्यके प्रतिष्ठाको नमस्कार।

प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। सायं-प्रातरधीयानोऽपापो भवति। सर्वतीर्थेषु स्नातो भवति। सर्वदेवैर्ज्ञातो भवति। अवाच्यवचनात् पूतो भवति। अभोज्य-भोजनात् पूतो भवति। अचोष्य-चोषणात् पूतो भवति। असाध्य-साधनात् पूतो भवति। दुष्प्रतिग्रह-शतसहस्रात् पूतो भवति। सर्वप्रतिग्रहात् पूतो भवति। पङ्क्तिदूषणात् पूतो भवति। अनृतवचनात् पूतो भवति। अथाऽब्रह्मचारी ब्रह्मचारी भवति। अनेन हृदयेनाऽधीतेन क्रतुसहस्रेणेष्टं भवति। षष्टिशतसहस्रगायत्र्याजप्यानि फलानि भवन्ति। अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग् ग्राहयेत्। तस्य सिद्धिर्भवति।

प्रातःकाल गायत्रीहृदयके पाठ करनेसे रात्रिकृत पाप नष्ट होते हैं। सायंकाल अध्ययन करनेसे दिनकृत पाप नष्ट होते हैं। सायं तथा प्रातः दोनों समयके अध्येता निष्पाप होते हैं। वह समस्त तीर्थमें स्नात होता है। उसे समस्त देवगण जानते हैं। अवाच्यवचनसे पवित्र होता है।

अभक्ष्य-भक्षण पवित्र होता है। अभोज्य-भोजनसे पवित्र होता है। अचोष्य-चूषणसे पवित्र होता है। असाध्य-साधनसे पवित्र होता है। सैकड़ों, हजारों कुदानसे पवित्र होता है। सभी प्रकारके दानसे पवित्र होता है। पङ्क्ति दूषणसे पवित्र होता है। अनृतवचनसे पवित्र होता है। जो ब्रह्मचर्यसे हीन होता है वह ब्रह्मचारी हो जाता है।

इस गायत्रीहृदयके अध्ययनसे अध्येताके हजारों क्रतुंकृत कर्म सिद्ध होता है। इसका पाठ करनेसे साठ हजार गायत्री जपके फल प्राप्त होते हैं। जो इस गायत्री-हृदय-स्तोत्रको लिखकर क्रमशः आठ ब्राह्मणोंको दान करता है उसकी सिद्धि होती है।

जो ब्राह्मण प्रातःकाल पवित्र होकर नित्यप्रति गायत्रीहृदयका अध्ययन करता है वह समस्त पापोंसे मुक्त हो जाता है। और वह ब्रह्मलोकमें प्रतिष्ठित हो जाता है। ऐसा भगवान् श्रीनारायणने कहा है।

इति गायत्रीहृदयम्।

॥ अथ गायत्रीस्तोत्रम् ॥

श्रीनारद उवाच—

भक्तानुकम्पिन् ! सर्वज्ञ ! हृदयं पापनाशनम् ।
गायत्र्याः कथितं तस्माद् गायत्र्याः स्तोत्रमीरय ॥ १ ॥

श्रीनारद जी ने कहा :—हे भक्तोंके ऊपर अनुकम्पा करने वाले सर्वज्ञ प्रभो ! पापनाशक गायत्री-हृदयका कथन तो आपने किया, सम्प्रति आप गायत्रीका स्तोत्र कहें ॥ १ ॥

श्रीनारायण उवाच—

आदि शक्ते ! जगन्मातर्भक्तानुग्रहकारिणि ! ।
सर्वत्र व्यापिकेऽनन्ते श्रीसाध्ये ते नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥

श्रीनारायणने कहा :—हे आदिशक्ति ! हे जगन्मात ! हे भक्तों के ऊपर अनुकम्पा करने वाली हे सर्वज्ञ व्यापिके ! हे अनन्ते ! हे श्रीसन्ध्ये ! आपको नमस्कार है ॥ २ ॥

त्वमेव सन्ध्या गायत्री सावित्री च सरस्वती ।
ब्राह्मणी वैष्णवी रौद्री रक्तश्वेता सितेतरा ॥ ३ ॥

हे देवि ! आप प्रात:-मध्याह्न तथा सन्ध्यामें गायत्री-सावित्री-सरस्वती नाम वाली है आप रक्तवर्णा ब्रह्माणी, श्वेतवर्णा वैष्णवी तथा कृष्णवर्णा रौद्री रूप धारण करती हैं ॥ ३ ॥

प्रातर्बाला च मध्याह्ने यौवनस्था भवेत् पुनः ।
वृद्धा सायं भगवती चिन्त्यते मुनिभिः सह ॥ ४ ॥

आप प्रात: सन्ध्यामें बालारूपमें मध्याह्न सन्ध्या में युवती रूपमें तथा सायं सन्ध्यामें वृद्धारुपमें मुनियों द्वारा चिन्तन की जाती हैं। अर्थात् मुनिगण तत्तद्रूपमें आपका स्मरण करते हैं ॥ ४ ॥

हंसस्था गरुडारूढा तथा वृषभवाहिनी ।
ऋग्वेदाध्यायिनी भूमौ दृश्यते या तपस्विभिः ॥ ५ ॥

ब्रह्माणी रुपमें आप हँसपर आरूढ़ हैं, वैष्णवीरुपसें गजारूढ़ है तथा रौद्री रुपमें वृषभारूढ़ है, ऋग्वेदके अध्ययनसे सम्पन्न आपका दर्शन तपस्वीगण भूमिपर करते हैं ॥ ५ ॥

यजुर्वेदं पठन्ती च अन्तरिक्षे विराजते ।
या सामगाऽपि सर्वेषु भ्राम्यमाणा तथा भुवि ॥ ६ ॥

यजुर्वेदका पाठ करती हुई अन्तरिक्षमें तथा पृथ्वीपर सभी के हृदयमें भ्रमण करती हैं तथा सामगान करती हुई विराजती है ॥ ६ ॥

रुद्रलोकं गतात्वं हि विष्णुलोक निवासिनी ।
त्वमेव ब्रह्मणो लोकेऽमर्त्यानुग्रहकारिणी ॥ ७ ॥

हे देवी ! आप रुद्रलोक निवासिनी, विष्णुलोक निवासिनी, ब्रह्मलोक निवासिनी होकर भी मर्त्यधर्मा मनुष्योंके ऊपर अनुग्रह करती है ॥ ७ ॥

सप्तर्षिप्रीति जननी माया बहुवरप्रदा ।
शिवयोः करनेत्रोत्था ह्यश्रुस्वेद समुद्भवा ॥ ८ ॥

हे देवि ! सप्तर्षियोंकी प्रीति उत्पादन करने वाली, माया, बहुत वर देनें वाली शिव और पार्वतीके क्रमशः हाथ तथा नेत्रसे उत्पन्न होती है । साथ ही उनके अश्रु तथा स्वेदसे भी उद्‌भूत् होती है ॥ ८ ॥

आनन्द जननी दुर्गा दशधापरिपठ्यते ।
वरेण्या वरदा चैव वरिष्ठा वर वर्णिनी ॥ ९ ॥

आप आनन्दोत्पादन करने वाली दुर्गा हैं । आपका दशधा गान होता है, आप वरेण्य हैं वरदायिनी हैं, बरिष्ठ हैं तथा वर-वर्णिनी हैं ॥ ६ ॥

गरिष्ठा च वराही च वरारोहा च सप्तमी ।
नीलगङ्गा तथा सन्ध्या सर्वदा भोग-मोक्षदा ॥ १० ॥

आप गरिष्ठा-वराही-वरारोहा-सप्तमी, नीलगङ्गा तथा सन्ध्या आदि नामोंसे विभूषित हैं आप सदा सर्वदा भोग और मोक्षको देनें वाली है ॥ १० ॥

भागीरथी मर्त्यलोके पाताले भोगवत्यपि ।
त्रैलोक्यवाहिनी देवी स्थानत्रय निवासिनी ॥ ११ ॥

आप मर्त्यलोकमें भागीरथी गङ्गा, पाताललोकमें भोगावती गङ्गा के रुपमें विराजमान हैं । अधिक क्या कहें आप तीनों लोकोंमें बहनें वाली तथा तीनों लोकोंमें निवास करने वाली है ॥ ११ ॥

भूर्लोकस्था त्वमेवाऽसि धरित्री लोकधारिणी ।
भुवर्लोके वायुशक्तिः स्वर्लोके तेजसां निधिः ॥ १२ ॥

भूलोकमें स्थित समस्त प्राणियोंको धारण करने वाली पृथ्वी आप ही है । भुवर्लोकमें वायुशक्तिके रुपमें तथा स्वर्लोकमें आप समस्त तेजोंकी राशिके रुपमें विद्यमान हैं ॥ १२ ॥

महर्लोके महासिद्धिर्जनलोकेऽजनेत्यपि ।
तपस्विनी तपोलोके सत्यलोके तु सत्यवाक् ॥ १३ ॥

महर्लोकमें आप महासिद्धि रुपमें, जनलोकमें अजन्मा रुपमें तपोलोकमें तपस्विनी रुपमें तथा सत्यलोकमें सत्यवाणी रुपमें विद्यमान् हैं ॥ १३ ॥

कमला विष्णुलोके च गायत्रीब्रह्मलोकगा ।
रुद्रलोके स्थिता गौरी हराऽर्धाङ्ग निवासिनी ॥ १४ ॥

विष्णुलोकमें आप कमला हैं, ब्रह्मलोकमें गायत्री हैं तथा रुद्रलोक लोकमें शिवके अर्द्धाङ्ग निवासिनी गौरीके रुपमें विराजमान रहती है ॥ १४ ॥

अहमो महतश्चैव प्रकृतिस्त्वं हि गीयते ।
साम्यावस्थात्मिका त्वं हि शबलब्रह्मरूपिणी ॥ १५ ॥

अहङ्कार-महत्तत्त्व तथा प्रकृतिके रुपमें आपका ही गान होता है; साम्यावस्था सम्पन्न और बिचित्र ब्रह्मरूपवाली आप ही हैं ॥ १५ ॥

ततः परा ·पराशक्तिः परमा त्वं हि गीयसे ।
इच्छाशक्तिः क्रियाशक्तिर्ज्ञानशक्तिस्त्रिशक्तिदा ॥ १६ ॥

तत् शब्दसे परे, पराशक्ति तथा परमा नामसे आपका ही गान होता है, इच्छाशक्ति-क्रियाशक्ति और ज्ञानशक्तिसे सम्पन्न होनेके कारण आप तीनों शक्तिको प्रदान करती हैं ॥ १६ ॥

गङ्गा च यमुना चैव विपाशा च सरस्वती ।
सरयू रेविका सिन्धुर्नर्मदैरावती तथा ॥ १७ ॥
गोदावरी शतद्रुश्च कावेरी देवलोकगा ।
कौशिकी चन्द्रमा चैव वितस्ता च सरस्वती ॥ १८ ॥
गण्डकी तापिनी तोया गोमती वेत्रवत्यपि ।
इडा च पिङ्गला चैव सुषुम्ना च तृतीयका ॥ १९ ॥
गान्धारी हस्त जिह्वा च पूषाऽपूषा तथैव च ।
अलम्बुषा कुहुश्चैव शङ्खिनी प्राण वाहिनी ॥ २० ॥
नाडी च त्वं शरीरस्था गीयसे प्राक्तनैर्बुधैः ।
हृत्पद्मस्था प्राणशक्तिः कण्ठस्थास्वप्ननायिका ॥ २१ ॥

हे देवि ! गङ्गा-यमुना-विपाशा-सरस्वती-सरयू-रेविका-सिन्धु-नर्मदा-ऐरावती-गोदावरी-शतद्रु-कावेरी, देवलोकगा-कौशिकी-चन्द्रमा-वितस्ता-सरस्वती-गण्डकी-तापिनी-तोया गोमती वेत्रवती-इडा-पिङ्गला-

सुषुम्ना-गान्धारी-हस्तजिह्वा-पूषा-अपूषा-अलम्बुषा-कुहू-शङ्खिनी-प्राण-शक्ति, कण्ठमें निवास करनेवाली तथा स्वप्न नायिका आदि नामोंसे विद्वद्गण आपका गान करते हैं ।। १७–२१ ।।

तालुस्था त्वं सदाधारा बिन्दुस्था बिन्दुमालिनी ।
मूले तु कुण्डली शक्ति र्व्यापिनी केशमूलगा ।। २२ ।।

तालुमें () स्थित सबकी आधार स्वरूपा, बिन्दुमें () स्थित बिन्दु-मालिनी मूल में कुण्डलिनी शक्ति और केशमूल गामिनी व्यापिनी शक्ति आप ही हैं ।। २२ ।।

शिखामध्यासना त्वं हि शिखाग्रे तु मनोन्मनी ।
किमन्यद् बहुनोक्तेन यत्किञ्चिज्जगतीत्रये ।। २३ ।।

शिखाके मध्यमें आपका आसन है, आप शिखाके अग्रभागमें मनोन्मनी रुपा हैं । अधिक कहनेसे क्या प्रयोजन ? समस्त त्रिलोक में जो कुछ है वह सब आप ही हैं ।। २३ ।।

तत्सर्वं त्वं महादेवि ! प्रिये ! सन्ध्ये ! नमोऽस्तु ते ।
इतीदं कीर्तिदं स्तोत्रं सन्ध्यायां बहुपुण्यदम् ।। २४ ।।
महापापप्रशमनं महासिद्धि विधायकम् ।
य इदं कीर्तयेत् स्तोत्रं सन्ध्याकाले समाहितः ।। २५ ।।
अपुत्रः प्राप्नुयात् पुत्रं धनार्थी धनमाप्नुयात् ।
सर्वतीर्थ - तपो - दान - यज्ञ - योगफलं लभेत् ।। २६ ।।

संसारमें जो कुछ भी है वह आप ही हैं, हे महादेवी ! हे प्रिये ! हे सन्ध्ये आपको नमस्कार है । यह स्तोत्र सन्ध्यामें बहुपुण्यप्रद तथा कीर्तिदायक है, समस्त पापोंको शमन करनेवाला महासिद्धियोंका दाता हैं सन्ध्याके समय सावधान होकर जो इस स्तोत्रका गान करता है तो गायक यदि निःसन्तान हो तो सन्तानवान्-धनार्थी धनी हो जाता है और साथ ही समस्त तीर्थ-समस्ततप-समस्तदान-समस्त यज्ञ एवं समस्त यज्ञोंके फलको प्राप्त करता है ।। २४–२६ ।।

भोगान् भुक्त्वा चिरं कालमन्ते मोक्षमवाप्नुयात् ।
तपस्विभिः कृतं स्तोत्रं स्नानकाले तु यः पठेत् ।। २७ ।।

तपस्वियों के द्वारा गान किये हुए इस स्तोत्रको स्नानके समय जो पढ़ता है वह चिरकाल तक भोगोंको भोगकर अन्तमें मोक्षको प्राप्त करता है ।। २७ ।।

यत्र कुत्र जले मग्नः सन्ध्यामज्जनजं फलम् ।
लभते नाऽत्र सन्देहः सत्यं सत्यं तु नारद ॥ २८ ॥

हे नारद ! इस स्तोत्रके पाठसे समस्त तीर्थोंके जलमें स्नान और सन्ध्याका फल प्राप्त होता है यह बात मैं सत्य कह रहा हूँ इसमें कोई सन्देह नहीं है ॥ २८ ॥

शृणुयाद्योऽपि तद्भक्त्या सा तु पापात् प्रमुच्यते ।
पीयूषं सदृशं वाक्यं सन्ध्योक्तं नारदेरितम् ॥ २९ ॥

गायत्रीकी भक्तिसे सम्पन्न होकर जो इस स्तोत्रको सुनता है तो सुननेवालेकी वाणी सुधातुल्य मधुर हो जाती है, हे नारद ! इस स्तोत्र को सन्ध्याकालमें पढ़ा जाय तो उपर्युक्त सभी गुण इसमें विद्यमान रहते हैं जिसका कथन मैंने तुमसे किया ॥ २९ ॥

इति गायत्री-स्तोत्रम् ।

अथ गायत्री-कवचम्

विनियोग:—ॐ अस्य श्रीगायत्रीकवचस्य ब्रह्माऋषर्गायत्रीछन्दो गायत्रीदेवता ॐ भूः बीजम् , भुवः शक्तिः, स्वः कीलकम् , गायत्री-प्रीत्यर्थं पाठे विनियोगः।

हाथमें जल लेकर ऊपर लिखे विनियोगको पढ़कर जल नीचे गिरा देना चाहिये।

गायत्रीका ध्यान—

पञ्चवक्त्रां दशभुजां सूर्यकोटि समप्रभाम्।
सावित्रीं ब्रह्मवरदां चन्द्रकोटि-सुशीतलाम्॥ १॥

गायत्री देवीके पाँच मुख तथा दश भुजाएँ हैं, उनकी कान्ति कोटि सूर्योंके समान है। वह सावित्री देवी ब्रह्मादि देवताओंको वर देनेवाली तथा करोड़ों चन्द्रमाओंके समान शीतल हैं॥ १॥

त्रिनेत्रां सितवक्त्रां च मुक्ताहार विराजिताम्।
वराऽभयाङ्कुश-कशा हेमपात्राक्षमालिका ॥ २॥

गायत्री देवीके तीन नेत्र हैं, उनका मुखमुण्डल प्रसन्न (स्वच्छ) है, वो मुक्ताहार धारण किये हुए हैं, उनके दोनों हाथोंमें वर, अभय, अंकुश, कशा, स्वर्णपत्र एवं अक्षमाला है॥ २॥

शङ्ख-चक्रा-ऽब्ज-युगलं कराभ्यां दधतीं पराम्।
सित-पङ्कज संस्थां च हंसारूढां सुखस्मिताम्॥
ध्यात्वैवं मनसाम्भोजे गायत्री-कवचं जपेत्॥ ३॥

गायत्री देवी शंख-चक्र और ध्वजको भी हार्थोमें धारण किये हुए हुए हैं। वे सफेद कमलके आसनपर विराजमान हैं, शुभ्र हंस उनका वाहन है, ऐसी प्रसन्नवदन परब्रह्मस्वरूपिणी गायत्री देवीका साधक हृदयकमलमें ध्यान करके गायत्रीकवचका पाठ करे॥ ३॥

ब्रह्मोवाच कवचम्—

वश्वामित्र ! महाप्राज्ञ ! गायत्रीकवचं शृणु।
यस्यविज्ञानमात्रेण त्रैलोक्यं वशयेत् क्षणात्॥ १॥

ब्रह्माजीनें विश्वामित्रजीसे कहा—हे मुने ! मैं आपको गायत्री माताके उस गायत्री-कवचको सुनाता हूँ जिसके श्रवण तथा पाठ करने मात्रसे ही साधक त्रैलोक्यको अपने वशमें कर लेता है॥ १॥

सावित्री मे शिरः पातु शिखायाममृतेश्वरी ।
ललाटं ब्रह्मदैवत्या भ्रुवौ मे पातु वैष्णवी ॥ २ ॥

सावित्री मेरे शिर की, अमृतेश्वरी मेरी शिखा की, ब्रह्मदैवत्या मेरे ललाट की तथा वैष्णवी मेरे दोनों भौंहों की रक्षा करें ॥ २ ॥

कर्णौ मे पातु इन्द्राणी सूर्यासावित्रिकाऽम्बिके ।
गायत्रीवदनं पातु शारदा दशनच्छदौ ॥ ३ ॥

रुद्राणी मेरे दोनों कान की, सूर्यमें रहकर सभी प्राणियोंका सृजन करनेवाली भगवती गायत्री मेरे दोनों नेत्रों की, गायत्री मुख की तथा शारदा मसूड़ों की रक्षा करें ॥ ३ ॥

द्विजान् यज्ञप्रिया पातु रसनायां सरस्वती ।
सांख्यायनी नासिका मे कपोलौ चन्द्रहासिनी ॥ ४ ॥

यज्ञप्रिया दाँतों की, सरस्वती जिह्वा की, सांख्यायनी नासिका की, तथा चन्द्रहासिनी दोनों कपोलों की रक्षा करें ॥ ४ ॥

चिबुकं वेदगर्भा च कण्ठं पात्वघनाशिनी ।
स्तनौ मे पातु इन्द्राणी हृदयं ब्रह्मवादिनी ॥ ५ ॥

वेदगर्भा चिबुक (ठोड़ी) की, अघ (पाप) नाशिनी कण्ठ की, स्तनों की इन्द्राणी तथा हृदय की ब्रह्मवादिनी रक्षा करें ॥ ५ ॥

उदरं विश्वभोक्त्री च नाभौ पातु सुरप्रिया ।
जघनं नारसिंही च पृष्ठं ब्रह्माण्डधारिणी ॥ ६ ॥

उदर की विश्वभोक्त्री, नाभि की सुरप्रिया, जंघा की नारसिंही तथा पीठ की ब्रह्माण्डधारिणी रक्षा करें ॥ ६ ॥

पार्श्वौ मे पातुपद्माक्षी गुह्यं गोगोप्त्रिकाऽवतु ।
ऊर्ध्वोरोङ्काररूपा च जान्वोः सन्ध्यात्मिकाऽवतु ॥ ७ ॥

पद्माक्षी दोनों पार्श्वों की, गोप्त्रिका गुप्तस्थान की, ॐकाररूपा ऊरुओं की, तथा दोनों घुटनों की सन्ध्यात्मिका रक्षा करें ॥ ७ ॥

जङ्घयोः पातु अक्षोभ्या गुल्फयोर्ब्रह्मशीर्षका ।
सूर्या पदद्वयं पातु चन्द्रा पादाङ्गुलिषु च ॥ ८ ॥

दोनो जाँघों की अक्षोभ्या, गुल्फों की ब्रह्मशीर्षका, दोनों पैरों की सूर्या तथा चन्द्रा दोनों पैरोंके अँगुलियों की रक्षा करें ॥ ८ ॥

सर्वाङ्गं वेदजननी पातु मे सर्वदाऽनघा ।
इत्येतत् कवचं ब्रह्मन् ! गायत्र्याः सर्वपावनम् ॥ ९ ॥

वेदजननी गायत्री सर्वदा हमारे सम्पूर्ण अंगों की रक्षा करें। ब्रह्माजीने कहा—हे विश्वामित्र ! इस प्रकार यह गायत्री-कवच सर्वदा साधकको पवित्र करता है ॥ ९ ॥

पुण्यं पवित्रं पापघ्नं सर्वरोग निवारणम् ।
त्रिसन्ध्यं यः पठेद् विद्वान् सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥ १० ॥

यह गायत्री-कवच पापोंका नाश करनेवाला तथा पुण्य और पवित्र है, जो भी गायत्रीकवचका त्रिकाल पाठ करेगा उसके सभी मनोरथ पूर्ण होंगे ॥ १० ॥

सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः स भवेद् वेद वित्तमः ।
सर्वयज्ञफलं प्राप्य ब्रह्मान्ते समवाप्नुयात् ॥ ११ ॥

इस गायत्री-कवचका पाठ करनेवाला सभी शास्त्रोंके तत्त्वका ज्ञाता एवं वेदज्ञ हो जाता है। और वह सम्पूर्ण यज्ञोंके फलको भी प्राप्त कर लेता है ॥ ११ ॥

प्राप्नोति जपमात्रेण पुरुषार्थांश्चतुर्विधान् ॥ १२ ॥

अनन्तर वह चारों पुरुषार्थोंको भी अनायास ही प्राप्त कर लेता है ॥ १२ ॥

। इति गायत्रीकवचम् ।

पुस्तकालय
परिग्रहण सं० 16053
दि० 22/11/99
नई दिल्ली